

देव ग्रंथावली

लक्षण-ग्रंथ

प्रथम खण्ड

लक्ष्मीधर मालवीय

एम० ए०, बी० फिन्०



नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली-७

ॐ लक्ष्मीधर मातृजीव

प्रथम संस्करण :
शितम्बर, १९६७

मूल्य : ₹० २०.००

पूज्य पितामह
स्वर्गीय पंडित मदनमोहन मालवीय
की
पावन स्मृति को
समर्पित

'देव प्रथावली—लक्षण ग्रन्थ—प्रथम खंड' प्रयाग विश्वविद्यालय की डी० फिन्० उपाधि के लिये स्वीकृत मेरे शोध-प्रबन्ध का अर्थ भाग है। बृहदाकार होने के कारण प्रकाशन की सुविधा से देवकृत सान लक्षण ग्रन्थों—भाव विलास, रस विलास, सुमिल विनोद, काव्य रसायन, भवानी विलास, कुशल विलास तथा मुजान विनोद—में मेरे केवल प्रथम तीन इस खंड में प्रकाशित हो रहे हैं। अन्य ग्रन्थ एव छंदों की तुलनात्मक प्रतीक सूची अगले खंडों में प्रकाशित करने का विचार है। इनमें 'सुमिल विनोद' मर्यादित होकर प्रथम बार प्रकाश में आ रहा है। इन ग्रन्थों के संपादन के ब्याज में देव की जीवनी तथा उनकी रचना-प्रक्रिया एव उनके कल्पित ग्रन्थों की प्रामाणिकता पर नई दृष्टि से विचार किया गया है।

मैंने यह शोध-कार्य डॉ० माताप्रसाद गुप्त, सचालक, के० एम० इन्स्टीट्यूट, आगरा, के निर्देशन में, जब वह प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग में थे, किया था, उनके निर्देशन के लिये मैं उनका अत्यंत आभारी हूँ। प्रयाग विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के अध्यक्ष डॉ० रामकुमार वर्मा तथा अन्य प्राध्यापकों का, विशेष रूप से पंडित उमाशंकर शुक्ल, डॉ० जगदीश गुप्त एव डॉ० पारमनाथ तिवारी का, जो मेरे कार्य में निरंतर रचि लेते रहे हैं, मैं कृतज्ञ हूँ। केवल धन्यवाद देकर ऋषि-ऋण से मुक्त नहीं हुआ जा सकता, इसे मैं भली भाँति जानता हूँ, अतः यह रसम-जदायगी नहीं करता।

मेरे लिये हस्तलिखित पोथियाँ मुलभ कराने में विशेष रूप से डॉ० हजारीप्रसाद द्विवेदी तथा डॉ० राजवली पांडेय ने जो सहायता की है उनके लिये मैं चिरकाल तक उनका ऋणी रहूँगा। यदाकदा मार्ग में कठिनाइयाँ भले ही आयी हों, सभी ने मेरे लिये सामग्री मुलभ कराने में यथामुभव सहयोग दिया है। एतदर्थं नागिराज श्री विभूतिनारायण मिश्र, मौलगाव के राजकुमार श्री भाद्रप्रतापसिंह, मधौली के पंडित कृष्णविहारी मिश्र, पटिन विपिनविहारी मिश्र, डॉ० ब्रजविश्वर मिश्र, हिंदुस्तानी एकेडमी के डॉ० सत्यप्रतप मिश्रा, बीकानेर के श्री अजरबद ताहटा, काशी के पंडित विश्वनाथप्रसाद मिश्र, इलाहाबाद के श्री सुरेशचन्द्र श्रीवास्तव कुसमरा के पंडित मातादीन दुबे, इडिया ऑफिस लाइब्रेरी, लन्दन, काशी नागरी प्रचारिणी मंडल के पुस्तकालय तथा प्रयाग हिन्दी साहित्य सम्मेलन सग्रहालय के अधिकारियों का आभार है। इनके अतिरिक्त अनेक अन्य व्यक्तियों ने अनेक रूपा में मेरी सहायता की है, मैं उन सबका उपकृत हूँ।

इस कार्य को वर्तमान रूप देने में मेरे मित्र डॉ० बालकृष्ण मालवीय, मेरे बान्धवों के

साथी श्री ईश्वरचन्द्र व्यास तथा नेशनल टाइपराइटिंग इस्टीट्यूट, इलाहाबाद के श्री जगदीश-
नारायण अग्रवाल ने जो व्यावहारिक सहायता दी है उसके लिये वे हार्दिक धन्यवाद के पात्र हैं ।

आज से लगभग सात वर्ष पूर्व एक दिन डॉ० धीरेन्द्र वर्मा ने यह कार्य-भार मुझे
सौंपा था । मैं उनके दिये उत्तरदायित्व का अपनी सीमा भर वहन कर सका, मैं इतने मे ही
संतुष्ट हूँ । इतना निस्संकोच कहूँगा कि आज हिंदी को इस प्रकार के कार्य की बहुत अधिक
आवश्यकता है । कवि देव समृद्ध ब्रजभाषा साहित्य के एक समर्थ कविये, अतः देश-काल के
असीम विस्तार में यदि मेरे इस कार्य को एक रेणुका षण का भी स्थान प्राप्त हो सका तो मैं
अपना धर्म सफल समझूँगा ।

३ अप्रैल, १९६४

—लक्ष्मीधर मालवीय

प्रवास के कारण मैं अद्य पर मुद्रण के दौरान निगाह नहीं रख पाया हूँ, अतः संभव है
कि प्रमादवश कुछ अनुद्धियाँ रह गई हों । मैं उनके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ ।

३० ७ ६६

ओसाका गाइकोबुगो दाइगाकु,
ओसाका, जापान

—ल. ध. मा.

विषयानुक्रमिका

विषय प्रवेश सीमा और उपलब्ध सामग्री १ ग्रन्थों का नाम ५, छंदों का परस्पर आदान-प्रदान ७, पाठ मिश्रण ८, सहायक संपादन-सामग्री १०, संपादन प्रणाली १०, विकृत पाठ ११, पर्याय १२, लिपिजन्य विकृति १२, प्रतिमाँ सामान्य परिचय १३, कवि प्रवृत्ति १४।

भाव विलास प्रतिमाँ प्रतियो की बहिरंग परीक्षा १६, प्रतियो की अन्तरंग परीक्षा नी० हि० प्रतिमाँ प्रक्षेप २२, नुटित पाठ २६, स्थान विपर्यय ३०, लिपिजन्य विकृति ३१, पर्याय ३४, पाठ विकृति ३५, भा०सा० प्रतिमाँ नुटित पाठ ३६, प्रक्षेप ४० स्थान विपर्यय ४०, पाठ विकृति ४१, लिपिजन्य विकृति ४२, नी० हि० का० प्रतिमाँ स्थान विपर्यय ४४, पाठ विकृति ४४, पर्याय ४४, का० सा० प्रतिमाँ लिपिजन्य विकृति ४६, पाठ-विकृति ४६, पर्याय ४६, नी०हि०सा० प्रतिमाँ पाठ विकृति ४७, स्थान विपर्यय ४७, लिपिजन्य विकृति ४८ नी०हि०ज० प्रतिमाँ पाठ विकृति ४८, भा० सा० ज० प्रतिमाँ पाठ विकृति ४८ प्रतिमाँ का प्रतिलिपि सम्बन्ध ४९, संपादन सिद्धांत ५०, अपवाद ५०, विशेष सहायन ५२, 'भाव विलास' के अंतिम दोहा की प्रामाणिकता ५३। पाठ प्रथम विलास ५८, द्वितीय विलास ६३, तृतीय विलास ८०, चतुर्थ विलास ६४, पंचम विलास ११४।

रस विलास प्रतिमाँ प्रतियो की बहिरंग परीक्षा १३१, प्रतियो की अन्तरंग परीक्षा भा० मो० प्रतिमाँ पाठ विकृति १३५, लिपिजन्य विकृति १३६, नुटित पाठ १४१, नी० ग० गजा० प्रतिमाँ पाठ विकृति १४२, पर्याय १४३, लिपिजन्य विकृति १४३, नी० गजा० प्रतिमाँ १४५, अधिक छंद १४५, पाठ विकृति १४५, ग० गजा० प्रतिमाँ १४६, स्थान विपर्यय १४७, पर्याय १४८, ग० सा० प्रतिमाँ पाठ विकृति १४८ लिपिजन्य विकृति - १४९, स्थान विपर्यय १४९, नुटित पाठ १४९, ब्र० सा० प्रतिमाँ पाठ विकृति १५०, लिपिजन्य विकृति १५१, नी० ग० गजा० सा० प्रतिमाँ पाठ विकृति १५२, भा०मो०नी० ग० गजा० प्रतिमाँ लिपिजन्य विकृति १५३, भा० मो० नी० प्रतिमाँ लिपिजन्य विकृति १५३, भा० मो० ब्र० प्रतिमाँ पाठ विकृति १५४, प्रतियो का प्रतिलिपि-सम्बन्ध १५६, संपादन सिद्धांत १५६, अपवाद १५७, विशेष सहायन १५६, जाति विनास की प्रामाणिकता

१६०, कवि देव द्वारा 'रस विलास' की आकार-वृद्धि १६८। पाठ प्रथम विलास १७०, द्वितीय विलास १८०, तृतीय विलास १८४, चतुर्थ विलास १९२, पंचम विलास १९८, षष्ठम विलास २०९, सप्तम विलास २१८, अष्टम विलास २२३।

सुमिल विनोद भूमिका २५१, ग्रथ की प्रामाणिकता २५१, ग्रथ परिचय २५२, आशयदाता २५२, संपादन-सामग्री की बहिरंग परीक्षा २५२, संपादन सामग्री की अन्तरंग परीक्षा — प्रतियों का सम्बन्ध २५४, संपादन सिद्धान्त २५५, अ० प्रति के पाठ में प्राप्त अपूर्ण छंद २५६, ऐसे पाठ-संशोधन जो देवकृत अन्य ग्रन्थों में प्राप्त उसी छन्द के पाठ द्वारा पुष्ट हैं २५८, विशेष पाठ-संशोधन २६९, आलोच्य पाठ-विहृतियों की सूची २७२। पाठ प्रथम विनोद २७३, द्वितीय विनोद २७६, तृतीय विनोद २८०, चतुर्थ विनोद २८५, पंचम विनोद २८९, षष्ठम विनोद २९५, सप्तम विनोद ३०१, अष्टम विनोद ३०४।

विषय-प्रवेश

सीमा और उपलब्ध सामग्री

सुमधुर राजभाषा के कवियों में देव का स्थान जत्यन गौरवपूर्ण है। हमने प्रस्तुत अन्यपत्र में उनके लक्षण-ग्रथों के पाठ तथा उनमें सम्बद्ध पाठ-समस्याओं पर विचार किया है अतः कवि के अन्य ग्रथों का उपयोग केवल महायज्ञ नामग्री के रूप में हुआ है। इन अन्य ग्रथों के सम्बन्ध में अपने विचार हम यहाँ नहीं प्रकट कर रहे हैं।

हमने यदि के केवल उन्हीं ग्रथों को लक्षण-ग्रथ की सीमा के अन्तर्गत माना है जिनमें रस, अलंकार, पिण्ड अथवा नायिका-भेद का निरूपण तथा वर्णन मिलता है। कवि देव ने समकालीन अन्य कवियों की भाँति अपने निम्नी एक ग्रथ में उपरोक्त विषयों में से एकाधिक पर एक नायिका-विचार किया है, जैसे कि 'भाव विलास' में शृंगार रस, नायक-नायिका भेद तथा अलंकारों का वर्णन है, 'रस विलास' मुख्य रूप में नायिका-भेद का ग्रथ है परन्तु 'वाच्य रमायन' में कवि ने इन विषयों के अतिरिक्त शब्द-शक्ति, गीति तथा पिण्ड आदि का भी विवेचन किया है। इस आधार पर हमने देवकृत निम्नलिखित मान ग्रथों को लक्षण ग्रथ मानते हुए उनका पाठ-संपादन किया है —

१ वाच्य रमायन	—६६३ छंद
२ कुमान विलास	—३०६ छंद
३ भवानी विलास	—२२६ छंद
४ भाव विलास	—४१७ छंद
५ रस विलास	—६६६ छंद
६ कुमान विनोद	—३५६ छंद
७ सुमित्र विनोद	—२७७ छंद

कुल २५६६ छंद

इन ग्रथों के देवकृत होने में हमें सन्देह नहीं है क्योंकि इनमें से एक भी ग्रथ ऐसा नहीं है जिनमें देवकृत दूरे ग्रथों के गमान दोहे अथवा उदाहरण छंद न मिलने हों। देव के एक दूमरे ग्रथ में गमान छंद मिलने की यह विशेषता इनकी व्यापक है कि हमने इन भाषा अथवा शैली की अपेक्षा ग्रथ के देवकृत होने का अधिक पुष्ट प्रमाण माना है। भाषा अथवा शैली को विरल ही प्रमाण न मानने का कारण स्पष्ट है। गीतिकांतर तर आने-जाने साहित्यिक राजभाषा इस सीमा तक विभिन्न प्रादेशिक विशेषताओं में युक्त हो चुकी थी और प्रत्येक क्षेत्र में अनेक कवियों ने

परस्पर प्रभावित होने हुए अथवा प्रभावित करने हुए काव्य-रचना की थी कि केवल भाषा अथवा शैली के आधार पर किसी ग्रंथ को एक कवि की रचना मान बैठना स्वतरे से माली नहीं। देव तथा श्रेवकीनन्दन की भाषा बहुत कुछ समान है—यहाँ तक कि देव कवि के पश्चात् किसी ने इस ओर लक्ष्य करत हुए कहा था “देव गए गए देवकीनन्दन”। इस काल में मुख्य रूप से कवित्त तथा मर्दया छदा में रचना हुई ई, दो छदों में पूर्वापर मन्वन्व भी नहीं है इस कारण भी भाषा-शैली का माध्य निर्णायक नहीं हो सकता। ‘सुदरो सुदर’ जैसे किसी संग्रह में कवि-ठाप रहित छदों के रचयिता का नाम केवल भाषा के आधार पर निश्चित करने पर उपरोक्त कथन की सारगता प्रमाणित होगी। अतः भाषा का प्रमाण केवल सहायक प्रमाण माना जा सकता है। उदाहरण के लिए केवल भाषा के आधार पर ‘राग रत्नाकर’ को देवदत्त ग्रंथ मानने के कारण ही डा० नौन्द्र भ्रान्ति के शिकार हुए हैं। ‘राग रत्नाकर’ में देव के किसी अन्य ग्रंथ के छद नहीं हैं, न किसी अन्य ग्रंथ में ‘राग रत्नाकर’ के छद हैं। देव के अन्य सर्वमान्य ग्रंथों की तुलना में यह इस ग्रंथ की असाधारण विवेचना है। डा० नगन्द्र ने ‘देव और उनकी कविता’ में पृ० १३ पर प्रसिद्ध कवि देव से भिन्न देव नामधारी एक अन्य कवि का उल्लेख किया है, और उनका केवल एक ही ग्रंथ ज्ञान बताया है ‘रागमाला’। सन् १९०६-८ की खाज रिपोर्ट में भी देव नामधारी कवि के नाम में इसी ग्रंथ की सूचना है, सन् १९०५ की खाज रिपोर्ट में ‘रागरत्न प्रवास नामक एक ग्रंथ की भी सूचना दी है, इसी प्रति को मैं नम्राने के संग्रह में (समा-संग्रह १९१-२११) देता हूँ, यह ‘राग रत्नाकर’ की ही प्रति है। अतः संभव है कि ‘रागमाला’ तथा यह ‘राग रत्नाकर’, जिन डा० नगन्द्र हमारे आलाप्य कवि की रचना समझ बैठे हैं, किसी अन्य देव कवि द्वारा रचित एक ही ग्रंथ के दो नाम हों।

नम्राने की खाज रिपोर्ट में हम ऐसे ही कुछ अन्य ‘नवीन’ ग्रंथ मिले हैं। हम लक्ष्य में उनका उल्लेख कर रहे हैं।

नम्राने-संग्रह में १०८० सख्या पर ‘सकुन आर्या’ नामक ‘ग्रंथ’ इसी प्रकार का है। यह किसी ग्रंथ का केवल अंतिम ६०वीं पत्र है। विषय सकुन-विचार है, दोहा छद में निरुद्ध हान के कारण इस आर्या सज्ञा दी गई है। इसके साथ देव का नाम आन का भ्रम इस अंश के कारण संभव है ‘इति देवदत्त सकुन आर्या सपुणम्—’ इसका एक अंश इस प्रकार है—‘इतिवार के दिन तबोल खाज। सोमवार के दिन काच दसजे। बुधवार के दिन दही खाजे।’

दूसरा ग्रंथ ‘वैद्यक’ है। १९२०-२३ की खाज रिपोर्ट (पृष्ठ ४७७) में अनुसार यह भिन्नगा राजपुस्तकालय में है। इस ग्रंथ के सम्बन्ध में लाग बहुत लम्बे समय से उत्पन्न है। खाज रिपोर्ट में दिया ‘देवदत्त’ इस ग्रंथ का परिचय देते हैं—“अलग अमूरल अलग गति किनहि न पायो पार। जाहि जुगल कर कवि कहै देव देव मत सार ॥ अथ वैद्यन लिख्यते तत्र प्रथम पित्तज्वर का वादा। प्रमाण सज्ञा रसा का विचार, जलघर राग, भगदर चित्रित्सा, गुन्म, कृमि—मद्राभि, अड राग, अपम्मीर—”

केर विचार में उपर्युक्त उद्धरण में पर्याप्त रूप में स्पष्ट है कि ‘रसा विलाम’ के रचयिता तथा वैद्यक का प्रणेता एक ही देव नहीं हैं।

तीसरा ‘इन्द्रजाल नामक ग्रंथ प्रयाग म्मुनिसिपल ग्रन्थालय में ३५१५७ सख्या पर है।

अप्रामाणित ग्लोब रिपोर्ट (१९८१-४३) में भी इसका उल्लेख है। इसकी प्रतियाँ हिन्दुस्तानी एंजेडमी, प्रयाग, तथा नागरी प्रचारिणी मभा के आर्य भाषा पुस्तकालय में भी हैं। मभवत एंजेडमी की प्रति मभा वाली प्रति की प्रतिलिपि है। ग्रथ का प्रारम्भिक अक्षर इस प्रकार है —
 “जय तांत्र के पात्र में लिखि के ममान में गाडे तो शत्रु दिमाना होय—”

यह बताने की आवश्यकता नहीं कि ममान छन्दों के प्राप्त होने के आशय पर देव के ग्रथा की प्रामाणिकता का सिद्धान्त विनये रूप में उक्त देव के ग्रथा पर लागू होता है अतः इनके श्यापक सिद्धान्त नहीं मानना चाहिए।

हमने दबकृत लक्षण-ग्रथों की सूची में ‘जाति विनाम’, ‘प्रेम तरंग’, ‘प्रेम चंद्रिका’ तथा ‘मुख सागर तरंग’ जैसे ग्रथ नहीं सम्मिलित किए हैं क्योंकि इनमें से कुछ नाम निम्नीस्वीकृत ग्रथ के प्रथम मस्वरण अथवा प्रथम मस्वरण की स्थिति प्रतिलिपि तथा कुछ केवल सप्रथ ग्रथ हैं।

‘जाति विनाम’ अब तक देव के स्वतंत्र ग्रथ के रूप में स्वीकृत होना रहा है परन्तु वनमान अनुमान के अनुसार यह ‘रम विनाम’ के प्रथम मस्वरण की पंचम विलास तक स्थिति प्रतिलिपि है। इस कारण इसका उपयोग ‘रम विनाम’ की स्थिति प्रति के रूप में किया गया है। हमने इस ग्रन्थ पर विचार में ‘जाति विनाम’ की प्रामाणिकता शोषक व अनगन विचार किया है।

इसी प्रकार ‘प्रेम तरंग’ कुशल विलास का विकृत प्रथम मस्वरण है। देव ने इसी ‘प्रेम तरंग’ व आशय पर बुधनमिह का सम्पत्त करने के हेतु कुशल विनाम की रचना की थी अतः इन दोनों ग्रथ में ‘प्रेम तरंग’ का सपूर्ण आकार सम्मोचित होने के कारण इसका पृथक् संपादन करना अन्यायपूर्ण है। ‘कुशल विलास’ तथा ‘प्रेम तरंग’ शीर्षक व अनगन हमन इन दोनों ग्रथा के परस्पर-सम्बन्ध की परीक्षा की है।

‘प्रेम चंद्रिका’ तथा ‘मुख सागर तरंग’ ग्रथ इनमें भिन्न कारणों से इन कार्य की परिष्कृत सफाई माने गए हैं। ‘प्रेम चंद्रिका’ शुद्ध प्रेम-वाच्य है। यत्र-यत्र सुग्गा, मध्या, प्रौढा का नामोल्लेख हमने शीर्षकों में भन ही है परन्तु उक्ति का मुख्य लक्ष्य इनका भेद-प्रभेद करना न होकर तत्र इन तापिकाओं के प्रेम का वर्णन है।

‘मुख सागर तरंग’ मग्रह-ग्रथ हान के कारण अस्वीकृत हुआ है। इसमें नव-शिव तथा अष्टमाम के छंद होने हुए भी प्रकृति में यह मग्रह-ग्रथ ही है। इसमें नायिका-भेद के केवल उदाहरण हान में यह लक्षण-ग्रथ नहीं है। गतना—वैम ही जैग मिहारी ‘सतमई’ के अनेक दोहों का विषय नायक-नायिका-भेद होने के कारण उसे मक्षध-ग्रथ नहीं माना जाएगा। ‘मुख सागर तरंग’ में केवल उदाहरण छंद सचिन हैं मत्र प्रायः सभी उदाहरण अन्य ग्रथों में भी मिलते हैं। इन कारणों से हमने इस ग्रथ के पाठ पर विचार करना अनावश्यक माना है।

ग्लोब रिपोर्ट में देव के नाम में प्राप्त ‘गण-विचार’ तथा ‘रम रत्नाकर’ ग्रथ एमें है ज लक्षण-ग्रथ की सीमा के अग्रगंत आ गवने हैं। अतः हम सौत्र रिपोर्ट का इन ग्रथा में सम्बन्ध अक्षर नीचे दे रहे हैं —

“८९ के गण-विचार—गल्पटंग—ग्रीमेहपेपर। लोप्य—८। माहङ—१०-८ इच्छेज

साङ्ग पर पेज—७२ । एक्सटेट—२१६ अनुष्टुप श्लोकाञ्च । एपियरैस—ओल्ड । कैरेक्टर—
नागरी । डेट आन मेन्सुस्क्रिप्ट—सवत् १९१७-१८६० ए० डी० । प्लेस आव डिपाजिट—ठाकुर
अनररुद्रसिंहजी, एमिस्टेट मैनेजर आव राज्य नीलगाव, पोस्टऑफिस नीलगाव, डिस्ट्रिक्ट सीतापुर ।

विगिनग—श्रीगणेशाय नम । अथ गण विचार विरूपते । ह्यर्पे ॥ गुर अनल रजनी
निमा विप शिव लोचन मजिये । तितिहि प्रगट गुरु तौनि सकल मिलि मगन उपजिये । दहुरि
यगन रस नगन जगन ञरु मगन मगन पुनि । नम ह्यो अष्ट प्रकार एक तह येव उदित गुनि ॥ नृप
सिंह सुरूप सुजान मुनि पढि सरस सोहित करिये ॥ तुव कीरति विमल कवि कुल बरनि सुछद
बृद भूतल भरिये ॥ मगन जानि गुरु तौनि यगन लघु आदि बरानिय । रगन मध्य लघु सच्चि सगन
गुर दृष्टि नगन लघु सबल निरतर ॥ गण अष्ट स्वरूप सुजान मुनि इमि छद बहु प्रथन भरिये ।
तुव कीरति विदित अलब मो भाँति-भाँति सुरपुर चडिये ॥

एण्ड—अथ शिदिर ॥ अरुणनीलममीलित सदल प्रचुर फुल्ल समुन्ल सनंधिय बाहति
कचन काचन काननवतरानि तरा निशिरागमे ॥ अपटु तिमम मरीचिभिर्नैहि तथा शिशिरे सिशिर
क्षिति ॥ निमिजयोपलपीन घनस्तनी ॥ भुजन पीडनत स्वपतानुषा ॥ इति शिदिर पूर्ण ॥ सर्वथा
भेद ॥ सैव पगा वसु भा मुनि भाग गसात भगोल लमैल भगा ॥ लै मुनि भाग गही ललमस्त भगोल
लनस्त भगग पगा ॥ पी मदिरा ब्रजभारि वरौ सुभ मासति चिच पदभ्र मया ॥ मल्लिक माधवि
दुमिलिका कमला ससवे पय शुज मगा ॥ ललसल भगाय मुनि वं धुनि चाथिक मोरनि की चहुँ
ओगनि बोकिन कूकनि सो । अनुराम भरे हरि वागनि मे सपि रागति राग अचूकनि सो । कवि
देव घटा जु नई उमई वन भूमि भई जल दूकनि सो । रगरामी हरी हहरासी लता भुवि जानी
समीर की भूकनि सो ॥ जाहि जोह निपटहि भटू लटू भयो नदनद । मुख मयक तेरो सखी बिनु
वतथ को चद ॥ इति श्री गण विचार ग्रथ कवि देव इत सम्पूर्णम् शुभमस्तु लिपिते गिरधारी-
लाल वैश्य चण्डू लखनऊ निवासी सवत १९१७

सञ्ज्ञकट—गणो वा विचार तथा उनके भेद ।”

‘लाज रिपोर्ट’ १९२३-२४, पृष्ठ ४५०-५१

रेखावित अश से ज्ञात होता है कि देव ने सुजाननिष्ठ के लिए इस ग्रथ की रचना की थी ।

‘रस रत्नावर’ के सम्बन्ध में खोज रिपोर्ट की सूचना इस प्रकार है—

“८९ थी रस रत्नावर बाइ देव । सञ्ज्ञकट—कटीमेड वेपग । लीक्य—४८ । गादज—
८-३१२ इच । साङ्ग पर पेज ८ । एक्सटेट—३७७ अनुष्टुप श्लोकाञ्च । एपियरैस—ऑडिनरी ।
कैरेक्टर—नागरी । डेट आव मेन्सुस्क्रिप्ट—सवत् १८८१—ए० डी० १८२४ । प्लेस आव
डिपाजिट—नामेश्वर बक्ष्सा प्रमोद, विरेज नुनरा, लम्हा, डिस्ट्रिक्ट सुल्तानपुर औध ।

विगिनग—श्रीगणेशाय नम ॥ दोहन हो यह कीजियु रस रत्नावर ग्रथ ॥ जाके जाने
जानिये रम प्रथन के पय ॥१॥ शं ति मदा निज पतिहि मो स्वीया की यह रोनि । परकीया पर
पुग्ग गो दुर्ग जो रापे प्रीनि ॥२॥ स्वकीया को उदाहरण । नंगे धीं या वदन की वदन जान मग
जोनि । जारी मुगचयानो नही जोडन बाहिर होति ॥३॥ परकीया के उदाहरण ॥ डीन रहतवन
रोनि तुम कीन मेव यह आहि । चसत देह गो देह छुर्वे नेतु कट्टे डर नाहि ॥४॥ सामान्या लक्षणम्

॥ प्रीति जो राखे मरनि सो धन धनही बे बाज । तामो मामान्या कहै सुखनि रे गिगताज ॥५॥
यथा ॥ जय प्यारे सो बोलिही कहू वरपाइष कवार । ननक जे भीरन मौजरित से हीरन का हार ॥६॥

एण्ड—अथ वितर्क जह सदेह से तरजनी भोहै सीस नवाद । कीजे कछु विचार तहें
वितरक दियो वताइ ॥ यथा—बीन न फूलत रैन दिन चदन जाति सराहि । जगमगतु दिन रैन
यह ताते तिय मुख आहि ॥ इति सचारिन । अथ साखिव—थभ भेद रोमाच सुरभगो वेपयु
मानि । विवरनता असुया प्रलय आठी साखिव जानि ॥ जाठरु को उदाहरण—विवरण असुया
मूरछा थभ कटकित अग । देवत भये दुहन के कप भेद सुर भग ॥ इति साखिक ॥ इति रम
रत्नाकर ग्रथ समाप्त ॥ शुभम्भूयान ॥ ईश्वरी दस्तेनालेखि बभू हेतवे पुस्तकमिदम् ॥

संज्ञेवट— १ पृ० १ से १८ तक—नायिका-भेद, स्वकीया, परकीया, सामान्या, मुग्धा,
अज्ञान तथा ज्ञान धौवना, विश्रद्धा नबोढा, प्रगल्भा, धीरा, अधीरा, धीराधीन, मध्या धीरा,
प्रीता धीरा, ज्येष्ठा, कनिष्ठा, परकीया—ऊढा, अनूढा, भूत मुरनगोपना, भविष्य सुरतगोपना,
क्रिया विदग्धा, वाक्य विदग्धा, कुमटा, मुदिता, लक्षिता, प्रेमखिना, रगराखिना, लघु मान, म-प-
मान, अष्ट नायिका ।

२ पृ० १९ से २४ तक—नायक वर्णन, त्रिकवि नायक, पति, उपासित वैमिश्र, दक्षिण
नायक, धृष्ट, मठ, वैगिटक, मानी, उचन चतुर, त्रिया चतुर, प्रीतिनसि नायकभाम ।

३ पृ० २५ से २६ तक—सग्या वर्णन, पौठमदे, विट, चेट, विद्रूपक ।

४ पृ० २७ से ३१ तक—तीन प्रकार के वर्णन, स्वप्न, चित्र, दशन । मखिया के चार
कार्य, उपालभ, मडन, गिन्ना, परिहास । उत्तम, म रम और अधम दूरी वर्णन । दामी दूती, मयी
दूती, चुग्गिहारिन, मानिन, नाइन, तमालिन, धाई धाई मुता, गिन्निनी, भयनिन ।

५ पृ० ३२ से ३५ तक—हाव वर्णन ।

६ पृ० ३६ से ४२ तक—रम वर्णन, चारा अगा ममेत ।

नोट—इस 'रम रत्नाकर' नामक ग्रथ में देवजी ने दोहों में नायिका-नायक, दूती,
मयी मयादि का वर्णन करत नवरत्ना का सूक्ष्म वर्णन किया है । साथ ही विभाव, अनुभाव,
सचागी भाव तथा स्थायी भावा का भी वर्णन किया है । यह पुस्तक १८८१ में अपने भ्राता के लिए
ईश्वरी प्रसादन लिखी है । पुस्तक में कवि ने अपना अपन कुटुम्ब तथा ग्रंथ निर्माण का
मकर म कुछ भी कथन नहीं किया है । पुस्तक के अंत में निम्नलिखित दोहा है जिसमें उमरा
मरनु १८८१ में किया जाना सिद्ध होता है —

'इदु नाग वसु उमुनि भाम दया गुरवार ।

अमिन पत्र निधि पत्रनी रम मागर लिखि पार ॥'

—याज गिपॉर्ट १९०३-०५, पृष्ठ ८६६-७०

मेद है कि इन स्थानों पर जान पर भी हम य प्रतिशत उपकरण नही मकी जन इनकी
प्रामाणिकता के विषय में कुछ रहना मभव नही ।

ग्रन्थो का क्रम

'रम विनाम' के द्वितीय मन्तरण को छोड़कर उरि देव ने अपा किमो ग्रथ म उमरा

रचनाकाल नहीं दिया है अतः देव के ग्रथों का रचनाव्रम निर्धारित करना अत्यन्त कठिन है। डॉ० नगेन्द्र ने अपने ढंग में देव के ग्रथों का प्रम निर्धारित करने की चेष्टा की है परन्तु अप्रामाणिक मामूली तथा कल्पना पर आश्रित होने के कारण उनके अनेक निष्कर्ष भ्रमात्मक हैं। उदाहरण के लिए, 'भाव विलास' के जिस 'सवत मत्रह मै' दोहे के आधार पर उन्होंने सवत् १७४६ में इस ग्रथ की रचना, १७३० में कवि का जन्म तथा देववृत्तग्रथों का प्रम निश्चित किया है वह इस दोहे के प्रशिष्ट सिद्ध होने के कारण असुद्ध है। हम अभी कह आए हैं कि 'जाति विलास' देववृत्त 'रस विलास' की अपूर्ण प्रतिलिपि है परन्तु पद्धतों में प्रचलित मत को विस्तार देते हुए डॉ० नगेन्द्र ने अपनी ओर में बरपना कर ली है कि देव को देशव्यापी अपनी याना में १०-१५ वर्ष लगे होंगे, जिसके उपरगत उन्होंने 'जाति विलास' की रचना की होगी। ('देव और उनकी कविता'—डॉ० नगेन्द्र, पृ० ४६) अतः इस पद्धति से निर्धारित प्रम जैवज्ञानिक होने के कारण अमान्य है। भारतवर्ष में देव के ग्रथों का रचनाव्रम निश्चित करना यदि असंभव नहीं तो कठिन अवश्य है। केवल समस्त ग्रथों के प्रामाणिक पाठ के आधार पर इन छंदों की तुलनात्मक प्रतीक-सूची निमित्त कर, ऐसी दो प्रतियों का युग्म निर्धारित करते हुए, जिन दो ग्रथों में समान छंद मिलते हैं, ग्रथों का रचनाक्रम निश्चित किया जा सकता है। बहना न होगा कि इसकी मदद महत्त्वपूर्ण बड़ी 'सुख सागर तरंग' ग्रथ के दोनों मस्करण हैं। यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न अपने-आप में अध्ययन का स्वतंत्र एव विस्तृत विषय है तथा देव के समस्त ग्रथों का पाठ सम्पादन किये बिना इसका अध्ययन नहीं हो सकता अतः हम इस प्रश्न को भविष्य के लिए छोड़ रहे हैं।

'सुख सागर तरंग' से सम्बद्ध एक भिन्न संभावना कवि की रचना-पद्धति से सम्बन्धित होने के कारण यहाँ उल्लेखनीय है।

यह तो निश्चित है कि देव ने अपने विभिन्न ग्रथों में छंद-सकलन करते हुए 'सुख सागर तरंग' का निर्माण किया है। 'सुख सागर तरंग' के सम्बन्ध में क्या यह संभव नहीं है कि कवि स्फुट छंदों की रचना करने के पश्चात् उन्हें किसी लक्षण ग्रथ में रस के बजाय किसी एक ग्रथ में संकलित करता गया हो। एव इसी सङ्ग्रह में स्वयं उल्लेख अथवा उसके आदेश पर उसके किसी विषय या प्रतिलिपिका के अन्य ग्रथों में छंद संकलित किये हों—तथा 'सुखसागर तरंग' के दो संस्करण इसी सङ्ग्रह के सुनियोजित सङ्ग्रह हो? कवि के विभिन्न ग्रथों में इतनी अधिक महत्ता में समान छंद मिलने पर सुगम तथा व्यावहारिक होने के कारण, यह संभावना हमें अधिक उचित मान्य देनी है। इस संभावना के पक्ष में निम्नलिखित तर्क हैं—

(१) 'ईदं म्म धालनि' छन्द 'बाव्य रमायन' में ७.४३, 'प्रेम चन्द्रिका' में ४४७ तथा 'सुख सागर तरंग' में ४०५ गणना पर आया है। इस छन्द ने तृतीय चरण का स्वीकृत पाठ द्वा प्रसार है—

गणन माहन प्रेम गुन के पाहन दव मोहन अनूप रूप रचि ने राखन चोर।"

एन तीना ही ग्रथों की गभी प्राचीन प्रतियों में 'के' च्युटित है, यद्यपि अंत तथा पिगल के विचार में के 'रा' होना अनिवार्य रूप में आवश्यक है। ये गभी प्रतियाँ इतनी दूरगम्य हैं कि इनमें परम्परा पाठ-मिथुन सम्भव नहीं है और तीन-तीन ग्रथों की गभी प्रतियों में एक पाठ

का न्यून होना पाठ-मिथण की अपेक्षा इन प्रतियों में किसी प्रकार के प्रतिनिधि-सम्बन्ध के कारण अधिक सम्भव है। इन्में भी हमारी उपरोक्त धारणा पुष्ट होती है कि इन ग्रथों में छन्द के आगम का आचार कोई केन्द्रीय मसह रहा होगा, जिसमें कवि के आदेश पर उसके किसी गिण्य अथवा प्रतिनिधिकार ने छन्दों की समाविष्ट किया होगा।

(२) यदि देव का एक छन्द उनके तीन ग्रथों में भी आया है तो इन तीनों ग्रथों में छन्द के एक ही स्थल पर पाठ-विकृतियाँ मिलनी हैं। यह भी केवल पाठ-मिथण के कारण सम्भव नहीं हो सकता। यदि विभिन्न ग्रथों के समान छन्द किसी निश्चित सग्रह में न नियंत्रित जाकर मवैया स्वतन्त्र रूप में आय होने तो एक ही निश्चयक विकृति एकाधिक स्थलों की अनेक प्रतियों में क्यों मिलनी अथवा इन प्रतियों में एक ही स्थल पर विकृति इसी उत्पन्न होती। स्थान-संकोच के कारण मैं ऐसा केवल एक उदाहरण दे रहा हूँ—

'मन भावन के' छन्द का अन्तिम चरण है 'निय गारहि वार मँवारहि के निगवारनि वार निवार दिने।' छन्द में 'न निए' के मन्त्रिज रूप में 'के' आया है परन्तु 'भाव विलास' (४ ३१) की का० मा० प्रतियाँ एवं 'रस विनास' (८ १४) की प्र० प्रति में 'सँवारहि की' पाठ है, 'भाव विनास' की भा० एवं 'रस विनास' की मा० प्रति में 'सँवारनि ही' पाठ है, 'भाव विलास' की १० प्रति में 'सँवारहि के' तथा 'मुजान विनोद' की का० प्रति में 'सँवारनि वार' पाठ है। यह सम्भव नहीं है कि इन सभी प्रतियों में एक ही स्थान पर एक-दूसरे में पाठ-मिथण हुआ हो। पाठ मिथण की एक सीमा होती है। इस उदाहरण में यह प्रगट होता है कि यह छन्द जिस प्रति में था या तो उसमें इस स्थान पर कवि द्वारा पाठ-संशोधन हुआ या अथवा अपठ होने के कारण या कवि में भ्रम की सम्भावना होने के कारण यहाँ प्रतिनिधिकार का भ्रम हो सकता था। दोनों ही प्रकार में छन्द के आगम के केन्द्रीय आचार की सम्भावना पुष्ट होती है।

'सुख गागर तरंग' में समान छन्दा की तुलनात्मक सूची देखते हुए हमें यह ग्रथ भी इसी मसह ग्रथ का सर्वात्म-सुमयोजित संस्करण लगता है। जो भी हा, किसी निश्चित निरूपण पर पहुँचने के लिए इस पर और जितने सम्मीरना में विचार करने की आवश्यकता है।

इन सभी प्रश्नों का समाधान 'सुख गागर तरंग' के दोना संस्करणों के सम्पादन के बाद ही मिल सकता है वरन्ति यह महत्त्वपूर्ण ग्रंथ कवि की रचनाओं में एक रहस्यपूर्ण नहीं है।

छन्दों का परस्पर आदान-प्रदान

मध्य युग के जनेन कवियों में अपने एक ग्रंथ के छन्दों को दूसरे ग्रंथ में सम्मिलित करने की विशेषता पायी जाती है। तुलसीदास 'दोहावली' के दोहे इस कवि की अन्य कृतियों में भी मिलते हैं, कवि जेजवदास के अनेक छन्द उनके दोहों-ग्रथों में मिलते हैं और मनिगाम के 'नरिन नयाम' के अनेक दोहे उनकी 'मनसई' में पाए जाते हैं। इस प्रकार अनेक ही छन्दों को एकाग्रिा ग्रंथों में करने की प्रवृत्ति अकेले देव में नहीं अन्य कवियों में भी पायी जाती है। नतीर ग्रंथ तैयार करने की आवश्यकता भी इस प्रवृत्ति के मूल में विद्यमान एक कारण हो सकता है परन्तु उपरोक्त अतिरिक्त कारण सम्भवतः यह था कि एक ही छन्द एकाधिक लक्षणों का उदाहरण हो सकता था। देखने इन दोहों की कारणों में अपने छन्दों को एकाग्रिा

ग्रथों में स्थान दिया है। परन्तु इसमें कदापि सन्देह नहीं कि देव में यह प्रवृत्ति अपनी चरम सीमा पर है। यह तो निश्चित रूप में कहा जा सकता है कि कम से कम सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य में किसी अन्य कवि ने अपने छन्दों को डेरफेर कर इतने अधिक स्थलों पर नहीं रखा है, अन्य भाषाओं के किसी कवि ने भी ऐसा किया होगा, कहा नहीं जा सकता। देव के कुल छन्दों में से प्रायः आधे एक से अधिक स्थलों पर आये हैं। एक ही छन्द तीन-चार स्थलों पर तो साधारणतः मिल जाता है, 'आपुस में रस' छन्द पाँच स्थलों पर, 'देव में सीम' एवं 'बालम विरह' जैसे छन्द, सात स्थलों पर मिलते हैं। कुछ छन्द इनसे भी अधिक स्थलों पर आए हैं। छन्द-प्रतीकों की सूची का इस दृष्टि में विश्लेषण करने पर रोचक निष्कर्ष निकलते हैं। देव के आविष्कृत ग्रथों में छन्दों की तुलनात्मक स्थिति निम्नलिखित सारणी में स्पष्ट होती है —

ग्रथ	दोहे जो	अन्य	योग	दोहे जो	अन्य	योग	कुल
	केवल इस	छन्द जो		अन्यत्र भी	छन्द जो		योग
	ग्रथ में है	केवल इस		आए हैं	अन्यत्र		
		ग्रथ में हैं		भी आए हैं			
१ 'सुमिल विनोद'	८८	७४	१६२	७७	८८	१६५	२७७
२ 'सुजान विनोद'	१०१	६५	१६६	६	१८१	१८७	३५६
३ 'काव्य रसायन'	३७३	२०३	५७६	१	११६	११७	६९३
४ 'रस विलास'	१३०	१११	२४१	३७	१८६	२२३	४६६
५ 'भाव विलास'	—	१७६	१७६	१६६	४५	२४१	४१७
६ 'भवानी विलास'	७०	६५	१३५	७६	१७३	२४९	३८४
७ 'कृष्ण विलास'	४५	५१	९६	७६	१३६	२१०	३०६
	८०६	७४५	१५५१	४००	६०३	१३४५	२८६६

—अर्थात् इस मान ग्रथों के कुल २८६६ छन्दों में से १५५१ छन्द अन्यत्र नहीं मिलते तथा १३६५ छन्द एक से अधिक स्थलों पर आये हैं। यह मर्यादा अभूतपूर्व है।

पाठ-मिश्रण—देव के ग्रथों के अतिवृत्त छन्द अन्यत्र भी मिलने में जहाँ पाठ-संपादन में 'या' एवं 'महायता' मिलती है, इसी सामर्थ्य पर जहाँ कुछ ग्रथों का केवल एक प्रति में पाठ में संपादन संभव हुआ है, वहाँ इन छन्दों में परस्पर पाठ-मिश्रण भी घटस्ते से होने के कारण कठिनार्थ भी रस नहीं होती। किसी भी ग्रन्थ की प्रतियाँ में जहाँ देव के एक से अधिक ग्रथ हों, उनमें परस्पर पाठ-मिश्रण की संभावना पर निगाह रखना आवश्यक हो जाता है। जैसे पाठ-मिश्रण के लिए आधार-रूप में केवल 'सुग सागर तरंग' की एक प्रति का होना पर्याप्त है।

विभिन्न ग्रंथों की प्रतियों में हुए पाठ-मिश्रण की संपूर्ण सूची यहाँ देना असंभव है इस कारण केवल दोहे में उदाहरण दिये जा रहे हैं —

१ "जाता र ग्य गपटी मी गपटी मी लील पटी भगटी मी काम बहरी।"

—'सुजान विनोद' ४०३ ८

'नील पटी पाठ 'नीलपृष्ठी' अर्थात् अग्नि के अंश में समा है परन्तु 'सुजान विनोद' की

केवल ग० प्रति एव 'मुस मागर तरग' मे ६८० पर 'लान पगी' पाठ है ।

२ "आइ इनी अन्हवावन नाइन मोवा निण बहु सूधे मुजादन ।

है र्ही ठोख्ही ठाही ठयी मी हेमै क्क ठोडी उगे अहुगइन ॥'

—'काव्य रमायन' ५ ३५

'बहु' के स्थान पर 'र' पाठान्तर ग० हि० प्रतिया में मिलता है । 'अष्टयाम' म ० ० पर विभिन्न प्रतियों में 'क' तथा 'बहु' दोना पाठ है । 'काव्य रमायन' की ग० प्रति तथा हि० प्रति का आदर्श एक ही मसह की प्रतियाँ हैं जत दूनमे पाठ मिश्रण हुआ है । 'काव्य रमायन' की नी० प्रति तथा 'मुस मागर तरग' की नी० प्रति में 'वह' पाठ मिलता है । 'अष्टयाम' की कुछ प्रतियों में 'बह' तथा 'बहु' पद्यों में है । 'उगे' के स्थान पर 'अष्टयाम' की कुछ प्रतियों में 'दिये' पद्यों में भी मिलता है । 'काव्य रमायन' की हि० प्रति में 'दिये' पाठ है ।

३ "कमन मुनैज जोर जत्र तें मुनैज तुम नवमें मुनै न स्यामा मखिन के सोग् ।"

—'रम विनाम' ७ ६७

'रम विनाम' की केवल व्र० प्रति तथा 'मुजान विनोद' की का० प्रति में 'स्यामा' के स्थान पर 'स्याम' पाठ है ।

८ "जगर-मगर होत सहज जगद्विह मे अनि हो उग्यारे जब नैमिक उवटियल ।"

—'रम विनाम' १ ४८

'सहज' के स्थान पर 'सहन' विकृत पाठ 'मुजान विनोद' (३ ३१) की का० प्रति में एवं 'रम विनाम' की नी० प्रति में मिलता है । 'अनि ही' के स्थान पर 'नग मे' पाठ 'रम विनाम' की नी० ग० गजा० प्रतियों में एवं 'मुजान विनोद' की ग० प्रति में है ।

५ "भीर मैं भूले भए मयि मैं जब तें जदुराड की ओर कियो रह्य ।"

—'भाव विनाम' ० ०८

'ओर' के स्थान पर 'राड' विकृत पाठ 'भाव विनाम' की नी० हि० प्रतियों में एवं 'मुस मागर तरग' (५४०) की नी० प्रति में मिलता है ।

६ "नैकु चिनीन नही चित दे ग्ग हाम कियेहू हियेहू न खोरे ।"

—'भाव विनाम' ३ ३०

'हियेहू न' के स्थान पर 'हियो नहि' पाठ 'भाव विनाम' की नी० हि० प्रतियों में तथा 'मुजान विनोद' की ग० ४० प्रतियों में है ।

देव के पद्यों में परस्पर पाठ-मिश्रण की सम्भवा सबसे जटिल है । सामान्यतया यदि कोई एत छंद एवं में अधिक स्थानों पर आया है तो दोनो स्थानों पर प्राप्त पाठ, पद्यों के मूल श्रोत का पाठ होने के कारण कवि कृत माना जा सकता है परन्तु देव की प्रतियों में प्रत्येक स्वर पर पाठ-मिश्रण होने के कारण दो पद्यों की प्रतियों में प्राप्त छंद का समान पाठ भी स्वीकृत करने द्वारा मतलब रहने की आवश्यकता है । इस पाठ मिश्रण का पता पाना भी प्रायः कठिन है क्योंकि अधिकतर पाठ-मिश्रण प्रतियों के विकृत पाठों के न होकर मूल तथा मार्गण पद्यों के हुए हैं । इसी कारण हमने 'देव पद्य' तथा 'मुन्दगी [रतूर]' जैसे पद्यों का उपयोग करना उचित नहीं समझा है ।

सहायक सपादन सामग्री

इन जाग्राच्य ग्रथा वे अतिरिक्त हसन दबवृत्त निम्नलिखित ग्रथा वा उपयोग सहायक सपादन-सामग्री क रूप म किया है —

१ सुख नागर तरण — श्री बानदन मिश्र द्वारा सपादित तथा मन् १८६८ म अयोध्या म प्रकाशित सस्करण जिसना अगार बजरज पुस्तकालय की हस्तलिखित प्रति है । इस प्रति म अर्थाधिक पाठ मिश्रण हुआ है अत सपादित सस्करण के अनुसार छद-सख्या देत हुए हमने तीन गाव राजपुस्तकालय की सवत १६३२ की हस्तलिखित प्रति का उपयोग म किया है ।

२ सुख नागर तरण के कवि कृत द्वितीय सस्करण की नागरी प्रचारिणी सभा की प्रति (मत्या ५७३।१२) का उपयोग भी हुआ है ।

३ प्रम चंद्रिका — श्री मिश्र यधुजी द्वारा सपादित तथा नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा देव प्रयावली क अन्तगत प्रकाशित सस्करण । इस सस्करण क अनुसार छद-सख्या देत हुए बाद म उपरान्त काणिगज सरस्वती भंडार की सवत १८५७ की प्रति क पाठ का हमने उपयोग किया है ।

४ देव गनव — श्री गाविन्दचरण द्वारा सपादित एक भाव विलास के साथ बानचंद्र यदानय जयपुर म प्रकाशित ग्रथ का सस्करण ।

५ देव चरित्र — हिंदी साहित्य मम्मन सग्रहानय प्रयाग मे मिश्रयधु की प्रति म मन् १६६६ म तैयार प्रतिनिधि ।

६ अल्प्याम — भाग्य जीवन प्रम का सस्करण नवा सांगिक हस्तलिखित प्रतिया का पाठ ।

उपरान्त महायन सामग्री क अतिरिक्त श्री अंगरचंद नाहटा के मद्रह म शृंगारसग्रह श्री रायकृष्णदानगी के सग्रह म देव पीथूप तथा कवित्त मर्वय क अनिपय ग्रथ छाट-बड मद्रह सपादन क दखन म आत है परन्तु इनके देवकृत छन्दे वा आगम-न्यात पाठ न हान के कारण पाठ-मिश्रण क भय म हमन इन ग्रथा का उपयोग नही किया है । इसी कारण सदरी सिद्ध का भी छाट दिया गया है ।

सपादन प्रणाली

देववृत्त उपयोग नशण ग्रथा म ने स्वरुप से ग्रथा का सपादन अकनी प्रति क पाठ क आधार पर तथा अन्य का सपादन एकाधिक प्रतिया क आधार पर किया गया है ।

मुमिन किनोद तथा अकाना विलास क सपादन का आधार अकनी प्रतिया है । डा० मानाप्रसाद गुप्त ने बरारलीदास हृत जयकथानर का पाठ अकनी प्रति क आधार पर सपादित करन हुए इस प्रकार क सपादन की जा प्रणाली निधारित का है सपादन न उमग का ग्रथा क सपादन म पर्याप्त सहायता थी है । डा० मानाप्रसाद गुप्त ने प्राण्य प्रति क पाठ म वहा अकनी आर म गिराय गारा का किया है जसे पाठ निश्चित रूप म किरुन है । उहान विगप गगा पन ना कवि क अय प्रयाग उमरी गीता तथा उमता प्रवृत्ति क आधार पर रिय है । एक क मरुप म स्पिति इसम धागे भिन है कथारि उर क ह्य अय ग्रथा म भा मिनन क कारण उमर

छन्द का मगत पाठ देवकृत किमी अन्य ग्रथ में मिनता है। उन देव के अन्य ग्रथों में प्राप्त पाठ का उपयोग अवेन्नी प्रति के आधार पर सपादिन ग्रथों के सपादन में किया गया है परन्तु यहाँ भी आलोच्य ग्रथ में केवल ऐसे ही स्थानों पर अन्य ग्रथ के पाठ की महायता ली गई है जहाँ पहली प्रति का पाठ निश्चित रूप में विकृत है। यदि यह छन्द किमी अन्य ग्रथ में नहीं मिनता तभी कवि की शैली का ध्यान रखते हुए अपनी जोर से विशेष मनोधन किया गया है। दूसरे ग्रथों के सभी पाठ पर्याय दो कारणों में आलोच्य ग्रथ में नहीं स्वीकृत हुए हैं। एक तो, मभव है कि कवि ने दूसरे ग्रथ में स्वयं पाठ-परिवर्तन किया हो उन सभी पर्यायों का समिपण करने में बाद में विकृत-पाठ-मनोधन का अध्ययन करना जमभव होगा। दूसरे, अन्य एकत्री प्रति का पाठ-पर्याय, विकृत न होकर प्रतिलिपिकार कृत मनोधन भी हो सकता है अतः सभी पाठ-पर्यायों का सपादित प्रति में समाविष्ट कर लेना हमारे विचार में अवैज्ञानिक है।

जिन ग्रथों का सपादन एताधिक प्रतियों के आधार पर हुआ है उनकी सपादन-प्रति का विस्तार में वर्णन सम्बद्ध भूमिका में है। सामान्य रूप में यह माना जाता है कि जिन दो प्रतियों में पर्याप्त मध्या में पाठ विकृतियाँ समान हैं, उनमें से समान विकृतियाँ इन दो प्रतियों के एक ही आधार में प्रतिलिपि होने के कारण आई हैं। अतः ऐसी प्रतियों की परस्पर, जममें इन प्रतियों में समान पाठ विकृतियाँ नहीं मिलती, इन समान विकृतियों वाली प्रतियों की परस्पर में स्वतंत्र होगी। इन्हीं समान पाठ-विकृति-सम्बन्ध द्वारा सम्बन्धित प्रतियों के समुच्चय निर्मित करते हुए हमने प्रतियों के बग-वृक्ष का निर्माण किया है। इन बग-वृक्ष की दो स्थान शालाओं में उपलब्ध पाठ को हमने मूल प्रति का माना है।

इन ग्रथों के सपादन में देवकृत अन्य ग्रथों के पाठ का उपयोग व्यापक रूप में परन्तु केवल महायक सामग्री के साध्य के रूप में हुआ है। यहाँ भी अन्य ग्रथों के समस्त पाठ-पर्याय उपरोक्त कारणों से मिथित नहीं किये गए हैं। यदि इन पर्यायों को एक स्थल पर रखा जाता तो अयुक्तम था परन्तु ऐसा विस्तारभय में नहीं किया गया है। जिज्ञासु महदय छन्द प्रतीक की गहामता में अन्य ग्रथों में आए छन्द के पाठ की तुलना कर इन पाठ-पर्यायों का अध्ययन कर सकते हैं।

हमने हम सपूर्ण सपादन-कार्य में अपनी आर में किमी स्वयं पर मनोधन किया है तो उसका उन्नेव ग्रथ की भूमिका में भी कर दिया है।

एथर जाधुनिज वैज्ञानिक रिजि में हिन्दी के अनेक ग्रथों का पाठ-सपादन हो चुका है अतः हम प्रणाली एव हममें व्यवहृत अतिवत्त शब्दावली में पाठक परिचित हो चके हैं। फिर भी प्रस्तुत सपादन के सदर्थ में हमने जिन शब्दों का प्रयोग विशेष अर्थ में किया है उनका स्पष्टीकरण करना आवश्यक है। स्मरण रहे कि हमारा उद्देश्य परिभाषा देना नहीं, केवल अपने मतम्य का स्पष्टीकरण है।

विकृत पाठ—सामान्यरूप में हम उस पाठ को विकृत मानते हैं जो मूल पाठ में प्रति-निधितार के दृष्टि भ्रम के कारण, रिपि-भ्रम के कारण अथवा अनेक अन्य गमत्र कारणों में से किमी कारण में विकृत हुआ हो तथा जिमें निश्चित रूप में जसुद्ध कहा जा सके। प्रस्तुत कवि की रचनाओं में विकृत पाठों की स्थिति पूर्णतया स्पष्ट नहीं है क्योंकि विभिन्न प्रतियों में पाठान्तरोपी मध्या-वृत्तना के कारण निश्चित रूप में विकृत अथवा अमगत पाठ बहुत कम मिलते हैं।

अत एव पाठान्तर को महत्सा सुविधा मे विवृत सिद्ध कर गवना कठिन है। इसका एक कारण प्रतिलिपिकार की सजगता है। ब्रजभाषा वाक्य मे सामान्यतया परिचिन होने के कारण यदि प्रतिलिपिकार की आदसं प्रति मे किमी स्थल पर असुद्ध पाठ भी है तो उसने उसके स्थान पर अपनी ओर से दूसरा सार्थक तथा यथासभव सगत पाठ रख दिया है। प्रतिलिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त इस पाठ को हम केवल शब्दार्थ अथवा प्रमग की सगति-असगति के आधार पर मूल प्रति का अथवा विकृत नही सिद्ध कर सकते। ध्यान रहे कि रीतिकाल तक आते-आते ब्रजभाषा इतनी विकसित हो चुकी है, उसका शब्द-समूह इतना सर्वद्वित होकर सूक्ष्म से सूक्ष्म भावों को अनोकी रीति से अभिव्यक्त करने मे समर्थ है कि केवल शब्दार्थ के आधार पर विकृतियों का निर्धारण करना कठिन है। कुछ उदाहरण लें। स्वीकृत पाठ है "नेमर बंसु कदव कुरौ कचनारनि की रचना उर मूली। — मुजान विनोद" ४ १४ १। इस ग्रंथ की केवल का० प्रति मे 'ररौ' पाठ मिलता है, जो वास्तव मे 'क' के प्राचीन रूप मे भ्रम होने के कारण संभव है। परन्तु 'ररौ' शब्द की व्युत्पत्ति एक फलदार वृक्ष के अर्थ मे 'ररु' से मानी जा सकती है अत का० प्रति का पाठ केवल अर्थ के आधार पर असंगत नही कहा जा सकता। 'कुरौ' पाठ प्रतियों के पाठ-साध्य पर तथा कवि मे अनुप्रास का आग्रह होने के आधार पर अनुप्रास-युक्त हान के कारण मूल प्रति का माना गया है। ऐसा ही दूसरा उदाहरण है— गुलगुनी गोल मन्मल वंसो गेंदुआ गडै न गडी जी मे जक करल डिठाई सी। — रम विनाम" ५ ११। रम विनाम की कुछ प्रतियों मे प्राप्त 'गेंदुआ पाठ 'दु' मे 'ड' का भ्रम हान मे संभव है परन्तु त्रिया के अर्थ मे मस्कृत के 'गन्डव' शब्द से इन दोनों शब्दों की व्युत्पत्ति होने के कारण दूसरा पाठ केवल शब्दार्थ के आधार पर विवृत नही सिद्ध हो सकता। यहाँ हमने प्रतियों के साध्य पर 'गेंदुआ पाठ स्वीकृत माना है।

उपर्युक्त कारणों मे हमने किमी पाठ को विवृत मानने के लिए शब्दार्थ के साथ-साथ प्रसंग मे उसकी सगति-असगति पर भी विचार किया है क्योंकि बहुधा अर्थ के विचार मे सगत पाठ भी उग प्रमग मे असगत हाना है।

पर्याय—प्रतिलिपिकार बहुधा अपनी प्रति मे कठिन शब्द के स्थान पर समवा सरल पर्याय रख देने है। एक शब्द के स्थान पर किन्ही दो प्रतियों मे समान पर्याय मिलने मे भी उनका बीच प्रतिनिधि सम्बन्ध सम्भावित माना जाता है। छंद मे चमकार लान के लिए, अथवा अनेक अन्य कारणों मे बहुधा प्रतिलिपिकार एक पाठ के स्थान पर समानार्थी दूसरा पाठ रख देता है। उदाहरण के लिए घाघरो घनेग लकी लटे लटे लीक पर" (रम विनाम ७ ५०) के स्थान पर कुछ प्रतियों मे नव पातरे पं पाठ मिलता है। दोनों पाठों का भाव एक ही है। प्रतियों मे शब्द-पर्याय के अभाव मे समान पाठ पर्याय मे भी प्रतियों का सम्बन्ध सम्भन मे महायता मिलती है अत हमने पाठ पर्याय के कुछ स्थानों का भी पर्याय के साथ रखा है।

लिपिजन्य विकृति—मन क्रीर, जायमी तथा शास्वामी तुनमीदाम के ग्रंथों की प्रतिलिपिकारण मे नामकी लिपि के अतिरिक्त क्वी, गुम्बुवी तथा फाग्वी लिपियों का प्रयोग होने के कारण लिपिक्रम्य अनेक विकृतियाँ पायी जाती हैं। डा० मानाप्रसाद गुप्त ने जायमी तथा तुनमी-दाम की रचनाओं के मसूदा मे तथा डा० शास्वनाथ त्रिपाठी ने क्रीर ग्रन्थावली के मसूदा मे विस्तार मे इन विकृतियों का विवेचन किया है। कति देव का यह मौलाम्य नही रहा कि उनगी

रचनाएँ नागरी के अतिरिक्त किसी अन्य लिपि में प्रतिलिपि हो अतः प्रस्तुत सपादन में हमें निर-
पवाद रूप से केवल नागरी लिपि से उत्पन्न विकृतियाँ मिलती हैं। ये विकृतियाँ वर्ण के किसी
अपरिचित प्राचीन रूप-रूपान्तर में प्रतिलिपिकार को किसी अन्य वर्ण का भ्रम होने के कारण हुई
हैं। 'क' के अनेक रूप विभिन्न प्रतियों में पाये जाते हैं अतः इसमें 'ह' तथा 'क' का भ्रम प्रतिलिपि-
कारो को हुआ है। ("भ्रममिली भाररनि हिलमिली हाररनि"—'सुजान विनोद' ७ ३८, "सूभै-
सूदै"—वही ७ ३६) इसी प्रकार 'र' के प्राचीन रूप में 'रू' का भ्रम एव प्राचीन 'ओ' में 'ड' का
भ्रम भी सम्भव है। यद्यपि प्रतिलिपिकार का दृष्टि-भ्रम प्रत्यक्ष में इन पाठ-विकृतियों का कारण
जान पड़ता है परन्तु इन भ्रम का मूल वर्ण के रूपान्तर में निहित है अतः हमने उस प्रकार की
विकृतियों को लिपिजन्य विकृति शीर्षक के अन्तर्गत माना है।

प्रतियाँ : सामान्य परिचय : देववृत्त लक्षण-ग्रथों की विभिन्न प्रतियाँ मुख्य रूप से केवल
दुष्ट सग्रहों में प्राप्त हुई हैं एव एक तथा दूसरे सग्रह की प्रतियों में निश्चित मध्यस्थ मिलता है
अतः यहाँ इन सग्रहों के परस्पर-सम्बन्ध तथा उनकी विश्वसनीयता पर विद्वगम दृष्टि डालने से
आगे के विस्तृत विवेचन को सम्भने में सहायता प्राप्त होगी।

१ का०—काशिराज सरस्वती भट्टार, रामनगर दुर्ग, काशी, की जितनी प्रतियों का
हमने उपयोग किया है वे सभी प्राचीन, सबत् १८५७ के आस-पास की तथा विश्वसनीय है।
पाठ-विकृतियों की परीक्षा करने पर ये अपने ग्रन्थ के मूल आदर्श से कुछ ही पीढ़ी आगे की प्रतियाँ
मालूम होती हैं।

२ नी०—नीलगाँव राजपुस्तकालय, नीलगाँव, जिला सीतापुर, की प्रतियाँ भी अत्यन्त
प्राचीन तथा कवि की उन पौधियों की परंपरा में हैं, जिनमें कवि के पदचात् किसी अन्य व्यक्ति
ने छदा का प्रक्षेप तथा पाठ-भ्रमोत्पन्न किया था। इस सग्रह की प्रतियाँ सबत् १९४२ के लगभग की
हैं। इन सग्रह की प्रतियों में ग० सग्रह की प्रतियों के समान परस्पर पाठ-मिश्रण नहीं हुआ है।

३ गं०—ब्रजराज पुस्तकालय, गधौली, सीतापुर, की प्रतियों में पाठ-मिश्रण खूब हुआ
है अतः ये प्रतियाँ पाठ के निवार से विश्वसनीय नहीं हैं। ये प्रतियाँ नीलगाँव सग्रह की प्रतियों की
समकालीन—सम्भवतः उनकी प्रतिलिपियाँ हैं।

४ नागरी प्रचारिणी सभा, याज्ञिक सग्रह की प्रतियाँ प्राचीन, १८७५ के लगभग की
तथा सामान्य रूप में विश्वसनीय हैं। ये सभी प्रतियाँ भरतपुर के आमपास में प्राप्त हुई हैं अतः
राजस्थान से प्राप्त अन्य प्रतियों के साथ इन सग्रह की प्रतियों का सम्बन्ध पाया जाता है।

५ नागरी प्रचारिणी सभा, आर्य भाषा पुस्तकालय, की हस्तलिखित प्रतियाँ आयुनिव
समय में सबत् १९७७ के लगभग ग० सग्रह की प्रतियों में तैयार प्रतिलिपियाँ हैं।
६ हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, की प्रतियाँ जायँ भाषा पुस्तकालय की प्रतियों में
प्रतिलिपि की गई हैं। ग० प्रति से प्रतिलिपि होने के कारण इन दोनों सग्रहों की प्रतियाँ विश्वस-
नीय नहीं हैं।

७ हिन्दी साहित्य सम्मेलन संग्रहालय, इलाहाबाद, की प्रतियाँ राजस्थान में प्राप्त हुई
हैं, सबत्, १८७५-८० के आमपास की हैं एव विश्वसनीय हैं। राजस्थान में प्राप्त अन्य प्रतियों के
साथ इन प्रतियों का सम्बन्ध मिलता है।

कवि-प्रवृत्ति—रिगी भी कवि के प्रयोग का गपादन उगवी प्रवृत्तियों को समझे रिगी नहीं हो गवना अतएव सुविधा के लिए हम कवि देव की भाषा-शैलीगत कुछ विशेषताओं की ओर इंगित कर रहे हैं।

अनुप्रास—कवि देव पर भाषा का स्वरूप विकृत करने का आरोग अनेक गमनोंवालों ने लगाया है तथा गद्यों की तोट-भरोड का साधन भी उन पर है। वास्तव में देव ने यह सब केवल अनुप्रास तथा यमक के प्रयत्न आवरण के कारण किया है। “देव दुति गात नव जीवन जगमगात तरजि सजान जलजात परभात के” जैसी ध्वनि-योजना देव के छन्दों में पग-पग पर मिलेगी। और ध्यान दें, इगम केवल अनुप्रास का निर्वाण आग्रह नहीं, समान ध्वनियों का बारम्बार प्रतिध्वनि होना नाद-गोदय है, जो परम सुन्दर-सुखमार भावों के आयनन-रूप में कवित्त-भरवैया छद की परमोपलब्धि है। डा० नगेंद्र ने ध्वनि-योजना के इस प्रश्न को बड़े ही सुन्दर ढंग से स्पष्ट किया है। (दय और उनकी कविता—गूट २४३-४६)। इसी आवरण के कारण देव ने यत्र-तत्र-मंत्र-मन्त्रों के प्रचलित रूप को छद की ध्वनि-योजना के अनुरूप डाल कर रखा है। उचित-अनुचित का निर्णय करना बिना समानोचनो का कार्य है, कवि ने परिचित जाना हमारा कर्त्तव्य है। देव की रचनाओं में कीने के साथ ‘नेकु में’ के लिए ‘नीरे’ (“नीके में कीने हूँ”—‘काव्य रमायन’ २ ५७), ‘इडाइ’ के साथ ‘बडाइ’ के लिए ‘बडाई’ (‘देव दुर्गे मां इडाइ बडाइ’—‘कुशल विलास’ ६ ६) जैसे प्रयोग अनेक मिलेंगे।

इसमें मन्दह नहीं कि दय ने गद्यों का रूप परिवर्तित करने में अन्य कवियों में अधिक स्वतन्त्रता दिखलाई है। उनकी रचनाओं में ‘सीला गहिन’ के लिए ‘सलील’ (“पनि निसि अतत सलील”—‘कुशल विलास’ ७ २) तथा ‘पूरने’ के अर्थ में ‘पूजे’ (“देवतह दिवसाध न पूजे”—‘सुजान विनोद’ १ ५६) जैसे प्रयोग भी कम नहीं हैं। दय के “भाग भरे भासप सुहाग बरमत है” प्रयोग पर कवि द्रुलह ने आपत्ति की थी कि “भाग भरे मुख” पाठ होना चाहिए। “ऐसी रनीनी अहीरी अहो कही क्या न लगे मन मोहने मीठी” पर अभी तक विवाद समाप्त नहीं हुआ है। प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र का कहना है कि ‘मन मोहने’ के स्थान पर ‘री गोपालहि’ पाठ होना चाहिए। (‘विहारी’—प० विश्वनाथप्रसाद मिश्र—गूट ६६-७०) असंभव नहीं जो केवल अनुप्रास के माह से दय ने यह पाठ रखा हो।

संक्षेप—वर्ण-संक्षेप तथा शब्द-संक्षेप के द्वारा संक्षेपकवि की दूसरी महत्वपूर्ण विशेषता है। “सके खार ररन” (‘कुशल विलास’ १ १३) में ‘सय के’ का एव वर्ण लुप्त है। “राव लागनि के हीरा वाजे हाथ हूँ विकाल है” (‘रस विलास’ १. ३२) में ‘हियरा’ का एक वर्ण नहीं है—‘हीरा’ में श्लेष भी है। “बाही के जेये बलाइ त्यो वालम” (‘भाव विलास’ ४ ५७) में ‘जाइये’ का एक वर्ण लुप्त है। “आजु मिले बहुते दिन भावते” (‘काव्य रमायन’ २ ५५) अर्थात् बहुत दिन बाद—‘बाद’ लुप्त है। “सग के न जाने गए डगर हराने देव” (‘काव्य रमायन’ २ ४०) अर्थात् न जान कहाँ गए—परन्तु ‘वहाँ’ प्रच्छन्न है। ‘के लिए’ के लिए केवल ‘के’ आया है ‘कु जन केलि के बेली नवेली—’ (‘सुजान विनोद’ ६ ५)—यहाँ ‘वाले’ के अर्थ में ‘के’ नहीं आया है।

दूरान्वय—कवि देव के छंदा में दूरान्वय की प्रवृत्ति भी पाई जाती है। कदाचित् यह

भी ध्वनि-संयोजन पर अधिक बल देने के कारण है। अनेक स्थलों पर अर्थ की मगनि वैधान के लिए पदों को अनाधारण रूप में भग करना होता है। "कोटिक मार कुमारनि" का अर्थ मिश्र बहुओं ने "कामदेव के कुमार" किया है परन्तु हमारे विचार में इनका अन्वय इस प्रकार करना उचित है "कोटिक कुमार मारनि" अर्थात् 'नि' मयवकायक का चिह्न न हाकर बहुवचन का सूचक है। इसी प्रकार "कोविद काम कला मल्लानि" ('रम विलाम ५ ३८) में भी जय की सगति के लिए 'नि' को 'कला' में मिलाकर 'कलानि' बहुवचन का रूप बनाना होगा।

इन प्रवृत्तियों को समझे बिना कवि के अभीष्ट भाव तक पहुँच सकना संभव नहीं है। आश्चर्य है कि देव में अनुप्रास का यह आग्रह स्वीकार करने पर भी डा० नगेन्द्र ने 'दुहुप' जैसे शब्दों को निरर्थक शब्दों को श्रेणी में डाल दिया है — "देव के काव्य में ऐसे शब्द भी मौकड़ों हैं जिनका कोई अर्थ ही नहीं मिलता। तीस धील, बाबन, हुद्र, सीजो, बगीचन, गमार्या हुद्रव तरावक, हूप आदि आदि।"

इनमें से न जान कितने शब्द उन प्रतिलिपिकारों अथवा मपादका के हैं, जिनकी सामग्री के आधार पर डा० नगेन्द्र ने यह निर्णय दे दिया है। 'बावस' यदि 'बायस' का विकृत रूप है तो यह 'कौवे' के अर्थ में 'काव्य रमायन' में आया है— "बायस चामु चवात"। दुहुप विकृति 'दुहुप' में हुई है जो 'दुहुप' के अत्यानुप्रास पर 'रहुप' तथा 'मुहुप' शब्दों के साथ 'दुहु' के लिए आया है। ('दुसाल विलास' ५ २१) 'तरावक' विकृति 'रति मानत रावक' का अचुद रूप स पद-भग करने के कारण हुई है। इसी प्रकार 'हूप' भी "निरगुनहू पुह" ('रम विलाम' ४ १७) का अचुद रूप में भग करने के कारण हुई विकृति है।

शब्द-रूप—अनेक वर्ष हुए 'माधुरी' में एक हस्तलिखित पत्र देव के हस्तलेख के नाम में छापा था। हमने यह प्रतिलिपि गधौली में देखी थी। इस लेख में छोटी-छोटी अचुदियाँ होनी कारण यह दब के अतिरिक्त किसी अन्य ध्यवित का हस्तलेख हो मरता है—यद्यपि इनमें भी शब्दों के अकारान्त की अपेक्षा अकारान्त तथा उकारान्त की अपेक्षा अकारान्त रूप अधिक हैं। पुममरा के देव वसजों के पाम मयहीत प्रतियाँ भी देव का स्वहस्तलेख नहीं हैं। यद्यपि इनमें भी अकारान्त तथा अकारान्त रूप अधिक हैं। फिर भी हमने समस्त शब्दों को एक ही रूप में डालन की अपेक्षा प्रय की अनेक हस्तलिखित प्रतियों में प्राप्त रूप अथवा प्रय की प्राचीनतम प्रतियों में प्राप्त रूप सपादित पाठ में दिया है। हमारे विचार से एन ही कवि में शब्दों का एक ही रूप सर्वत्र मिले, यह अनिवार्य रूप में आवश्यक नहीं है।

शब्द-रूपों को निश्चित करना अत्यंत आवश्यक है। एन ही वान के जनन कविया की भन्न-भिन्न क्षत्रों में प्राप्त एकाधिक प्रतियों से एकनित सभी शब्द-रूपों के तुलनात्मक अध्ययन आधार पर उग काल में शब्द रूपों की स्थिति निश्चित की जा सकती है। परन्तु यह प्रस्तुत प्रय से स्वतंत्र कार्य है।

भाव विलास

भूमिका

प्रतिषा : प्रतियो की बहिरग परोक्षा—'भाव विलास' के पाठ-सपादन में प्रयुक्त विभिन्न प्रतियो का विवरण इस प्रकार है —

१ ज०—अर्थात् जयपुर से प्रकाशित 'भाव विलास' का संस्करण । जयपुर के श्री गोविन्द-द्वारा ने मन् १९१६ ई० में अपने निजी पुस्तकालय की सवत् १९१३ की हस्तलिखित प्रति के आधार पर यह संस्करण प्रकाशित किया था । सपादक ने प्रतिलिपि-मवत् के अतिरिक्त प्रति के सवध में अन्य सूचनाएँ नहीं दी हैं । इस संस्करण में पचम विलास, जिसमें अलकारों का विवेचन है, नहीं है ।

सामान्य लेखन-प्रमादों के होते हुए भी प्रति का पाठ अत्यन्त विश्वसनीय है ।

२ भा०—अर्थात् भारत जीवन प्रेस का संस्करण । 'भाव विलास' का एक अन्य संस्करण भारत जीवन प्रेस, काशी, ने सचालक श्री रामकृष्ण वर्मा ने मन् १८९३ ई० में सपादिन कर प्रकाशित किया था । ग्रथ के मुख-पृष्ठ पर प्रकाशित सूचना में ज्ञात होता है कि सपादक ने इसे "रियानन सूर्यपुरा से हाथ की लिखी प्रति पान्तर अत्यन्त परिश्रम से शुद्ध कर छपवाया है ।" आदश प्रति के विषय में अन्य सूचनाओं का यहाँ भी अभाव है । सपादक की ओर से काफी शुद्धीकरण होने के कारण प्रति का पाठ अधिक विश्वसनीय नहीं है ।

३ सा०—अर्थात् हिंदी साहित्य सम्मेलन सप्रहालय, प्रयाग, की सवत् १८७१ की हस्तलिखित पोथी । सप्रहालय में यह पोथी १९५७ । २०९५ सख्या पर है । इस प्रति में ११६ पन् तथा प्रति पृष्ठ १८ पंक्तियाँ हैं । लेखन में काली तथा लाल स्याही का प्रयोग हुआ है । प्रति की चौड़ाई ६ इंच तथा लंबाई ११ इंच है । कुछ स्थला पर किन्हीं अन्य व्यक्ति ने प्रति का पाठ शुद्ध किया है, ऐसे संशोधन दूसरी कलम से पार्श्व पर अंकित हैं । प्रति की अंतिम पुष्पिका इस प्रकार है—'भाव विलास—पचमो विलास ॥ सवत् १८७१ मिति द्वितीय भाद्रपद वदि मिति आसाढ पचमी । दोतवाण सवत् १९१३ ॥" यह प्रति सप्रहालय की वृद्धी के श्री राव मुकुन्दसिंह से प्राप्त हुई है । प्रति का पाठ सामान्य रूप में विश्वसनीय है ।

४ हि०—अर्थात्, हिंदुस्तानी एकेडमी, प्रयाग, के सप्रह की संवत् १९७७ की हस्तलिखित प्रतिलिपि । काशी नागरी प्रचारिणी मभा ने गयोनी के श्री बजराम पुस्तकालय की 'भाव विलास' की प्रति से यह प्रतिलिपि एन्डमी के निमित्त तैयार कराई थी । यह प्रति मर्फेद लाइनदार वागण पर लिखी है तथा इसमें ७२ पन् एवं प्रति पृष्ठ पर ३० पंक्तियाँ हैं । प्रति की लंबाई १३ इंच तथा चौड़ाई ९ इंच है । प्रति की अंतिम पुष्पिका इस प्रकार है—'बट्टरप्रसाद वायस्य श्री काशी जी में नागरी प्रचारिणी मभा के निमित्त लिखा । मार्गशीर्ष कृष्ण सान सवत्

१६७७।"

यद्यपि हि० प्रति नो० समूह की ही एग आधुनिक प्रति है गरन्तु नो० प्रति अत्यधिक जर्जर एव स्थान-स्थान पर अपठ है इसलिये हमने द्रग प्रति का उपयोग किया है।

द्रग प्रति का पाठ अधिक विद्वगनीय नहीं है।

५ नो०—अर्थात् नीलगांधि राजपुस्तकालय, जिला सोतापुर, की 'भाव विलास' की अपूर्ण प्रति। इस प्रति की एक उल्लेखनीय विशेषता है कि इसने आदि में तथा प्रत्येक विलास के अंत की पुणिका में ग्रथ-नाम 'भाव प्रवाद' मिलता है। यह अत्यंत नष्ट-भ्रष्ट अवस्था में मुझे प्राप्त हुई थी। अनेक स्थलों पर पाठ दोमको द्वारा नष्ट हो गया है। पत्रों की संख्या ४२ एव प्रति पृष्ठ पंक्तियों की संख्या १६ है। यह प्रति 'जाति विलास', 'उमराउ कोप' आदि ग्रथों के साथ एक जिल्द में बंधी है। इनमें में अंतिम ग्रथ, अर्थात् 'उमराउ कोप' की पुणिका में ज्ञात होता है कि गौरीशंकर दुबे ने सन् १६४३ में इन ग्रथों की प्रतिलिपि की थी। 'भाव विलास' की प्रति की अंतिम पुणिका इस प्रकार है "इति श्री देवदत्त विरचिते भाव प्रवादे पंचमो विलास ॥५॥ जदपि बहुन अमुद्ध प्रति तदपि मुद्ध बहु वीन । ताहू कौं पुनि सोधिहै मज्जन महा प्रवीन ॥"

प्रति में केवल श्लेष लक्षण दोष्ट ५ ४२ तक ही पाठ है। यह प्रति 'बहु मुद्र वीन' होने के कारण अधिक विश्वसनीय नहीं है, अगर से दोमको द्वारा पुनः माधने के कारण अनेक स्थलों का पाठ अपठ भी है।

६ का०—अर्थात् काशिराज सरस्वती भंडार, रामनगर दुर्ग, काशी, की सवत् १८५७ की हस्तलिखित प्रति। इस प्रति की सूचीपत्र संख्या साहित्य १२-३६ है। पत्र-संख्या ६६ तथा प्रति पृष्ठ पंक्तियों की संख्या १० है। प्रति की चौड़ाई लगभग ६ इंच तथा सवाई ४ इंच है। प्रति अपनी चौड़ाई में खुले पत्रों पर लिखी है। लेखन में काशी तथा लान स्थाही का उपयोग हुआ है। कागज पुराना तथा मटमैला है। पाठ "—लो अकुर होइ" १ ५ से प्रारंभ होता है, इसके पूर्व एक पत्र सादा छूटा है। प्रति में कुछ स्थलों पर उसी हस्ताक्षर से पार्श्व पर पाठान्तर संकलित है। प्रति की अंतिम पुणिका इस प्रकार है—"सवत् १८५७ मिति पोषे १ माने शुक्ल पक्षे रवि वामर लिखित श्री काशी जी मध्य ईश्वरीप्रसाद गौड ब्राह्मण अपने पठनाय ॥"

प्रति का पाठ विश्वसनीय है।

अन्य प्रतिर्मा—'भाव विलास' की उपर्युक्त प्रतियों के अतिरिक्त मुझे इस ग्रथ की अन्य प्रतिर्मा भी प्राप्त हुई है किन्तु उसी श्राव्य की एक अन्य प्रति संपादन-कार्य के निमित्त स्वीकृत हो चुकने के कारण इन प्रतियों का उपयोग नहीं किया गया है। इन प्रतियों का विवरण इस प्रकार है —

७ का०—अर्थात् काशिराज सरस्वती भंडार की दूसरी प्रति। यह प्रति भंडार के साहित्य १३-४० विंडा में है। प्रति की चौड़ाई ८ इंच तथा लम्बाई लगभग १० इंच है। पत्रों की संख्या ५२ तथा प्रति पृष्ठ पंक्तियों की संख्या १७ है। प्रति बगल में जिल्दबन्द है। कागज माटा तथा मफेद है। इस मुलिवित प्रति के लेखन में काशी लान स्थाही प्रयुक्त हुई है। प्रतिलिपिका का नाम-स्थान, प्रतिलिपि-संबन् आदि प्रति में नहीं दिखे हैं। प्रति का पाठ का० प्रति के समान आदि में सज्जित है एव "जा नव रम के आदि में पहिलो अकुर होइ"—१ ५ से प्रारंभ होता है।

इसी शाखा की वा० प्रति प्राप्त होने तथा इन प्रतियों में समान विवृतियाँ मिलने के कारण हमने इस प्रनि का उपयोग नहीं किया है।

■ गं०—अर्थात् श्री बजरत्न पुस्तकालय, गधौली, जिला सोतापुर की सबत् १९३५ की हस्तलिखित प्रति। लगभग १२ इंच लम्बाई तथा ८ इंच चौड़ाई वाले रजिस्टर में यह प्रति अन्य ग्रन्थों के साथ जिल्दबन्द है। ग्रन्थ का नाम आदि में तथा विलास के अन्त की पुष्पिकाओं में पहले 'भाव प्रकाश' या परन्तु प्रतिलिपिकार ने बाद में 'प्रकाश' को वाली स्याही में सशोधित कर 'विलास' बनाया है। केवल ग्रन्थ की अन्तिम पुष्पिका के 'भाव विलास' पर वाली स्याही में सशोधन नहीं हुआ है।

इस प्रति में "इलेप लक्षण—वरनत सत विहृत"—५ ४२ त्त का पाठ एक हस्तलेख में है, इमने आगे ग्रन्थ के अन्त तक का पाठ दूसरे हस्तलेख में है। ५ ४० तक का लेखक मादे कागज पर पेंसिल में सिरारेखा मीचे मिला लिखता था परन्तु दूसरे लेखक ने "—वरनत मन विहृत" पाठ (जो पकिन के मध्य में समाप्त होता है) से आगे, यही अधूरी पकिन में पहले पेंसिल में सिरारेखा खींचकर लिखना प्रारम्भ कर दिया है। इसी स्थल पर नी० प्रति के भी खट्टिन होने के संदर्भ में यह तथ्य विशेष रूप से स्मरणीय है।

इस प्रसंग में श्री बजरत्न पुस्तकालय में मगहीत 'टिकैत राय प्रकाश' की अपूर्ण प्रति के अन्त में प्रतिलिपिकार की निम्नलिखित टिप्पणी द्रष्टव्य है "यतना ही ग्रन्थ मिला सो लिखा गया और जब मिलेगा तब लिखेंगे—जुगन विनोर।" ऐसा मालूम देता है कि 'भाव विलास' की आलोच्य प्रति का आदर्श भी ५ ४२ से आगे सजित या अत प्रति के स्वामी ने ग्रन्थ का दोषाद्य किमी अन्य प्रति में पूर्ण किया है। ग० प्रति में 'मालती मो' ५ २० छद 'जानि है मुजानि' छद के पहले, पादर्व पर दूसरे हस्तलेख में है। इस प्रति में तथा वा० प्रति में 'जानि है मुजानि' छद के पक्ष प्रथम तीन चरण ही मिलते हैं। सग्य लक्षण ५ ११ दोहा भी, जो नी० प्रति में प्रमादवदा केवल प्रथम तीन चरण ही मिलते हैं। सग्य लक्षण ५ ११ दोहा भी, जो नी० प्रति में प्रमादवदा के कारण ग० प्रति का उपयोग सपूर्ण रूप से न करने हि० प्रति में इसमें पाठान्तर का मित्रान कर दिया है।

■ दा०—अर्थात्, तरुण भारत प्रयावली, दारागज, प्रयाग से प्रकाशित संस्करण। श्री नक्षत्रीनिधि चतुर्वेदी ने मवत् १९९१ में 'भाव विलास' का यह सटीक सपादन प्रकाशित किया है। सपादकीय भूमिका में पाठ के आदर्श का कोई उल्लेख नहीं है परन्तु भा० प्रति में इसके पाठ की तुलना करने पर जान होता है कि दा० प्रति का आधार यह भा० मुद्रित संस्करण ही है। विस्तारभय में हम केवल थोड़े से प्रमाण दे रहे हैं—

४ १० दोहा केवल भा० दा० प्रतियों में मुद्रित है। केवल इन्हीं प्रतियों में उत्तरजिना नागिना लक्षण दोहा ४ ८९ के पदचान् स्तान विपर्यय में वनहनरिना नागिना का उदाहरण मिलता है, जो अगम्य है। ४ १११ का सामान्य पाठ है "नाट मो नेट को नाता न नेबु जरु पर पाद प्रनीति बदावै।" भा० प्रति में अमुद्र पद-भग करने में 'ज ऊपर' पाठ मित्रना है एवं यही अमुद्र रूप दा० प्रति में भी है। ५ २९ सामान्य पाठ है "बौन ने होद न ही में दूतान।" भा० प्रति

में 'नहीं' पाठ है तथा पाठ का यही रूप दा० प्रति में भी मिलता है ।

भा० प्रति की प्रतिनिधि होने के कारण दा० प्रति का उपयोग हमने नहीं किया है ।

१० ना०—अर्थात् नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, के आर्य भाषा पुस्तकालय की सवत् १९७७ की प्रति । इस प्रति की मूलीपत्र मर्यादा ११८ है तथा यह लम्बाई-चौड़ाई में ६॥ इंच एव ३ इंच है । पत्र-मर्यादा ११८ तथा प्रति पृष्ठ पक्तियाँ की संख्या १६ है । प्रति बगल से जिल्दबन्द है । अन्तिम पुष्पिका इस प्रकार है "हस्ताक्षर बटुनप्रसाद कापरय श्री काशी जी में नागरी प्रचारिणी सभा के निमित्त लिखा । मार्गशीर्ष कृष्ण ७ सवत् १९७७ ।"

यह प्रति विलकुल आधुनिक है । श्री मिश्र बन्धुओं ने सभा के अपने प्रतिस्वकाल में गधीनी वाली प्रति में सभा के लिए यह प्रतिनिधि तैयार कराई थी । ग० तथा ना० प्रति में समान पाठान्तर एष पाठ-विवृतियाँ मिलने में भी यही गिड़ होता है । इस प्रति की पूर्वज ग० एष बराज हि० प्रति उपलब्ध होने के कारण हमने इस प्रति का परिहार्य माना है ।

११ इ०—अर्थात् इडिया आपिस साइबेरी, लन्दन, की प्रति । सपादक की उक्त पुस्तकालय के मौज्जय में 'भाव विलास' की एक प्रति की माइक्रोफिल्म प्रतिलिपि प्राप्त हुई है । माइक्रोफिल्म प्रतिलिपि होने के कारण इसकी आदर्श प्रति का आकार-प्रकार ज्ञात नहीं हो सका है । प्रति में कुल १०९ पत्र तथा प्रति पृष्ठ पर ११ पक्तियाँ हैं । प्रतिलिपिकार का नाम तथा प्रतिलिपि-सवत् प्रति के अन्त में नहीं है ।

इ० तथा वा० प्रति में समान पाठ-विकृतियाँ मिलने के कारण इस प्रति से पाठान्तर केवल प्रथम विलास तक दिये गए हैं ।

प्रतियों की प्रंतरण परीक्षा : नी० हि० प्रतियाँ : प्रक्षेप :

'भाव विलास' की नी० हि० प्रतियों में अन्य प्रतियों की अपेक्षा लगभग ९० छंद अधिक हैं । कवि देव ने बहुधा अपने ग्रंथों का आकार परिवर्धन कर एक नवीन ग्रंथ अथवा उसका नया संस्करण तैयार किया है, इस संभावना के सदृश में नी० हि० प्रतियों के इन अधिक छंदों की परीक्षा होना आवश्यक है । इन छंदों की प्रतीक सूची इस परिच्छेद के अंत में दे दी गई है ।

जहाँ 'भाव विलास' की अन्य प्रतियों में एक लक्षण का एक उदाहरण है, वहाँ नी० हि० प्रतियों में इस उदाहरण के पश्चात् पुनर्यथा शीर्षक से दूसरा उदाहरण-छंद भी मिलता है । इन अधिक छंदों के देववृत्त न होने का संदेह इसलिए नहीं हो सकता क्योंकि इनमें से अधिकतर छंद देववृत्त अन्य ग्रंथों में भी मिलते हैं तथा इनमें से कुछ ऐसे छंद भी, जो अन्य ग्रंथों में नहीं आए हैं, देववृत्त हैं क्योंकि ऐसे अनेक छन्दों में भी देव की छाप है ।

ऊपर यह कहा जा चुका है कि ये अधिक छंद नी० हि० प्रतियों में निरपवाद रूप से लक्षण के द्वितीय उदाहरण होकर आए हैं, जैसे वृद्धमित हाव का उदाहरण "नाह सो नाही" ३ ३४वा छंद नी० हि० प्रतियों सहित सभी प्रतियों में मिलता है किंतु इसके पश्चात् केवल नी० हि० प्रतियों में पुनर्यथा शीर्षक से 'द्यतिया छुवत' छंद भी है । यह छंद देववृत्त किसी अन्य ग्रंथ में नहीं आया है । वही-वही सभी प्रतियों में समान रूप से मिलने वाले उदाहरण छंद के बाद नी० हि० प्रतियों में एकाधिक अधिक छंद आए हैं, जैसे प्रथम विलास के अंत में नी० हि० प्रतियों

में पन्द्रह छंद एक साथ अधिक हैं। वहीं-कहीं इन जविक छंदों के द्वारा नौ० हि० प्रतियों में विषय के किसी भेद अथवा उपभेद को सम्मिलित करने का प्रयाम हुआ है, जैसे रोमांच सचारी उदाहरण के साथ इन प्रतियों में उमके एक उपभेद स्मरण रोमांच का उदाहरण अधिक है। यह सत्य है कि कवि ने हाव-भाव के परस्पर संयोग में अनेक गचारियों की उद्भावना मानी है। 'रम विलास' के सप्तम विलास में विस्तार से इनका विभाजन तथा वर्णन मिलता है। उदाहरण के लिए दब ने स्मरण सांत्विक भाव के ही स्वेद स्मरण, स्तन स्मरण, प्रलय स्मरण आदि नौ भेद निये हैं। किंतु नौ० हि० प्रतियों में अधिक छंद के द्वारा केवल एक रोमांच स्मरण को 'नाव विलास' में सम्मिलित किया गया है। वहीं-वहीं अधिक छंदों में किसी नवीन विषय का भी प्रवर्तन हुआ है, जैसे प्रथम विलास के जत में वैभव का लक्षण-उदाहरण, भूषण का उदाहरण, अप्ठागवती नायिका का उदाहरण आदि।

इन अधिक छंदों की परीक्षा करने पर यह भी ज्ञान होता है कि य छंद सभी प्रतियों में प्राप्त उदाहरण की अपेक्षा लक्षण के मध्यम कौटिक के अथवा उमके अनुपयुक्त उदाहरण हैं। जैन १२६ के पदचान् चल चितवन के दूसरे उदाहरण के रूप में नौ० हि० प्रतिया में निम्नलिखित छंद अधिक है —

"धालि गई इक ह्यां वि उहाँ मणि रोकि मु तो मिमु कँ दधिदान की।
वौ तो भटू बहि भैंठी मुजा भरि नातो निचामि बछू पट्टिचानि की।

जाई निद्रावरि कँ मन मानिक गौ रम ई रम लँ अपराणि की।
बाहि दिना ने हिये में गढी बट्ट टौठ बढी गै बढी अँवियाणि की॥"

परंतु चल चितवन अथवा नेत्र संचालन की ओर छंद में वहीं संचेन भी नहीं मिलता। नेत्रों से सबधिन शब्द केवल अनिम चरण के "ढीठ बढी री बढी अँवियाणि की" पदाद्य में ही परन्तु बट्ट भी ढीठ नायक का विशेषण है, उमम नेत्रों का कोई कार्य-व्यापार नहीं है।

इन अधिक छंद की तुलना में चल चितवन का सभी प्रतियों में प्राप्त उदाहरण द्रष्टव्य है :—

"हरि को इन हेरन हेरि उनै उर आलिन के उर सो परसै।
तन तोरि कँ जोरि मरोरि मुजा मुख मोरि नँ बँन कहुँ सरतै।

मिम सां मुसकयाद चिर्नँ ममुटै बवि दव दरादर सां दरसै।
दुगजारो कटाद्य सगे मरमान मनो मर मान धरे बरसै॥" १०६

—परस्पर हेरने में, मुख मोड़ने में, अतिम धरण में—संपूर्ण छंद में नेत्र संचालन की प्रमुखता स्पष्ट है।

इसी प्रकार वैवर्ण्य सांत्विक भाव के दूसरे उदाहरण के रूप में नौ० हि० प्रतियों में आरे निम्नलिखित अधिक छंद की गगनि भी चिन्त्य है —

"धार्द के अब में गौई नियक हँ पत्रज भी अँवियाणि भवाननी।
स्यो सपने में लस्यो अपने गिय प्रेमपन छवि ही मों छत्राछत्री।

ठाठे हीं ठाठे भगी भुज गाठे मु वाठी दुह के हिये में गगामकी।
देव जगो गनियाट्ट गटँन तिया की गई छनिया की धवाधकी॥"

इस छंद में कही वैवर्ण्य का संकेत नहीं है। इनके विपरीत द्वितीय चरण में स्वप्न दर्शन का वर्णन स्पष्ट है अतः यह छंद स्वप्न दर्शन का उदाहरण हो सकता है। 'गुजान विनोद' तथा 'भगानी विलास' में यह छंद द्रुमी शीर्षक के अंतर्गत आया भी है।

अब इस छंद की तुलना में सभी प्रतियों में मिलने वाला २ १६वां छंद देखें—

“मुंदरि सोवति मंदिर में बहूँ सापने में निरस्यो नदनद सो।

त्यो पुलकयो जल सो भलकयो उर औचक ही उचकयो बुच बडु सो।

सो लयि चोनि परी कहि देउ मु जानि पर्यो अभिसाप अमद सो।

आलिन को मुग देखत ही मुग भवती कौ भयो भोर को चद सो ॥”

छंद वैवर्ण्य सात्विक भाव का संगत उदाहरण है।

सभी प्रतियों में प्राप्त उद्देश्य उदाहरण के पश्चात् केवल नी० हि० प्रतियों में निम्नलिखित छंद अधिक हैं—

‘इस से भरत चहूँपाई में घिरत घन आवत किरत मीन भ्रुर सो भपनि भपनि।

सोरन मचावै नचै मोरन की पाति चहूँ ओरन तँ वीधि जाति घपला सपनि सपनि।

दिन प्राण प्यारे प्राण न्यारे होत देव कहै नैननि सँ रहै अगुवा टपकि टपकि।

रतिया अंधेरी घोर न तिया घरति मुल बतिया कडत उठै छतिया तपकि तपकि ॥”

यह छन्द उद्देश्य कामदशा का अनुपयुक्त उदाहरण है। छन्द में पावस का वर्णन अत्यन्त स्पष्ट है एवं इसी शीर्षक के अन्तर्गत यह 'गुजान विनोद' तथा 'सुखसागर तरंग' में मिलता है। अब इस उदाहरण के साथ सभी प्रतियों में प्राप्त निम्नलिखित उदाहरण की तुलना करें—

‘विरह के घाम ताई वाम तजि घाम पाई प्रतिकूल बूल कालिंदी की लट्टी।

पाते न अन्हाइ जरै जोवत जुन्हाई तातें चितै चहूँ ओर देव कहै पई हहरी ॥

वारिज बरत बिन धारे वारि वारु बीच बीच बीच बीचिका मरीचिका सी छहरी।

चढ मारनड कँ अलड बिधु मडल है कातिक की राति किचो जेठ की दुपहरी ॥” ३ ५८

कवि द्वारा निरूपित लक्षण “भली वस्तु नागा सर्ग सो उद्देश्य बखान” के अनुसार कालिंदी की धार, जुन्हाई, वारिज तथा कातिक की राति जैसी सुखदायिनी वस्तुएँ भी विरह के कारण दुःख हो रही हैं।

इस विश्लेषण से यह प्रगट होता है कि नी० हि० प्रतियों में प्राप्त अधिक उदाहरण छंद स्वीकृत लक्षण के मध्यम कोटि के अथवा अनुपयुक्त उदाहरण हैं।

नी० हि० प्रतियों में जहाँ भी अधिक छंदों के द्वारा आलोच्य विषय के किसी उपभेद का वर्णन हुआ है वहाँ उसके सभी उपभेदों को नहीं बरन् उसके कुछ भेदों को ही सम्मिलित किया गया है। स्मरण के केवल स्मरण रोमांच भेद को सम्मिलित करने से यह स्पष्ट है। इसी प्रकार 'रस विलास' में वर्णित दूती के दस कर्मों में से विरहास्वासन आदि केवल तीन कर्मों को ही नी० हि० प्रतियों में अधिक छंदों के द्वारा सम्मिलित करने से भी यही प्रगट होता है।

कही-कही इन अधिक छंदों के द्वारा किसी नवीन विषय को ग्रथ में सम्मिलित करने का भी प्रयास हुआ है परन्तु इस नवीन विषय का सदर्थ अनुपयुक्त है। जैसे ग्रथ के द्वितीय विलास में मचारी भावों के विवेचन के मध्य अष्टागवती नायिका का उदाहरण तथा दूती-भेद का विस्तार

हुआ है। वास्तव में इनके विवेचन का उपयुक्त स्थान चतुर्थ विलास है, जहाँ नायक-नायिका भेद विस्तार से वर्णित है, द्वितीय विलास नहीं।

इन प्रतियाँ में अधिक छंदों की उपस्थिति केवल तीन प्रकार से सम्भव है (१) ये प्रतियाँ 'भाव विलास' के प्रथम संस्करण की प्रतियाँ हैं, इस कारण ये छंद कवि की अप्रीड रचनाएँ हैं, (२) ये प्रतियाँ 'भाव विलास' के आकार-परिवर्धित संस्करण की प्रतियाँ हैं, तथा (३) ये छंद इन प्रतियों में प्रक्षिप्त हैं। हम इन सम्भावनाओं पर इसी क्रम से विचार करेंगे।

(१) कवि देव ने अपने ग्रंथों का एकाधिक संस्करण किया है अतः सम्भव नहीं जो उन्होंने 'भाव विलास' ग्रंथ के भी दो संस्करण किये हों तथा जालोच्य प्रतियाँ इनमें से प्रथम संस्करण की वंशज प्रतियाँ हों। 'भाव विलास' की प्रौढता देखते हुए श्री मिथ बघुओं ने अनुमान लगाया है कि 'देव ने मोलह वर्ण की अल्पायु में रचित अपने इस ग्रंथ का परिष्कार वय प्राप्त करने पर किया होगा तो "उन्होंने इसके निकम्मे छंद निकालकर उनके स्थान पर पीछे से बने हुए उत्कृष्ट छंद रख दिये होंगे।" ('हिंदी मवरत्न' पृ० २७६) और डा० नगेन्द्र का भी ऐसा ही मत है ('देव और उनकी कविता' पृ० ३६-३६)। इन प्रतियों के ये अधिक छंद ही, जो लक्षण के मन्व्य कौटि के अथवा अनुपयुक्त उदाहरण सिद्ध हुए हैं, तथा जो अन्य प्रतियों में नहीं मिलते हैं, 'निकम्मे' छंद हो सकते हैं।

इस सम्भावना पर मेरी निम्नलिखित आपत्तियाँ हैं। सर्वप्रथम तो 'भाव विलास' के मोलह वर्ण की अवस्था में रचे जाने का कोई प्रमाण नहीं मिलता। 'बद्ध सौरही वर्ण' दोहा प्रक्षिप्त है। (देखें 'भाव विलास' के अन्तिम दोहों की प्रामाणिकता' शीर्षक) यह कल्पना इस दोहा को प्रामाणिक मानने तथा 'भाव विलास' के छंदों की उत्कृष्टता को देखते हुए की गई है अतः उपर्युक्त दोहा के प्रक्षिप्त सिद्ध होने के बाद कवि के वय तथा अनुभव प्राप्त करने पर इसमें निकम्मे छंद निकालने की सम्भावना भी केवल कल्पना पर आधारित रह जाती है। कोई भी कवि अपनी अल्पायु में रचित कृति का परिमार्जन करेगा तो वह केवल हलके छंदों को ही निकालकर मत्तुष्ट नहीं होगा, वरन् वह स्वीकृत छंदों के पाठ में भी मजबूत-परिवर्तन करेगा क्योंकि अल्पवय के प्रभाव से ग्रंथ के केवल कुछ ही छंद ग्रसित नहीं होने अपितु ग्रंथ के लक्षण दोहा तथा सभी उदाहरण छंद इनमें समान रूप से प्रभावित होते हैं। यदि कवि ने छंदों को जस्वीकृत करने के साथ-साथ पाठ-संशोधन भी किया होगा तो वह 'भाव विलास' की अन्य प्रतियों में अवश्य दृष्टिगोचर होता। परन्तु 'भाव विलास' की इन तथाकथित दो कौटि की प्रतियों में पाठ के स्वर के आधार पर ऐसा कोई अन्तर नहीं मिलता।

हम देख चुके हैं कि अधिक छंदों में अनेक अपने लक्षण के अनुपयुक्त उदाहरण हैं, अनेक उदाहरण मदर्म-ग्रन्थ हैं तथा अनेक स्थलों पर नवीन विषय का विवेचन भी अधूरा है। संस्करण चाहे प्रथम ही अथवा द्वितीय, पाठ कवि की अल्पायु में रचित हो अथवा प्रौढता प्राप्त करने पर, मोलह वर्ण की आयु में ही अष्टागवती नायिका के शान्तीय लक्षण में विज्ञ कवि अष्टागवती नायिका तथा दूती का उदाहरण छंद गवारियों के मध्य नहीं रख देगा, ना ही वह दूती-कर्म के दम भेदों में से केवल दो-तीन भेदों का ही उदाहरण देकर रह जाएगा। इस प्रकार भी ये छंद कवि द्वारा दम ग्रंथ में समाहित हुए नहीं सकते।

(२) पहली सम्भावना के विपरीत दूसरी सम्भावना यह भी हो सकती है कि जैसे कवि देव ने 'रस विलास' आदि अपने अनेक ग्रंथों के आकार में छन्दों को ममाविष्ट कर ग्रंथ का नया संस्करण तैयार किया है उसी प्रकार उसने 'भाव विलास' के भी दो संस्करण किये हैं। अतः ये प्रतियाँ 'भाव विलास' के ऐसे ही आकार-संबन्धित संस्करण की प्रतियाँ हो सकती हैं।

हम इस सम्भावना को निम्नलिखित कारणों से अमान्य समझते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि 'रस विलास', 'बुधाल विलास', 'सुज्ञान विनोद' तथा 'गुप्त सागर तरंग' आदि ग्रंथों के आकार-संबन्धित द्वितीय संस्करण भी हुए हैं परन्तु कवि ने इन सभी ग्रंथों का आकार-परिवर्धन किसी आश्रयदाता को समर्पित करने के हेतु किया है। 'भाव विलास' की स्थिति इन ग्रंथों से भिन्न है क्योंकि यह तथाकथित आकार-संबन्धित संस्करण किसी आश्रयदाता को समर्पित नहीं है—आजमशाह को भी नहीं क्योंकि आजमशाह से सम्बन्धित प्रक्षिप्त दोहे (देखें, 'भाव विलास' के अंतिम दोहों की प्रामाणिकता) क्षीपक में भी केवल आजमशाह को 'भाव विलास' सुनाने का उल्लेख है, उन्हें यह ग्रंथ समर्पित करने का नहीं। अतः इस ग्रंथ की पाठ-वृद्धि करने का कोई कारण नहीं है। कवि देव ने अकारण अपने ग्रंथों का पाठ-परिवर्धन कभी नहीं किया है—कोई कवि नहीं करेगा। फिर, यदि यह स्वीकार भी कर लिया जाए कि इन प्रतियों में कवि-कृत पाठ-परिवर्धन के कारण अधिक छन्द मिलते हैं तो भी अवगत उदाहरणों, भ्रष्ट-सदृश तथा अपूर्ण विषय-विवेचन का कोई सतोपप्रद कारण नहीं है। पाठ-वृद्धि करते समय देव-जैसा समय कवि उन्हीं छन्दों को ग्रंथ के मूल आकार में सम्मिलित करेगा जो छन्द ग्रंथ में विद्यमान उदाहरणों की तुलना में उत्कृष्ट होंगे, वह उसी नवीन भेदोपभेद का विवेचन इस संस्करण में करेगा जितने ग्रंथ में निरूपित विषय पूर्ण होता हो। केवल कुछ-एक भेदों की चर्चा कर वह पहले ही सम्पूर्ण ग्रंथ का विषय-विवेचन अपूर्ण तथा खंडित नहीं करेगा। एक बार ग्रंथ के आकार-परिवर्धन में प्रवृत्त होने पर वह पुनः समय द्वारा भी बाधित न होगा।

इस प्रकार इन प्रतियों में ये अधिक छन्द 'भाव विलास' के किसी संस्करण की प्रति में कवि द्वारा ममाविष्ट सिद्ध नहीं होते अतः हम इन छन्दों को नी० हि० प्रतियों में प्रक्षिप्त मानते हैं।

(३) इन अधिक छन्दों की असंगति तथा लक्षण के अनुयुक्त उदाहरण होने आदि की जिन विशेषताओं का हमने ऊपर वर्णन किया है वे सभी विशेषताएँ इन छन्दों के प्रक्षिप्त होने का प्रमाण हैं। अधिक छन्दों में पाठ-विकृतियों की तुलनात्मक स्थिति से भी ये छन्द प्रक्षिप्त सिद्ध होते हैं क्योंकि 'भाव विलास' की सभी प्रतियों में मिलने वाले नी० हि० प्रतियों के छन्दों में अत्यधिक पाठान्तर तथा पाठ-विकृतियाँ मिलती हैं परन्तु इन अधिक छन्दों में पाठ-विकृतियों की संख्या अत्यन्त अल्प है। अतः अधिक छन्दों में तो केवल सामान्य पाठान्तर मिलते हैं। स्मरण रहे कि यदि ये अधिक छन्द प्रतिलिपि परम्परा में कही प्रक्षिप्त न होकर सभी प्रतियों में मिलने वाले नी० हि० प्रतियों के अन्य छन्दों की भाँति ग्रंथ की मूल पाठ-परम्परा में चले आए 'भाव विलास' के किसी भी संस्करण के मौलिक छन्द होते तो अन्य छन्दों में तथा इन अधिक छन्दों में पाठ-विकृतियों की संख्या में इतना अन्तर कदापि नहीं हो सकता था। एक ग्रंथ की एक ही पाठ-परम्परा में चली आई नी० हि० प्रतियों में छन्दों के इन दो समूहों के मध्य पाठ-विकृतियों

का यह अमाधारण अन्तः पाठ-वैज्ञानिक मान्यता के अनुसार असामान्य तथा उम कागण अवि-
श्वसनीय है।

हमने ऊपर यह भी देखा है कि अधिक छन्द लक्षण के निरपवाद रूप में द्वितीय अथवा
तृतीय उदाहरण के रूप में नी० हि० प्रतियों में मिलते हैं। इन अधिक छन्दों में ऐसे भी एक-दो
छन्द हैं जो प्रथम उदाहरण की अपेक्षा लक्षण के अधिक उपयुक्त उदाहरण कहे जा सकते हैं।
अतः यह भी नहीं माना जा सकता कि कवि ने छन्दों को उत्कृष्टता के क्रम से रखा है। इस
प्रकार अधिक छन्दों का सर्वदा द्वितीय उदाहरण के रूप में सम्मिलित किया जाना भी प्रक्षेप की
सम्भावना को पुष्ट करता है।

कवि प्रत्येक नये विषय का निरूपण करने के पूर्व एक शोहे में उसका विस्तार तथा
उसकी रूपरेखा स्पष्ट करता आया है परन्तु नी० हि० प्रतियों में इन अधिक छन्दों के द्वारा तिन
नये विषयों का समावेश किया गया है, प्रथम में पहले उनका कही किसी प्रसंग में उल्लेख नहीं
मिलता अतः इस प्रकार भी इन प्रतियों को पूर्व परम्परा में ये अधिक छन्द किसी प्रक्षेपकार द्वारा
प्रक्षिप्त सिद्ध होते हैं।

बहुत सम्भव है कि काव्य-शास्त्र का अध्ययन करने हुए किसी योग्य व्यक्ति ने अभ्यास
कौमुद्वय 'भाव-विलास' में देवकृत अन्य ग्रंथों में समान लक्षण के उदाहरण छंद ग्राह-भोजकर प्रति
के पाठों पर एकत्र किचे हो तथा यह पाठ-वृद्धि प्रतिनिधि परंपरा में मूल पाठ के साथ मिल गई
हो। हमारा अनुमान है कि यह कार्य सम्भवतः देव के पौत्र तथा कवि, 'वसन्तेमु विलास' के
रचयिता श्री भोगीलाल द्वारा संपन्न हुआ है। भोगीलाल समर्थ कवि थे, देवकृत प्रायः सभी ग्रंथ
उन्हें मुलभ थे तथा उन्होंने इन सभी ग्रंथों का गभीरता में अध्ययन किया होगा अतः उन ग्रंथों में
लक्षण के समान उदाहरण भोज-भोजकर एक स्थान पर संग्रहीत करना भी उन्हीं के धरा की
बात थी। कोई सामान्य प्रतिनिधित्व तो यह दुस्तर कार्य करने में सम्भव भी नहीं हो सकता।
अधिक छोटी वाली नी० हि० प्रतियों की पाठ-परम्परा अन्य प्रतियों की अपेक्षा प्राचीनतर भी है,
तथा मवत् १८५७ में प्रतिनिधि हुई का० (तथा इसी समय की उडिया आदिम की प्रति) में य
विवादास्पद छंद नहीं है अतः यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि का० प्रति अथवा उसकी
आदर्श प्रति के प्रतिनिधि होने तक अधिक छंद प्रक्षिप्त नहीं हुए थे। मवत् १८५७ तक प्रक्षेप न
होने तथा भोगीलाल द्वारा इस वर्ष 'वसन्तेमु विलास' की रचना होने के आगम पर भी उन्हीं के
द्वारा इन अधिक छंदों के प्रक्षेप की सम्भावना मानी गई है।

प्रक्षेप का एक और कारण सम्भव है। नी० हि० प्रतियों में प्रायः पाठ की परीक्षा में यह
ज्ञान होना है कि ग्रंथ का मूल आदर्श प्रतिनिधि के समय अत्यन्त नष्ट-भ्रष्ट अवस्था में था। उन्हीं
कारण अन्य उपन्यस्य प्रतियां में भी ग्रंथ के जनिम अंग में पाठ-विकृतियां तथा पाठान्तर की
संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जाती है। नी० प्रति तो अतः म स्वच्छिन्न ही है। इस प्रति के जन में आया
"तदपि बहुत अमुद्ध प्रति तदपि मुद्ध बहू कीन" दाहा भी आदर्श प्रति के अत्यन्त नष्ट भ्रष्ट होने
पर किसी प्रतिनिधिकार का साध्य है। स्मरण रहे कि इस मध्य की न केवल 'भाव विलास'
की प्रति वरन् 'जाति विनास', 'प्रेम नरल' आदि ग्रंथों की प्रतियां भी मूल आदर्श के नष्ट-
भ्रष्ट होने का प्रमाण देती हैं। चरना न होगा कि ये सभी प्रतियां अपने ग्रंथ की प्राचीनतम माता

की प्रतियाँ हैं। मेरा ऐसा अनुमान है कि 'भाय-विभाग' में अधिप छंदों के प्रक्षेप का एक कारण इसमें मूल आदसों या स्थल-स्थान पर गड़ित तथा जर्जरित व्यवस्था में होना भी है। प्रतिनिधि-कार ने अपने ग्रंथ का गड़ित रूप छिपाने के लिए अथवा उसकी दानिपूर्ति करने के हेतु अन्य प्रयोगों से छंद लेकर सम्मिश्रित किया हो तो कोई आश्चर्य नहीं।

ऊपर उद्धृत दोहे के सन्दर्भ में सभायना की ओर इंगित करते प्रतीत होने हैं। स्पष्ट है कि प्रक्षेपकार ने प्रक्षेप के लिए देवकृत एक में अधिप प्रयोगों का आश्रय ग्रहण किया है। सम्भव है कि इन प्रयोगों में कोई ऐसा भी प्रयोग रहा हो जो आज उपलब्ध नहीं है तथा अन्य प्रयोगों में न मिलने वाले छंद इसी प्रयोग से आये हों। देवकृत एक नवीन प्रयोग 'सुमित विनोद' इन पंक्तियों के लेखन को मिला है। सम्भव है कि भविष्य में नवीन प्रयोगों के प्रकाश में आने पर सभी अधिप छंदों का आगम-स्रोत-ज्ञात हो सके। इन अधिप छंदों वाली प्रतियों में प्रथम का 'भाय प्रकाश' नाम भी इसी प्रयोगकार का दिया हुआ है।

प्रक्षिप्त छंदों की सूची नीचे दी जा रही है। छंद के पूर्व दी हुई मध्याह्न गणपति सस्करण के अनुसार उग स्थल का निर्देश करती है जिगरे अनन्तर नी० हि० प्रतियों में प्रक्षेप हुआ है —

१ ३० "ग्यानि गई" । १ ३२ "जहाँ राज", "पावरिन पाउडे", "फटिक सिलान", "गोरे मुग्य गोल", "ओरिये घँस", "जगमगे जोवन", "काहू की वर", "नद बुमार उत", "मील के सागर", "वानन कुडल", "ऐपन की ओप", "बस्ती यपनर", "लेटू लकी", "देव तजी गुन", "बारिये वँस" । २ १० "हरपि हरपि", "इगुर मो भिनि" । २ १६ "घाइ के अक" । २ १७ "आइ नही तन" । २ ४० "नछु और उपाय", "बैरी वसत के", "खोरि में सेनन" । २ ६० "मानमई अबही" । २ ८१ "घापरो घनेरो", "भोरे ते भूरिक" । २ ८२ "देहू तज्यो" । २ ८८ "ना यहू नद को", "धुनि धुनि सीस" । २ १०३ "सुग्य दु प में", "रीकि रीकि", "ठु राइन गय", "उज्ज्वल अलड" । ३ १४ "आई हों देव" । ३ २४ "सहर सहर सोघो", "आली न्नु नावन" । ३ ३४ "छतिपा छुवत" । ३ ३८ "परम सलोनी", "बरमाने की ओर" । ३ ५२ "भूरति जो मन" । ३ ५४ "सूजरी ऊजरे", "बँसेऊ कोऊ करी", "देव में गीस", "नापिन टरत" । ३ ५६ "दिखे अनदेखे", "प्रेम की पीर", "वान्हू मई" । ३ ५८ "इभ से भिरत", "कत बिन यामर" । ४ ७ "भूलनहारि अनोखी" । ४ ११ "भोरही श्री बूपमान" । ४ १६ "बैठी कहा धरि" । ४ १८ "मोमो वही सो" । ४ २२ "भीन भरे मिगरे" । ४ २७ "बलि वाम लोचन" । ४ २९ "रंग लाल जरी" । ४ ३० "बैरिनि मेरि" । ४ ३२ "वालापन को भेटि", "लहलही वँस" । ४ ३३ "सावन मास सचीन" । ४ ३८ "हाथी दे निमक", "होरी मै आजु", "लोग लोगायन होरी" । ४ ४२ "बुज म हँ" । ४ ४९ "जत्रा भूमवावति", "महल तें आई", "बँ दिन नाहि" । ४ ६० "खेलन बाँख मिहीचनि" । ४ ६५ "वार दुवारन" । ४ ६७ "बूदावन चारन को" । ४ ६९ "अहो भरे रम" । ४ ८२ "आजु गई हुती" । ४ ८३ "देखु री दरपन दौरि", "कुदन में अग", "जोवन ली जुवतीन", "आंसिन मैं सुतरी", "बूझो बडेन को", "गोत गुमान उत" । ४ ८८ "रूप चुवै चपि" । ४ ९४ "सखी के सोच" । ४ १०० "बालम विरह", "पीछे पँवा चौर" । ४ १०२ "सूमन न", "बात कही मो", "वन न परति" "नील बघू नव", "होसी वरी स्याम",

‘आवन मुन्यो है’ । ४ १०७ “रावरे पायन ओट” । ४ १०९ “बोन भयो दिन” ।

जैसा कि हम ऊपर कह आए हैं, नी० हि० शाखा की आदर्श प्रति का पाठ अत्यंत भ्रष्ट अवस्था में था अतः प्रतिलिपिकार ने अपनी ओर से स्थल-स्थल पर पाठ संशोधन तथा प्रक्षेप किया है। यही कारण है कि नी० हि० प्रतियों में सगत तथा असगत दोनों प्रकार के पाठान्तर बड़ी सख्या में मिलते हैं परन्तु प्रतिलिपिकार द्वारा संशोधित होने के कारण स्पष्ट पाठ-विकृतियाँ बहुत कम मिलती हैं। यहाँ हम यथासम्भव केवल ऐसे ही उदाहरण दे रहे हैं जो अर्थ अथवा प्रसंग के विचार से असगत तथा अप्राप्त्य हैं।

द्रुटित पाठ :

१ ३१ जग भग उदाहरण ।

“जानति ही भुजमूल उचाइ दुकूल सचाइ सला ललचैयत ।”

जग भग के प्रस्तुत प्रसंग में उपरोक्त चरण सगत है तथा ‘भवानी विलास’ में २४४ एव ‘सुल सागर तरग’ में ७८६ पर इमो छन्द में भी मिलता है। कदाचिन् नी० हि० प्रतियों के ममान आदर्श में यह चरण द्रुटित होने के कारण इन प्रतियों में इमके स्थान पर निम्नलिखित पाठ है “ता रस सिधु गई बुधि वूडि न बोहित घोरज कैमे बचैयत ।” स्वीकृत पाठ से तुलना करने पर यह पाठ प्रतिलिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त ज्ञात होता है।

० १०

“अचल भीन भवै भनकै पुलकै कुच कुद कदब कसी सी ।”

नी० हि० प्रतियों में ‘कदब’ शब्द द्रुटित होने के कारण सत्तगयद सर्वैया के प्रस्तुत चरण में ०३ के स्थान पर २० वर्ण ही रह जाते हैं और छन्दोभंग होता है।

२ ३०

“गोकुल गाँव की गोपवधू बनि कँ निवसी दुरि दै दै बुलायो ।”

नी० प्रति में “गाँव की गोपवधू बनि कँ दुरि कँ सबदै दै बुलायो” तथा हि० प्रति में “गाँव की गोपवधू निवसी बनि कँ दुरि कँ सग दै दै बुलायो” पाठ है। तीन वर्णों का ‘गोकुल’ शब्द इन दोनों ही प्रतियों में द्रुटित है तथा दोनों ही प्रतियों में चरण की गति शुद्ध करने के हेतु “कँ सब” पाठ प्रतिलिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त हुआ है। यह पाठ प्रस्तुत प्रसंग में असगत होने के कारण प्रक्षिप्त माना गया है।

२ ३०

“आजुही भाजि गई मग लाज हैमँ अर मोहन को मुख जावै ।”

नी० हि० प्रतियों में इसके स्थान पर पाठ है “भाजि गई मग लाज हँसँ अर—रप कँ—नी०, राय कँ—हि०—मोहन को मुख जावै ।” इन दोनों ही प्रतियों में तीन वर्णों का ‘आजु ही’ शब्द द्रुटित है तथा इसके स्थान पर प्रतिलिपिकार द्वारा “रप कँ” असगत पाठ-प्रक्षेप हुआ है।

३ १७ प्रच्छन्न मयोग का उदाहरण छन्द केवल नी० हि० प्रतियों में नहीं है। इसके पूर्व शृंगार रम कँ भेदो का वर्णन वर्गन द्रुप कनिने स्वयं कहा है “द्वै प्रकार सिंगार रस है मयोग त्रियोग । सो प्रच्छन्न प्रनाग करि कहत चागि विधि लोग ॥”—३ १५ । ३ १८ सख्या पर

प्रकाश सयोग का उदाहरण नी० हि० प्रतियों में भी मिलता है अतः इन प्रतियों में प्रच्छन्न सयोग का उदाहरण प्रतिलिपिकार की भूल से छूट गया मालूम होता है।

४४५ रतिबोविदा उदाहरण छन्द केवल नी० हि० प्रतियों में नहीं है। ४४३ मध्या के दोहे में ऋषि ने प्रोडा नायिका के निम्नलिखित भेद माने हैं "सध्यापति रति बोविदा प्रान्त नादवा सोइ।" रतिबोविदा ने अतिरिक्त अन्य भेदों के उदाहरण नी० हि० प्रतियों में भी मिलते हैं अतः यह स्पष्ट है कि यह छन्द भी इन प्रतियों में प्रतिलिपिकार के प्रमाद से छूट गया है।

४८१

"मीरी बयार छिदं अघरा उरभे उर भांगर भार मभाइ कं।"

'भार' का 'र' वर्ण वृद्धित होने के कारण नी० हि० प्रतियों में 'भाम भाई के' पाठ मिलता है। यह पाठ निरर्थक है तथा इससे छन्दोभंग भी होता है अतः यह पाठ विद्युत माना गया है।

५४२ में आगे नी० प्रति खंडित है तथा हि० प्रति में इस स्थल में आगे का पाठ भिन्न हस्तलेख में है। जैसा कि हमने अन्यत्र कहा है, यह प्रति भी नी० प्रति के समान ५४२ पर खंडित थी परन्तु किसी दूसरी प्रति के पाठ की सहायता से इसे पूर्ण किया गया है।

स्थान विपर्यय

१७

'नेव जु प्रियजन देमि सुनि आन भाव चित हाइ।

अति कोविद पति कविन के सुमति बहत रति सोइ ॥'

नी० हि० प्रतियां में प्रतिलिपिकार के दृष्टिभ्रम से दोहे के द्वितीय पद में स्थान पर १५ दाहे का द्वितीय पद "सो तापो चिति भाव है बहत सुकवि मब सोइ या जाने से रति लक्षण के स्थान पर भाव का लक्षण दूसरी बार वर्णित होता है।

११६वें छन्द के पश्चात् छन्दों का स्वीकृत क्रम नी० हि० प्रतियों में इस प्रकार है— २२, २३, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ३२, ३३, ३४, ३५, ३६, ३७, ३८, ३९, ४०, ४१, ४२। इस क्रम के अनुसार छन्दों की विषय-सूची इस प्रकार होगी—उद्दीपन के अन्तर्गत नृत्य-उदाहरण के पश्चात् वन-शक्ति उदाहरण, अनुभाव लक्षण, अनुभाव के आनन नयन प्रसन्नता आदि उदाहरण, पुनः उद्दीपन के अन्तर्गत उपवन गमन-उदाहरण। उद्दीपन वर्णन के मध्य अनुभाव का वर्णन तथा पुनः उद्दीपन की पूर्वोल्लिखित वस्तुओं का वर्णन छन्दों के स्थान-विपर्यय के कारण हुआ है। इसे दुष्प्रम भानते हुए हमने नी० हि० प्रतियों में प्राप्त क्रम को अग्राह्य माना है।

२४०

'मोही सो दृष्टि के बैठि रहै विधौं कोऊ कहूँ कछु सोध न पावै।'

केवल नी० हि० प्रतियों में शब्दों के क्रम विपर्यय से पाठ इस प्रकार मिलता है "कोउ कछु कहूँ सोध न पावै।"

३६

'मोइ गई अभिलाख भरी तिय सामने में निरखे नेंदनदन।'

'ल' में 'न' का भ्रम होने में नौ० हि० प्रतियों में 'नूतन तान' पाठ मिलता है। यह पाठ असंगत है क्योंकि प्रथम तो नवीन के अर्थ में 'नूतन' शब्द पहले ही आ चुका है अतः इसी शब्द की आवृत्ति अनावश्यक है। दूसरे, नूतन तान में मधु भार से भरे भ्रमरो का गुजन करना और भी असंगत अर्थ है। संगत पाठ "नूतन नूत तान" ही है।

आश्चर्य है कि 'नूत' शब्द का अर्थ समझने में अनेक विद्वानों ने भूल की है। पंडित कृष्ण-त्रिहारी मिश्र ने इसे 'नवीन' का पर्याय माना है—

'देवजी ने टेमू के लिए त्रिमु और नवीन के लिए 'नूत' शब्द का प्रयोग किया है। इन पर आक्षेप यह है कि देवजी को 'क्रिमुक' का 'ब' उच्चारण 'त्रिमु' रूप रखने का कोई अधिकार न था। इसी प्रकार 'नूतन' के 'न' को उच्चारण 'नून' रखना भी अनुचित हुआ है।.....संस्कृत में 'नूतन' और 'नूत' ये दो शब्द हैं। हिन्दी में ये दोनों शब्द क्रम से 'नूतन' और 'नूत' रूप में व्यवहृत होने हैं। "अरुन नूत पल्लव धरे रेंग भीजी श्रान्तिनी" और "नूत विधि नूत वगड़ै उर आनही" इन दो पद्यांशों में क्रम से मुरदास और वसवदास ने 'नूत' शब्द का प्रयोग किया है। "

—'देव और त्रिहारी'—पृ० २७४-७५।

(डा० जानकीनाथ सिंह 'मनाज' भी 'नूत' का अर्थ 'नवीन' मानते हैं—'शब्द रमायन' पृ० ग।)

परन्तु 'नूत' नवीन का पर्याय नहीं है। हम इस शब्द के देव कृत जो प्रयोग नीचे दे रहे हैं उनमें अनेक स्थलों पर 'नूतन नूतन' प्रयोग मिलता है। हमारे विचार से यह पुनरुक्तिप्रकाशक रूप में न आकर 'नूत' का संबन्धकारक रूप है।

श्री मिश्र वधुओं के मत से 'नूत' का अर्थ नवीन होने के अतिरिक्त 'आम' भी होता है—'नूत न नूत—जो नए नहीं अर्थात् पुराने हैं, और जो नए हैं, या दोनों दावानस से जले हुए दिखाई देते हैं। नूत आम को भी कहते हैं।' —'देव शुधा', पृ० १२८।

कदाचित् श्री मिश्रवधुओं ने संस्कृत का 'न्युत' शब्द से भ्रान्त होकर 'नूत' का अर्थ 'आम' माना है। "आम्रश्चूत रसाशुच"। परन्तु संस्कृत के इस शब्द से हिन्दी में जो शब्द निर्मित हुआ है उसमें भी 'न' के स्थान पर 'ब' वर्ण है। स्मरण रहे कि राज-प्रदेश में आम्र-वृक्षों का वर्णन ब्रज वाणी में प्रायः नहीं हुआ है, इस कारण भी 'नूत' का आम्रवाची होना संभव नहीं लगता।

बासी के प० विश्वनाथ प्रसाद मिश्र का कहना है कि 'नूत' आम को ही कहते हैं और यह संस्कृत के 'नूत' शब्द से ही व्युत्पन्न है परन्तु इस शब्द के अश्लील अर्थ होने के कारण चकार का नकार कर दिया गया है। प० विश्वनाथ प्रसादजी के अनुसार राजस्थान के संस्कृत के पंडित संस्कृत में भी इस शब्द का चकार सहित नहीं, नकार सहित ही उच्चारण करते हैं। राजस्थान में कई पुराने पंडितों से पूछने पर इस मत की पुष्टि नहीं हुई अतः यह मान्य नहीं प्रतीत होता। वैसे यह व्याख्या अटपटी सी लगती है।

मेरे विचार से 'नूत' शब्द वृक्षवाची है। देवकृत ग्रंथों में यह शब्द निम्नलिखित स्थलों पर आया है—

“बाजु गुपाल जू बाल बधू सग नूतन नूत निकुञ्ज बसे निशि ।”

—‘भवानी विलास’—८ ३४

“नतन गुलाल नूत मञ्जरी की मालनि सो कीजे गजमुख सनमुख सनमान को ।”

—‘भाव विलास’—५ ३६

“कोकिल रागनि नूत परागनि देखु री वागनि फागु मची है ।”

—‘सुब्बान विनोद’—६ २२

“बपव दाडिम नूत महाडर पाडर डार डरावनी फूती ।”

“तंसिय नूतन नूतनतानमे गुजत भौरभरे मधु भारनि ।”

—‘भाव विलास’—१ १७

“नूतन महल नूत पल्लवनि छर्वं छर्वं स्वेद लवनि सुग्वावत पवन उपवनसार ।”

“केतकी हेन न भून सो नेह कदव न बुद न लींग सो लेख्यो ।”

—‘सुमिल विनोद’—२ २०

“घोर सगै घर बाहिरहू डर नूत पलान सगै पजरे मे ।”

—‘रस विलास’—७ ६२

“नूतन नूतन के बन वेप न देखन जानी सो हौं दुरि दौरी ।”

—‘भाव विलास’—३ ३३

इन सभी उदाहरणों में ‘नूत’ शब्द किसी वृक्ष के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। मॉनियर विलियम्स कृत सस्कृत श्लोक में एक शब्द मिलता है ‘नुत्त’, अर्थ है ‘एक पौधे का नाम’। इसी शब्दकोप में दूसरा शब्द है ‘नूद’, अर्थ है ‘शहतूत के वृक्ष का एक प्रकार’। हिंदी में शहतूत के लिए ‘तूत’ शब्द प्रयोग में आता ही है अतः मेरे विचार से यह ‘नूत’ शब्द की व्युत्पत्ति ‘नुत्त’ अथवा ‘नूद’ शब्द से है तथा यह शहतूत के किसी प्रकार के वृक्ष के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

१ १६

“नहान पमारी सो प्यारी के ओठ तें छूटो मजीठ निहारि मजीठ सों ।”

नी० हि० प्रतियों में ‘ज’ ‘न’ का भ्रम होने से ‘नजीक’ पाठ हो गया है। निहारने के साथ निवृत्त अथवा नजदीक के अर्थ में ‘नजीक’ पाठ ही सगन है।

२ ७

“श्रीध हर्ष सताप भ्रम घातादिक भय साव ।

इनमें सजल शरीर सो स्वेद नहत् कविराज ॥”

‘य’ में ‘भ’ का भ्रम होने के कारण ‘भ्रम’ तथा इसे सञ्चोधित करने के कारण ‘भ्रम’ पाठ नी० हि० प्रतियों में मिलता है। ‘भ्रम’ के कारण शरीर का सजल होना जसत्र है अतः हमने इस पाठ को लिपिजन्य चिह्नित माना है।

२ ३८

“मैन गर जोर मारे पवन भ्रमोरनि सो आई है उमगि छिनि छापी गोर भरिये ।”

‘मारे’ में दृष्टि-भ्रम होने में नी० हि० प्रतियों में ‘भोर’ पाठ मिलता है। यह पाठ इस प्रसंग में असगन है।

२५८

“देव हूँ पय आद भयो चरि पाई मांग्य के रय उतर ।”

‘हूँ’ में ‘हूँ’ का भ्रम होने के कारण नी० हि० प्रतियों में “देव हूँ हूँ” पाठ मिलता है।
कहना न होगा कि यह पाठ निरर्थक है।

२६८

“बोहिगऊ बज बोमन बोन बिगारि बं आयु अयोग कहै है।”

‘व’ में ‘व’ का भ्रम होने के कारण नी० हि० प्रतियों में ‘अनीय कहै है’ पाठ मिलता है।
वाहिना की सपुट वाणी ही प्रायः गुनाई देती है परन्तु स्वयं वाणी वनों के भ्रममुट में बँटो के कारण
बहुधा दिगन्तायी गरी देगा, इगरी सपुट वाणी ही गुनाई देती है। दूगरे, आद्य मन्त्रियों के बीच
भ दिया वाहिना की वाणी गुनाई देती है—यह भी धीव्य वस्तु में ही। अग्य वस्तुओं में यह परी
अदृश्य हो जाता है। इस अर्थ में ‘अनीय’ पाठ सर्वथा गप्य है एव उपर्युक्त प्रतियों का
‘अनीय’ पाठ निरर्थक है।

१९१ गुण मान उदाहरण।

“सौति की मान गुणान परे सति बाव बियो मुन रोप उग्यारो।”

यदि में इस उदाहरण के पूर्व मान भेद होने के लिए मान का लक्षण इस प्रकार दिया
है —

“यनि पर परािय भिहू सति करति निपा गुद मान।

मध्यम तावो नाम गुनि ता दरगन तपु जान।”

—३६०

तदनुसार उपर्युक्त उदाहरण सूत्र में नायिका के रोप का कारण योगान के बट में
सौति की पहनाई माला को देगना है अतः ‘सौति की मान’ पाठ गप्य है परन्तु ‘व’ में ‘म’
का भ्रम होने के नी० हि० प्रतियों में “सौती की मान” पाठ है। हमने इस पाठ को इसलिए
अमन्य माना है क्योंकि गोपाल के बट में सौती की माल देगकर नायिका के बुधिन होने का कोई
कारण नहीं रह जाता।

पर्याय .

११७

“सैखिय नूतन नूत समान मैं वृजत भौर भरे मधु भारनि।”

नी० हि० प्रतियों में “रत भारनि” पाठ मिलता है।

११६

“दात पमारी सों प्यारी के ओठ तें छूट्यो मज्जीठ निहारि नजीर तो।”

नी० हि० प्रतियों में ‘समोर’ पाठ है। स्नान करते समय किसी रोगी वस्त्र से ओठ
मलने पर उगमं सगी सास मज्जीठ का छूटना भी समत पाठ है तथा ओठ में लगे पान की साली
का निवृत्तना भी समत है।

१२०

“कवि देव सखी के सिराये मरु के नह्यो हिय नाह को नेह नयो ।”

नी० हि० प्रतियो मे ‘नह्यो’ के स्थान पर पाठ का सरलीकृत रूप दिया हुआ है “भयो हिय नाह के ‘।’”

२८

‘हेलिन खेलन के मिस सुदरि केलि के मदिर पेलि पठाई ।’

नी० हि० प्रतियो मे ‘केलि के भौन में’ पर्याय है ।

२५२

“नूपुर पाँइ उठे भननाइ सु जाइ लगी घन घाइ भरोखे ।”

नी० हि० प्रतियो मे पाठ का पर्याय है “जाइ लगी अतुराइ भरोखे ।”

३२०

“एहि भाँति विविध विधि वितुघवर ।”

नी० हि० प्रतियो मे पाठ मिलता है “विविध विधि कविराज वर ।”

३३२

“स्याम के अग सो अग लगाथे न ‘।’”

नी० हि० प्रतियो मे पाठ है “अग छुआवं न ।”

३४२

“वियोग चौविधि जान ।”

नी० हि० प्रतियो मे पाठ-पर्याय है “विप्रलभ यों जान ।”

४६२ परकीया भेद ।

“ताहि परोडा कन्यका द्वै विधि कहत प्रवीन ।

मुपित चेट्टा परोडा कन्या पितु आधीन ॥”

नी० हि० प्रतियो मे ‘परोडा’ का पर्याय है “ताही ऊडा’ । ‘परोडा’ का अर्थ भी ‘ऊडा’ होता है, निम्नलिखित उदाहरण से यह प्रमाणित है —

“तासो परऊडा कहत और अनूडा नारि ।

मात पिता आधीन जो तरनि मु काम कुमारि ॥”

—‘सुमिल विनोद’—२२५

पाठ-विकृति :

१८

“देव मुरभाइ उरमाल उरभाइ कह्यो दीजो मुरभाइ वात पूछ्यो छल छेम की ।”

उलझी हुई उरमाल को मुनभाना तो श्रौच्य से वार्तालाप करने का केवल एक व्याज है । परन्तु नी० हि० प्रतियो की परम्परा की किमी आदर्श प्रति मे ‘मुरभाय’ शब्द पादवं पर होने के कारण ‘उरभाय’ के पदचात् दृष्टि-भ्रम से ‘मुरभाय’ होकर आया है अत इन् प्रतियो मे चरण का पाठ है ‘देव उरमाल उरभाय मुरभाय कह्यो ‘।’” लेकिन यदि नायिका ने अपनी

उपनी हुई भावना का ही गुणनाम ही तो फिर कृष्ण से कहते को यह क्या मत ?

१६

“गौरी के चार चारी दुमट्टी गुण सोमना भूषण भोग खाये ।”

‘चारी’ के गान्धिम्य के कारण प्रतिनिधित्व के प्रभाव में नी० हि० प्रतियों में “गौरी की चार चारी” पाठ हो गया है। गौरी की चार चोई विविध प्रकार की मद अथवा तीव्र नहीं होती अतः हमने इन पाठ को प्रतिनिधित्व के प्रभावकार पाठ-विह्वल माना है। यहाँ ‘चार’ शब्द रीति के अर्थ में ‘आचार’ का शिक्षण का है।

२१६

“जातिदी कृद कदव के कुज करे तम सोम समागो गो सामे ।”

‘सोम सोम’ का अर्थ है ‘सातपत्वार’, देते “दूरि करे दीपन भिन्नमिदान भीनी मेर के गनीय एकराव्यो तम सोम गो ।”—‘गुणा विचार’—२१६१। कदाचित् ‘सोम’ (महत्ता सोम) का अर्थ केर अथवा ममू न समझ गये के कारण नी० हि० प्रतियों के प्रतिनिधित्व के जवनी प्रति में पाठ-प्रसंग किया है ‘करत मनोज समागो गो सामे ।’ यहाँ रीति-प्रमग ही चारा अप्राप्त है अतः हमने इन पाठ को प्रतिनिधित्व द्वारा प्रक्षिप्त माना है।

२०३ विवेक लक्षण ।

“चिन्ता अथु प्रान्त करि अणोई अगमा ।

उपजहि मल्पना जहँ गो निवेद बगान ॥”

नी० हि० प्रतियों में दोरे का पाठ विवृता रूप में हम प्रचार मिलता है ‘चिन्ता अथु प्रान्त करि अति आग उर आ । उपजहि गावित भाव जहँ गो निवेद बगान ॥’ अथो हृदय में कामदेव को स्थापित कर ऊपर से चिन्ता करना एक आँगो में आँगू भरना विवेक का असंगत लक्षण है अतः हमने इन पाठ को भी प्रतिनिधित्व द्वारा प्रक्षिप्त माना है।

२०८ तृतीय-वस्तु परच ।

“नीर मे भूजे गए मति में जब तें जदुराई की ओर गिगो रुग ।

मोहि भटु तज तें निनि चीग चिनीनही जात पवाइन को मुत ॥”

प्रस्तुत प्रमग में ‘ओर’ पाठ गगन है परन्तु प्रतिनिधित्व की दृष्टि भूल में ‘जदुराई’ के अंतिम दो वर्णों पर पढ़ने से नी० हि० प्रतियों में आलोच्य स्थल पर ‘राइ’ पाठ मिलता है। यह पाठ निरर्थक होने के कारण असंगत है।

२३१ मद लक्षण ।

“सो मद जहँ आसव पिये हरप होय हिय बीच ।

नीद हास रोदन करे उत्तम मध्यम नीच ॥”

नी० हि० प्रतियों में प्रतिनिधित्व द्वारा प्रक्षिप्त पाठ मिलता है “सो मद जहँ आसवत पिये ।” यह पाठ मद सचारी का असंगत लक्षण होने के कारण विवृत माना गया है। अगले उदाहरण छंद में भी इन प्रतियों का पाठ असंगत तथा स्वीकृत पाठ पुष्ट होता है —

“आसव सेइ सिखाये राखीन के सुदरि मंदिर में गुण सोवै ।

सापने में बिछुरे हरि हेरि हरेई हरे हरिनीदृग रोवै ।

देव वहै सठि कै विरहानल आनंद के अंसुवान समोधि ।
आनुही भाजि मई सब लाज हँसैं अरु मोहन को मुख जोबैं ॥”

२ ३३ श्रम लक्षण ।

“अति रति अनि गति तें जहाँ उपजै अति तन खेद ।
सो श्रम जार्म जानिये निन्सहना प्रभ्वेद ॥”

नी० हि० प्रतियो में ‘गति’ के स्थान पर पुन ‘रति’ पाठ होने से उसी शब्द की असंगत पुनरुक्ति होनी है ।

२ ३४

“खरी दुपहरी बीच तरुन तरु नगीछ सहो परे तरनि के करनि की जोति है ।”

दोपहर के समय भूर्याणप इतना तीव्र हो जाता है कि केवल हरे-भरे वृक्षों के नीचे ही किसी प्रकार ठहरा जा सकता है परन्तु ऐसे भीषण आनप में भी नापिता केवल श्याम के अनुराग से आह्वृष्ट होकर अपन घर से निकल पडती है । नी० हि० प्रतियो में आलोच्य-स्थल पर “तरुन तरुन गार्थ” पाठ मिलता है । कहना न होगा कि अर्थ के विचार से यह पाठ प्रस्तुत प्रसंग में सर्वथा असंगत तथा अग्राह्य है । इन प्रतियो को आदर्श प्रति में इस स्थल पर पाठ भ्रष्ट होने के कारण यह विवृति उत्पन्न हुई है ।

३ ३६ चिन्ता लक्षण ।

“इष्ट वस्तु पाये जिना व्यग्र चित्त अति होइ ।
स्वांस ताप धँवरन जहै चिन्ता कहिये सोइ ॥”

आलोच्य स्थल पर नी० हि० प्रतियो में पाठ है “स्थान ताप ह्वै रैन दिन” । ‘स्थान ताप’ का संगत अर्थ नहीं बैठना तथा यह विवृति ‘स्वांस ताप’ से ही समव है अतः यहाँ भी प्रतिनिपिनार में अपने आदर्श प्रति के खडित होने के कारण यह पाठ-प्रक्षेप किया है ।

२ ५५ दुःख लक्षण ।

“उत्तम मध्यम नीच श्रम लघु चिन्ता अप्रसाद ।
महा सांक ये धन गये हित समो सु विपाद ॥”

नी० हि० प्रतियो में आलोच्य स्थल पर “बनुग को” पाठ मिलता है । यह पाठ निरर्थक होने के कारण विवृत माना गया है ।

२ ७२

“मानति नाहि निरीछेहि तानति वान भी कोर्यै कमान सी भीहैं ।”

नी० हि० प्रतियो में आलोच्य स्थल पर असंगत पाठ है “तान ओ ।”

० ६२ प्राप्त लक्षण ।

“घोर श्रवन दरसन भुमृनि तम पुलक नय गात ।
होइ धोम जो चित्त में प्राप्त वहन कवि तात ॥”

अर्थात् भयावहो वस्तु देखने में, उमरी आवाज सुनने से अथवा दृश्या स्मरण होने में जब मन विचलित हो जाय तो उसे प्राप्त कहते हैं । इस लक्षण के उदाहरण उद्द म नी० में ही पाया है । परन्तु नी० हि० प्रतियो में आलोच्य स्थल पर असंगत पाठ मिलता है “वेर राव” ।

२६८

“काम कमान तें वान उतारिहैं देव नही मधु माघव रहै ।”

अर्थात् कामदेव भी सर्वदा इसी प्रकार मन-मचन न करते रहेगे और यह मधुऋतु भी सदा नही बनी रहेगी, इसका भी कभी अंत होगा ही। स्मरण रहे कि ‘मधुऋतु’ के अर्थ में केवल ‘मधु’ शब्द का प्रयोग कवि ने अन्यत्र भी किया है। केवल एक स्थल उदाहरण के लिए प्रस्तुत है —

“केतकी रजनि अरगजनि मधुर मधु राका की रजनि राजे रजित चहूँ नोदिनि ।”

—‘कुसल विलास’—५ १५

नी० हि० प्रतियो में “मधु माघव रहै” के स्थान पर विकृत पाठ मिलता है “मधु व्याघव रहै ।” अर्थ के विचार से यह पाठ असंगत है।

२१०३

“देव कहै दुरि दौरि कुटीर मैं आपनो बैर बधू उहि लीन्हो ।”

“उहि लेने’ का अर्थ है उगाह लेना, बसूल कर लेना। परन्तु प्रतिलिपिकार के प्रदेश की बोली में ‘वहि’ का रूपांतर है अतः नी० हि० प्रतियो में ‘वहि लीनो’ पाठ मिलता है। ‘वहि’ शब्द ‘बधू’ के साथ सलग्न मानने पर भी अर्थ की संगति नहीं बैठती है।

३३७

“मन प्रसाद पति बस करन चमतकार अति होइ ।

सकल अग रचना लसित ललित बखानै सोइ ॥”

आदर्श प्रति का पाठ इस स्थल पर अपठ होने के कारण प्रतिलिपिकार ने अपनी ओर से पाठ सशोचित किया है—“अति वास कर” परन्तु यह लसित हाव का असंगत उदाहरण है अतः यह पाठ अप्राह्य माना गया है।

३५६ मान लक्षण ।

पति परपतिनी रति करत पतिनी करति जु मान ।

गुरु मध्यम लघु भेद करि ताहू त्रिविधि बखान ॥”

अर्थात् अपने पति के शरीर पर पररति के चिह्न देखकर पत्नी जो मान करती है उसके गुरु, मध्यम तथा लघु, में तीन भेद होते हैं। अतः उपर्युक्त दोहों का पाठ संगत है परन्तु नी० हि० प्रतियो में आलोच्य स्थल पर विकृत पाठ इस प्रकार मिलता है “ताहि अवध्य बखान”। यह पाठ मानभेद के प्रसंग में अर्थ के विचार से असंगत है अतः हमने इस पाठ को प्रतिलिपिकारकृत प्रक्षेप माना है।

४६१ परकीया लक्षण ।

“जाकी गति उपपति सदा पति सो रति मति नाहि ।

सो परकीया जानिये ढकी प्रीति जग माहि ॥”

नी० हि० प्रतियो में आलोच्य स्थल पर ‘उपजै’ पाठ होने से परकीया का लक्षण स्पष्ट नहीं हो पाता। पति के अतिरिक्त किसी अन्य पुरुष से अनुरक्त होना परकीया की मुख्य विशेषता है अतः ‘उपपति’ पाठ संगत एवं ‘उपजै’ पाठ प्रस्तुत प्रसंग में असंगत माना गया है।

४६५

“भरौरी के भरौलनि हूँ कँ भरौरति रावटोहूँ मैं न जाति सही ।”

परकीया गुप्ता नायिका अपना परपुरुष प्रमग द्विपाने के हेतु अपने हार टूटने तथा अघर के क्षन-विभ्रत होने का कारण तीव्र गति में बहती बयारको बताती है। यह बयार रंग रावटी में बने वातायन से मीधे नहीं आती, वातायन में लगी भँकरी से असत अवच्छेद होकर उनका वेग कुछ मन्द पट जाता है परन्तु फिर भी उसकी गति अमटनीय है। इस प्रकार “भँकरी वाले ऋरोखे” के अर्थ में “भँकरी ने ऋरोखनि” पाठ समन है परन्तु निकट के ‘भँकरीनि’ शब्द के कारण प्रतिलिपिकार के प्रमाद से नी० हि० प्रतियो में “भँकरी के भँकरीन हूँ वं भँकरीति” पाठ मिलता है। इसका अर्थ “भँकरी की भँकरी” करने पर दूसरे ‘भँकरीति’ के साथ इम अर्थ की सगति नहीं बैठती अतः हमने इस पाठ को विवृत्त माना है।

४७५

“चित्र स्वप्न परतच्छ करि दरसन त्रिविधि बखानु ।

देस काल भंगोनु करि श्रवण तीनि विधि जानु ॥”

कवि देव ने श्रवण तथा दर्शन के उपर्युक्त तीन-तीन भेद अपने ‘कुशल विलास’ आदि अन्य प्रथो में भी माने हैं किंतु नी० हि० प्रतिया में सम्भवतः ‘भगीन’ के वर्णों में विपर्यय होने से ‘गमीन’ तथा इससे ‘गमीर’ पाठ हो गया है। यह पाठ निरर्थक होने के कारण अग्राह्य है। इसी प्रकार इन प्रतियो में ‘तीन’ के स्थान पर ‘चारि’ पाठ मिलता है। जब कवि ने श्रवण के केवल तीन ही भेद किये हैं तो पाठ भी ‘तीनि’ होना चाहिए। ‘चारि’ पाठ प्रतिलिपिकार द्वारा सेखन-प्रमाद से हो गया मालूम देता है।

४७७

“ऊँची अटा चडि सेज सजी तो कहा हरि जो न यहाँ निसि जागे ॥”

चरण का अर्थ तथा प्रसंग दोनों स्पष्ट हैं परन्तु प्रतिलिपिकार के प्रमाद से हुआ नी० हि० प्रतिया का ‘सेज चडि’ पाठ ‘चडी’ शब्द की अनावश्यक पुनरावृत्ति होने के कारण अनुचित है। अर्थ के विचार से भी ‘सेज चडने’ से प्रायः सुरति का भाव लिया जाता है परन्तु यहाँ सुरति का कोई प्रसंग नहीं है। प्रतिलिपिकार द्वारा यह प्रमाद इसके पहले “अटा चडि” पाठ होने के कारण सम्भव है।

४११० अधमा लक्षण ।

“विनु दोगहि छठं तजै बिना मनाये मानु ।

जाको रिस रस हेतु विनु अधमाताहि बखानु ॥”

अर्थात् जो नायिका अकारण बैर प्रीति मान ले उसे अधमा कहते हैं। रेखांकित स्थल पर प्रतिलिपिकार के प्रमाद से ‘होत’ असमन पाठ मिलता है। इस पाठ में अर्थ की अमगति है अतः हमने इसे अग्राह्य माना है।

भा० सा० प्रतियाँ : ऋटित पाठ •

५१-२

“बविता नामिनि मुखद पद मुखरन सरस भुजाति ।

अलवार पहिरे निकट अद्भुत रूप सजाति ॥

ताही हें कवि देव कहि अलकारकी भांति ।

मुनि मत के अनुसार तें लै कछु लच्छन जाति ॥”

केवल भा० सा० प्रतियो मे उपर्युक्त दोहे नहीं हैं, ज० प्रति मे पचम विलास न होने के कारण इस प्रति की स्थिति अनिश्चित है । कवि ने अन्य विलासो के प्रारम्भ मे प्रत्येक नवीन रूप का समारम्भ करते हुए प्राक्कथन के रूप मे दोहे दिये हैं तथा उपर्युक्त दोहो मे से प्रथम काव्य रसायन' मे अलकार सम्बन्धी नवम विलास का भी प्रथम दोहा है अत हमने माना है कि ये दोहे भा० सा० प्रतियो मे प्रतिलिपिकार के प्रमाद से छूट गये हैं ।

१८ “राधे के रूप” अतिशयोक्ति उदाहरण छंद केवल भा० सा० प्रतियो मे नुदित । इसके पूर्ण कवि ने ५ १६-१७ सख्या के दोहो मे रूपक तथा अतिशयोक्ति का लक्षण इस प्रकार दिया है —

“सम समान जैसे अनो जिमि प्यो मानो तूल ।

और सदृश कवि देव ए पद उपमा के भूल ॥

जहँ उपमा में ये न पद सोई रूपक जान ।

सीमा तँ अति धरनिये अतिसँ ताहि बखान ॥”

अन्य प्रतियो मे इन दोनो अलकारो के उदाहरण पुषक्-पुथक् छंद मे दिये है परन्तु केवल भा० सा० प्रतियो मे अतिशयोक्ति का उदाहरण नहीं है । रूपक उदाहरण से अतिशयोक्ति अलकार का लक्षण स्पष्ट नहीं होता अत यह नहीं कहा जा सकता कि कवि ने एक ही उदाहरण मे दोनो अलकारो का उदाहरण समाविष्ट कर लिया होगा ।

प्रक्षेप

१ वदना के पूर्व केवल भा० सा० प्रतियो में निम्नलिखित दोहा अधिक है —

“राधाकृष्ण किसोर जुग पग बदीं जगबद ।

मूरति रति शृंगार की सुद सच्चिदानन्द ॥”

यही दोहा 'प्रेम चन्द्रिका मे १३ तथा 'कुशल विलास' मे १२ सख्या पर भी आया है । आलोच्य ग्रंथ मे “श्री वृदावन चन्द” ११ छप्पय मे भी कवि के आराध्य श्रीकृष्णचन्द की वन्दना होने से यह दोहा अनिवार्य रूप से आवश्यक नहीं है । भा० सा० प्रतियो मे अतिरिक्त अन्य सभी प्रतियो मे प्रक्षेप अथवा प्रतिलिपि-सम्बन्ध न मिलने के कारण हमने भा० सा० प्रतियो मे इस दोहे को देव कृत उपरोक्त अन्य ग्रंथो से प्रक्षिप्त माना है ।

स्थान-विपर्यय .

२४०

“जानति नाहिं रहे हरि कौन ने ऐसी धौ नौन बधू मन भावै ॥”

चरण मे 'रहे' शब्द का प्रयोग कुछ विचित्र अवश्य है क्योंकि इसे नायिका के लिए उपयुक्त मानने पर पदान्वय इस प्रकार होगा “हैं जानति नाहिं रहे” परन्तु इसमे लिंग सम्बन्धी असंगति है । इससे विपरीत इसे हरि के साथ जोड़ने पर अन्वय इस प्रकार होगा “हैं जानति नाहिं

‘हरि कौन के हैं रहे हैं’। इस प्रकार अर्थ करने में निश्चय ही शब्दों की खोजतान होती है परन्तु कवि में दूरान्वय की विशेषता अन्य स्थलों पर भी मिलने के कारण हम चरण का अर्थ भी प्रकाश करना उचित समझते हैं। समवत अर्थ करने में कठिनाई होने के कारण भा० सा० प्रतियो में प्रतिलिपिकार के सचेष्ट प्रक्षेप से अथवा प्रमादवश ‘रहे’ के स्थान पर ‘हरे’ पाठ मिलता है। ‘हरि’ के साथ उसके सङ्गोचन कारक का रूप ‘हरे’ असंगत है।

३५ विञ्चोक लक्षण।

“प्रिय अपराध घनादि मद उपजै गर्व विकार।

कुटिल डोठि अवयव चलन सो विञ्चोक विचार ॥”

यहाँ ‘विकार’ शब्द गर्व की दूषित वृत्ति के अर्थ में सङ्ग है परन्तु भा० सा० प्रतियो में प्रतिलिपिकार के लेखन-प्रमाद से वर्णों का विपर्यय हो गया है ‘किवार’। हमने इस पाठ को प्रस्तुत प्रसंग में अर्थ के विचार से असंगत होने के कारण विहृत माना है।

पाठ-विकृति :

२१०० प्रथम-द्वितीय चरण।

“कहु कौन की चपक चारु लता यह देखि मवै जन भूलि रहे।

कवि देव ए तामै कहा बिलसै विवि श्रीफल से घरि धूलि रहे ॥

कवि ने नायिका के रूप का साग रूपक में वर्णन किया है। यह छंद तरु-वितरु का उदाहरण है अतः द्वितीय चरण का अर्थ इस प्रकार होगा “इस स्वर्ण लता में यह कौन सी वस्तु घोभायमान हो रही है जो आकार एवं कठोरता में श्रीफल को भी लज्जित करने वाली है।” अतः “उस चारु चपक लता में” के अर्थ में ‘तामै’ पाठ संगत है परन्तु भा० सा० प्रतियो में बालोच्य स्थल पर ‘तामै’ पाठ होने से असंगति उत्पन्न होती है। ‘तामै’ को ‘तियमै’ का रूपान्तर भी नहीं स्वीकृत किया जा सकता क्योंकि तब छंद में रूपक का चमत्कार नष्ट हो जाता है।

३२७ विभ्रम लक्षण।

“उलटै जहँ भूपन बसन भेष हंसै जन जाहि।

भाग रूप अनुराग मद विभ्रम बरनहु ताहि ॥”

भा० सा० प्रतियो में बालोच्य स्थल पर प्रतिलिपिकार के प्रमाद से ‘बचन’ असंगत पाठ मिलता है। विभ्रम हाव में ‘बचन’ नहीं बदलते बरन् हठबन्दी में बसन ही बदल जाते हैं, यह इस लक्षण के निम्नलिखित उदाहरण से भी प्रगट होता है —

“स्याम सो बेलि करी सिगरी निसि सोत तें प्रात जनी यहुराइ कैं।

आपने नीर के घोखे बधु पहिर्यो पट पीत भट्टु भरुराइ कैं ॥”

३४६

“देह दुहू की दहै विनु देखे सु देखि दसा निसि सोवत को ती।”

भा० सा० प्रतियो में प्रतिलिपिकार के प्रक्षेप से ‘देह’ के स्थान पर ‘देव’ पाठ मिलता है। यह पाठ कविवृत नहीं हो सकता क्योंकि ‘देह’ के अभाव में चरण सजा पद से रहित हो जाता है और व्याकरण-रूप आता है तथा चरण का अर्थ करने में भी असंगति उत्पन्न होती

हे—फिर कौन सी वस्तु दहती है ?

३ ७६ प्रथम दो चरण ।

“सुधाघर से मुख वानि सुधा मुखक्यानि सुधा बरसै रदपाति ।

प्रवाल से पानि मृनाल भुजा कहि देव लता तन कोमल कांति ॥”

द्वितीय चरण में उपमेय-उपमान के युग्म हैं प्रवाल पाणि, मृनाल भुजा, लता-तन । परन्तु भा० सा० प्रतिषो में आलोच्य स्थल पर ‘लतान की’ पाठ होने से छंद में कवि की वर्णन शैली के विपरीत “सतान की कोमल कांति” पद मृनाल भुजा का विशेषण पद हो जाता है । कवि ने नायिका के सुन्दर सुलभ शरीर की तुलना लता से अनेक स्थलों पर की है, केवल ‘काव्य रसायन के नवम विलास में निम्नलिखित पाँच स्थलों पर ऐसे प्रयोग मिलते हैं — ६३८, ६४२, ६४७, ६७३ तथा ६७६ ।

४ २७ अंतिम दो चरण ।

“भेंटि द्वियोग समेटि सब सुख सा भट्ट भेंटि भट्ट जुग जीहै ।

या मुख मुद्ध सुधाघर तँ अघरा रस धार सुधारस पोहै ॥”

सखी नायिका से कह रही है, नायक जब तुम्हें अपने हृदयालिङ्गन में आविष्ट करेंगे तो वह तुम्हारे समस्त दुःखों को एकत्रित कर नष्ट कर देंगे । ऐसे भट्ट नायक युग-युग जियें । (तुलना-‘मन के न भेटे दुख सुख बयो समेटे जाहि मदन भपेटे जो न भेंटि भुज भरि कै ।”—‘कुशल विलास’—८१२ ।) भा० सा० प्रतिमा में प्रतिलिपिकार ने ‘भट्ट’ की आवृत्ति को अनावश्यक मान कर ‘सुख सो भरि भेंटि भट्ट जुग जीहै’ पाठ सशोभित किया है । “भर भेंटना” पाठ उपरोक्त व्याख्या की तुलना में प्रतिलिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त ज्ञात होता है अतः हमने इस पाठ को अप्राह्य माना है ।

४ ११४ सखी उदाहरण ।

“चाह सो विस्र प्रसन्न करै रस रग में सग सयान सिखावै ।”

‘सयान’ का अर्थ है ‘सयानपन’—“भिरो अयान सयान तिहारी ।”, “देव रच्यो अग अगनि रग दद्यो सु सयान अयान न लून्यो ।”—‘कुशल विलास’—४३२ । आलोच्य चरण का अर्थ इस प्रकार होगा “वह चतुर सखी अपने स्नेह से नायिका का मनोरजन भी करती, उसे रस-रग की शिक्षा भी देती है और साथ ही साथ उसे सयानपन भी सिखलाती है ।” भा० सा० प्रतियो में आलोच्य स्थल पर ‘सयानि’ पाठ मिलने से इसके सखी के विशेषण रूप में प्रयुक्त होने का भ्रम होता है ।

लिपिजन्य विकृति

२ २६ असूया लक्षण ।

“श्लोच बुबोध विरोध तँ सहे न पर अधिकार ।

उपजै जहँ जिय दुष्टता सो असूया अवधार ॥”

भा० सा० प्रतियो में ‘पर’ के स्थान पर ‘यह’ असंगत पाठ मिलता है । यह पाठ विकृति ‘प’ में ‘य’ तथा ‘र’ में ‘ह’ का भ्रम होने से सम्भव है ।

२३८

“मैन सर जोर मारे पवन भकोरनि सो आई है उमगि छिति छाती नीर भरिये ।”

‘धरती’ के अर्थ में ‘छिति’ शब्द यहाँ प्रसंग-संगत है परन्तु भा० सा० प्रतियों में ‘त’ में ‘न’ का भ्रम होने से ‘छिनि’ विकृत पाठ मिलता है ।

२५०

“तो लगि आई गयो उत तें सु नगीच*मनो चित बीच परे छै ।”

वन कुज में खेलते-खेलते राधिका का हार किसी भाँधी में उलझ गया । तभी वहाँ रसिक बन्हाई आ पहुँचे—ऐसे जैसे हृदय में बँठे रहे हों और वहाँ से निकल पड़े हो । इस प्रसंग में प्रस्तुत स्थल पर रेखांकित पाठ संगत है परन्तु भा० सा० प्रतियों के इसके स्थान पर ‘छ्वै’ पाठ मिलता है । यह पाठ-विकृति सयुक्ताक्षर में भ्रम होने से सम्भव है । अन्तिम चरण के “छल सा छतिपा छ्वै” पाठ में भी यही शब्द होने के कारण यह शब्द यहाँ संगत नहीं माना गया है ।

२६७ विप्रतिपति उदाहरण के अन्तिम दो चरण ।

“कवि देव बहूँ कहिये जुग जो जलजात रहे जलजात में ध्वै ।

न सुने न पै वाहूँ कहूँ कवहूँ कि मयक के अक में पकज दूवै ॥”

पवि नायिका के कमल सद्ग नेत्रों को देख कर मन ही मन तर्क वितर्क कर रहा है “कमल के समान ये नेत्र युग्म चन्द्रमण्डल में सुशोभित हो रहे हैं । पर नहीं, चन्द्रमा के अक में त मृग शायक की ही स्थिति लोक प्रसिद्ध है । यह तो किसी ने कही-कभी नहीं सुना कि चन्द्रमा दो सुन्दर कमल खिले हैं । वास्तव में नकारात्मक ‘न पै’ से ही कवि-कथन की विप्रतिपति सिद्ध होती है । ‘न’ में ‘त’ का भ्रम होने के कारण सा० प्रति में ‘तर्पै’ एव इस पाठ को सार्थक रूप देने के कारण भा० प्रति में ‘तर्षी’ पाठ मिलता है । सा० प्रति के पाठ की निरर्थकता स्पष्ट है, भा प्रति का पाठ भी अर्थ के विचार से असंगत है क्योंकि इस अर्थ में यह चरण के वनतथ्य का खण्ड नहीं करता ।

तुलना—

“रूप के मन्दिर यो मुल मैं मनि दीपक से दृग द्वै अनुकूले ।

दर्पन मैं मनि मीन सलील सुधा सर नील सरोज से फूले ।

देव जू सुरशुखी मूडु फूल मैं भीतर भीर मनो भ्रम भूले ।

अक मयकज के दल अकज पकज मैं मनो पकज फूले ॥”

—‘काव्य रसायन’—६३

३२६

“भोहनलाल को मोहन को यह पँहति भोहनमाल अकेली ॥”

‘न्ह’ सयुक्ताक्षर में ‘घ’ का भ्रम होने के कारण भा० सा० प्रतियों में आलोच्य स्थल पर ‘धंयति’ पाठ मिलता है । यह पाठ अर्थहीन होने के कारण विकृत माना गया है ।

नी० हि० का० प्रतियाँ : स्थान-विपर्यय :

५ १५-१६

“सम समान जैसे जनो ज़िम्मे ज्यो मानो तुल ।
और सदृश कवि देव ए पद उपमा के मूल ॥
जहँ उपमा में ये न पद सोई रूपक जान ।
सोमा तँ अति वरनिषे अतिसँ ताहि बखान ॥”

नी० हि० का० प्रतियो मे प्रथम दोहे के बाद रूपक उदाहरण ५ १७ या छन्द है । इस प्रकार “और सदृश कवि देव ए पद उपमा के मूल” के बाद रूपक का उदाहरण तथा उसके बाद रूपक का लक्षण आना स्पष्ट दुष्क्रम है ।

पाठ-विकृति :

१ १८

“दख दुहम के देखत ही उपज्यो उर में अनुराग अनूनों ।
डोलत हैं अभिलाख भरे सुलग्यो बिरहज्वर अग अभूनों ।
ती लीं अचानक हूँ गई भेंट इत उत ठौर निहारत सूनों ।
प्रीति भरे अरु भीति भरे मन कुज में कपत दपति दूनों ॥”

वैषय सात्त्विक भाव शीत, क्रोध, भय तथा श्रम आदि से होता है एवं इसमें कप अनुभाव होता है । आलोच्य स्थल पर नी० हि० प्रतियो में ‘प्रीति भरे अनुराग भरे’ तथा का० प्रति में ‘प्रेम भरे अरु प्रीति भरे’ पाठ है । प्रेम, प्रीति तथा अनुराग प्रायः समानार्थी शब्द हैं, इसके विपरीत अन्य प्रतियो में प्राप्त पाठ के अनुसार कप का कारण भीति तथा अनुराग दोनों हैं अतः यही पाठ सगत माना गया है ।

५ २६ सहोक्ति उदाहरण ।

“प्यारी के प्रान समेत पिया परदेस पयान की वात चलावै ।
देव जू छोम समेत छपा छतिमा में छपाकर की छवि छावै ।
बोली अली बन बीच बसत को मीचु समेत नगीच बतवै ।
काम के तीर समेत समीर सरীর में लागत पीर बढावै ॥”

छंद सहोक्ति अलंकार का उदाहरण है अतः अर्थोत्कर्ष के लिए सहित शब्द अथवा उसका समानार्थी शब्द आना चाहिये । अतः सहित शब्द अन्य चरणों में भी है किन्तु नी० हि० का० प्रतियो में आलोच्य स्थल पर ‘काम के तीर समान समीर’ पाठ होने से, सगत अर्थ के होने हुए भी अलंकारिक चमत्कार सुप्त हो जाता है अतः हमने इस पाठ को विकृत माना है ।

पर्याय :

३ ४८ राधिका पूर्वानुराग ।

“सासन ही सा समीर गयो अरु आँसुन ही सब नीर गयो दरि ।
तेज गयो गुन ले अपनो अरु भूमि गई तन की तनुता करि ।

देव जियै मिलिपेई की आम् कि आम्हू पास अकाम रह्यो मरि ।

जा दिन तें भुव केरि हरे हंसि हेरि हियो जू मियो हरि जू हरि ॥”

पञ्चतत्त्व निर्मित शरीर का एक-एक तत्त्व अपने मूल तत्त्व में जा मिला । एक प्राण बच रहा क्योंकि वह जिम द्रव्य में निर्मित हुआ है वह जड़ता के रूप में नायिका के चतुर्दिक छाया हुआ है । का० नी० हि० प्रतियों में आनोच्य स्थल पर 'जीव रह्यो' पाठ पर्याय मिलता है । यह छंद 'सुखमागर तरंग', 'सुजान विनोद', 'भवानी विलास' एवं 'प्रेम चन्द्रिका' ग्रंथों में आया है परन्तु अन्तिम ग्रंथ को छोड़कर सभी ग्रंथों में "देव जियै" पाठ है ।

३ ७५

"व्याकुल ही विरहग्वर मों भुम पावन जानि जनौनु जगाई ।

घोरि घनोरग केनरि को महि गोरी गुलाल के रग रंगाई ।

स्यो तिय सौम सई गहिरो कहि रो उनसों अथ कौन सगाई ।

ऐमे भये निरमोही महा हरि हाय हनै विनु होरी सगाई ॥”

का० नी० हि० प्रतिया में तृतीय चरण का पाठ इन प्रकार मिलता है —

“सौम सई गहिरो कहि रो उनसों हमसों अथ कौन सगाई ।”

४ २६

“मोरिये छाती छुवै छियि के मुन चुमि नहै कोउ थीर न जानै ।”

नी० हि० का० प्रतियों में आनोच्य पाठ का पर्याय मिलता है—“कोई दूजो न जानै” ।

दोनों ही पाठ समानार्थी हैं ।

५ ७६ व्यतिरेक लक्षण दोहा ।

“जहँ समान विवि वस्तु को कीजँ भेद बगान ।

अलकार व्यतिरेक सो देवदत्त उर आन ॥”

का० प्रति में 'द्वै' वस्तु तथा हि० प्रति में 'द्वै' वस्तु पाठ मिलता है, नी० प्रति में इस स्थल का पाठ दीमकों द्वारा नाष्ट हो गया है । हि० प्रति का 'द्वै' पाठ निस्सन्देह का० प्रति के 'द्वै' पाठ में सम्भव है । जहाँ दो समान वस्तुओं में एक को बढ़ाकर अथवा दूसरे को घटाने वर्णन करने हैं वहाँ व्यतिरेक अलकार होता है । इस प्रकार 'विवि' तथा 'द्वै' पाठ समानार्थी होने के कारण सगत हैं परन्तु 'काव्य रसायन' में व्यतिरेक के निम्नलिखित लक्षण से 'विवि' प्रयोग की गति सिद्ध होती है —

“वर्गि वस्तु विवि सम कहै जे विनोय व्यतिरेक ।”

—'काव्य रसायन'—६ ६१

५ १७ रूपक उदाहरण ।

“ऐसा अद्भुत रूप भावनी को देगी देव जाके विनु देखे छिन छाती न मिरानि है ।”

आनोच्य स्थल पर नी० हि० का० प्रतिया में 'जाहि देखे कौन की न छतिया गिरानि है' पाठ मिलता है । ये दोनों पाठ भी प्रायः समानार्थी हैं ।

५ ३०

“मोटी लगी बतियाँ सुल सौठियो गुने सत्र गौतिन को दपटें सो ।”

आलोच्य स्थल पर का० प्रति मे 'सु अमोठिअं वातं' नी० प्रति मे 'अनमोठिओ वातं' तथा हि० प्रति मे 'अनईठिओ वातं' पाठ मिलता है। सीठी अथवा सार रहित वातों का भी मीठा लगना अथवा गैर मीठी वातों का भी मीठा लगना प्रायः समानार्थी है। हि० प्रति का "अन ईठिओ वातं" जो प्रतिलिपिकार के प्रक्षेप के कारण सम्भव है, अर्थ के विचार से असंगत है।

का० सा० प्रतियाँ : लिपिजन्य विकृति

२ ५८ आवेग उदाहरण ।

"देव हृदं पथ आइ मनी चढि धाई मनोरथ के रथ ऊपर ।"

श्रीकृष्ण के आगमन का समाचार सुनते ही सभी गोपागनाएँ उनके दर्शन को अत्यन्त आकुल हो उठीं। प्राकुलता के कारण वह क्षीघ्रता से चलती सकती नहीं थी परन्तु उनके हृदय में श्याम की मूर्ति आकर पहले से ही विराजमान हो गयी—मानो चलने में असमर्थ होने के कारण वे अभिलाषा के रथ पर आरुढ़ हो हृदय मार्ग से होती हुई अपने प्रिय से मिल गयीं। का० सा० प्रतियों में 'हृ' सम्यक्ताक्षर में भ्रम होने के कारण 'हूर्व' पाठ मिलता है। यह पाठ अर्थहीन होने के कारण विकृत माना गया है।

पाठ-विकृति :

१ २४

"जिनको निरखत परसपर रस को अनुभव होइ ।

तिनही को अनुभाव पद कहत सयाने सोइ ॥"

अर्थात् वे चेष्टाएँ जिनको देखने से रस का अनुभव होता है, अनुभाव कहलाती हैं। का० प्रति में 'परप्रति जिनको परसपर' तथा सा० प्रति में 'परसत जिनको परसपर' पाठ है। अनुभाव का 'स्पर्ष' प्राप्त कर उसका आस्वाद लेना असंगत है अतः यह पाठ हृदय विकृत माना है। दोनों प्रतियों में 'जिनको' का समान स्थान-विपर्यय भी द्रष्टव्य है।

४ ४७

"तैसी चद्रमुखी के वा चद्रमुख चद्रमा सो होइ परै चाँदनी ओ चाँदनी से चीर सो ।"

चरण का अर्थ स्पष्ट है परन्तु 'होइ परै' के स्थान पर का० प्रति में 'होय परै' पाठ है तथा यही पाठ सा० प्रति में पाद्वं पर मिलता है। 'होय परै' पाठ प्रस्तुत प्रसंग में सर्वथा असंगत है।

५ २६

"याही ते प्यारी तिहारी मुखद्युति चद समान वखानत हँ कवि ।"

इसके स्थान पर का० सा० प्रतियों में "वखानत तो कवि" पाठ होने से असंगति होती है क्योंकि 'मुखद्युति' के लिए 'तो' तथा 'तिहारी' दो सम्बन्धवाचक सर्वनाम अनावश्यक हैं।

पर्याय :

१ २०

"चित्त चावते चैतकी चद्रिका ओर चित्त पति को चित्त चोरि लयो ।"

का० सा० प्रतियों में 'चाँदनी' पर्याय मिलता है।

४ १०६

“सापराध पति देखि कै ..”

केवल का० सा० प्रतियोंमें “सापराध पति देखि कै.....” पाठ है।

नी० हि० सा० प्रतियाँ पाठ-विकृति :

१.२१

“हेरत ही हरि सोनो हियो इन आल रसाल सिरीष जम्हीरनि ।”

नी० हि० प्रतियों में स्थान विपर्यय तथा लिपिभ्रम से ‘इन आली सिदाप रसाल’ पाठ मिलता है। ‘सिदाप’ पाठ अर्थहीन होने के कारण असंगत है परन्तु सा० प्रति के आदर्श में ‘मिदाप’ पाठ कदाचिन् पाद्वं पर अंकित होने के कारण सा० प्रति में इस प्रकार आ गया है ‘आली सिदाप सिरीष’। नी० हि० प्रतियों का ‘सिदाप’ विवृत पाठ ‘सिरीष’ में भ्रम होने से सम्भव है।

२ १०५

“आलस ग्लानि निर्वेद थम उत्कठा जड जोय ।

सकासमुत्ति अयबोघोन्माद विषोग ॥”

कवि के मतानुसार विप्रलभ शृंगार में उपयुक्त सचारियों का वर्णन होना चाहिये। ध्यान रहे कि दोहे के तृतीय चतुर्थ चरण में दोहे के तथाव्यक्त लक्षण के अनुसार मात्राएँ नहीं हैं—पाठ की भंग करके पढ़ने पर भी मात्राएँ पूर्ण नहीं होती। इस प्रमग में यह भी स्मरण दिलाना अनुचित न होगा कि यह पाठ कव्य के विचार से पूर्ण है, अर्थात् किसी शब्द के भ्रुटित होने के कारण मात्राएँ कम नहीं हुई हैं। अतः यही पाठ कविवृत होगा। नी० हि० प्रतियाँ में मात्रा पूर्ति के हेतु पाठ सशोधन हुआ है ‘सकासमुत्ति सुस्वास औ यो उन्माद विषोग’। इस पाठ से दोहे में बाधित मात्राएँ तो पूर्ण हो जाती हैं किन्तु इसमें स्वास, औ, यो आदि निरर्थक शब्द होने के कारण इन्हीं प्रतिनिषकार वृत प्रक्षेप माना जाएगा। सा० प्रति में नी० हि० प्रतियों की सहायता से पाठ-सशोधन हुआ है—‘सकासमुत्ति सुस्वास औ बोघोन्माद विषोग’। इस पाठ की असंगति भी उसी प्रकार स्पष्ट है। हमने ‘काव्य रसायन’ तथा ‘रस विलास’ आदि ग्रंथों में प्राप्त न्यून मात्रा वाले प्रामाणिक दोहों की कर्वाँ यथास्थान की है, ‘माय विलास’ में प्राप्त केवल एक ऐसा उदाहरण हम यहाँ दे रहे हैं :—

“प्रिय दर्शन मुगिरन श्रवन होत अचल गति गात ।

सबल खेटा रवि रहै प्रलय कहैं कवि तात ॥” २ १६

तृतीय चरण में एक मात्रा कम है परन्तु लक्षण इसी रूप में पूर्ण तथा स्पष्ट है।

स्थान-विपर्यय :

२ ५७

“प्रिय अप्रिय देखे मुने गात पात सबेग ।

होइ अचानक भूरि भ्रम सो बरनहु आवेग ॥”

नी० हि० प्रतियो मे आलोच्य स्पल पर 'तेन ताप सवैग' तथा सा० प्रति में 'तेन तपै स' पाठ है। दोनो ही पाठ अशुद्ध हैं। इन पाठो की 'ताप' विकृति 'पात' के वर्णों मे विपर्यय से सभव है।

लिपिजन्य विकृति :

४१६

"जाहि अर्प त्रिपुरारि सुरारि सब असुरारि सुरारि हुने है।"

'म' मे 'स' का भ्रम होने के कारण नी० हि० सा० प्रतियो मे 'त्रिपुरारि सुरारि' मिलता है। आगे भी 'सुरारि पाठ होने से यहाँ यह पाठ असगत है।

४३६

"भित्तिन सो भहनाइ के किकिनि बोलै सुकी सुक तौ सुख दैनी।"

'न' मे 'र' का भ्रम होने से नी० हि० सा० प्रतियो मे आलोच्य स्पल पर 'भहर' पाठ प्राप्त होता है। 'भहरने' का अर्थ "थाग की लपट अथवा तेज वायु का शब्द" होने कारण किकिणी बोलने के प्रस्तुत प्रसंग मे यह पाठ यहाँ असगत है। तुलना— "भहर भहर भू भीनो भर लायो देव छहर छहर छोटी बुदनि छहरिया।"—सुजान विनोद—४८, "कव भनित अगनित रव किकिनी के नूपुर रनित मिले मनित सुहात है।"—'भाव विलास'—३१

नी० हि० ज० प्रतियां : पाठ-विकृति :

३१८ द्वितीय-तृतीय चरण।

"ककन भनित अगनित रव किकिनी के नूपुर रनित मिले मनित सुहात है।

कुडल हतत मुलमण्डल भलमलात झूलत दुकूल भुजमूल भहरात है।"

यह पाठ 'भवानी विलास मे ५४० तथा 'सुख सागर तरंग' मे ५०० सख्या पर मिलता है परन्तु केवल नी० हि० ज० प्रतियो मे द्वितीय चरण मे 'भनक' तथा तृतीय चरण 'भलक' पाठ मिलता है। नायिका के भूमने अथवा हिलने के कारण उसका दुपट्टा कंधे पर से गिर जाता है अत 'झूलत' पाठ ही सगत है। 'भनित पाठ 'रनित' तथा 'मनित' के अनुप्रास से त 'भूलत' पाठ हनत' के अनुप्रास से पुष्ट भी है।

३७६

"व्याकुल हूँ विरहानल सो तच्चि घूमि गिरि मुनगौरि गली पर।"

नी० हि० प्रतियो मे त्रिपिभ्रम से 'तव पाठ मिलता है। यह छन्द 'भवानी विलास' मे ६३१ पर भी है परन्तु यहाँ 'जरि' पर्याय मिलता है। कहना न होगा कि प्रस्तुत प्रसंग 'तच्चि' पाठ सगत तथा 'तव' पाठ विकृत है।

भा० सा० ज० प्रतियां : पाठ-विकृति :

३२६

"श्रम भद भय अभिलाष अह सुमुति गवं इक बार।"

भा० सा० ज० प्रतिया मे प्रतिलिपिकार के दृष्टि-भ्रम से असगत पाठ मिलता है "अभि-
लाप एव ।"

३७६

"न मानति और बछू तव तें मन मांहि वहीये रही छवि छाई ।"

'य' मे 'व' का भ्रम होने से भा० सा० ज० प्रतियो मे 'वही ये' विकृत पाठ मिलता है ।
यह पाठ अर्थ के विचार से असगत है ।

४ ८६ उत्कठिता नायिका लक्षण ।

"हेतु विचारै चित्त मे उत्कठिता कहू ताहि ।"

'उत्कठिता' पाठ से चरण मे एक वर्ण की नियम विरुद्ध वृद्धि होती थी अत केवल भा०
सा० ज० प्रतियो के प्रतिलिपिकारने अपनी प्रतियो मे 'उत्कठा' पाठ रखा है । दोहे मे उत्कठिता
नायिका का लक्षण होने के कारण यह पाठ असगत तथा 'उत्कठिता' पाठ ही सगत है ।

प्रतियो का प्रतिलिपि सम्बन्ध :

'भाव विलास' की उपलब्ध प्रतियो मे पाठ-मिश्रण होने के कारण इनका परस्पर
सम्बन्ध अत्यन्त उलभा हुआ है । विकृतियो के आधार पर प्रतियो का सूक्ष्म अध्ययन करने पर
निम्नलिखित तथ्य सामने आते है :—

नी० हि० प्रतियाँ एक ही प्राचीन आदर्श की दो प्रतियाँ हैं । यह आदर्श मूल प्रति के
निकट की कोई ऐसी प्रति थी जिसका पाठ भ्रष्ट एव खडित अवस्था मे था । इन प्रतियो मे
अपनी-अपनी स्वतन्त्र विशेषताएँ भी मिलती हैं अत ये प्रतियाँ एक-दूसरे की प्रतिलिपि नहीं हो
सकती ।

भा० सा० प्रतियाँ एक आदर्श की दो प्रतियाँ है । इन प्रतियो मे भी अपनी-अपनी
स्वतन्त्र विशेषताएँ मिलती है अत ये प्रतियाँ एक दूसरे की प्रतियाँ नहीं हो सकती ।

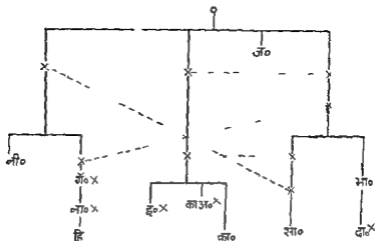
प्रतियो के उपरोक्त समुच्चय के अतिरिक्त दोप समुच्चय प्रतियो मे पाठ मिश्रण के
कारण निर्मित होते हैं अथवा इनमे सदिग्ध प्रतिलिपि-सम्बन्ध हैं ।

का० प्रति तथा नी० हि० प्रतियो मे परस्पर पाठ मिश्रण हुआ है । इन दो शाखाओं की
प्रतिया मे परस्पर स्वतन्त्र विशेषताएँ भी मिलने के कारण ये पाठ-परपरा मे निम्न स्तर से
सम्बन्धित प्रतियाँ नहीं हैं ।

इसी प्रकार सा० प्रति मे का० प्रति एव नी० हि० प्रतियो की पूर्व-परपरा की प्रतियो से
पृथक्-पृथक् पाठ-मिश्रण हुआ है ।

ज० प्रति तथा नी० हि० प्रतियो मे केवल दो स्थलो पर पाठ विकृतियाँ समान हैं एक
भा० सा० ज० प्रतियो मे भी दो ही स्थलो पर समान विकृतियाँ मिलती हैं अत हम नी० हि०
ज० तथा भा० सा० ज० प्रतियो को विकृति-सम्बन्ध से सम्बन्धित प्रतियाँ नहीं मानते हैं ।

'भाव विलास' की समस्त प्रतियो के अतिसम्बन्ध को इस प्रकार स्पष्ट किया जा
सकता है



* अंकित प्रतियों का उपयोग आंशिक रूप में हुआ है अथवा इन्हें छोड़ दिया गया है।

सपावन-सिद्धान्त :

प्रतियों के निम्नलिखित परस्पर स्वतंत्र समुच्चयों में प्राप्त पाठ प्रामाणिक होगा —
सभी प्रतियों में प्राप्त सगत पाठ,

नी०, हि० तथा ज० प्रतियों में प्राप्त पाठ, भा०, ज० तथा का० प्रति में प्राप्त पाठ,
भा० सा० ज० प्रतियों के शीर्षक के अंतर्गत आए कुछ स्थलों को छोड़ कर इन प्रतियों तथा
नी०, हि०, का० प्रतियों में प्राप्त समान सगत पाठ।

अन्य ग्रंथों की तुलना में 'भाव विलास' में दूसरे ग्रंथ के समान छद्म कम मिलते हैं
तथा सहायक सामग्री के रूप में अन्य ग्रंथों के पाठ का उपयोग भी कम हुआ है, यदि हुआ है तो
भूमिका में उसका उल्लेख यथास्थान कर दिया गया है।

अपवाद

निम्नलिखित स्थलों पर केवल एक प्रति का पाठ अन्य प्रतियों के पाठ के स्थान पर
स्वीकृत हुआ है

केवल नी० हि० प्रतियों में प्राप्त तथा स्वीकृत पाठ

५.६ उपमेयोपमा लक्षण।

“उपमा अथ उपमेय जहं क्रम तं एकं होइ।

सोई उपमेयोपमा कहत सुखवि सब कोइ ॥”

ऊपर स्वीकृत पाठ केवल नी० हि० प्रतियों में मिलता है। का० सा० प्रतियों में इसके
स्थान पर “उपमा अथ उपमेय जहं जहं भ्रम एकं होइ” तथा भा० प्रति में ‘उपमा अथ उप-
मेय को जहं क्रम एकं होइ’ पाठ है। इन दोनों ही पाठों के अनुसार दोहा उपमेयोपमा अलकार
के वजाय क्रमात्कार का लक्षण ही जाता है। उपमेयोपमा में उपमेय की समता जिस उपमान
से की जाती है वह उपमान तुरन्त ही उपमेय होकर प्रथम को अपना उपमान बना लेता है।

जैसे, "पूरनमासी सी तू उबरी अरु तोसी उज्यारी है पूरनमासी।" परन्तु क्रमालकार में जिस क्रम से उपमेयो का वर्णन किया जाता है, उपमेय के अनन्तर उसी क्रम से उपमानो का भी वर्णन होता है। जैसे 'भाव विलास' के ५६४ छंद में पहले केश, भाल, मृकुटी, नयन आदि के बाद उसी क्रम से उनके उपमान बृहत्तम, चद-चाप, गजन आदिका वर्णन हुआ है। इस प्रकार किंचित भ्रम होने से दोहे में उपमेयोपमा के स्थान पर क्रमालकार का लक्षण वर्णित हो गया है। भा० सा० मा० प्रतियो का पाठ उपमेयोपमा अलकार का अनुपयुक्त लक्षण होने के कारण अप्राह्य है अतः केवल नी० हि० प्रतिया में प्राप्त पाठ सगत होने के कारण यहाँ स्वीकृत हुआ है।

केवल ज० प्रति में प्राप्त तथा स्वीकृत पाठ :

२३६ चिंता लक्षण दोहा।

"दृष्ट वस्तु पाये विना व्यग्र चित्त अति होइ।"

रेखांकित पाठ केवल ज० प्रति में मिलता है, अन्य प्रतियो में पाठ की स्थिति इस प्रकार है "एक अग्र चित्त होइ"—सा०का० प्रतियाँ, "बहु व्याकुल चित्त होइ"—नी०हि० प्रतियाँ, "एक आस चित्त होइ"—भा० प्रति। का० सा० प्रतियो का 'अग्र' पाठ दृष्टि-भ्रम से 'व्यग्र' से समव है, इसी प्रकार नी० हि० प्रतियो का पाठ भी 'व्यग्र' का पर्याय है एव भा० प्रति का पाठ प्रमग के विचार से असंगत है अतः केवल ज० प्रति में प्राप्त पाठ स्वीकृत हुआ है।

२५६

"देव हृदै पय आइ मनो चडि घाई मनोरथ के रथ ऊपर।"

रेखांकित पाठ केवल ज० प्रति में तथा भा० प्रति में 'सुदै', का० सा० प्रतियो में 'हृदै' एव नी० हि० प्रतियो में 'हृदै' पाठ है। ज० प्रति के अतिरिक्त सभी पाठ असंगत हैं तथा ज० प्रति के पाठ से ये विच्युत पाठ समव हैं अतः केवल ज० प्रति में प्राप्त पाठ यहाँ स्वीकृत हुआ है। केवल सा० प्रति में प्राप्त तथा स्वीकृत पाठ :

३७६

"व्याकुल हूँ विरहानल सो तजि पूमि गिरी गुनगौरि गती पर।"

रेखांकित पाठ केवल सा० प्रति में है। ज० नी० हि० प्रतियो में इसी पाठ में भ्रम होने के कारण 'तव', का० प्रति में 'अरि' पर्याय तथा भा० प्रति में 'तजि' पाठ मिलता है। 'भवानी विलास' में इस छंद में 'जरि' पर्याय मिलता है। प्रसंग पर विचार करते हुए भा० प्रति का 'तजि' पाठ असंगत तथा नी० हि० ज० प्रतियो का 'तव' पाठ भी अप्राह्य मालूम देता है एव ये दोनों ही पाठ मूल में 'तधि' पाठ होने की संभावना पुष्ट करते हैं अतः प्रस्तुत स्थल पर केवल सा० प्रति में प्राप्त 'तजि' सगत पाठ स्वीकृत हुआ है।

केवल का० प्रति में प्राप्त तथा स्वीकृत पाठ

५७८-७९-८० संध्या के दोहे, जो केवल का० प्रति में प्राप्त होते हैं, मूल प्रति के माने गये हैं। कारणों के लिए देखें "भाव विलास' के अंतिम दोहों की प्रामाणिकता" दीर्घक पृ० ५४। इन दोहों का पाठ इस प्रकार है —

"अपनी बुद्धि समान मैं बहो बछू निरधार।

ताते मो पर करि कृपा सिंह मुमनि मुपार।।

या साहित्य समुद्र को बडेन न पायो पार ।
हमसे ओछे कविन की तहाँ कहीं आकार ।।
चौसरिया कवि देव को नगर इटाए वास ।
जोवन नवल सुभाव वर कीनो भाव विलास ॥”

विशेष संशोधन :

निम्नलिखित स्थलों पर सभी उपलब्ध प्रतियों का पाठ अप्राप्त होने के कारण सपादक ने अपनी ओर से पाठ संशोधन किया है

४१८

“ऊक सो हूँ रहिहै अबे इन्दु विलोकत भूमि पै घूमि गिरौगी ।”

सदृश स्थल के पाठान्तर विभिन्न प्रतियों में इस प्रकार मिलते हैं—“ऊक सो है वै रहो है”—ज० प्रति, “ऊक सो वो रहि है”—सा० प्रति, “इक सो बिरहै रहिहै”—का० प्रति, “ऊक सो वै रहिहै”—भी० हि० प्रतियाँ, “ऊक सो वो रहि है”—भा० प्रति । ‘मुख सागर तरंग’ में ८२६ पर नी० हि० प्रतियों के समान आदर्श से पाठ मिथ्य होने के कारण “ऊक सो वो रहि है” पाठ मिलता है । वहना न होगा कि यह पाठ ‘हूँ’ का विवृत रूप है तथा अर्थ के विचार से असंगत है । अन्य प्रतियों के विभिन्न पाठान्तर भी इसी ‘हूँ’ से सभव हैं तथा नायक से अलग रहकर उल्का के समान प्रज्वलित हो उठने के प्रसंग में यह पाठ संगत है अतः सपादक ने ‘हूँ’ पाठ संशोधन अपनी ओर से किया है ।

४३१ मध्या सुरतान्त ।

“मन भावन के ठिग तें उठि भामिनि भोरही भूपन हाथ लिये ।
रंगभ्रौन के भीतर भाजि परी भय भार भरी अति साज हिये ।
सजनीजन तें दुरि वँ कवि देव निहारति हार विहार किये ।
तिय वारहिबार संवारहि के निरवारति वार केवार दिये ॥”

आलोच्य स्थल पर विभिन्न प्रतियों के पाठान्तर इस प्रकार हैं—निरवारहि के—नी० हि० प्रतियाँ, संवारहि की—का० सा० प्रतियाँ संवारति हो—भा० प्रति, संवारहि केश—ज० प्रति । ‘मुजान बिनोद’ में ३३८ पर इमो छंद में “संवारहि के” पाठ मूल में एव “संवारहि वार” पाठान्तर का० प्रति में है । ‘रस विलास’ में ८१४ पर केवल ग० प्रति में प्राप्त “संवारहि के” पाठ मूल का माना गया है, यहाँ सा० प्रति में “संवारति हो” एव वा० प्रति में “संवारहि वी” पाठान्तर मिलते हैं ।

कवि का आशय स्पष्ट है, नायिका सुरति में उलझे हुए अपने हार आदि आभूषणों को संवारने अर्थात् सजा कर पहनने के हेतु उन्हें अलग-अलग करके सुलझा रही है । सखियों उसे देख न सके इसलिए उसने दरवाजे के पिचाड दे दिये हैं । अतः “निरवारति वार” पाठ विलुप्त संगत है । तुलना—“कवहूँ वान्हूँ आपने वर सो बेसपास निरवारत—” सूर ।

ऊपर ‘भाव विलास’ की विभिन्न प्रतियों में पाठान्तर होने का कारण ‘के’ शब्द से उत्पन्न भ्राति है । वास्तव में कवि ने ‘के लिए’ के संक्षिप्त रूप में ‘बे’ का प्रयोग किया है ।

ऐसे प्रयोग उसकी रचनाओं में अन्यत्र भी मिलते हैं। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं —

“बुजनि केलि के बेली नवेली बुलावति वालम लाल हनतहि।”

—‘सुजान विनोद’—६५

“मूँदि मंदि लोचन बितीति नींद मोचन के मोचत सकोच सोच सकल बढत है।”

—‘रम विलास’—७४६

ज० प्रति के प्रतिलिपिकार ने यह समझ कर कि उसके आदर्श में ‘केश’ का ‘श’ वर्ण प्रमादवश छूट गया है, ‘केश’ पाठ अपनी ओर से बना दिया है। नी० हि० प्रतियों के ‘निरवारहि’ के निरवारति वार बिवार दिजे” पाठ में “निरवारहि” की आवृत्ति असंगत है। द्वितीय “निरवारहि” की प्रतिध्वनि प्रतिलिपिकार के मस्तिष्क में होने के कारण भी यह विवृति संभव है। का० अथवा सा० प्रति में सामान्य लेखन प्रमाद से ‘के’ का ‘की’ पाठ हो गया है। स्मरण रहे कि ‘रस विलास’ की का० प्रति में भी इन दोनों ग्रंथों की प्रतियों में परस्पर पाठ मिश्रण होने के कारण ‘की’ पाठ मिलता है। यह पाठ असंगत है।

आठ गण वाले दुर्मिल सर्वैया के सदाण तथा छद के प्रसंग को ध्यान में रखते हुए अन्य ग्रंथों में प्राप्त पाठ की सहायता में ‘मंवारहि के’ पाठ संशोधन सपादक ने अपनी ओर से किया है।

‘भाव विलास’ के अंतिम दोहों की प्रामाणिकता

‘भाव विलास’ की कुछ प्रतियों में मिलने वाले “सवत् सत्रह सै” आदि दोहों के आधार पर अतक देव का जन्म सवत्, ‘भाव विलास’ का रचनाकाल तथा आजमशाह के साथ कवि का सम्बन्ध निर्दिष्ट होना जाया है। इस ग्रंथ की कुछ प्राचीन प्रतियों में इन दोहों के स्थान पर अन्य दोहे मिलने के कारण हम इस प्रश्न पर यहाँ पृथक् रूप से विचार कर रहे हैं।

‘भाव विलास’ के अंतिम दोहों का पाठ प्रतियों में उल्लेख सहित नीचे दिया जा रहा है —

बलवार ये मूस्य हैं इनके भेद अनत ।

आन ग्रथ के पथ लखि जानि लेहु मतिमन ॥७७॥

यहाँ तब हि० भा० सा० का० प्रतियों में पाठ समान है। इनके परस्पर हि० भा० सा० प्रतियों में निम्नलिखित दोहे मिलते हैं —

सुभ सत्रह सै दिवालिम चढन सोरही वर्ष ।

बढी हर्ष मुस देवता भाव विलास सहर्ष ॥

दिल्लीपति अवरम के आजमशाहि मपून ।

सुन्यो सराह्यो ग्रथ यह अष्टनाम सयूत ॥

परन्तु गवन् १८५७ की का० प्रति तथा प्रायः इनकी ही प्राचीन इटिया आफिम लाइ-ब्रेरी की इ० प्रति में उपर्युक्त दोहा दाहे नहीं मिलने। इन प्रतियों में इन दोहों के स्थान पर निम्नलिखित तीन दोहे हैं —

अपनी बुद्धि समान मैं कह्यो कछू निरवार ।
 ताते मो पर करि कृपा लँहे सुगति सुधार ॥७८॥
 या साहित्य समुद्र को बडेन न पायो पार ।
 हमसे ओछे कविन की तहाँ कहाँ आकार ॥७९॥
 घोसरिया कवि देव को नगर इटाए वास ।
 जोवन नवल सुभाय बर कौनो भाव विलास ॥८०॥

अर्थात् इन प्रतियों में जन्म सवत् तथा आज्ञमशाह वाले दोहे नहीं हैं। सपादन कार्य में व्यवहृत उपयुक्त प्रतियों के अनिश्चित नागरी प्रचारिणी सभा की खोज रिपोर्ट से प्राप्त 'भाव विलास' की अन्त्या प्रतियों के विवरण के आधार पर अन्तिम दोहों की स्थिति इस प्रकार है —

१ खो० रि० १६०६-११, पृ० ११०—महाराज बलरामपुर की सवत् १६०५ की प्रति। ग्रन्थ का नाम 'भाव प्रकास' है तथा यह प्रति भी नी० प्रति के समान श्लेष लक्षण दोहे पर खण्डित है अत आलोच्य दोहे इस प्रति में नहीं हैं।

२ खो० रि० १६२३-२५, पृ० ४४६—मुन्नु मिश्र, नीलगवा, जिला सीतापुर की प्रति। यह प्रति भी उपरोक्त प्रति के समान श्लेष लक्षण पर खण्डित है तथा इसमें भी ग्रन्थ-नाम 'भाव प्रकास' है। नी० प्रति तथा इस प्रति के प्रतिलिपिकार भी एक ही व्यक्ति, श्री हाकर दुबे हैं। अन्त में खण्डित होने के कारण अन्तिम दोहे इस प्रति में भी नहीं हैं।

३ खो० रि० १६२३-२५, पृ० ४४६—महाराजदीन चौबे, कसरामा, जिला रामबरेली, की प्रति। इस प्रति में यद्यपि ग्रन्थ-नाम 'भाव विलास' है परन्तु यह प्रति भी श्लेष लक्षण पर खण्डित है अत अन्तिम दोहे इस प्रति में भी नहीं हैं।

४ खो० रि० १६२३-२५, पृ० ४४४—श्री मिश्रबन्धुओं की गोलगज की प्रति। ग्रन्थ का नाम 'भाव विलास' है तथा यह प्रति पूर्ण भी है अत केवल इस प्रति में भा० सा० हि० प्रतियों में प्राप्त 'सुम सत्रह सै' तथा 'दिल्लीपति अवरग वे' दोहे मिलते हैं।

इन प्रतियों की केवल बहिरंग परीक्षा से प्रगट है कि उपरोक्त प्रतियों में प्रथम तीन प्रतियाँ तथा नी० प्रति एक ही शाखा की प्रतियाँ हैं। प्रक्षिप्त छदों वाली ग० प्रति पूर्ण है, एव ग० तथा मिश्रबन्धुओं की प्रति में अन्तिम दोहे भी मिलते हैं। स्मरण रहे कि मिश्रबन्धुओं की अधिकांश हस्तलिखित सामग्री उनके परिवार के गन्धौली स्थित बजराम पुस्तकालय के ग्रंथों से तैयार प्रतिलिपियाँ हैं। अत मिश्रबन्धुओं की प्रति की पूर्णता तथा उस प्रति में प्राप्य अन्तिम दोहों, किसी स्वतन्त्र शाखा की प्रति में प्राप्त न होने के कारण, महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। गन्धौली की ग० प्रति की पूर्णता भी सदृग्ध है क्योंकि इस प्रति में श्लेष लक्षण दोहे, जहाँ से इस समूह की अन्य सभी प्रतियाँ खण्डित हैं, से आगे का पाठ भिन्न हस्तलेख में मिलता है। ग० प्रति का विवरण देने हुए हमने यह स्पष्ट किया है कि ग० प्रति में इस स्थल से आगे का पाठ किसी अन्य प्रति से लेकर पूर्ण किया गया है। इससे यह स्पष्ट है कि ग० प्रति में प्राप्य ग्रन्थ के अन्तिम दोहे इस दूरी प्रति के पाठ के साथ आए हैं। ग० में हि० प्रति की प्रतिलिपि होने के कारण हि० प्रति में भी यही दोहे मिलते हैं। नी० हि० प्रतियों में बड़ी सरया में प्राप्त समान पाठ-त्रिजिनियों तथा

प्रक्षेपो से यह प्रगट होता है कि नी० तथा गं० हि० प्रतियाँ एक ही आदर्श से प्रतिलिपि हुई हैं। इस स्थिति में ज० नी० प्रति श्लेष लक्षण पर सङ्गित है, गं० प्रति में ग्रथ के अन्त तक का पूर्ण पाठ मिलना, गं० प्रनि में पाठ मिश्रण के बिना सम्भव नहीं होसकता। हमने यहाँ गं० प्रति की पूर्णता की परीक्षा इसलिए विस्तार से की है क्योंकि नी० गं० हि० प्रतियाँ भा० मा० प्रतियों की शाखा में स्वतन्त्र शाखा की प्रतियाँ हैं, और यदि एक स्वतन्त्र शाखा की हि० प्रति में तथा दूसरी स्वतन्त्र शाखा की भा० मा० प्रतियों में भी आलोच्य दोहे मिलते हैं तो पाठ संपादन के मान्य सिद्धान्तों के अनुसार ये दोहे मूल प्रति के होने चाहिये। गं० हि० प्रतियों के उपरोक्त विवेचन से यह प्रगट है कि वस्तुस्थिति इसमें भिन्न है अन्य प्रति में पाठ मिश्रण के फलस्वरूप हि० प्रनि में ग्रथ का पूर्ण पाठ मिलना है। अब यह देवना है कि गं० प्रति में श्लेष लक्षण से आगे का पाठ किम शाखा की प्रति से पूर्ण किया गया है।

‘भाव विनाम’ का ‘मालती मो’ ५२०वा छंद नी० हि० का० प्रतियों में नहीं है, इन प्रतियों में इस छन्द के स्थान पर ‘जानि है मुजानि’ छन्द मिलता है—नी० हि० प्रतियों में ‘जानि है’ छन्द के केवल तीन ही चरण हैं। केवल गं० प्रति में ‘मालती मो’ छन्द ‘जानि है मुजानि’ छन्द के पूर्व प्रति के पार्श्व पर उसी दूसरे हस्तलेख में लिखा मिलता है, जिस हस्तलेख में श्लेष लक्षण में आगे का पाठ पूर्ण किया गया है। गं० प्रनि की हि० प्रतिलिपि में ये दोनों ही छन्द मिलते हैं। हमारे विचार से इस स्थल पर समासोक्ति अलंकार के दो उदाहरण जपेक्षित नहीं हैं अतः इन दोनों उदाहरणों को मूल प्रति का नहीं माना जा सकता। इस प्रति में यह छंद निम्नसन्देह भा० सा० समूह की किसी प्रनि से प्रक्षिप्त हुआ है—गं० प्रति सवत् १६३५ की है, भा० प्रति सवत् १६५० में प्रकाशित हुई है अतः यह भी सम्भव है कि भा० प्रति के प्रकाशित होने पर उसी के पाठ में गं० प्रनि का पाठ पूरा किया गया हो और ‘मालती मो’ छन्द गं० प्रनि के पार्श्व पर लिखा गया हो।

जो भी हो, गं० हि० प्रतियों में भा० सा० प्रतियों में पाठ-मिश्रण के इस स्पष्ट प्रमाण की उपस्थिति में यही निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि गं० प्रति का अपूर्ण पाठ भा० सा० शाखा की किसी प्रति की सहायता से पूर्ण किया गया है। इस पाठ-मिश्रण के फलस्वरूप ही ‘सुम मग्रह सै’, ‘दिल्लीपति अवरग के’ दोहे गं० तथा हि० प्रतियों में मिलते हैं। इस प्रकार गं० हि० प्रतियों के माध्यम से महत्त्व समाप्त हो जाता है। भा० सा० प्रतियाँ विकृति-सम्बन्ध द्वारा सम्बन्धित प्रतियाँ हैं। अतः केवल इन दो प्रतियों में प्राप्त दोहा प्रतिलिपि की पूर्ण परंपरा में किसी प्रक्षेपकार द्वारा प्रक्षिप्त भी हो सकता है।

इन दोहों में निहित तथ्यों पर पुनर् पुनर् रूप से विचार करना अप्रामाणिक न होगा।

भा० मा० हि० प्रतियों में प्राप्त ‘मवत् मग्रह सै’ दोहा मोल्ट वर्ष की अवस्था में कवि द्वारा ‘भाव विनाम’ के प्रणयन की स्पष्ट घोषणा करता है। परन्तु इस ग्रथ की प्रोटना तथा विषय-निरूपण की स्पष्टता देव कृत अन्यान्य ग्रथों में भी दुर्लभ है। अतः इनकी कम जायु में कवि द्वारा इसकी रचना होना कठिन जान पड़ता है। इस अवस्था में किसी व्यक्ति को गण्यारिक्त ज्ञान भले ही हो जाए परन्तु इन अन्यायु में उगे विनामग्रह कर किसी लक्षण-ग्रथ में मुगल विज्ञान रूप में अल-तन कर उतना प्राप्त अगम्य है। श्री मिश्र-द्वयुओं ने इस ग्रन्थ पर अपनी ओर से यह कल्पना

की है कि कवि ने प्रौढता प्राप्त करने पर इस ग्रथ के निबन्धमे छन्द निकाल दिये होंगे। ('हिन्दी नवरत्न'—पृ० २७६) नी० हि० प्रतियो मे प्रलिप्त छन्दो का विश्लेषण करते हुए हमने इस सम्भावना की विस्तार से परीक्षा की है एव यह सम्भावना निराधार सिद्ध हुई है। इस प्रकार "चदत सोरही बर्ष" मे 'भाव विलास' की रचना होने का जल्दसे स्वयं कवि द्वारा ग्रथ-रचना के वर्षों पश्चात् किया आत्मोल्लेख न होकर कवि को महिमामण्डित करने के लिए उसके किसी प्रशंसक द्वारा किया गया प्रक्षेप है। बहुत संभव है कि मूल प्रति में विद्यमान शब्दावली "जोवन नवल सुभाव वर कीनो भाव विलास" के आधार पर प्रक्षेपकार ने "चदत सोरही बर्ष" का निश्चित वर्ष अपनी ओर से दे दिया हो।

अपने ग्रथो मे ग्रथ का रचनाकाल देने की देव कवि की प्रवृत्ति भी नहीं रही है। केवल एक 'रस विलास' के अन्त मे इस ग्रथ का रचनाकाल दिया है—यह भी उस सस्वरण की प्रतियो मे मिलता है जो सस्वरण मुस्तानपुर के राजा भोगीलाल को समर्पित है।

इस सदर्म मे 'सुजान विनोद' तथा 'कुशल विलास' ग्रथो के निम्नलिखित दोहे देखें —

"परम सुजान सुजान की वृषा देव कवि हृषि।

वियो सुजान विनोद को रचन वचन वसु वर्यि ॥"

—'सुजान विनोद'—१ १५

"देव विभव रस भाव रस भव रस नव रस सार।

सुख रस वसु वर वरस सुभ वरस रञ्चोसिगार ॥"

—'कुशल विलास'—१ ११

इन दोनों दोहो में सट्यावाचक शब्दों की बहुलता से सहसा यही भ्रम होता है कि कवि ने इनमे ग्रथ का रचनाकाल दिया होगा परन्तु इनमे दिये हुए सट्यावाचक साकेतिक शब्द केवल ग्रथ के प्रतिपाद्य विषय तथा अध्यायो (वर्ष अर्थात् खंड) की संख्या के द्योतक है। यहाँ इन दोहो की शर्चा चलाने से भी हमारा अभिप्राय यह स्पष्ट करना है कि यदि इन ग्रथो मे जयरा 'भाव विलास' में ग्रथ का रचनाकाल देने मे कवि की किंचित भी रुचि होती तो वह इन दोहो मे सुविधा से तिथि दे सकता था।

अब आज़मशाह से सम्बन्धित दूसरे दोहे को लें। इसके अनुसार देव ने आजमशाह के सम्मुख अपनी 'भाव विलास' तथा 'जययाम' ग्रथों का पाठ किया था तो उसने इन ग्रथों की सराहना की थी। कवि ने इस तथ्य को प्रशंसापत्र के रूप में 'भाव विलास' के अन्त में नदवी करना आवश्यक समझा। परन्तु इस पर भी गम्भीरता से विचार करना चाहिये। देव जब 'भाव विलास' लेकर आजमशाह के पास गए तो ग्रथ किसी को समर्पित नहीं था (और यह ग्रथ बाद में भी किसी आश्रयदाता को समर्पित नहीं हुआ^१), आजमशाह काव्य रसिक होने के अतिरिक्त गुणग्राही भी था और देव को इन दोनों विशेषताओं से युक्त आश्रयदाता की सर्वदा आवश्यकता रहती थी। ऐसी स्थिति में 'भाव विलास' ग्रथ आजमशाह को समर्पित करना देव के लिए सन्नये अधिक् स्वाभाविक था। देव सुविधा से ऐसा कर सकते थे। 'सुजान विनोद' का प्रथम प्रादप पद्यो किसी आश्रयदाता के नाम समर्पित नहीं था परन्तु बाद में किंचित आकाश परिवर्धन के साथ देव ने इसे दिल्ली के नायबखुशीन रईस गुजानगणि को समर्पित किया। 'रग विजात'

की भी ऐसी ही स्थिति है। यह ग्रथ भी पहले किसी को समर्पित न था परन्तु बाद में भोगीलाल से भेंट होने पर देव ने उन्हें 'रस विलास' समर्पित किया। देव ने एक ही ग्रथ के छन्दों में उलट-फेर करके उसे दो आश्रयदाताओं के नाम समर्पित किया है। 'सुख सागर तरंग' पिहानी के राजा अली अकबर खान तथा महाराज जमवत सिंह को भी इसी प्रकार समर्पित है। इसकी तुलना में आजमशाह को 'भाव विलास' समर्पित करने में देव को कोई कठिनाई नहीं हो सकती थी। देव उनके पास 'भाव विलास' लेकर गए तो वेचल उन्हें ग्रथ सुनाने के लिए, इस पर कठिनाता से विश्वास किया जा सकता है।

अब का० प्रति तथा इडिया आफिस लाइब्रेरी की प्रति में प्राप्त "अपनी बुद्धि समान", "या साहित्य समुद्र" तथा "घोमरिया कवि देव" दोहों को लें।

का० प्रति के "अपनी बुद्धि समान" दोहे तथा सभी प्रतियों में प्राप्त इनके पहले के "अलकार ये मुख्य हैं" दोहे में प्रत्यक्ष तारतम्य है—"अलकार के भेद अनन्त हैं, मैंने अपनी बुद्धि-बल के अनुसार उनमें कुछ का वर्णन किया है।" इस कथन का उत्तरार्ध भाग का० प्रति के "या साहित्य" दोहे में प्रतिध्वनित होता है—"यह साहित्य-सागर अपार है, बड़े-बरिष्ठ कवि भी उसका ओर-झोर न पा सके, फिर मुझ जैसे सुच्छ कवि को क्या सामर्थ्य है।"

वा० प्रति में प्राप्त इन दोहों की तुलना में भोगीलाल को समर्पित 'रस विलास' के संस्करण के अन्तिम दोहे द्रष्टव्य हैं —

"यहि विधि दरसन श्रवण करि मुमिरै विधि हरि छद्र।

पार लहत को बरनि के या साहित्य समुद्र

॥८ ६० ॥

अपनी बुद्धि समान मैं बरनिकह्यो रस सार।

रस विलास रस रूप नृप भोगीलाल उदार ॥८ ६१ ॥"

इन दोहों की "या साहित्य समुद्र" तथा "अपनी बुद्धि समान मैं बरनिकह्यो—" आदि शब्दावली के साथ का० प्रति के दोहों की तुलना करने पर का० प्रति के दोहे कविकृत प्रमाणित होते हैं।

इस रामस्त विवेचन के आधार पर हमने केवल भा० सा० हि० प्रतियों में प्राप्त दोहों को प्रक्षिप्त तथा का० प्रति में प्राप्त दोहों की प्रामाणिक माना है।

भाव विलास

[मूल पाठ एव पाठान्तर]

श्री वृन्दावनचन्द^१ चरण जुग घरचि^२ चित्त धरि ।
दलि मल कलिमल सबल कलुप दुप दोष भोष करि ॥
गौरीसुत गौरीस गौरि गुरुजन गुन गाये ।
भुवन^३ मातु भारतौ भुमिरि भरतादिक ध्याये ॥
कवि देवदत्त शृंगार रस सबल भाव सयुत सँष्यो^४ ।
सब नायिकादि नायक सहित अलकार वर्णन रच्यो ॥१॥

^१ वृन्दावन चन्द्र—नी० । ^२ चरण—नी० हि० इ० । ^३ भवन—सा० । ^४ रच्यो—हि० ।

अरथ घम तें होइ अरु काम^१ अरथ तें जान ।
ताते सुख सुख को सदा रस शृंगार^२ निदान ॥२॥

^१ धर्म—नी० हि० इ० । ^२ ताते है सो सुख के सदा है शृंगार निदान—नी० हि० ।

ताके कारण भाव हैं तिनको करत विचार ।
जिनहि जानि जान्यो परै सुखदायक सिंगार ॥३॥
यिति विभाव अनुभाव अरु कहौ^१ सात्विक भाव ।
सधारी अरु हाव ये पट विधि बरनीं हाव^२ ॥४॥

^१ कहिही—नी० हि० । ^२ भाव—ज० ।

जो जा रस की उपज मैं पहिलो अकुर होइ ।
सो ताको यिति भाव है कहत मुकवि सब कोइ ॥५॥
नव रस को यिति भाव नव^१ तिनको बढु विस्तार ।
तिन म रति यिति भाव तें उपजत रस सिंगार ॥६॥

^१ है—भा०, तव—नी० हि० सा० ।

नेकु जु प्रियजन देखि सुनि^१ आन भाव^२ चित होइ ।
अति वाविद पति कविन क मुमति कहन रनि सोइ^३ ॥७॥

^१ देखि क—नी० हि० । ^२ भाँनि—वा० इ० । ^३ सो ताका यिति भाव है कहत मुकवि सब कोइ—नी० हि० ।

प्रिय दर्शन उदाहरण ।

सग ना सहली बेलि बरन अरेनी एव कोमल नखली बर बेनी जैसी^१ हेम की ।
लानच भरे से लसि^२ लाल चलि आए सोचि^३ लोचन लचाय^४ रह्यो रासि कुल नम की ।
देव मुरभाइ उरमान उरभाइ^५ बह्यो दीवो गुरभाइ वात पूछ्यो^६ छन छेम की ।

भायक^० सुभाय भोरे स्याम वे समीप आय गाँठिह छडाइ^६ गाँठि पारि गई प्रेम की ॥८॥

^१ मानो—नी० हि० सा० । ^२ तहाँ—नी० हि० । ^३ लोल—नी० । ^४ ललचाय—का० ।

^५ उरमात उरमाय सुरमाय— नी० हि० । ^६ बूभी—हि० । ^७ भायन—सा० ।

^८ गाँठि छुटवाइ—भा० ।

प्रिय श्रवण उदाहरण ।

गोने के चार^१ चलो दुलही गुर लोगन^२ भूपन भेप बनाये ।

सौल सवान^३ सिस्साय सखीन^४ सबै सुख सागुरेहू के सुनाये ।

बोलिये बोल तदा हँसि^५ कोमल जे मनभावन के मन भाये ।

यो मुनि भोंछे उरोजनि पं अनुराग के अकुर से उठि आये ॥९॥

^१ चाइ—का० इ०, चाल—नी० हि० । ^२ गुर नारिन—नी० हि० । ^३ सुभाय—सा० ।

^४ सबै सिलयेह—नी० हि०, मखीन सिखायो—भा० । ^५ अति—नी० हि० ।

विभाव लक्षण ।

जे विशेष करि रमनि को उपजावत हँ भाव ।

भरतादिन सतकवि सबै तिनको^१ कहन विभाव ॥१०॥

^१ तिनको—नी० हि० सा० ।

ते^१ विभाव द्वै भानि के षोविद कहत बखानि ।

आलबन कहि^२ देव अरु उद्दीपन उर जानि ॥११॥

^१ है—नी० हि० । ^२ कवि—का० इ० ।

रस उपजै आलवि जेहि सो आलबन होइ ।

रसहि जगावै दीप ज्यो उद्दीपन कहि सोइ^१ ॥१२॥

^१ सो उद्दीपन होइ—नी० हि० ।

उदाहरण ।

चित्त दै चित्तजै जित^१ ओर^२ सपी तित नन्दिसोर की ओर ठई ।

दसहूँ दिसि दूसरो देखति^३ ना छवि मोहन की छिति माँह छई ।

कवि देव कहाँ लौं बछू कहिये प्रतिभूरति हो^४ उनही की भई ।

ब्रजवासिन की ब्रज जानि परै न भयो ब्रज री ब्रजराज मई ॥१३॥

^१ चित्तवै जिहि—नी० हि० । ^२ ओरी—इ० । ^३ दीसति—नी० हि० मा० । ^४ है—इ० ।

उद्दीपन भेद ।

गीत नृत्य^१ उपवन गवन आनूपन जन बेलि^२ ।

उद्दीपन शृंगार क विषु वमन वन बेलि^३ ॥१४॥

^१ नृत्य गान—नी० हि०, गीत नाच—का० इ० । ^२ वन बेलि—नी० हि० का० भा०

ज० मा० । ^३ वन बेलि—ज० ।

गीत उदाहरण ।

जानी जनानी वमन मनोरम मूरनिवन् मनोज दिग्वावनि ।

पचम नाद गिपादहि मै^१ गुर मूरघना वन ग्राम^२ मुनावनि ।

देव कहै मधुरी घुनि सो वर वीन ललै वर धीन बजावनि ।

धावरी सी हौ भई सुनि आजु गई गडि जी में गुपाल की गावनि ॥१५॥

१ सो—नी० हि० । २ गुन ग्राम—नी०, गुन तान—हि०, सुति गान—का० इ०, सुति तान—सा० ।

नृत्य उदाहरण ।

पीरी पिछीरी के छोर छुटे छहरे छवि मोर पखान की जामैं ।

गोधन की गति वेनु वजै कवि देव सर्वे^१ सुनि नै घुनि आमैं^२ ।

साज तजो गृहकाज तजे मन मोहि रही^३ सिगरी ब्रजवामैं ।

बालिदी कूल बध्न के कुज करै तमतोम तमासो^४ सो तामैं ॥१६॥

१ तजै—इ० । २ घामैं—नी० हि० का० । ३ लई—सा० । ४ करत मनोज तमासो—नी० हि०, करै तुम मूरतिमत—का० इ० ।

उपयन उदाहरण ।

बाग खली धूपभान ललो सुनि कुजनि मे पिकपुज पुकारनि ।

तैसिय नूतन नूत लतान^१ मे गुजत भौग भरे मधु^२ भागनि ।

मोहि लई कवि देव उतै^३ अनि रूप रचे विकचे रुचनारनि ।

हेरत ही^४ हरिनी नयनी^५ कोहरघो^६ हियरा हरि के हिय हारनि ॥१७॥

१ नूतन तान—नी० हि० । २ रस—नी० हि० । ३ कवि देव नते—भा० । ४ हीं—नी० हि० । ५ नयना—इ० । ६ निहरघो—सा०, वस्यो—हि० ।

भूषण उदाहरण ।

खोरि^१ मैं खेतन ल्याई^२ सखी सब बाल को भेय बनाइ नवीनो ।

आरसी में निज रूप निहारि अनग तरगनि मैं मनु^३ भीनो ।

जोति जवाहर हारन^४ की भिलि अचल को भ्रमकयो^५ पट भीनो ।

हेरि दत^६ हरिनी नयनी^७ हरि हेरत हेरि हरे^८ हेसि दीन्हो ॥१८॥

१ पोरि—नी० हि० । २ आई—हि० । ३ मैं रस—नी० हि० । ४ हीरन—का० इ० । ५ छलवयो—भा० । ६ उतै—नी० हि० । ७ नयना—भा० सा० । ८ हारे हरे—नी० हि० ।

जल केलि उदाहरण ।

सोहै सररोवर कीच यधू वर ब्याहको भेय बग्यो वर लीक सो ।

लाज गढे^१ गुरु लोगन की पट गाँठ दै टाढे करै इक ठीक सो ।

नहात पवारी सो^२ प्यारी के ओठ तें^३ छूट्यो मजीठ^४ निहारि नजीक^५ सा ।

तीको रेंगी अँधिया अनुराग सो पी की बहै^६ पिवबैनी की पीक सो ॥१९॥

१ गई—का० । २ एमार से—का० इ०, पवारी सो—भा० । ३ लठ तें—का० इ० । ४ तमोर—नी० हि० । ५ नजीक—नी० हि० । ६ मनो—का० इ० ।

विधु उदाहरण ।

दिन डूब तें गागुरे आई यधू मन में मनु लाज को कीच वयो ।

कवि देव^१ सद्यो के निस्त्राये मर वं नह्यो ह्यि नाह को^२ नेह नयो ।

चित्त चाउ तें^३ चैन की चद्रिका^४ ओर चित्त पति को चित्त चोरि लयो ।

दुलही के विलोचन वानन^५ की सति आजु को सान^६ समान भयो ॥२०॥

^१ कयहूँ—वा० ६० । ^२ भयो हित ताहूँ जो—नी० हि, रह्यो ह्यि नाह को—ज० ।

^३ चित्तवावत—भा०, चित्त पावत—नी० हि० । ^४ चाँदनी—वा० सा० । ^५ वानक—नी० हि० । ^६ सोन—नी० हि० ।

वसन्त उदाहरण ।

हेरत ही हरि सीनो हियो इन आल रमाल मिरोप^१ जम्होरनि ।

चपन बेली गुलाव जुही पिबुमद मघून बदव कुटीरनि ।

खोलत^२ बाभ कया^३ पिब खोलत डोलत चदन मद समीरनि ।

वेमर हारसिगारनहूँ बरना बचनार वनैर करीरनि ॥२१॥

^१ आली रमाल मिरोप—वा०, आली सी दाप रमाल—नी० हि०, आली सी दाप

सेरोप—सा० । ^२ खोजत—नी० । ^३ कया—नी० हि० मा० । ^४ चन्द्रन—हि० ।

^५ मोरसिरी बरना निरवार कुदी—६० ।

वन बेलि उदाहरण ।

सुनि कै घुनि चानव मोरनि की चहुँ ओरनि बोक्लि बूबनि सो ।

अनुराग भरे हरि वागन में सखि^१ रागन राग अचूकनि सो ।

कवि देव घटा^२ उनई जु नईवन भूमि भई दल दूबनि^३ सो ।

रेंगराती रही हहराती^४ लठा भूवि जानी समीर की भूरनि सो ॥२२॥

^१ वन वागन में हरि—नी० हि०, हरि भागिन में सखि—६० । ^२ छटा—६० ।

^३ दूबनि—वा०, दूबन—नी० हि० । ^४ हरा हरगानी—६० ।

जिन जिन^५ के सयोग तें रस जिय उपजन^६ होइ ।

औरो विविष विभाव बहु तें बरतत कवि लोइ^७ ॥२३॥

^१ निज निज—भा०, ^२ उपजन जिय—नी० हि० । ^३ बरतै कवि मर कोइ—भा०,

बहु बरतहु कवि लोइ—नी० हि० ।

अनुभाय लक्षण ।

जिनको निरपत^१ परमपर रम की अनुभव होइ ॥

तिनही की^२ अनुभाव पद^३ बहूउ भयाने लोइ ॥२४॥

^१ परसत जिनको—सा०, परप्रति जिनको—वा०, जिनको परपति—६० । ^२ तिनही

मा—नी० हि०, इनही को—मा० । ^३ पट—वा०, पट्ट—६० ।

जापुहि तें उपजाय रम पट्टि होहि विभाव ।

रसहि जनाव^४ जो बट्टरि तो तेऊ^५ अनुभाव ॥२५॥

^१ जगाव—भा० । ^२ सो लहिये—सा० ।

वानन नयन^६ प्रसन्नता चल चित्रीनि मुसकयानि ।

ये अभिनय^७ सिगार के अग भग जुत^८ जानि ॥२६॥

१ वचन—नी० हि० । २ अभिनव—ज०, अमिन्न—नी० हि० । ३ जिय—का० इ० ।

आनन प्रसन्नता उदाहरण ।

ठाढो^१ चितौन चकोर भयो अनतै न इतौत^२ वहुँ चित दीजतु ।

सामुहे नन्द किसोर सखी कवके मुसक्यान^३ सुघारस भोजतु ।

भाग तें आइ उवो कवि देव^४ सु देवि भट्ट भरिसोचन लीजतु ।

तेरेई^५ चन्दमुखी मुखचन्द पै पूरन चन्द^६ निछावर कीजतु ॥२७॥

१ ठाढे—नी० हि० । २ इनतै—नी० हि० । ३ कव के मुसक्याइ—नी० हि० । ४ उता-
बलि देव—नी० हि० का० । ५ तेरे री—भा० इ० । ६ पूर्यो को चन्द—इ० ।

मयम प्रसन्नता उदाहरण ।

आई ही गाय दुहाइवे^१ को सु चुपाई^२ चली न बछाहू को^३ घेरति ।

नैकु डराय नही कवकी वह^४ भाइ रिसाइ अटा चडि डेरति ।

यो कवि देव बडे सन की^५ बडरे दुग वीच बडे^६ दुग फेरति ।

हौं मुख देखति हौं तयकी जवकी^७ यह भोहन को मुख हेरति ॥२८॥

१ दुहावन—नी० हि० । २ समुहाय—नी० हि०, सु चुपाय—का० । ३ न बछान को—
भा०, नहि लैयुवै—का० इ० । ४ यह—नी० हि० । ५ घर की—नी० हि० ।

६ बडरे—नी०, बडडे—का० । ७ हौं तयकी सबकी—नी० हि० ।

चल धितवन उदाहरण ।

हरि को इत हेरति हेरि^१ उतै उर आलिन के उर सो परसै^२ ।

तन तोरि के जोरि मरोरि भुजा मुख मोरि के वैन^३ बहै सरसै ।

मिस सो मुसक्याइ बितै समुहै कवि देव दरादर^४ सो दरसै ।

दुगकोर कटाछ लगे सरसान^५ मनो सर सान घरे^६ बरसै ॥२९॥

१ हरी इत हेरत हेरि—नी० हि० सा० । २ हरि को इतै हेरत हेरत हेरि उतै उर
आलिन को परसै—भा० । ३ वात—सा० । ४ दसादर—नी० हि० । ५ सर सेन—
नी० हि० । ६ सर सान घरे—नी० हि० ।

मुसक्यान उदाहरण ।

जवतें जदुराइ दई दुहि गाइ गए^१ मुसक्याइ पठै^२ धर कै ।

तबतें तन व्याकुल बालवधू लखि लोग लुगाई सवै घर कै ।

कवि देव न पावत वेदन बँद रहे कुलदेवन वे डर^३ कै ।

नहि जानत बान्ह तिहारे कटाछ की नोरै करेजन मै^४ बरकै ॥३०॥

१ दये—नी० हि०, गई—का० । २ पछे—भा० । ३ वे उर—ज० । ४ कोर कभेजिन
मै—ज० ।

अग भग उदाहरण ।

चपक पात से गात मरोरि^१ करोरिष भाइ सुभाइ सचैयत ।

मो मिस भोटि भट्ट भरि अक मयव से आनन ओठ^२ अचैयत ।

देव बहै विनु बात चले नवनील सरोज से नैन नचैयत ।

जानति हौं भुजमूल उचाइ दुकूल सचाइ लसा सलचैयत^१ ॥३१॥

^१ दिखत—वा० । ^२ हूँठ—वा० इ०, ओट—ज० । ^३ तारस सिंधु गई बुधि बूडि न दोहित धीरज कैसे वचैयत—नी० हि० ।

ओरो विविध विभाव के^१ बहु अनुभावनि जानु ।

जिनतें रस जान्यो परें ते कवि देव बखानु ॥३२॥

^१ विविध सिंगार बे—वा० इ०, रस शृंगार बे—सा० ।

आवत जात गती में लली हरि हेरि हरे हियराहि हरंगी^१ ।

बैरी बसं घर घाल घरी में घरे घर घेरि घरी उघरंगी^२ ।

हौं कवि देव डरौं मन में मनमोहनी तू^३ मन में न डरंगी ।

हाहा बलाइ ल्यो पीठ दै बँटु री बाहू अनीठ की दीठ परंगी ॥३३॥

^१ हियराह हरंगी—नी० हि० वा० भा० । ^२ उघरंगी—ना० । ^३ तू—सा० ।

इति प्रथम विलास ।

सांख्यिक अनुभाव ।

स्थिति विभाव^१ अनुभाव तें न्यारे जति अभिराम ।

सबस रसनि में सघरें सघारी कह^२ नाम ॥१॥

^१ स्थिति भावहु—नी० हि० । ^२ कउ—भा० ।

ते सारीरि अरु आंतरिक द्विविधि कहत भरतादि^३ ।

स्तमादिक सारीर अरु आंतर निरवेदादि ॥२॥

^१ ते सारीर अंतर द्विविधि कहत सबै भरतादि—सा०, ते सारीर अतरत विविध कहत भरतादि—वा०, ते सारीर अतर कहत दू विधि गव भरतादि—नी० हि० ।

आठ भेद स्तमादि के तिनको सांख्यिक नाम ।

तेई पहिले^४ बरनिये सरस रीति अभिराम ॥३॥

^१ तेई प्रथम अव—नी० हि० ।

स्तभ स्वेद रोमाच अरु वेपथु अरु स्वर भग ।

दिवरनता^५ आँसू प्रलय ये सांख्यिक रस भग ॥४॥

^१ दिवरन ते—हि० ।

स्तभ सक्षण ।

रिस विस्मय भय राग सुख दुख विपाद तें होइ ।

गति निरोध जो^६ गात में तभ कहत कवि लोइ^७ ॥५॥

^१ जा—नी० हि० । ^२ लोइ—सा० वा० ।

उदाहरण ।

भोरी सी भ्वातिनि घोरी सी बंस जगो तन जीवन जोति नई है ।

आवन ही अबहीं उनतें कवि देव सु नैकु हने चितई है ।

योहि^८ बटाधनु भोहि चितौत चितौतहि मोहन मोहि सई है ।

व्याप हनी हरिनी लौ बधू बह वा घर^९ लौ नटरात^{१०} गई है ॥६॥

१ वेहि—ज० । २ चित्तानहि में हर्म—नी० हि० । ३ वाघ—ज० । ४ ते यहिरात—नी० हि०, ली मिहरात—भा० ज० ।

स्वेद लक्षण ।

त्रोध हृषं सताप थम घातादिव भय^१ लाज ।

इततें सजल सरीर सो स्वेद कट्ट वविराज ॥७॥

१ भ्रम—नी० हि० ।

उदाहरण ।

हेलन खेतन के मिस मुन्दरि केलि के मन्दिर^१ पेलि पठाई ।

बालवधू विधु सो मुख चूमि लला छल सो छतियां सो^२ लगाई ।

लाज तें लोस^३ वपोलनि में भलकयो जल दीपति दीप की भाई ।

आरसो में प्रतिविवित हू^४ मनो देव दिवाकर देत^५ दिखाई ॥८॥

१ भीम मे—नी० हि० । २ छतिया मो—हि० । ३ लाल के लोल—भा०, लाज तें गोल—नी० हि० । ४ यो—हाशिये पर दूसरे हस्तलेख मे 'हूँ'—सा० । ५ देव दिवाकर देव—का० ।

रोमाच लक्षण ।

आलिगन भय हृषं अरु सीत^१ कोप तें जानु ।

उठत अग में रोम जे^२ ते रोमाच बखानु ॥९॥

१ आलिगन अरु हृषं भय भीति—नी० हि० । २ अग उठत रोमाच जेहि—नी० हि० ।

उदाहरण ।

कूल चली जल वेलि के वामिनि^१ भादते के संग^२ भाति भली सी^३ ।

भीजे दुकूल में देह लसै कवि देव जू^४ वपक चाद ली सी^५ ।

घारि के बुद चुवै^६ धिलकै अलकै^७ छवि की छलवै^८ उछली सी^९ ।

अचल भीन भकै^{१०} भलकै पुलकै कुच कुद^{११} वदम्ब^{१२} कली सी^{१३} ॥१०॥

१ लेवे की मुन्दरि—नी० हि० । २ सब—नी० हि० । ३ से—नी० हि० । ४ कवि देव सु—सा० । ५ वन्द चुभै—नी० हि० । ६ जलि के—ज० । ७ भलकै—नी०, भलकै—हि० । ८ अचल भीन मे यो—नी० हि०, भुवै—वा० । ९ कद—भा० ज०, दोऊ—सा० । १०—नी० हि० ।

वेपथु लक्षण ।

प्रिय^१ आलिगन हृषं भय सीत कोप तें जानु ।

अग वप प्रस्फुरन विनु वेपथु ताहि वरामु^२ ॥११॥

१ हिय—नी० हि० । २ अग स्फुरन विनु भये एसा वेपथु मानु—नी० हि० ।

उदाहरण ।

देव दुहन के देखत ही उपज्यो उर में अशुराग अनूनी ।

डोलत हैं अमिलाप भरे सुलय्यो बिरहज्वर अग अमूनी ।

तो सौ अचानक हूँ गई भेंट इत उत ठौर निहारत^३ मूनी ।

प्रीति भरे ऋ भीति भरे^२ वन कुज में कपत दम्पति दूनो ॥१२॥

१ निहार कं—सा० । २ प्रेम भरे ऋ प्रीति भरे—का०, प्रीति भरे अनुराग भरे—
नी० हि० ।

स्वरभंग-लक्षण :

जो रिस भय मद मुद भये^१ निकसै गदगद वानि^२ ।

साही सो^३ स्वरभंग वहि कवि कुलवहत वखानि^४ ॥१३॥

१ रस भय उन्माद भय— नी० हि० । २ वैन—नी० हि० । ३ को—भा० सा० ।

४ बरनत कवि कुल ऐन—नी० हि० ।

उदाहरण :

परदेस तें प्रीतम आये री ए इर^१ आइके आली मुनायी यही^२ ।

कवि देव अचानक चौकि परी मुननै बतियाँ^३ छतियाँ उमही ।

तवली पिय आंगन आइ गये घन घाइ हिये सपटाइ रही ।

अँसुवा ठहरान^४ गरी घहरात मह करि आधिक बात कही ॥१४॥

१ है री इर—ज०, रि माइये—नी० हि०, इतो इर—का० । २ यही—नी०, जही—

हि० । ३ मुनिनै बलि वा—भा, मुनिकँ बतिया—नी० हि० । ४ ठहरात—नी० हि० का० ।

बंदर्ण्य-लक्षण :

भय^१ विमोह अरु कोप तें लाज सीत अरु धाम ।

मुख दुनि औरै देखिये^२ सो विबरनता नाम ॥१५॥

१ भव—वा० । २ देखि कं—नी० हि० ।

उदाहरण :

सुदरि सोयति^१ मदिर में कहूँ सापने में निरदयो^२ नंद नंद को ।

त्यो पुलकयो जल सो भलकयो उर औचक ही उचकयो मुच कडु^३ सो ।

तो लगी चौकि परी कहि देव^४ मुजानि परयो^५ अभिलाप अमद सो ।

आसिन को मुत्र देयन ही मुस्य आवती को भयो भोर को चद सो ॥१६॥

१ मोहनि—मा० । २ सापने कडू भेंट भई—नी० हि०, कितहूँ सपने निरदयो—का० ।

३ कड—भा० हि० । ४ ती नी अचानक भेंट भई लखि—वा० । ५ ज्यो जानि परी—

नी० हि० ।

अश्रु-लक्षण :

विपल^१ विलोक्ता धूम भय हयं अमपं^२ विषाद ।

नैन नौर निहारिये^३ अश्रु बहो निरवाद ॥१७॥

१ विपल—नी० हि०, विमल—वा०, विपुन—ज० । २ मयपं—नी० हि० ।

३ चढ़ाइये—नी०, नहाइये—हि० ।

उदाहरण :

बोलि उठ्यो पपीहा कहूँ^१ पीउ गु देखिये को मुनि के घुनि घाई ।

भोर पुरारि उठे चहूँ ओर मुदेय पटा पिरकी^२ चहूँघाई ।

भलि गई तिय को तन की मुधि देखि उतै^१ बन भूमि मुहाई ।

सांतनि सो भरि आयो गरो अरु आँसुन सो अँखियाँ भरि आई ॥१८॥

^१ कहि—नी० हि० । ^२ धिरकै—नी० हि० का० । ^३ देखत ही—का०, देखि तहाँ—

प्रलय-लक्षण :

प्रिय दर्शन सुमिरन^१ श्रवन होत अचल गति गात ।

सकल चेष्टा^२ रुकि रहै प्रलय कहै कवि तात^३ ॥१९॥

^१ सभ्रम—नी० हि० । ^२ सुद्धि—नी० हि० सा०, सु चेष्टा—का० । ^३ बान—

का० ।

उदाहरण :

गोरी गुमान भरी गजगामिनि काहिहू थो को^१ यह कामिनि तेरे ।

आई हुती^२ मु चितै^३ मुसक्याइ कै माँहि लई मन मोहन मेरे ।

हाथ न पाँइ हलै न चलै अग नौरजनैत फिरै नहि फेरे ।

देव सु ठोर ही ठाडी चितौति लिखी मनु चिन्,विचिन् चितेरे ॥२०॥

^१ काहि किधी—नी० हि०, काहू किधी—का० । ^२ जुती—भा० । ^३ मी चितै—नी

सचारी भाव-लक्षण :

सात्विक होत सरीर तें ताही ते^१ सारीर ।

अतर उपजै आतरिक^२ ते तैतिस कहि धीर ॥२१॥

^१ जाही तें—नी० हि०, जाहि कहत—सा० । ^२ अतरहि—नी० हि०, आतर—का

सचारी नाम :

प्रथम होइ निर्वेद ग्लानि मका सूया कहू^१ ।

मद^२ अरु श्रम आलस्य दीनता चित्ता बरनहु^३ ।

मोह सुमृति^४ घृति लाज चपलता हर्ष बखानहु ।

जडता दुख आवेग हर्ष उत्कठा जानहु ।

अरु नीद अपस्मृति सुपति बोध क्रोध अवहित्य मति^५ ।

उग्रत्य व्याधि उन्माद अरु मरन भ्रास अरु तर्नतति ॥२२॥

^१ सवा वितर्क कहि—नी० हि०, सवा वितर्क कउ—भा० । ^२ मूदु—ज० । ^३ बरनउ-

मा० । ^४ सुमूर्त—भा० । ^५ अपस्मृति स्वपन वहि क्रोध बोध पुनि मदन गति—नी० हि

निर्वेद-लक्षण :

चित्ता अथु प्रवास करि^१ अपनोई अपमान^२ ।

उपजहि तत्व ज्ञान जेह^३ सो निर्वेद बयान^४ ॥२३॥

^१ उपजै तत्व ज्ञान वं—का० । ^२ अति अनग उर आन—नी० हि० । ^३ चित्ता अथु प्रवा

जहै—का०, उपजहि सात्विक भाव जहै—नी० हि० । ^४ अपनोई अपमान—नी० हि०

उदाहरण

भूमि परी कवि देव सर्वे जब जानि पर्यो सिपरो जग जातो ।
नेसुव मो में जा हानो सयान तो होनो कहा करि सा हित हातो ॥२४॥

१ मोह मद्यो चित्त गर्व बद्ध्यो मनमोहन करि—का० । २ गया—ज० । ३ नव जावन—
वा० ।

ग्लानि-लक्षण :

भूपप्यास अरु मुरति थम^१ निरबल होत सरिीर ।
सिखिल होत अवयव^२ मर्वे ग्लानि कहत सो^३ धीर ॥२५॥

१ मुरतादि थम—वा० । २ अग जब—का० । ३ सु तव—नी० हि० । ४ सु—नी
हि० ।

उदाहरण :

रग भरे रति मानत दपति बीति गई रतिया छिन ही छिन ।
प्रीनम प्रात उठे अलमात^१ चिर्न चित्त चाहत धाइ गह्यो धन ।
गोरी के मान सर्वे अंगरात जु^२ बात वही न परी सु रही मन ।
भौहै नचाइ सचाइ के सोचन चाहि^३ रही ललचाइ लला तन^४ ॥२६॥

१ अंगरात—नी० हि० वा० । २ अलमात—नी० हि० । ३ चाय—भा० मा० वा०
४ लला मन—भा० मा० वा० ।

शका-लक्षण :

अपराधादि अनीति करि कपै करै छिपाइ ।
ताही को^१ शका कहै सर्वे कविन के राइ ॥२७॥

१ ताही सो—हि० ।

उदाहरण :

या डर ही^१ घर ही में रही^२ कवि देव दुर्यो नहि दूतिन^३ को दुप ।
बाहू की बात कही न सुनी मन भाहि बिसारि दियो सिपरो मुख ।
भीर में भूले भय सखि में जबने जदुराइ की ओ^४ कियो ह्य ।
भाहि भटू तवने निसि घीस चितौतही जात^५ चवाइन को मुल ॥२८॥

१ डर हीं—भा० सा० । २ रहीं—भा० मा० । ३ दूतन—भा० सा० ज० । ४ वृजरा
की राइ—नी० हि० । ५ चितौत ही नात—नी० ।

असूया-लक्षण :

त्रोष कुबोध विरोध तें सहै न पर^१ अधिकार ।
उपजै जहने त्रिय दुष्टता^२ सो असूया अवचार^३ ॥२९॥

१ सहै न सह—भा० सा०, सहि न पर—ज० । २ तहाँ—नी० । ३ दु ख बहु—वा०
४ निरधार—नी० हि० वा० ।

उदाहरण :

गोकुल गाँव की गोप अधू बनिबं निवमी दुरि^१ दे दे धुनायो ।
सोरहो सान सिपार मर्वे बन देखन को बहु भेप धनायो ।

राधिका के हिय हेरि हरा हरि के हिय को पिय को पहिरायो^१ ।

केली तहाँ तिष ती तिनमौ तिन^२ मोतिन सो तिनको तन तायो ॥३०॥

^१ बनि के दुरि के सब—नी० हि० । ^२ हरिक पहिरायो—का० । ^३ ते तिन मोतिन—का०, तीनिन भातिन—नी०, नीतिन मोतिन—हि०, ती तिन में तिन—सा० ।

मद-लक्षण :

सो मद जहें आसव पिये^१ हरप होय हिय बीच ।

नीद हास रोदन करै उत्तम मध्यम नीच ॥३१॥

^१ आसक्त पिय—नी०, आसक्त पिये—हि० ।

उदाहरण :

आसव^१ सेइ सिखाये सखीन के सुन्दरि मन्दिर में सुख सोवै ।

सापने में बिछुरे^२ हरि हेरि हरेई हरे हरिनीदृग रोवै ।

देव नहै उठि^३ कै बिरहानल आनन्द के असुवान समोवै ।

आजूही^४ भाजि गई सब लाज हंसै अरु^५ धोहन को मुख जोवै ॥३२॥

^१ आसन—नी० । ^२ सोवत में सपने—का० । ^३ तहो जगि—का० । ^४ ०—नी० हि० ।

^५ अरु हप कै—नी० हि० ।

अम-लक्षण

अति रति अति गति^१ तें जह^२ उपजै अति तन^३ खेद ।

सो श्रम जामे जानिये निस्सहता प्रस्वेद^४ ॥३३॥

^१ रत—सा० । ^२ रति—नी० हि० । ^३ निद्रा सहित प्रस्वेद—नी० हि०, विस्सह ताप प्रस्वेद—का० ।

उदाहरण :

दारी दुपहरी बीच तदन^१ तहनमीच^२ सही परै तरनि^३ के करनि^४ की जोति है ।

तामैं तजि धाम^५ चली स्याम पै विकल वाम काम सर दाम वपु ल्यहि^६ विलोति है^७ ।

बडे बडे बारन तें हारनि के भारन तें थाकी सुकुमारि अम स्वेद^८ रग धोति है ।

साग न सहेली मुअकेली केलि कुजन में बैठति उठति टाढी होति बलि होति है ॥३४॥

^१ तरनि—सा० । ^२ तरुन गावें—नी० हि० । ^३ सही न परति—का०, सहि परे—

सा० । ^४ रवि—का० । ^५ किरनि—नी० हि० का० । ^६ धाम—नी० हि० । ^७ रचहि—

सा० । ^८ चितौति है—नी० हि० । ^९ सेत—नी० हि० ।

आलस्य-लक्षण

बहु भ्रूपादिक भार^१ तें कारज नरयो^२ न आइ ।

सो आलस्य जहाँ^३ रहै तनहि अछमता^४ छाइ ॥३५॥

^१ भाव—भा० सा० ज० । ^२ बह्यौ—भा० । ^३ जामे—नी० हि० । ^४ अछमद तन—नी०, आमद तन—हि० ।

उदाहरण :

ऊयो आये ऊयो आये^१ हरि^२ को संदेसो लाये सुनि गोपी गोश घाये धीर न धरत है ।

बोरी लगि^३ बोरी उठी भोरी^४ लौ भ्रमति मति गनति न^५ जऊ^६ गुरु लोग निदरत हैं^७ ।
 हैं गई विकल वाम बालम वियोग भरी जोग की सुनत बात मात ल्यो जरत है ।
 भारे भये भूषण सभ्दारे न परत अग आगे को धरत पग पाछे को परत है ॥३६॥
^१ गोकुल तेरे—वा० । ^२ स्याम—नी० हि० । ^३ बोरी लगि—भा०, बोरी लरि—
 ज० । ^४ भोरी—भा० । ^५ मानति न—सा० । ^६ जाउ—नी० हि०, जनो—भा०,
 जनऊ—सा० । ^७ लोगन डरति—नी० हि०, लोगन दुरत—भा० ।

दीनता-सक्षण :

दुरगति बहु विरहादि तें उपजै^१ दुख अनन्त ।

दीन वचन मुख तें कहे कहे दीनता सन्त^२ ॥३७॥

^१ होत जो—नी० हि० । ^२ सग—नी० ।

उदाहरण :

रैन दिन नैन दोऊ मास ऋतु पावस के^१ बरसत बडे बडे बूदनि की^२ भरिये ।
 मैन सर जोर भारे पवन^३ भक्कोरनि सो आई है उमगि छिति^४ छाती नीर भरिये ।
 टूटी नेह नाव छूटो स्याम सो सहाउ गुन^५ ताते कवि देव कहे कैसे धीर धरिये ।
 बिरह नदी अपार घूहल है माँक धार^६ ऊषो अब एक वार खेइ^७ पार करिये ॥३८॥
^१ पाव सब—वा० । ^२ सो—भा० । ^३ मोर पौन की—नी० हि० । ^४ छिनि—भा०
 सा० । ^५ सनेह गुन—नी० हि०, सहाव गुनु—का० । ^६ ही माँक धार—नी० हि० ।
^७ फेरि—नी० हि० ।

चिन्ता-सक्षण :

इष्ट वस्तु पाये बिना ध्यम चित्त अति होइ^१ ।

स्कांस ताप वैषरन जहें^२ चिन्ता बहिमे^३ सोई ॥३९॥

^१ बहु व्याकुल चित्त होइ—नी० हि०, एक अग्र चित्तु होइ—वा० सा० । ^२ स्याम ताप
 हूँ रैन दिन—नी० हि० । ^३ वर्तहु—का० ।

उदाहरण :

जानति नाहि रहे^१ हरि कौन के ऐसी घों कौन बधू मन भावै ।
 मोही सो रुठि के वैठि रहे विघों कोऊ बहूँ कछु^२ सोष न पावै ।
 ऐसिये^३ भाति भटू बबहूँ अब कोहूँ^४ मिले बहूँ कोउ^५ मिलावै ।
 आमुनि मोचति मोचति यो सिंगरो दिन कामिनि वाग उडावै ॥४०॥

^१ हरे—भा० सा० । ^२ कोऊ बछू बहूँ—नी० हि० । ^३ वैगिये—भा० सा०, कंसिये—
 वा० । ^४ वेहू—हि०, बयोहू—भा० । ^५ कोउ—भा० ।

मोह-सक्षण :

अदभुत दरसन वेग भय अति चिन्ता अति बोह^१ ।

जहान^२ मूर्छा विस्मरन^३ स्तम ताहि बह मोह^४ ॥४१॥

^१ अदभुत रस आवेग भय चिन्ता मुमिरन बोह—नी० हि० । ^२ होइ—वा० । ^३ मूर्छा
 विस्मरनना—नी० हि० । ^४ तमतादि बह मोह—भा० ।

उदाहरण :

औरो कहा बोल बालबधू है नयो तन जोवन तोहि जनायो ।
तेरेई नैन बडे ब्रज मे जिनसो बस कीनो जसोमति जायो ।
डोलत है मनो ^१ मोल लियो कवि देव न बोलत बोल बुलायो ।
मोहन को मन मानिक सो ^२ गुन सो गुह तँ उर सो उरभायो ^३ ॥४२॥

^१ जनु—नी० हि० । ^२ तो—नी० हि० । ^३ मैं उरभायो—नी० हि० ।

स्मृति-लक्षण :

ससकार ^१ सपति विपति अधिक प्रीति अति रास ।

प्रिय अप्रिय सुमिरन सुमृति इकचित्त मौन उसास ^२ ॥४३॥

^१ ससँ करि—नी० हि० । ^२ कप फेन मुख स्वास—का०, इकचित्त मानु मदास—सा०, प्राप्त समँ सो देव कवि कहि तामँ उदास—नी० हि० ।

उदाहरण

नीर भरे मृग कँसे षडे दृग देखति नीचे निचाइ ^१ निचोलनि ^२ ।
लँ लँ उससै लिखे धरिनी धरि घ्यान रहे करि दीठि अडोलनि ^३ ।
बैठि रहै कबहूँ छुप हूँ ^४ कवि देव कहै ^५ कर चाँपि कपोलनि ।
बालम के बिछुरे यह बाल मुनै नहि बोलनि बोलति ^६ बोलनि ॥४४॥

^१ नचाइ—नी० हि० । ^२ निचोलनि—सा० । ^३ तन कप अतोलनि—वा० । ^४ कँ—सा० । ^५ रहे—नी० हि० । ^६ कानन बोलनि—का०, डोलनि बोलँ सु—नी० हि० ।

धृति लक्षण :

ज्ञान समित उपजे जहाँ मिटँ अधीरज दोष ।

ताही सो धृति कहत हैं ^१ जया साभ सतोष ॥४५॥

^१ जहँ—भा० सा०, कवि—का० ।

उदाहरण .

रावरो रूप रह्यो भरि ^१ नैननि बैननि के रस सो श्रुति सानी ।
गात ^२ मैं देखत गात तिहारोई ^३ वात ^४ तिहारोई ^५ वात बसानी ।
ऊपा हहा ^६ हरि सो कहियो तुम ही न इहाँ यह हों ^७ नहि मानौ ।
या तन तँ बिछुरे तो कहा भग तँ ^८ अनतँ जु बसी तब जानौ ॥४६॥

^१ रमि—नी० हि० । ^२ गाढ़—वा० । ^३ तुम्हारे ये—भा० । ^४ रीति—वा० । ^५ कहा—नी० हि० । ^६ तौ—नी० हि०, ते—या० । ^७ मैं—नी० ।

साज-लक्षण :

दुराचार अरु प्रथम ^१ रति उपजे जिय सकोच ।

साज कहै तासो जहाँ ^२ मुख गोपन गुरु सोच ॥४७॥

^१ प्रेम—नी० हि० । ^२ सुबवि—नी० हि० ।

उदाहरण :

आजू मग्यो मुख मोई गुनो मग्यो मचिहु ^१ मोच ^२ मँबोच वे हाते ।

हातो भयो बहु कैसे मकोच बडे निशि नाह सो नेह के नाते ।
 वंसी कही रति भानि रही रति मंदिर मे मंदिरा भद भाते ।
 मारि हथेरी हरे हिय देव सु दावि रही अगुरी इक दाते ॥४८॥

१ सांचे ह्वं—का० । २ मांच—नी० हि० ।

चपलता-लक्षण :

रागरु क्रोध^१ विरोध तें चपल जु चेष्टा होय ।

कारज की^२ उतालता कहत चपलता सोय ॥४९॥

१ राग क्रोध सु—नी० हि० मा० । २ की जु—नी० हि० ।

उदाहरण :

खेलत मे वृषभानु सुता^१ वहुं धाइ^२ घंसी बन कुजन मे ह्वं ।

डार मो हार तहां उरझ्यो सुरभाय रही बचि देव सखी ई ।

ती लगि आइ गयो^३ उत तें मु नगीच^४ मनो चित वीच परे च्वं^५ ।

छोहर वा हरवा हरवाइ दं छोरि दियो छल सो छतिपां छ्वं ॥५०॥

१ इक गोप सुता—का० । २ जाइ—भा० सा० वा० । ३ आय परे—नी० हि०, आप गयो—भा० वा० । ४ सु नगीच—हि०, मुनि जीच—नी० । ५ छ्वं—भा० सा०, च्वं—वा० ।

हृष्य-लक्षण :

प्रिय दर्शन धवनादि तें होय जु हिये प्रसाद^१ ।

वेग स्वेद^२ आसू प्रलय हृष्यं लखी^३ निरवाद ॥५१॥

१ प्रसाद—नी० । २ स्वांस—नी० हि० । ३ मुकहू—का० ।

उदाहरण :

बैठी ही सुन्दरि मन्दिर में पनि वो पय देखि पतिव्रत पोवे ।

तो लगि आए री आइ कह्यो दुरि द्वार तें देवर दीरि^१ अनोखे ।

आनंद में गुरु की गुस्ताहू^२ गनी गुनगौरि^३ न बाहू हू^४ ओखे ।

नूपुर पाइ उठे भननाइ^५ मु जाइ लगी घन धाइ^६ झरोखे ॥५२॥

१ दूरि तें—ज० । २ आइ—नी० हि० । ३ गुस्ताइ—ज० सा० । ४ गुनगाठि—वा० ।

५ बाहू है—भा०, बाहू वे—भा०, बाहूहि—ज०, बौनहू—नी० हि० । ६ भनकाइ—

भा० । ७ अतुराइ—नी० हि० ।

जडता लक्षण :

हित अहितहि देमे जहां^१ अचल^२ चेष्टा होइ ।

जानि ब्रूमि पारज थके जडता घरनं सोइ ॥५३॥

१ मुर्न—वा० । २ अचलन—नी० हि० ।

उदाहरण :

बालिदी वे तट बाल्हि भटू बटूं ह्वं गई दोउन भेंट भली सी ।

टीरही ठाठे चितौन दतीत न^१ नेकटु^२ एन टनी टङ्गी^३ मी ।

देव को^१ देखति देवता सी बृषभान लली न हली न चली सी ।

नद को छोहरा की छवि सो छिनु एक रही छकि^५ छैन छली सी ॥५४॥

^१ इतै तन—नी० हि० । ^२ नेक कही—नी०, नेक हिये—हि० । ^३ ठगली—का० ।

^४ देव की—नी०, देव जू—का० । ^५ छवि—का० ।

बु.ख-लक्षण :

उत्तम मध्यम नीच क्रम लघु चिंता अप्रसाद ।

महा सोक ये घन गये^१ हित^२ ससो सु विपाद^३ ॥५५॥

^१ ये वनुग को—नी० हि० । ^२ ह्वं—का० । ^३ सतोय विपाद—नी० हि० ।

उदाहरण :

केलि करै^१ जल में मिलि बाल गुपाल तही लट गैयति घेरै ।

घोरि^२ सबै हरवा हरवाह दै दूरि तें दौरि बछान को फेरै ।

हार हरे हहरै हिय में^३ तिय घोर घरै न करै इक् टेरै ।

राधिका ठाढी हरेई हरे हरिके मुख ओर हंसै अह हेरै ॥५६॥

^१ करी—का० । ^२ घेरी—का० । ^३ हो हरे हिय में—नी० हि० ।

भावग-लक्षण :

प्रिय अप्रिय^१ देखे सुने गात पात सवेग^२ ।

होइ अचानक भूरि भ्रम सो बरनहु^३ आवेग ॥५७॥

^१ अपराध—नी० हि० । ^२ तंन तर्प सवेग—नी० हि०, तंन तर्प सवेग—सा०, गात पात

धति वेग—का० । ^३ कहिए—का० ।

उदाहरण :

देखन दौरी सबै बुजवाल सु आये गुपाल सुने ब्रज भू पर ।

टूटत हार हिये न सम्हारती^१ छूटत वार न किंकिनि नूपुर ।

भार उरोज नितवन को न धरै^२ नटि को लटिबो दृग द्रुपर^३ ।

देव हूदैं^४ पथ आइ मनो चडि घाई मनोरथ के रथ ऊपर ॥५८॥

^१ सम्हारत—नी० हि० । ^२ वेन धरै—नी० हि०, कोन धरै—सा० । ^३ लटिवा तन

द्रुपर—नी० हि० । ^४ हूँ दै—नी० हि०, हूँ दै—का० सा० ।

गर्व-लक्षण :

बहु बल धन कुल रूप तें सिर उन्नत अभिमान ।

गर्न^१ न वाहू आप सम ताही गर्व बखान ॥५९॥

^१ गुर्न—का० ।

उदाहरण :

देव सुरामुर सिद्ध बधून के^१ एतो न गर्व जितो यहि ती को ।

यापने जीवन^२ के गुन के अभिमान सर्व जम^३ जानति फीको ।

राम की ओर सिबोरति नाव न रागत नाक को नायक नीको ।

गोरी भुमानिनि ग्वारि गँवारि किले नहि रूप रतीको^४ रती को ॥६०॥

१ घो—भा० सा० । २ जीवन—नी० हि० । ३ ऊपर और सब रंग—का० । ४ भयक—का० ।

उत्कण्ठान्तरण :

प्रिय मुमिरन तें गात में^१ गौरव आरसु होइ ।

देग न काल सह्यो^२ परं उत्कण्ठ बहु सोइ ॥६१॥

१ गर्व ये—नी० हि० । २ बह्यो—नी० हि० ।

उदाहरण :

बंधी हमारीये धार^१ बडो भयो कं रवि कौ रथ ठौर ठयो है ।

भोर तें भानु की ओर चितौत घरी पल ते मनतंही^२ गयो है ।

आवत छोर नहीं छिन को दिन को न अवं^३ लागि जाम^४ गयो है ।

पाइये कैसिक सांभ तुरतहि देखु री घौस दुरत भयो है ॥६२॥

१ वेर—नी० हि० । २ हू गननो न—नी० हि० । ३ अर्भ—भा० सा० नी० । ४ जाय—भा०, घाम—ज० ।

नींद-लक्षण :

चित्ता आरस छेद तें बसे तुचा^१ चितु जाय^२ ।

मुपन दरस अवयव चलन^३ ते बहु^४ नीद सुभाय ॥६३॥

१ बंस तुचा—भा०, बसे चाह—नी० हि० । २ घाय—नी० हि० । ३ अघ बचन—नी० हि० । ४ ये कहिये—नी० हि०, एरहु—सा० ज० ।

उदाहरण :

सोवत तें ससि जाग्यो नहीं वह सोवत ते घर आयो हमारे ।

पीत पटी पटि में लपटी^१ अरु सांवरो सुन्दर रूप सेंवारे ।

देव अवं सगि आखिन ते बहु वांकी चितौनि^२ टरे नहि टारे ।

सापने में चित^३ घोरि लियो वहि चोर री^४ मोर पखीवन धारे ॥६४॥

१ लपटि पटि में—का० । २ सम्प—नी० हि० । ३ सौ सपने चित्त—का० । ४ उहि चोर री—सा०, चित्त चोर री—नी० हि०, बह चाह री—का० ।

अपस्मृति-लक्षण :

अधिक दुःख अति भय असुचि^१ मूर्न ठौर निवास ।

मु अपस्मृति जहें भू पनन^२ कप केन मुख सांस^३ ॥६५॥

१ असुधि—नी० हि० । २ मो अपस्मृति है जहां भू पनन—नी० हि०, मु अपस्मृति जहें मूरतन—का० । ३ कप स्वमन उमास—नी० हि० ।

उदाहरण :

मोहन माइ चले मयुरा तवतें निसिवासर बीतत ठाडे ।

घोरी भई सज की बनिता बहु भांतिन देव वियोग के वाडे^१ ।

भूलि घटें गुण सोम^२ की ताज गए गृह वाज प्रमो^३ गृह गाडे^४ ।

नीनितामों अनिर^५ भहराद गिरे फिरि घाइ^६ फिरें मुख वाडे ॥६६॥

१ की बाढ़े—नी० हि० । २ कुल लोक—का० । ३ घंसी—ज०, प्रही—हि०, गली—
भा० । ४ ठाढ़े—नी० हि० । ५ जु भिरै—ज० । ६ भुकि भुवि—का० ।

मुपति-लक्षण :

नीद बढे तव तजि तचा चातुरी ती चितु जाइ ।^१

अति उसास मुद्रित नयन मुपति^२ कहै नविराइ ॥६७॥

१ तचित तनु सुख मे चित जो जाहि—नी० हि०, तवनहु चाव रीरि चितु जाइ—भा०,
तजित चापु रीति ती चितु जाइ—सा० ज०, तजित चापु रित ताहि चितु जाइ—का० ।

२ मुपति—भा०, स्वपन—नी० हि० ज० ।

उदाहरण :

साँवरो सोतु सुन्यो सुख सो कहूँ कालिंदी कूल^१ कदव के कोरै ।

गोपवधू जुरि^२ आई सर्व ब्रजभूपन के सब भूपन चोरै ।

काहू लई कर की बँसरी^३ कवि देव कोऊ^४ कर कवन मोरै ।

काहू हर्यो हिय को हरवा हरवाय कोऊ कटि को पट छोरे ॥६८॥

१ तीर—सा० । २ मिलि—का० । ३ बनसी—का० । ४ दोऊ—नी० ।

बोध-लक्षण :

नीद गये भीजं नयन^१ अग भय अमुहाइ^२ ।

एक वार इन्द्रिय जगं तै कहु बोध^३ सुभाइ ॥६९॥

१ गई भरि जन्म की—नी० हि०, गये मूदे नयन—का० । २ जिय आय—नी० हि० ।

३ ते अबिबोध—का०, ते कउ नीद—भा० ।

उदाहरण :

सापने^१ मैं गई देखन ही सुनि^२ नाचत नद जसोमति को मट ।

वा भुसवयाइ कै भाव बताइ कै मेरोई खैचि खरो पकरो पट ।

तौ लगि गाइ रम्हाइ उठो कवि देव वचून मय्यो दधि को घट^३ ।

जागि^४ परी तव कान्हू कहूँ नवदव की कुज न कालिंदी को तट ॥७०॥

१ सोवत—का० । २ कौ तहाँ—नी० हि० । ३ मट—नी० हि० । ४ चौकि—भा० ज० ।

क्रोध-लक्षण :

अधिशेप^१ अपमान तें स्वेद कप दृग राग ।

अहकार जिय मे बढे क्रोध मुनहु बडभाग ॥७१॥

१ अधि शेष—नी० हि० ।

उदाहरण :

देव मनावत मोहन ज् कव वे मनुहारि करे लखचीहे ।

वात बनाइ सुनावै^१ सबी मव ताती औ^२ मीरी रिसोहैं रसोहैं^३ ।

नाह सो नेह सऊ^४ तम्नी तजि रानि बितीनि चितौति न सोहैं^५ ।

माननि नाहि निरीछेहि ताननि^६ वान मी आँखें वमान सी भोहैं ॥७२॥

१ गिगावै—का० मा०, सुनाइ—नी० हि० । २ तानें औ—भा० । ३ स्मोही रसोहैं—

हि०, रमोहे रिसोहे—भा०, रिमोही रसी है—नी०, रसीहे रिसोहे—भा०, बुभाय रसीहे—का० । ४ तर्ज—का० । ५ मोहे—मा० । ६ तान औ—नी० हि० ।

अवहित्य-लक्षण

लज्जा गौरव घृष्टता गोप^१ आहृति कर्म ।

और करं औरं कहे^२ सो अवहित्य को घर्म^३ ॥७३॥

^१ लाज गौर अरु वधुता गोप—नी० हि० । ^२ करं और औरं कहे—का०, और कहे औरं करं—नी० हि० भा० । ^३ अवहित्या घर्म—नी० ।

उदाहरण :

देवन को बन को निरसी बनिला बहु धानि^१ बनाइ कं धागे ।

देव कहे डुरि^२ दौरि के मोहन^३ आइ गये उत तें अनुरागे ।

बाल की छाती छुई छल मो घन^४ कुजन मे रम^५ पुजन पागे ।

पीछे निहारि निहारत नारिन हार हिये के सुघारन लागे ॥७४॥

^१ भानि—सा० । ^२ डरि—ज० । ^३ कं सोहन—भा० । ^४ छपि कं बन—का० । ^५ घम—भा० ।

मति-लक्षण :

शास्त्र चिन्ता ते जहाँ होइ^१ ज्यारथ ज्ञान ।

करै शिष्य उपदेश जहँ^२ मनि कहि ताहि बखान ॥७५॥

^१ साँसति मन् मे होइ जहँ जहाँ—नी० हि०, शास्त्ररु चिन्तन तें जहाँ होइ—का० ।

^२ को—का० ।

उदाहरण :

स्याम के सग सदा बिलसी^१ सिमुता मे मुता मे^२ कछु नहि जान्यो ।

भूने गुपाल सो गर्व कियो गुन जीवन रूप ब्या अभिमान्यो^३ ।

ज्यो न^४ निगोडो तबं समभ्यो कवि देव कहा अरु जो^५ पछितान्यो ।

घन्य जियै जग मे जन ते तिनको मनमोहन सो^६ मन भान्यो ॥७६॥

^१ सदा मिलकं बिलसी—का० । ^२ ०—का० । ^३ अरिमानो—भा० । ^४ जो न—नी०

हि० । ^५ किरि जो—का० । ^६ तें—भा० ।

उपालभ-लक्षण :

उपालभ अनुनय विनय अरु उपदेश बखान ।

इनको अतरभाव कहि देव मध्य मनि जान^१ ॥७७॥

^१ उपालभ द्वं भानि को बरनन है कविराड । इनके अतरभाव कहि मध्यम देव मुजाइ—हि०, नी० प्रति मे दोहा श्रुति है ।

उपालभ द्वं भानि को बरनि कहे^१ कविराड ।

एक कहावे कोप तें दूजो प्रनय मुमाइ ॥७८॥

^१ बरनन है—नी० हि०, बरनि बहो—का० ।

कोप उपालभउ दाहरण

बोलत ही बत वैन बडे अरु नैन बडे बढ ऐन बडे हो^१ ।

जानति ही छल^२ छैल बडे जू बडे खन के इहि गैल गडे^३ ही ।

देव कहै हरि रूप बडे ब्रजभूप बडे हमपै^४ उमडे ही ।

जाहु जू जैय^५ अनीठ बडे अरु ईठ बडे पर^६ वीठ बडे ही ॥७६॥

^१ गढाइ के गैल खडे ही—का०, बडे बडरान अडे है—भा० ही । ^२ छवि—सा० ज० ।

^३ पंड परे—नी० हि० । ^४ हम सो—नी० हि० । ^५ अरु—नी० हि० ।

प्रणय उपालभ-उदाहरण :

लाल भले ही कहा कहिये कहिये तौ कहा कहु काहु^१ कहैयै ।

काहु कहूँ न कहीन सुनी सु^२ हमै कहिये कहि काहि सुनयै ।

नैन परे न परै कर मैं नहि^३ चैन परै जु पै वैन वरयै^४ ।

देव कहै नित को मिलि खेलि इतैं^५ हित को चित को न चुरयै ॥७७॥

^१ कहो को ही—नी० हि० । ^२ सुनी स—नी० हि० । ^३ सैन—नी० हि० । ^४ जब नैन

खरैया—नी० हि० । ^५ खेलियतैं—नी० हि० खेले इतैं—का० ।

भनुनय-उदाहरण

वे बडभाग भरे^१ अनुराम इतैं अति भाग सुहाए भरी ही ।

देखी विचारि समी^२ सुख को तन जोवन जोतिन सो^३ उजरी ही ।

बालम सौ उठि बोलौ बलाइ ल्यो जो कहि^४ देव सयानी^५ परी ही ।

हेरत बाट कपाट लगे हरि बाट परी^६ तुम छाट परी ही ॥७८॥

^१ बडे—भा० । ^२ समै—नी० हि० । ^३ जोत महा—का० । ^४ जो कवि—का०, यो

कहि—भा० । ^५ सयान—नी० हि० । ^६ खरे—भा०, परो—नी० हि० ।

उपवेश उदाहरण

कोपदे^१ बीच परे^२ पिय सो उपजावत रग मैं भग सु^३ भारी ।

क्रोध निधान^४ विरोध निधान सु मान^५ महा सुख मै^६ दुपकारी ।

ताते न^७ मान समान अकारज^८ जाको अयान^९ बडी अधिकारी ।

देव कहै कहिहो^{१०} हित की हरि जू सों^{११} हिनू न कहै हितकारी ॥७९॥

^१ कोपसैं—भा० । ^२ परयो—नी० हि० । ^३ जु—का० । ^४ विधान—भा० सा० ।

^५ समान—नी० हि० । ^६ सुख तैं—का० । ^७ तोन न—का० । ^८ अकारन—नी० ।

^९ अपानु—भा० अयान—हि० अजान—ज० । ^{१०} कटियो—नी० ज० । ^{११} जैमो—

नी० ।

उग्रता-लक्षण

दाप न वीरत^१ चीरता दुर्जनता^२ अपराध ।

निरदयता^३ सो उग्रता जहैं तरजन बच बाध^४ ॥८०॥

^१ वीरत न—नी० हि० भा० मा० । ^२ मोई है—नी० हि० । ^३ निरजनता—भा०,

निदरता—नी० हि० । ४ तन जन वध वाघ—भा० ज०, तरजना व्याधि—भा० ।

उदाहरण

मोहन भाइ भये मयुरापनि^१ देव महा पद मा मदमानो^२ ।
कोरे परे अथ कुरी के हरि^३ याते कियो हममो हिन हातो ।
गोकुल गाँव के गोप गरीव हूँ बाँसु बराबर ही को इहाँ तो^४ ।
बैठि रही सपनेहूँ^५ सुन्या कहूँ राजनि मो परजानि मो नातो ॥८४॥

१ भये अब भूपनि—नी० हि० । २ मन मातो—का० मा० । ३ अब—भा० । ४ ही के इहाँ तो—भा०, ही को वहाँ तो—नी० हि० । ५ सपने न—नी० हि० ।

ध्याधि-लक्षण :

घातु फौप प्रीतम विरह^१ जनर उपजं आधि ।

जुर विकार बहु^२ अग मैं ताहो^३ बरनं व्याधि ॥८५॥

१ प्रिय विरह तें—का०, प्रीतम विरह—नी० । २ उर—का । ३ ताको—नी० हि०, माहि सु—का० ।

उदाहरण

ना दिन तें अनि व्याकुल है तिय^१ जा दिन तें पिय पय मिचारे ।

भूप न प्याम विना अजभूपन भामिनि भूपन भेय विचारे ।

पावत पीर नही कवि देव बरोरिच भूरि मरुं बरि^२ हारे ॥

नारि निहारि निहारि^३ अले तजि बैद^४ विचारि^५ विचारि विचारे ॥८६॥

१ जिय—नी० हि० । २ जवें बरि—नी० हि०, मरुं बरि—भा० । ३ ०—का० ।

४ तन उपचारि—का० । ५ विचारे—नी० हि० ।

उन्माद-लक्षण :

पिय वियोग तें जहँ वृथा वचनानाप^१ विपाद ।

बिन विचार आचार जहँ^२ मो कहिय उन्माद ॥८७॥

१ वचनन लाय—भा० मा०, वचन विनाप—नी० हि० । २ बाग्ज जर्त—का० ।

उदाहरण :

अरिबँ बह^१ आत्र अकेली गयी^२ तरिकँ हरि के गुन हप सुही ।

उनहूँ^३ अपनी पत्रिराड हरा मुमकाद कँ गाइ बँ गाड दुही ।

कवि देव बह्यो^४ किनि कोई^५ बटु तवने^६ उनके जनुराग^७ छुही ।

सगरी मो इहँ^८ बहै बानवधू यह देवी रो मान गुपाल गुही ॥८८॥

१ बहू—नी० । २ बनी—का० । ३ उनही—का० । ४ बही—नी० । ५ कोऊ—भा०,

काऊ—ज० । ६ तवनी—सा० । ७ जुअनाग—का० । ८ यही—भा० ।

मरण-लक्षण :

प्रबटहि लक्षण मरन के अष्ट विभाव अनुभाव ।

जो निदान बरि बरनिये तो^१ निगार अभाव ॥८९॥

१ सो—गा० हि० ।

निर्वेदादिक भाव सब बरने सरस मुभाइ ।

ता विधि भरनौ बरनिये जाभै रस न नसाइ^१ ॥६०॥

^१ नहि जाइ—नी० ।

उदाहरण :

राधा के^१ वाडी विधोग की वाधा सु देव अबोल अडोल डरी रही ।

लोगन की बृषभानु के भौन में भोर तें भारीये भोर भरी रही ।

दाके निदान के प्राण रहे^२ कडि औपधि भूरि करोरि करी रही ।

चेति^३ मर करिकं चितई अब चारि घरी लौं मरीये^४ घरी रही ॥६१॥

^१ राधिके—भा० । ^२ गये—का० ज० । ^३ चेती—ज० । ^४ मरी सी—भा० ।

प्रास-लक्षण .

घोर खवन दरसन^१ सुमूति तभ^२ पुलक भय गात ।

होइ छोम जो चित्त मैं प्रास कहत कवि तात ॥६२॥

^१ देर मद्र—नी० हि० । ^२ यभ—नी० हि० ।

चित्त छोम द्वै भाति को एक प्रास अरु^३ भीति ।

अनस्मात् तें प्रास अरु विचार^४ भय रीति ॥६३॥

^१ इक—का० । ^२ विन विचार—नी० हि०, विचार तें—भा०, अरु अरु विचार—ज० ।

प्रास-उदाहरण :

श्री बृषभान लली मिलि कै जमुनाजल केलि को हेनिन आनी ।

रोमवली नवली कहि देव^१ सु सोने से गात अन्हान मुहानी ।

कान्ह अघानव वोलि^२ उठे उर बाल के ब्याल बधू^३ लपटानी ।

धाइ कै^४ धाइ गही ससवाइ^५ दुहैं कर भारत अग अपानी^६ ॥६४॥

^१ कवि देव—का० सा० । ^२ टेरि—सा० ज० । ^३ बाल बधू—मा० । ^४ को—भा० ।

^५ मसवाइ—का०, सिसिआइ—ज० । ^६ अपानी—भा० ।

भय-उदाहरण :

आजु गोपाल जू बाल बधू सैंग नूतन नूतनि कुज^१ बसे निसि ।

जागर होत उजागर नैननि^२ पाग पं पीरी पराग रही^३ पिसि ।

बोज के बदन खोज सुले जह^४ ओखे उरोज रहे उर में धिसि^५ ।

बोलत बात^६ लजात से बात सु आये इतीत चितौन चहूँ दिसि ॥६५॥

^१ नूतन नूतने कुज—भा० । ^२ नैननि—सा० । ^३ परी—नी० हि० । ^४ कहूँ—बा० ।

^५ मैं धिसि—भा०, मैं धंसि—का०, सो धिसि—सा० । ^६ बाल—सा० ।

सर्क-लक्षण :

विप्रनिपत्ति^१ विचार अरु सतय अघ्यवसाइ ।

बितरक चौविधि जानिये भूचलनादिय^२ भाइ ॥६६॥

^१ विपनि विचित्र—नी० हि० । ^२ भूचल निदक—नी० हि० ।

विप्रनिपति-उदाहरण :

यह तो^१ बछु भामनी^२ को सो^३ लसं मुच देखन हीं दुख जात है र्वै^४ ।

सफरी मद मोचन लोचन य परिहैं कहुँ भानो चिनीन हीं च्वं ।

कवि देव नहै कहिये जुग जो जलजात रहे जलजात में ध्वं^५ ।

न सुने न पईं काहुँ कहूँ कवहुँ कि मयक के अक मैं पकज हूँ^६ ॥६७॥

^१ याहु तो—सा० । ^२ राधिका—बा० । ^३ बंसो—नी० हि०, बंसो—सा० । ^४ ह्वं—

भा० । ^५ ह्वं—ज०, ह्वं—बा०, ह्वं—सा०, ह्वं—नी० हि० । ^६ तवी—भा०,

तये—भा० । ^७ वर बारिधि मैं विवि खजन है पं मयक के अक मैं पकज हूँ—नी० हि० ।

विचार-उदाहरण :

काम कमान तं यान उत्तारिहैं देव नही मघु माघव रँहै^१ ।

कोकिलऊ^२ बल बोल बोल विसारि कं आपु अलोप बहैहै^३ ।

मोहि महादुख दं सजनी रजनीकर औ रजनी घटि जँहै^४ ।

प्राणपियारेऊ^५ ऐहैं धरे पं प्राण पयान कं फेरि न ऐहैं ॥६८॥

^१ व्याघव रँहै—नी० हि० । ^२ कोकिल की—सा० । ^३ अलीप कहैहै—नी० हि० । ^४ मज-

नीकर औ रजनी घरि जँहै—सा०, रजनीकर बंग बडे जरि जँहै—नी० हि० । ^५ प्राण

पियारे तु—भा०, प्राण पियारे जु—नी० सा०, प्राण पियारे को—हि० ।

समाप-उदाहरण :

यह कंधीं कलाघर ही की कला अबला किधीं काम की कंधीं सची ।

किधीं कौन के भीन की दीपसिला सली^१ कौन के भाग के भौनि^२ खँची ।

तिहूँ लोच की सुदरताई की एक अनूपम रूप की^३ रामि मची^४ ।

नर^५ किन्नर सिद्ध सुरासुरहन की कवि^६ कधूनि बिरचि रची ॥६९॥

^१ विधि—नी० हि०, विधी—बा० । ^२ ह्वं भाल—भा०, की भीन—नी० हि० ।

^३ अनूप सरप की—सा० । ^४ रची—नी० हि० । ^५ धीचि—ज० ।

वित्तकं-उदाहरण :

कहु^१ कौन की चपव चारु मता यह देखि मवै जन भूनि रहे ।

कवि देव ए तामै^२ कहा कितसै विवि श्रीफन से^३ धरि घूलि रहे ।

तिहि ऊपर को यह सोम उवो^४ तम तोम चहूँ दिसि भूलि रह ।

चितये चित चोरत कोए^५ तहाँ नवनील सरोज से फूलि रहे ॥१००॥

^१ कहि—नी० हि० । ^२ तोमै—भा० सा० । ^३ सोहे न से—नी० । ^४ उदो—नी०,

उदयो—ज०, नवो—भा० । ^५ चित मैं चित चोरत कोए—भा०, चित चोर क्या धारहि

पीर—नी० हि०

भरतादिब सतकवि कहैं विप्रचारी^१ तंतोस ।

वरनत धन चौनीसयो एव^२ कविन के ईम ॥१०१॥

^१ गचारी—बा० । ^२ चौनीसयों ए—बा०, वरनत पुनि चौनीस ए भवन—नी० हि० ।

छल-लक्षण :

अपमानादिक वरन को कीजे त्रिया छिपाव ।

वरुउवित अतर कपट सो वरन छल भाव ॥१०२॥

१ वृषा—नी० हि० वा० । २ कछू—नी० हि० । ३ वरनहु—ज० भा०, वरणन—नी०, वरनत—हि० ।

उदाहरण

स्पाम सयाने कहावत हैं कही आजु को^१ काहि सयानु है दीन्हो ।

देव कहैं दुरि दौरि^२ कुटीर मे आपनो वर वधू उहि^३ लीन्हो ।

चूमि गई मुख ओचकही पटु सं गई^४ पै इन काहि न चीन्हो ।

छैल भले छल^५ ही मै छने दिन ही मै छवीली भलो छल कीन्हो ॥१०३॥

१ कहीं काहे धौ—का० । २ टेर—भा० सा०, ०—नी०, टेरि—हि० । ३ तेहि—नी० हि० । ४ द्रग—सा० । ५ छिन—भा० सा० का० ।

सका सूया भय^१ ग्लानि घृति सुमृति नीद मति ।

चित्ता विस्मय व्याधि हृपं उत्सुकता^२ जदमति ॥

भद विपाद उन्माद साज अवहित्यहि जानहु ।

सहित चपलता ए विक्षेप सिंगार बखानहु ॥

अरु समान मत^३ समोग मै सकत भाव वरनन करी ।

आलस्य उग्रता भाव हूँ^४ सहित जुगुप्सा परिहरौ ॥१०४॥

१ गर्ब—ज० । २ उत्कठा—वा० । ३ मति अरु समान—ज० ॥ ४ ए—वा० ।

आलस ग्लानि निर्वेद^१ श्रम उत्कठा जड योग ।

सनापसुमृति अवबोधोन्माद बियोग^२ ॥१०५॥

१ अलस ज्ञान निर्वेद—नी० हि०, अल ग्लानि निर्वेद—ज० । २ सका सुमृति मुस्वाम

औ यो उन्माद विदोष—नी० हि०, सका ममरति सुस्वास औ बोधोन्माद विदोष—

सा० ।

इति द्वितीय विलास ।

जो^१ विभाव अनुभाव अरु व्यभिचारिन^२ करि^३ होइ ।

घिति की पूरन वासना^४ सुकवि कहन रम^५ सोइ ॥१॥

१ जे—नी० हि० । २ सचारिन—वा० । ३ के—नी० हि० । ४ घिति के परन तें सब—नी० हि० । ५ है—नी० हि० ।

जोहि प्रथम^१ अनुराग में नहि पूरव^२ अनुराग ।

तो कहिये दपतीन के जन्मान्तर के भाव ॥२॥

१ जोर प्रथम—ज०, जे प्रथमे—नी० हि० । २ पूरन—ज० ।

ताहि विभावादिक्कन तें^१ घिति सपूरन जानि ।

सौनिव और अलौकिकहि द्वै विधि कहत बखानि^२ ॥३॥

भूमिका

१ के—ज० हि० । २ लौकिक ही द्वे विधि कहत कवि भरतादि वस्तानि—का० ।
नयनादित इन्द्रियनि^१ के जा यहि लौकिक जान^२ ।

आतम^३ मन सजोग ते होय अलौकिक ज्ञान^४ ॥४॥

१ पहिचान—नी० हि० । २ मानु—नी० हि० । ३ उत्तम—नी० हि०, आत्मा—ज० ।
४ आन—ज०, जानु—नी० हि० ।

कहत अलौकिक तीन विधि प्रथम स्वापनिक मान^५ ।
मनोरथ कवि देव^६ अरु^७ उपनायक^८ वगवान ॥५॥

१ स्वप्न को नाम—नी० हि०, स्वापनिक जानु—बा० । २ कहि देव—बा० । ३ कहि—
नी० हि० । ४ उपनायकहि—ज० ।

स्वापनिक-उदाहरण ।

मोद गई अभिलाख भरी तिय सापने म^१ निरखे नंदनदन ।
देव कडू^२ हँमि जान कही पुत्रके मुद्रिय भलने जल के वन ।

जागि परी नव ऊठ^३ बधू^४ ढिग ढंडति गूढ मनह सनी धन ।
मोच सँकोच अगोचर तीस^५ भसै विनसै^६ विहँसै मन ही मन ॥६॥

१ अभिनाखन सौं निसि या सुपने—बा०, गपन मनिय—नी० हि० । २ कहै—नी० हि०
३ है नवोड—नी० हि०, तब जेठ—बा० । ४ अगोचरि यत्र—नी० हि० । ५ हँमै हुलसै—
नी०, हँमै जलसै—हि० ।

मनोरथ-उदाहरण ।

कानिदी बून भयो अनुकूल कहूँ घरवार घिरै^१ नहि घेर्या^२ ।
मजुन बजुल माल^३ रमान तमाननि के वन नेन रसेर्यो ।

केनि करोर^४ कदवन बीच तु^५ वानन कुज कुगीन में टेरयो ।
माहनलान की मूरति के मंग डोनन माइ^६ मनोरथ मर्या ॥७॥

१ घरघेर घिरै—नी० हि०, घरवार घिरो—भा०, घरवा घिरै—बा० । २ नाहिन
घिरो—बा० । ३ वेत समान—नी०, वेत रमान—हि० । ४ वरं नी—भा० । ५ मु—
बा० । ६ माय—ज० ।

उपनायक-उदाहरण ।

भूमव दैन^१ जमायनि के जुवतीन^२ की आजु समान मिघायो ।
स्याम को मुदर भेष बनाट की आइ बधू^३ इक वेनु यजायो ।

ज्ञानमे गम रच्यो कवि भेव बिनाम के^४ ही मे हृत्ताम बढायो ।
नाचत वाहि^५ मनी सप्रहीव हिय^६ मुर मिधु को पाग्न पाया ॥८॥

१ रैन—भा० । २ जु अतीन—ज० । ३ म्य—नी० हि० । ४ मनी—नी० हि० ।
५ विनाम के—भा० । ६ नाहि—बा० । ७ मय ही के उर म—बा० ।

लौकिक रस ।

कहत अनौचिन^१ त्रिविधि त्रिवि^२ यहि विधि बुध वनमार^३ ।
अव^४ वग्नन कवि देव कहि नौचिन नव परवार ॥९॥

अव^४ वग्नन कवि देव कहि नौचिन नव परवार ॥९॥

१ मुलीविष—भा० । २ रस—ज०, बुध—वा० सा० । ३ लौकिक वदु बुधि कुबुधि वहि कहियो बुधि बलसार—नी०हि० । ४ अरु—वा० ।

प्रथम होइ सिंगार दूसरो हास्य सु जानहु ।

तीजो^१ करुना कहौ चतुर्थो रौद्र सु मानहु^२ ।

वीर पाँचवो^३ जानि भयानक छठो बखानहु ।

सातवो^४ कहि वीभत्स आठवो अदभुत मानहु^५ ।

यहि भाँति आठ विधि कहत कवि नाटक मत भरतादि सब^६ ।

अरु सात^७ वृत्त^८ मत काव्य के लौकिक रस^९ के भेद नव ॥१०॥

१ तीजे—नी० । २ बहुरि रौद्र रस जानि—हि०, वीर सु जानहु—नी०, रौद्र मानो—सा०, रौद्र जानौ—वा०, रौद्रहि मानहु—ज० । ३ बहुरि रौद्र रस—नी० । ४ मत्तम—नी० हि० । ५ मानहु—नी० हि० । ६ नारद भरतादि बहु—नी०हि० । ७ सब अरु—नी० । ८ दतन—भा०, सुरम—नी० हि०, जुते—ज० । ९ अलौकिक रस—वा०, लोक कर्म के—नी०हि० ।

सकल सार शृंगार है सरस माधुरी धाम ।

स्यामहि के चरनन बरन^१ दु खहरन अभिराम ॥११॥

१ स्यामहि के चरनन बरन—वा०, सो याही बरनन करी—नी० हि० ।

याही ते^२ सिंगार रस बरनि कह्यो कवि देव ।

जाको है हरि देवता सकल देव अधिदेव ॥१२॥

२ ताही तें—सा० ज० ।

शृंगाररस-लक्षण ।

आपुस में तिय पुरप ने^१ पूरन रति जो होइ ।

ताही सो शृंगार रस कहत सुकवि सब कोइ^२ ॥१३॥

१ मिलि—नी० हि० । २ बरनि कहैं कवि लोइ—वा० ।

उदाहरण ।

बारके^१ द्वार तुम्हे सखि कै सयि साल के लोइन सोल रहे^२ खुभि ।

आजु^३ इत पर भेंट भई यहि^४ रोभि रहे^५ कवि देव स्वरी^६ खुभि ।

सँसिय तैं चितई हँसि वै सु^७ रहे छवि नैनन की^८ छति सा छुभि ।

नेह भरी यह प्यारी तिहारी तिरीछी चितोनि गई धित मे खुभि ॥१४॥

१ बारके—ज० । २ लोल भये—नी० हि० । ३ आजु—नी० । ४ लखि—नी० हि० ।

५ रही—सा० ज० । ६ सखी—नी० । ७ हँसि को सु—नी० हि० । ८ नैननमे—नी० हि० ।

इ प्रकार सिंगार रस है सयोग विधोग ।

मो प्रच्छन्न प्रकाम बरि^१ कहत चारि विधि लोग ॥१५॥

१ है रस—नी० हि० । २ कहि—नी० हि० ।

देव कहैं^३ प्रच्छन्न मो जाको दुरो विलास ।

जानहि जाको सबस जन बरनै ताहि प्रवास ॥१६॥

' सु है—नी० हि० ।

प्रच्छन्नसयोग-उदाहरण ।

बाजी हरे^१ रसना रमनेलि में कोमल के विद्ययानि^२ की वानी ।

प्यारी रही परजब निमक हूँ^३ प्यारे के अक महामुख सानी ।

यो पग^४ चाँपि चढी उतरी रंगरावटी आवत जात न जानी ।

छोलि छिपाइ^५ न थोलि हियो कवि देव^६ दुहें दुरि के^७ रति मानी ॥१७॥

^१ बाजि रही—भा० सा० । ^२ वज वियानि—ज० । ^३ निमक के—वा० । ^४ भवें पग—सा०, ज्यो पग—ज० । ^५ छोडि छिपाइनु—मा० । ^६ कहि देव—वा० । ^७ दुहें दुरि के—का० ।

प्रकाश सयोग-उदाहरण ।

मोगे की मुवाय आसपास भरि भोन रह्यो भरत उसाम वास वासन^१ वमात है ।

कवन मनित^२ अगनिन रव विविनीधे नूपुर गनित^३ मिले मनित^४ मुहान है ।

कुडल हलत^५ मुक्कमडल भलमलात भूसत^६ दुबूल भुजमूल महारात है ।

वरत बिहार कवि देव बार बार बार छूटि छूटि जात हार टूटि टूटि जान है^७ ॥१८॥

^१ वसन—नी० । ^२ कनक—नी० हि० ज० । ^३ अगनक—नी० हि० । ^४ मनित—नी० हि० । ^५ लहत—सा० । ^६ कनक—नी० हि० ज० । ^७ कवि देव दत्त दोऊ मिलि छूटि जात बार बार टूटि टूटि जात है—नी० हि० ।

हाव-सक्षण ।

नारिन के सयोग तें होत विविध विधि भाव ।

तिनमे भरतादिक [सुखवि वरनत हैं दम हाव ॥१९॥

हाव-नाम ।

पहिले लीला हाव बहुरि सुविलास वरनिये ।

ताते कहि^१ विछित्त बहुरि विभ्रम^२ कहि गनिये ॥

विलविचित तब कही^३ बहुरि^४ मृटाइत वरनहु^५ ।

ताते बहू कुटमित बहुरि विच्योबहु मानहु^६ ॥

कवि देव कहै किरि ललित बहु^७ ताने विहित कहे सरम ।

एहि भाँनि विविध विधि विबुधवर^८ वरनत हैए^९ हाव दम ॥२०॥

^१ बहू—भा०, बहु—मा० । ^२ विथम—नी० । ^३ को वरनि—नी० हि० । ^४ तब—भा० । ^५ मानहु—भा० । ^६ विहित ता कहि मुनि वरनहु—नी० हि० । ^७ सुपहन विलोक वरि बहे—नी० हि० । ^८ विधि वरनिये—ज०, विधि कविगज वर—नी० हि० । ^९ कवि वर—भा० सा० ।

लीला-उदाहरण ।

कौनुव तें^१ पिय की करे भूपन भेष उन्हार ।

प्रीतम मा पंग्रहाम जहें^२ सोला नेहु^३ विचार ॥२१॥

^१ तिय—वा० । ^२ यह—नी० हि० । ^३ हाव—नी० हि० ।

उदाहरण ।

वाल्हि मटू धनसीवट के तट खेत^१ बडो इन राधिका कीन्हो ।
सांभ निकुजनि मांभ वजायो जुस्याम को बेनु^२ चुराउ कं लीन्हो ।
दूरि तें दौरन देव गये सुनिकं घुनि रोस^३ महा चित चीन्हो ।
सग की औरैं उठी हँसि कं तव हेरि हरे हरि जू^४ हँसि दीन्हो ॥२२॥

^१ ख्याल—नी० हि०, हास—वा० । ^२ बीनु—नी० हि० । ^३ गस—का० । ^४ जु हरे
—का० ।

विलास-लक्षण ।

प्रिय दरसन सुभिरन शयन जहँ अभिलाख प्रकास ।
बदन गमन^१ नयनादि कौ जो विघोष सुविलास^२ ॥२३॥

^१ गमन—भा० । ^२ जो तु सरस विलास—का० ।

उदाहरण ।

जाजु अटा चाँड आई घटानु मैं विज्जुछटा सी वधू वनि कोऊ ।
देव तिया^१ कवि देवन केतिये^२ एको हुलास विलासन ओऊ ।
पूरन पूरव^३ पुन्यन त बडभांग गिरधि रक्यो जन^४ सोऊ ।
जाहि^५ लसै लघु अजन दै दुखभजन दे^६ दुग खजन दोऊ ॥२४॥

^१ तिया—सा० । ^२ देवजू केतिय—नी०, देवन केती व—का० हि० । ^३ पूरव पूरन
—नी०, पूरव पूरव—हि० । ^४ मखि—वा० । ^५ बाहि—सा०, ताहि—ज० । ^६ दुख-
भजन दै—नी० हि० ।

विचिदित्त-लक्षण ।

सुहाग रिस^१ रस रूप^२ ते बढै गर्व^३ अभिमान ।

धारेई भूपन जहाँ मो विचिदित्त खलाल ॥२५॥

^१ पिय सोहाग—नी० हि०, जति रिस—वा० । ^२ मो सरूप—नी० । ^३ गर्भ बढै—
नी० हि० ।

उदाहरण ।

भाग सुहाग को गर्व बढघौ सु रहै अभिमान^१ भरी अलवेली ।
बेसरि बंदी न^२ बेसरि खौरि बनावै न^३ सेदुर सीक^४ सहेली ।
भूलेहू भूपन भेषुन और वरै कहि^५ देव विलास की बेली ।
मोहनलाल के मोहन को यह पँहति^६ मोहनलाल^७ अकेली ॥२६॥

^१ मु नहै अनुराग—वा० । ^२ बदनि—भा० । ^३ बनावन—नी० हि० । ^४ रक सुहेली
—भा०, सोफ सहेली—नी०, सीफ सहेली—हि० । ^५ कवि—नी० हि० वा० ।

^६ पँधति—भा० मा०, पहिरनि—ज०, पहिरे मट—वा० । ^७ मोतिनमाल—नी० हि० ।

विभ्रम-लक्षण ।

उलटे जहँ भूपन वमन^१ बेप हँमै जन^२ जाहि ।

भाग रूप अनुराग मद विभ्रम वरनहु^३ ताहि ॥२७॥

१ उलट जाहि—नी० हि० । २ वचन—भा० सा० । ३ जहूँ—का० । ४ वरतँ—भा० ।

उदाहरण ।

स्याम सो केनि करी निसि सोन तँ^१ प्रात उठी यहराड कं ।
आपने चौर के घोखे बधू पहिरयो पट्टु पीत भट्टू भहुराड कं ।
वांधि लई कटि मो वनमानन किविनी बाल लई ठहराड कं ।
राधिका की रम रग बी दीपति सग की हरिहंसो हहराड कं ॥२८॥

१ सोवत—नी० हि० ।

क्लिक्वित्त-लक्षण ।

क्लिक्वित्त में षपलता नहि कारज^१ निरधार ।

श्रम मद^२ भय अभिनाप अर^३ सुमृत गर्व^४ इषवार ॥२९॥

१ काज—नी० हि० । २ सप्र दम—भा०, श्रम मुद—का० । ३ रव—भा० सा०ज० ।

४ नखमित गई—मी० ।

उदाहरण ।

पाइ परे पविना पै^१ परी तिय सकति मौनिन होति न मौही^२ ।
ऐचि कनी^३ पृफुंदी की फुंदी भुज दावि दुहँ छतियाँ हलसोही ।
कांति कपोननि चांपि ह्येरिन्ह^४ भांपि रही मुख^५ डीठि^६ लसोही ।
त्यः मबुचोही उचोही^७ रचोही समोही हंसोही रिमोही^८ रमोही^९ ॥३०॥

१ पलगा पै—भा० । २ सवित कपत सोतिन सौंटी—का०, हीतिन सौंटी—मी० हि० ।

३ औचकही—नी० हि० । ४ अलमोही—मा० । ५ रहे धिर—नी० हि० । ६ हांघि ह्येरिन्ह सो मुख—नी० हि० । ७ योही—नी० हि० । ८ ०—नी० हि० । ९ सिमोही—नी० हि० ।

मोटाइत-लक्षण ।

सौति^१ राम कुल लाज ते कपट प्रेम मन होइ^२ ।

मुमुल होइ चित विमुल हू^३ वही मोटाबितु सोइ ॥३१॥

१ सौह—नी० हि० । २ प्रमान जु होइ—ज०, प्रेम नहि होइ—मी० हि० । ३ सनमुल हूँ चितवै जु मुख—नी० हि०, मन्मुख हूँ न विमुख हूँ—का० ।

४ हूँ चितवै जु मुख—नी० हि०, मन्मुख हूँ न विमुख हूँ—का० ।

उदाहरण ।

राधिका सठी कछू दिन तँ कवि देव कछू^१ न मृनं कछू^२ बोलं ।

नैकु चिनोनि नही चितु दै रम हाम^३ त्रियेहू हियेहू न^४ बोलं ।

आवति लोच को लान के वान यही भिग सौतिन को मुख^५ छोलं ।

स्याम के अग मो अग लयावै न^६ रग मै^७ मग मगीन के^८ डोलं ॥३२॥

१ बधू—भा० । २ नहि—नी० हि० । ३ हान—भा० । ४ हियेहू खोत्रं—सा०, हियो नहि—नी० हि० । ५ गीनिन को मुख—नी० हि०, गीनिन स्वारथ—का० । ६ अग सृयावै न—नी० हि० । ७ रग मा—का० । ८ मगीन मै—का० ।

कुटमित-लक्षण ।

कुच ग्रहन^१ रददान तें उत्कठा अनुराग ।

दुखहू में मुख होइ जहें कुटमित कहूँ सभाग ॥३३॥

^१ कुच ग्रहन—भा०, कुच ग्रहनख—नी० हि० । ^२ कुटमित कहूँ—भा०, कहि कुटमित—हि० ।

उदाहरण ।

नाह सो नाही बकं मुख सो^१ मुख सो रति^२ वेलि करै रतिया में ।

देत रदच्छद सीसी करै कर ना पकरै^३ पै बकं^४ वतिया में ।

देव किते^५ रति कूजित वं तन कप सजै न^६ भजै छतिया^७ में ।

जानु भजानहू को^८ महारावति आवति छैल लगी छतिया में ॥३४॥

^१ कड़ै मुख सो—नी० हि०, ककं मुख सो—भा० । ^२ रस—का० । ^३ करना यकरै—सा० ज० हि० । ^४ जु बकै—का० । ^५ देत किते—नी० हि० देव हिते—सा० । ^६ तजै न—नी० हि० । ^७ छतिया—भा० । ^८ भुजानहू के—का० ।

बिम्बोक-लक्षण ।

भ्रिय अपराध घनादि मद^१ उपजै गवं विकार^२ ।

कुटिल डोठि अवयव चलन^३ सो बिम्बोक विचार ॥३५॥

^१ अपराधी होइ जब—नी० हि० । ^२ किवार—भा० सा० । ^३ अवये वचन—नी० हि०, अरु अघवचन—ज०, अवहित्य जहू—का० ।

उदाहरण ।

स्वामले^१ सौति के सँग बसे निसि अँगन वाहि के रग रचाइ कै ।

थाए इतै परमात लजात से बोलत लोचन सोल लचाइ कै^२ ।

देव को देखि कै दोष भरे तिय पीठि दई उत दीठि बचाइ कै ।

ज्यो चितई अरसोहैं रिसोहैं सु सोहैं^३ सखीन के भौहैं नचाइ कै ॥३६॥

^१ सांवरे—ज० । ^२ चलाइ कै—सा० । ^३ सो सोहैं—नी०, से सोहैं—हि० ।

ललित-लक्षण ।

मन प्रसाद पति बस करन^१ चमत्कार अति^२ होइ ।

सकल अग रचना ललित ललित बखाने सोइ ॥३७॥

^१ अति वास कर—नी० हि०, पिय बस करत—जा० । ^२ चित—भा० सा० ।

उदाहरण ।

पूरि रहे पहिले पुर^१ कानन पौन के मोन सुगन्ध^२ समाजनि ।

गान सो गुज निकुञ्ज उठे कवि देव सु भोरनि^३ की भई^४ भाजनि ।

दूरि तें देखी मसाल सो बाल मिली^५ मुस भूपन वेप विराजनि^६ ।

जानि परी वृषभान सुता जब कान परी विछियानि की धाजनि ॥३८॥

^१ पहिले मुर—नी०, पहिले सुत—हि०, पहिले उर—ज० । ^२ सगधि—सा० ।

^३ बड़ै—नी० हि० । ^४ सु भोर—मा० । ^५ की भय—नी०, पय भय—हि०, भई भय—

सा० । १ वली मु लना—ज० । २ मुख की टुनि चद विराजनि—का० ।

विहृत-लक्षण ।

व्याज लाज तें चेष्टा और^१ और व्यवहार^२ ।

पूरे पिय अभिनाय निय ताही^३ विहृत विचार ॥३६॥

१ ऊठ अह—नी० हि० । २ विचार—भा० मा० । ३ ते ता कह—नी० हि० ।

व्याजविहृत-उदाहरण ।

वृषभान की आई बन्नाई के कौतिक^१ आई मिंगार मर्व मजि कं ।

रम हाम हुलाम विलामनि मों कवि देव जू^२ दोऊ रहे रंजि कं ।

हरि जू हीमि^३ रग मी^४ अग^५ छुयो निय सग मलीन^६ को^७ तजि कं ।

उठि घाई मटू भय के^८ मिम^९ भावनी^{१०} भीनरे भीन गई मजि कं^{११} ॥४०॥

१ कौतिक—भा०, केनिव—नी० हि० । २ कहि देव जू—नी० हि० । ३ हरि हू हरि

—नी० हि०, हरि जू हरि—मा० । ४ रग सो—नी० हि० । ५ ग्य—का० । ६ सलीन

को ना—नी० हि० । ७ सवके—नी० हि० । ८ वम—ज० । ९ घावनी—नी० हि० ।

१० भजि गई मजि कं—नी० हि० ।

साजविहृत-उदाहरण ।

मेट मई हनि भावनी मो^१ इक ऐमे में जाली कह्यो विहमाइ कं ।

कीजं सगा रम वेलि^२ अकेली ए^३ केनि के भीन नवेली को पाइ कं ।

मोंहें अमाइ बछू इतराट बछू^४ रिमाइ बछू मुमबयाड कं ।

मंवि छरी दई दोरि^५ सगी के उरोजनि बीच मरोज फिराड कं ॥४१॥

१ भावते सो—नी० हि० मा० । २ रस रीति—का० । ३ अकेली कं—नी० हि० ।

४ दोरि—ज०, डेरि—का० ।

वियोग-शृंगार ।

मुहद श्वन दरमन परम जहाँ परस्पर नाहि ।

सो वियोग शृंगार जहें मिलन आस मन माहि^१ ॥४२॥

१ श्वन बदाचिन के दरम परे परस्पर नाहि । मिले न मुहद मनेह मो जहें सु वियोग बदाहि—का० ।

वियोग-शृंगार-भेद ।

बहु पूरव अनुराग अरु मान प्रवाम वरान ।

परनातम^१ एहि मानि करि वियोग चौबिधि जान^२ ॥४३॥

१ करणा भूम—नी० हि० । २ चारि वियोग विधान—का, विप्रलम्ब को जान—नी० हि० ।

पूर्वानुराग-लक्षण ।

दपनीन के^१ देहि मुनि^२ बडे परस्पर प्रेम ।

मो पूरव अनुराग जहें मन मिलिये को नेम ॥४४॥

१ दपनीन में—का० । २ देने मुने—हि० ।

दर्शन-उदाहरण ।

देव जू दोऊ मिले पहिले दुति देखत ही तें^१ सभे दृग माढे ।
आगे ही तें मुन रूप सुने तबही तें हिये अभिलाप ह्वें^२ वाढे ।
ता दिन तें इत रात्रे उतें हरि आघे भये जु बियोग के वाढे ।
आपने आपने^३ ऊंचे अटा चडि द्वारन शोऊ^४ निहारत छाढे ॥४५॥

^१ देखत ही जु—का० । ^२ अभिलापहि—भा०, अभिलाखनि—ज० । ^३ ०—का० ।

^४ दोऊ कुमार—का० ।

श्रवण-उदाहरण ।

सुदरता सुनि देव दुहें के रहे गुन सो गुहि क मन मोती ।
लाने हें देखिबे को दिन रात गिने गुरूह नहि सी किन गोती^१ ।
देह^२ दुहें की दहे बिनु देने सु देखि दमा निंसि सोवत कोती ।
होती वहा हरि राधिका सो बहूँ नैकी बई पहिचान जो होती ॥४६॥

^१ न हँसै किन गोती—नी० हि०, न हँसौ किन गोती—सा० । ^२ देव—भा० सा० ।

कृष्ण पूर्वानुराग उदाहरण ।

बाल लतान^१ मैं बाल को बोल सुन्यो कहूँ सग सगीने के डेरत^२ ।
बाहू कही हरि राधा यही डुरि^३ देवजू देखि इत मुख फेरत ।
है तबते पल एक नही फल लाखनि सौ^४ अभिलाखनि घेरत ।
बाही^५ निकुञ्जहि नद कुमार घरीक मैं वार हज्जारक हेरत ॥४७॥

^१ सोल लतान—का० । ^२ हेरत—ज० । ^३ डरि—ज०, कवि—नी० हि० । ^४ लाखनि हू—का० । ^५ पाही—भा० सा० का० ।

राधिका पूर्वानुराग-उदाहरण ।

सांसनि ही सौ सगीर गयो अर आसुन ही सब नीर गयो डरि ।
तेज गयो गुन सँ अपना अर भूमि गई सन की तनुता भरि ।
देव जियै^१ मिलिबेहीनी आस कि आसहू पाम अवास रह्यो भरि ।
जा दिन तें मुख फेरि हरे^२ हँसि हेरि हियो जू लियो हरि जू हरि ॥४८॥

^१ जीय रह्यो—नी० हि० का० । ^२ हरे—सा० ज० हि० ।

वस शदा-नाम ।

प्रथम बहो अभिलाप बहुरि चिता सुमिरन बहु ।
ताते हें^१ मुन बधन बहुरि उद्वेगहि बरनहु ।
फिर^२ प्रलाप उन्माद व्याधि अर जडता जानौ ।
बहुरि मरन यहि भाँति दमावस्या^३ उर आनौ ।
ए हाद^४ पूर्व अनुराग में दोऊन के कवि देव बहि ।
अर^५ मरन न बरनत एव^६ कवि जो बरनैं तो रसहि गहि ॥४९॥

^१ पुनि—नी० हि० । ^२ अवस्था दस—भा० मा० । ^३ यहि—नी० हि० । ^४ अर एव—

भा० । ^५ ०—भा० ।

चिन्ता जटता व्याधि अह मुमिरन भरनुन्माद^१ ।
सचारिन में हैं कहे दपति विरह विपाद ॥५०॥

^१ जटनुन्माद—नी०, ऊ उन्माद—हि० ।

अभिलाष लक्षण ।

प्रीतम जन के मिलन की इच्छा मन में होय ।
आकुलता सत्त्व बहु^२ कहु अभिलाष जु सोय ॥५१॥

^१ मन की—ज० । ^२ सकुलय बहुरि—ज० ।

उदाहरण ।

पहिले सतराइ रिस्ताइ सली जदुराइ र्व पाइ गहाइये तो ।
किरि भेंटि भट्ट भरि अक् निसक बढे खन लौं उर लाइये तो ।
अपनो दुप औरनि^१ की उपहास सर्व कवि देव बताइये तो ।
घनस्यामहिनेकहु^२ एक घरी की दहां लगि जो करि पाइये तो ॥५२॥

^१ औरति—ज० । ^२ तेकहि—ज० । यायतो—ज० ।

गुणकथन लक्षण ।

पिय के सुदरतादि गुन बरनै प्रेम^१ सुभाइ ।
सामिलाप सो^२ गुन कथन^३ बरनत कोविदराइ^४ ॥५३॥

^१ सर्व—नी० हि० । ^२ सामिलाप जो—भा० । ^३ गुन कथा—सा० । ^४ कोविद गाइ—
हि० ।

उदाहरण ।

दामिनि हूँ रहिये^१ मन आवत मोहन को घन सो तन धरे ।
देव^२ को देखिये री दिन रातिहू कोई करी किन कोटि कटेरे^३ ।
स्याम की सुदरताई कहीं कछु होहि जो जीम हजारक^४ मेरे ।
केवल वा मुख की सुपमा पर सौक^५ समी गहि वारि के फेरे ॥५४॥

^१ रहिजो—नी० हि० । ^२ वाही—भा० सा० । ^३ कटेरे—भा०, कहेरे—नी० ।

^४ हजारन—भा० । ^५ कोटि—भा० सा० ।

प्रलाप-लक्षण ।

अति उत्कठा मन भ्रमन पिय जनही को जाप^१ ।
देव कहे कोविद सने बरनत^२ ताहि प्रलाप ॥५५॥

^१ लाप—भा० । ^२ वाचहू—वा० ।

उदाहरण ।

पुवारि कही में दही बोट लेहु गरी मुनि आइ गयो उन घाई^१ ।
चित्त कवि दव अलेई चने^२ मन मोहन^३ मोहनो तान सी गाई ।
न जाननि और कछु तवनें मनमाहि वहीयै^४ रही छवि छाई ।
गई तो इती दवि यचन बीच^५ गयो हियरा हरि हाय रिवाई ॥५६॥

^१ इत घाई—नी० हि०, जदुराई—ज० । ^२ चित्त चने—नी० हि०, चलोई चनो—

का० सा० । ३ मोहनी—भा० । ४ वही पै—भा० सा० ज० हि० । ५ वीर—भा०,
कोसु—का०, नीच—नी० हि० ।

उद्वेग-लक्षण ।

जहँ प्रियजन के अनमिले होइ अनादर प्रान ।

भनी वस्तु नागा लगे सो उद्वेग बखान ॥५७॥

उदाहरण ।

बिरह के घाम ताई बाम तजि घाम घाई पाई प्रतिकूल कूल कालिंदी की लहरी ।
याते न अन्हाई^१ जरै जोवत^२ जुन्हाई ताते चितै^३ चहुँ ओर देव न्है यहै हहरी ।
बारिज बरत^४ बिन बारे वारि^५ बाह बीच बीच बीच बीचिका^६ मरीचिवा सो छहरी ।
चउ^७ मारतइ कै^८ अखड विधु मडल^९ है कातिक की राति किचौ जेठ की दुपहरी ॥५८॥
१ या तेज अन्हाति—नी०, याते न अन्हाति—हि० । २ जोवन—भा० ज० । ३ तचि-
लकै—नी०, न चिलकै—हि० । ४ बरज—नी० हि०, बरन—ज० । ५ वीर—नी०
हि० । ६ कामरी—ज०, कामकी—सा० । ७ चउ—ज० । ८ सो—का० । ९ ब्रज
मडल—भा० का० ।

मान-लक्षण ।

पति परपतिनी रति करत^१ पतिनी करति जु मान ।

गुरु मध्यम सधु भेद बरि ताह विविधि^२ बखान ॥५९॥

१ करन—ज० । २ ताहि अवध्य—नी० हि० ।

मान-भेद ।

पति पर परतिय^१ चिन्ह लखि करति त्रियागुरु मान ।

मध्यम ताको नाम सुनि ता दरसन^२ सधु जान ॥६०॥

१ रति तिय—नी० हि०, पति तिय—ज० । २ दरसन ता—नी० हि० ।

गुरु मान-उदाहरण ।

सौति की^१ माल गुपाल गरे लखि बाल कियो भुव रोष^२ उज्यारो ।

भीही भ्रमी करिकै^३ अधरा निकस्यो रंग नैननि न मग ग्यारो ।

यो^४ बवि देन निहारि निहोरि दौऊ कर जोरि परयो पग प्यारो ।

पी को उठाइ के प्यारी कह्यो तुमसे नपटीन को काहि^५ पर्यारो ॥६१॥

१ मोती की—नी० हि० । २ रोजु—नी० हि० । ३ भ्रमै फरकै—नी० हि० । ४ ज्यो—
का०, त्यो—भा० । ५ कौन—नी० हि० ।

मध्य मान-उदाहरण ।

बाल ने सग गोपाल कहूँ निखि सोवत^१ सौति को नाम उठे पढि ।

यो^२ सुनि के पटु तानि परी तिय^३ देन न्है मन^४ मान गयो बढि ।

जागि परी^५ हरि जानी रिसानी सी सी^६ प्रतीति बरी चित में चढि ।

आसुन मो मताप^७ बुझ्यो अरु सामन सो सब कोप गयो बढि ॥६२॥

१ मिंग मोन में—भा० मा० । २ प्यो—सा० । ३ बवि—वा० । ४ इमि—भा० ।

५ परे—सा० । ६ तन ताप—नी० हि० ।

सधु मान-उदाहरण ।

बैठे हुते रंगरावटी में जिनके अनुराग रंगी ब्रजभूम्यो ।
किंकिनी काहू कहुँ भनकाई सु भानन कान्हुँ भरोखा हूँ भूम्यो ।
देव परत्रिय देखत देखि कँ राधिका को मन मान सो भूम्यो ।
वार्त बनाइ मनाइ कँ लाल हँसाइ के बाल हरे मुख चूम्यो ॥६३॥

१ काहू—भा० सा० का० । २ दोष कँ—नी० । ३ बागिनी—नी० हि०, भावती का० ।

मान-मोचन-उपाय ।

साम दाम अह भेद करि प्रनति उपेच्छा भाइ ।
अह प्रसग विभ्रसते ये मोचन मान उपाइ ॥६४॥

१ पुनि—वा०, अह—ज० । २ विध्वस—नी० हि० सा० ।

साम छमापन सो बडे इष्ट दान सो दान ।

भेद सखी सम्मत मिलै प्रनति नम्रता जान ॥६५॥

१ को—भा० सा० । २ हर्ष दान—नी० हि०, दष्ट दान—ज० । ३ समते—का सभता—नी० हि०, सम्मति—ज० । ४ ऊनता—वा० ।

वचन अन्यथा अर्थ जहँ सो उपेक्षा की रीति ।

सो प्रसग विभ्रसते जहँ अकस्मात् सुख भीति ॥६६॥

१ होइ उपेक्षा रीति—ज०, सुनुपेक्षा की रीति—भा० । २ विध्वस—नी० हि० व सा० । ३ अकर्मादि—वा० ।

उदाहरण ।

आपनोई अपमान कियो पहिराइबे को मनमास भंगाई ।
सँ मिलई मिस सो कुसखी करि पाय परेहू न प्रीति जगाई ।
बेतिक नीतिक वातै कही कवि देव तऊ तिय लोरी सगाई ।
भाजु अचानक आइ सला बरवाइ कँ राधिका कठ लगाई ॥६७॥

१ सौ सौ सखी—नी० हि० । २ फिरि—सा०, यह—ज० । ३ परेऊ न—भा०, व की—नी० हि० । ४ नीतुक—ज० हि०, नीतिक—सा० । ५ कहू—नी० हि० । ६ तिव—नी० हि० । ७ सारी सजाई—नी० हि० । ८ उरसाइ कँ—ज० ।

या विधि छऊ उपाय हैं न्यारे न्यारे जान ।

लापव तँ एव त्रही सबको कियो बलान ॥६८॥

१ घन—ज०, छुव—हि० । २ लापवता इकवार ही—नी० हि० ।

देसबाल सबिदोष लखि देमि नृत्य मुनि गान ।

जात मनाये हू बिना मानिनीनु को मान ॥६९॥

१ मानिनि तिय—नी० हि० ।

उदाहरण ।

रुठि रही दिन द्वैक तें भागिनि यानी^१ नही हरि हारे गनाइ कै ।
 एक दिना कहूँ कारो^२ अँध्यारी घटा धिरि आई घनी घहराइ कै^३ ।
 ओर चहूँ पिव चातक मोर के सोर सुनी सु उठी अकुलाइ कै ।
 भँटी भटूँ उठि भावते को घन^४ घोषे ही घाम अँधेरे में घाइकै ॥७०॥

^१ मानं—नी० हि० का० । ^२ राति—सा० । ^३ गहराइ वं—सा० । ^४ बहू—भा० ।

^५ इन—का० ।

प्रवासविद्योग-लक्षण ।

प्रीतम काहू काज दै अवधि गयो^१ परदेस ।
 सो प्रवास जहँ दुहुन को^२ कष्ट कहै^३ विवधेस ॥७१॥

^१ कियो—नी० हि० । ^२ दुहू तन—का० । ^३ दुख कहै—नी० हि० ।

उदाहरण ।

लाल विदेस सु बालबधू यह भाँति वरी^१ विरहानलही में ।
 लाज भरी गूहकाज करै कहि^२ देव परं न कहूँ^३ कल ही में ।
 नाय के हाय के हेरि हरा हिय लागि गई हिलकी गलही में ।
 आँखिन के अँसुवा लखि लोग नखीलि लजीसी लिय पलही में ॥७२॥

^१ बहू जात जरी—नी० हि० । ^२ कवि—मी० हि० । ^३ कहै न परं—नी० हि० ।

^४ बाल—का० ।

देव कहै बिन मत बसत न जाहू कहूँ घर बैठि रहौरी ।
 हूक हिये^१ पिक कूक सुने^२ विष पुज निकुञ्जनि^३ गुञ्जति^४ भौरी ।
 नूतन नूतन के वन बेपन देखन जाति तौ ही^५ बुरि वीरी ।
 वीर बुरी भति भानी बलाइ ल्यो होहुँगी वीर^६ निहारत वीरी ॥७३॥

^१ हो कहिये—ज० । ^२ कूकन सा—सा० । ^३ कुञ्जनि के जनि—नी० हि० ।

^४ बोलति—का० । ^५ ही तौ—नी० हि०, हूँ ही—सा० । ^६ जनि—नी० हि० । ^७ वीरी—नी० हि०, वीर—ज० ।

जागी न जुन्हैया यह आगी^१ मदनउबर की^२ लागी सोक तीनो हियो हेरे^३ हहरतु है ।
 पारि^४ परजारि जल जतु जारि^५ बारि बारि बारिधि हूँ^६ वाडव पताल पसरतु है ।
 भरनि तें^७ धाइ अर पृटी^८ नभ जाइ^९ व है देव जाहि जोवन^{१०} जपत ज्यो जरतु है ।
 तारे बिनगारे ऐसे चमकत चारी ओर वंरी विषु मडल भभूवो सो बरतु है ॥७४॥

^१ जुहवाई लागी आगि—नी० हि० । ^२ मनोभव की—नी० हि०, मदन की—का० । ^३ हेरि हेरि—नी० हि०, हियो हेरे—सा० । ^४ बारि—नी० हि०, पीर—सा० ।

^५ जरे अनजात जरि—नी० हि०, जारि जलजत जारि—ज० । ^६ बारिधि के—नी० हि०, बारिधि हू—सा० । ^७ धरती तें—भा० सा० । ^८ भुर ररि पृटी—ज०, लाई भरि पृटी—नी० हि० । ^९ जाहि जोवन—ज०, याहि जियत—नी० हि० ।

व्याकुल ही^१ विरहज्वर^२ सो सुभ पावन जानि जनीनु^३ जगाई ।
घोरि^४ घनो रग बेसरि को^५ भहि बोरी गुलाल के रग रंगाई^६ ।
त्या तिय^७ सांग लई गहरी बहि री उनसो^८ अत्र कौन सगाई ।
ऐमे भये निरमोही महा हरि हाय हमें विनु^९ होरी लगाई ॥७५॥

^१ है—नी० हि० । ^२ विरहानल—का० । ^३ सखीन—नी० हि० । ^४ घेरि—
नी० हि० । ^५ बेसरि को—सा० । ^६ गुलाल में बाल लगाई—नी० हि० । ^७ सौतिय
मास—सा०, ०—नी० हि० का० । ^८ उनसो हमसो—नी० हि० का० । ^९ हरि—
नी० हि० ।

नाचकवियोग-उदाहरण ।

सुधाकर^१ से मुख दानि सुधा मुसक्यानि सुधा वरसै रदपाति ।
प्रवाल से पानि मृनाल मुजा कहि देव लता तन^२ कोमल काति ।
नदी निवसी कदली जुग^३ जानु सरोज से नैन रहे रस माति ।
छिनो भर ऐमी तिया बिछुरे^४ छतिया सियराज कही बेहि भाति ॥७६॥

^१ सुधामर—का० । ^२ सतान को—भा० सा० । ^३ जानु—नी० । ^४ छिनो भरि ऐमी
छवीली छुटे—का०, जुपं बिछुरे छिन ऐसी तिया—नी० हि० ।

करुणात्मक वियोग-लक्षण ।

दपतीन मैं एव को विषम मूरछा होइ ।

जहँ अति व्याकुल दूसरो^१ करुणात्मक कहि^२ सोइ ॥७७॥

^१ दूसरो अति व्याकुल जहँ—का० । ^२ कहि करुणा रस—नी० हि० ।

उदाहरण ।

कत की वियोगिनि बसत की सुनत बात व्याकुल ह्वै जाति विरहज्वर^१ मो जरिबै ।
देव जू दुरत^२ दुखदाई देवो आवतु सो तामें तुम्है^३ न्यारी भई^४ प्यारी जँहै^५ मरिबै ।
ऐसी सुनि प्यार कछो हाय हाय ऐसी होय^६ अपराधी कौन कही सो^७ सुघरि बँ ।
हरि जू ता हेर जो लौं फेरि कहै दूती^८ कछु डेरि उठी तूती लौं^९ तुहो तुही करि बँ ॥७८॥

^१ विरहानल—नी० हि० । ^२ दुरत—नी० हि० । ^३ तिन्है—ज० । ^४ न्यारी होन—
नी० हि० । ^५ जँहै—ज० । ^६ ऐसी भई—ज० सा०, ऐसी ह्वै—नी० हि० । ^७ कहो
जू—नी० हि० । ^८ कहीं दूरही तें कछु—नी० हि० । ^९ ०—नी० हि० ।

गोकुल गाँव त गौन गुपाल का बाल कहँ सुनि आई अली पर ।

व्याकुल ह्वै^१ विरहानल मा तजि^२ घूमि गिरा गुनगौरि गली पर ।

हाइ पुकारत आइ^३ गए न सम्हारत के बिग नाहि^४ यनी पर ।

जानि नकाट की बानि करी हरि जानि^५ मिर वृषभान लली पर ॥७९॥

^१ देव कहै—का० । ^२ तजि—नी० हि० ज०, तजि—भा०, बरि—का० । ^३ घाइ—
भा० । ^४ ताहि—सा० हि० । ^५ हाय—नी० हि० ।

वालिम बाल महा विष व्याल^१ जहाँ जन ज्वाल जरं रजनी दिनु ।

करुण के अथ के उवरे नहि जाकी बयारि बरं तख ज्या तिनु^२ ।

ता फनि की फन फांसिनु पै फेदि जाइ फेरे उक्से^१ न कहुँ^२ छिनु ।

हा^१ ब्रजनाथ सनाथ करो हम होती हैं नाथ अनाथ^२ तुम्है विनु ॥८०॥

^१ महा विकराल—सा० । ^२ तनु—का० । ^३ फेस्यो उक्स्यो—नी० हि० । ^४ अजौ—नी० हि० । ^५ हे—सा० । ^६ अनाथ पै नाथ—भा० ।

जहाँ आस जिय जियन^१ की सो करुनातम^२ जानु ।

जामे निहचै^३ मरनु को करुना ताहि बखानु^४ ॥८१॥

^१ जान—नी० हि० । ^२ करुणारस—नी० हि० । ^३ परचं—का० । ^४ सो करुणा रस जानु—नी० हि० ।

वरुणातम^१ सिगार जहें रति अरु सोक निदान ।

केवल^२ सोक जहाँ तहाँ भिन्न^३ करण रस जानु ॥८२॥

^१ करुणात्मक—सा० । ^२ रति विनु—का० । ^३ मुद्ध—का० ।

या विधि^१ बरनत चारि विधि रस बियोगसिगार ।

याते वहे न और रस बाढत^२ बहु विस्तार ॥८३॥

^१ पाते—का० । ^२ बाढै—भा० ।

रस सयोग बियोग को यहि विधि करहुँ बखान ।

या रस विनु सब रस विरस कवि सब^१ नीरस जान ॥८४॥

^१ सो—ज० ।

इति तृतीय विलास ।

भाव सहित सिगार को जो कहियत^१ आधार ।

सो है^२ नायक नायिका ताको करत विचार^३ ॥१॥

^१ कहियतु है—सा०, ता कहियतु—का० । ^२ साई—सा० । ^३ कहन उचार—नी० हि० ।

नायक कहियतु चार विधि सुनत जात सब खेद^१ ।

चौरासी अर तीन सँ कहत नायिका बेद ॥२॥

^१ कहत सुनत श्रुति खेद—का० ।

नायक-भेद ।

प्रथम होइ^१ अनुकूल अरु दक्षिण अरु सठ धृष्ट ।

या विधि नामर चार विधि बरनत ज्ञान^२ गरिष्ट ॥३॥

^१ वहाँ—सा० । ^२ बुद्धि—का०

अनुकूल-लक्षण ।

निज नारी सनमुख सदा विमुक्त विरानी वाम ।

नायक गो अनुकूल है ज्या सीता को राम^१ ॥४॥

^१ श्री सीताराम—का० ।

उदाहरण ।

पीत पटी लीं कटी^१ लपटी रहै छैल छरी लीं खरी पकरी है ।
कान्हे के कठ की कठी भई बनमाल हूँ बाल हिये पसरी है ।
कान लगी कवि देव हूँ कुडल^२ बांमुरी लीं^३ अधरान घरी है ।
मूड चटी सिरमौर हूँ री^४ गहनो सब भ्वालि गोपाल करी है ॥५॥

^१ ल बुटी—ज०, ल कुटी—भा० । ^२ देव जू कुडल हूँ लगी काननि—नी० हि० ।

^३ बांमुरी लीं—नी० । ^४ सिर मोहन हूँ री—ज० ।

दक्षिण-लक्षण ।

सब नारिन अनुकूल सो^१ यही दक्ष की रीति ।
न्यारे^२ हूँ सब सो मिलै करै एक सी प्रीति^३ ॥६॥

^१ अनुकूल लीं—नी० । ^२ न्यारी—भा० । ^३ रमै दक्षिण की यह प्रीति—नी० ।

उदाहरण ।

सौगुने सील सुभाइ भरे जिनके जिय औगुन एक न पावै ।
मेरिये वात सुनै समुझै मनभावन मोहि महा मन भावै ।
देव की चित्त चितौनि न चचल चचलनैनी कितौ चितवावै^१ ।
आंखिहू राखेहू ना एरक^२ हरि क्यो तिन्है लोक अलोक^३ लगावै ॥७॥

^१ ये चचलनैनी कितौ चितवावै—सा० । ^२ आंखिहू आंखि नहीं गवरक^३—नी० ।

^३ लीक अलीक—भा० ।

शठ-लक्षण ।

आगे आपुन^१ हूँ रहै पीछे करै चवाव ।
दोप भरो कपटी बुटिल सठ को यही^२ सभाव ॥८॥

^१ अपनो—नी० । ^२ याको यहै—नी० ।

उदाहरण ।

रानि रहै रति मानि कहूँ जर दोप^१ भरो नित ही इत आवै ।
जो कहिये रि कहा है कही^२ तब भूठी हजारक बान बनावै ।
और मी^३ और के आगे कहै कवि देव जू भोरी सी मोहि मुनावै ।
या^४ सठ को हटको न भट उठि भोर की^५ वार किवार खुलावै ॥९॥

^१ अपराध—का० । ^२ कहा बक ही—का० । ^३ और से—नी० । ^४ या—का० ।

^५ भोरहि—का० । ^६ ऐसो सुभाव परो हरि को अब युचिन अनंजन आइ बनावै—

नी० ।

धृष्ट-लक्षण ।

दोप^१ भरो प्रत्यक्ष ही सदा कर्म अपट्ट ।
सहै मार गारी रहै^२ निलज पांड पणि धृष्ट ॥१०॥

^१ दो नय—नी०, दोपन—हि० । ^२ लहै—नी० हि० ।

उदाहरण ।

द्वार तें दूरि करी^१ बहु वारनि हारनि बांधि भूनालनि मार्यो ।
छांडत^२ ना अपनो^३ अपराध असाधु सुभाव^४ अगाध^५ निहार्यो ।
वैरिनि मेरी हंस^६ सिगरी ज्व पाई परं सु टरं नाहि टार्यो ।
ऐसे अनीठ सो^७ ईठ कहै यह ढोठ बसीठिनि हो की दिगार्यो ॥११॥

^१ दूरि कह्यो—नी० हि० । ^२ मानतु—का० । ^३ ०—ज० । ^४ असाधु कुभाव—
ज० । ^५ असाधु—नी० हि० । ^६ मे हर्म—नी०, मेरी हमे—हि० । ^७ अनीठ को—
नी० हि० ।

मर्म सचिव-लक्षण ।

मर्म सचिव^१ नायक सखा^२ तीन भाति^३ को सोइ ।
पीठ मर्द अरु बिट कहे और विदूषक होइ ॥१२॥

^१ मर्म सचिव—का० । ^२ सदा—का० । ^३ सघातन—का० ।

पीठ मर्द-लक्षण ।

दूर होइ जा बात में माननीन^१ को मान ।
मोई सोई जो कहै^२ पीठि मरद सु बखान ॥१३॥

^१ माननिहू—नी०, मानवतिन—हि० । ^२ करै सदा—का० ।

उदाहरण ।

देखि जिन्हें उमर्ग अनुराग सु फूलि रह्यो वन बाग चहूँ है^१ ।
मानु तजौ री पुकारि पिफी कहै^२ जोवन की करिबे न अहूँ है^३ ।
सोर करं सय ओर^४ असीगन कोप कठोर हिये अजहूँ है ।
देखौ जु बूझि^५ मने अपनेहू को ऐसी समी सपनेहू कहूँ है ॥१४॥

^१ यहू है—सा० । ^२ मान तजोरि पुनेरि पुकी कहै—ज० । ^३ करिये नूपहू है—नी० हि०,
करिये न कहू है—सा० । ^४ कुज गलीनु मै गुजै—का० । ^५ जो बाहि—नी० हि० । जप-
नेहू—नी० हि० ।

बिट-लक्षण ।

दचन चानुरी को रबै जानै सबल बलानि ।
ताही सो बिट सचिव यहि कविबर कहत बखानि ॥१५॥

उदाहरण ।

जाहि जर्ष त्रिपुरारि मुरारि^१ मर्व असुरारि मुरारि हने हैं ।
जावे प्रताप त्रिलोक तचै न बर्च^२ मुनि^३ सिद्ध समाधि सन हैं ।
ताहि डरं नाहि तू सजनी^४ उत^५ आतुर वे कवि देव घने हैं ।
मेरो मनायो तू मानि लै भाजिनि मैन महीप ने मान मन है ॥१६॥

^१ मुरारि—नी० हि० सा० । ^२ तचै न—ज० । ^३ मुर—नी० हि० । ^४ सजनी न तुही—
नी० हि० । ^५ अरि—सा० ।

विदूषक-लक्षण ।

अग गेर भापानुवरि^१ करे अन्यथा भाइ^२ ।
ताहि विदूषक कहन जो देख हास कै दाइ ॥१७॥

^१ भूपननुवरि—सा० । ^२ करि अन्यथा सुभाइ—ता० ।

उदाहरण ।

ऊन जो हूँ रहिहै^१ अवं^२ इदु विलोक्त^३ भूमि पै घूमि^४ गिरौगी ।
तीर सो भीरो ममीर लगे तें मरीर मैं पीर घनीये धिरीगी ।
मेरे कह्यो किनि माननी माननि आपुही तें उतको उनरीगी^५ ।
भौन के भीनर ही भ्रमि भौरा लीं बोरी भी नव मैं दौरी किरौगी ॥१८॥

^१ ऊन सो है वं रही है—ज०, ऊन सो वो रहिहै—भा० मा०, इवनो बिरहै रहिहै—
पा०, ऊन सो वं रहि है—नी० हि० । ^२ अमई—भा० । ^३ ऊ विलोक्त—भा०,
इदु निहारत—नी० हि० । ^४ पै भूमि के घूमि—का० । ^५ उनरीगी—का० ।

नायक-भेद ।

नायक नर्म सचिव बहू यहि विधि सब कविराइ^१ ।
उन बरनत हौं नायका लक्षण भेद मुनाइ^२ ॥१९॥

^१ सबहि पराइ—ज० । ^२ बनाय—नी०, बनाय—हि० ।

तोन भाति कहि नाइका प्रथम स्वकीया होइ ।
परकीया सामान्या बहुरि^१ कहत मुकवि सब बोइ^२ ॥२०॥

^१ सामान्य पुनि—सा० । ^२ लोइ—मा० ।

स्वकीया-लक्षण ।

जाके तन मन बचन करि निजि नायक सः प्रीनि ।
विमुग्न सदा पर पुष्प मो सो स्वकीया^१ की रीनि ॥२१॥

^१ मह मुकिया—का० ।

उदाहरण ।

कवि^१ देव हरे त्रिछिपानु^२ बजाइ मजाइ ग्हे^३ पग डोलनि पै ।
गुरु डीठ बचाइ लचाइ वं लोचन मोचनि^४ सौं मुर खोलनि पै^५ ।
हौंसि हौंस भरे अनुकूल बिलोरनि साख के लोचन बपोलनि पै ।
बसि हौं बलिहारी हो वार हजारक बान की कोमल बोननि पै ॥२२॥

^१ कवि—का० । ^२ छविपानि—नी० । ^३ हरे—का० ज० । ^४ लोचन साच मशोचन—
का० । ^५ लोचन मो मन मोमन मो मुग्न खोलनि बोननि पै—नी० । ^६ हौं मियरे—
नी० हि० ।

स्वकीया-भेद ।

मुग्धा मध्या प्रगल्भा स्वकीया त्रिविधि बगान ।
सिमुना मे जोवन मिये^१ मुग्धा मो उर आन ॥२३॥

^१ भभव—नी० हि० ।

मुग्धा-भेद ।

वय सधि^१ अरु नव वधू नवजोवना विचार ।

नवल अनगा सलज रति^२ मुग्धा पांच प्रकार ॥२४॥

^१ वय सधित—नी० हि । ^२ तिय—नी० हि० ।

वय सधि-उदाहरण ।

औरन के अग भूपन देखि^१ सु हीसनि भूपन भेय सकल^२ ।

मद अमद चले चितवै कवि देव^३ हंसै बिलस^४ वपु वेसै ।

फूल बिघोरि कं बारनु छोरि कं हारन तोरि उतै महि^५ मेसै ।

भूरि^६ के भाव बिसूरि सलीन को^७ दूरितें दौरि के^८ धूरि में खेले ॥२५॥

^१ पखि—नी० हि० । ^२ निकेलै—का० । ^३ चितवै चितवै सु—नी० हि ।

^४ बिहंसै—नी० हि० सा० । ^५ उतै महि—नी० हि० । ^६ भूरि—भा० । ^७ सलीन

सो—सा० । ^८ दूरि तें दूरि—भा०, दूरि तें घेरि—नी० हि० ।

नववधू-उदाहरण ।

गोकुल माव की गोपसुता कवि देव न^१ केतिक कौतिक ठानै ।

खेनत मोही पै नद कुमार री^२ बारहि वार बडाई बखानै ।

मोरीये छाती छुवै^३ छिपिकं मुखि चूमि कहै कोइ और न^४ जानै ।

काहे ते भाई कछू दिन तें मन मोहन को मन मोही सो मानै ॥२६॥

^१ को तकै नहि०—नी० हि० । ^२ नद कुमार सु—का० । ^३ छुई—नी० । ^४ कोई दूजो

न—नी० हि० का० ।

मययोवना-उदाहरण ।

जानति ना वह को बड भाग^१ विरचि रच्यो रमिकाई कसी^२ है ।

देव कहै नव वेप^३ वसत सता फल^४ जाके नखक्षत छोहै^५ ।

मेटि बियोग^६ समेटि सबै सुख सा भट^७ भेटि भट^८ जुग जीहै^९ ।

या मुग सुढ^{१०} सुधाधर तें अधरा रस धार सुधारत^{११} पीहै ॥२७॥

^१ जोन दिना वहि की वय माग—नी० हि० । ^२ रसिकाई वसी—भा० सा० का० ।

^३ वैन—मा० ज० । ^४ फल—सा० । ^५ नखक्षत दीहै—भा० । ^६ भेटिबी अग—नी०

हि० । ^७ भरि—भा० मा० । ^८ भले—नी० हि० । ^९ जुग लीहै—नी० हि०, जग

जीहै—ज० । ^{१०} जो मुख—नी० हि० । ^{११} सुधार से—भा० ।

नवल-अनगा उदाहरण ।

कालि परी लगि^१ खेनही कचहं न कहूँ यत्र^२ घूषट कादयो ।

भानुही भीहै^३ मरोरि चली तनु तारि जनावत जोनन^४ गादयो ।

नैननि कोटि^५ कटाक्ष करे कवि देव सु बंननि को रम बादयो ।

नैशु चित्तं चितवै चितु दे^६ सित मन मनो दिन टंक तें ठाडयो^७ ॥२८॥

^१ पिय कालि परी लखि—नी० हि० । ^२ इन—मा० । ^३ भाइ—नी० । ^४ लोचन—

बा० । ^५ वोरि—नी०, वोर—हि० । ^६ चितदे चितवै—सा० । ^७ बाडयो—बा०

चाटो—नी० हि० ।

सलज्जरति-उदाहरण ।

बूजन हैं बल ह्य कपोन मुक्ती मुक् मोर^१ करे सुनि ताहू^२ ।
 नैनहदया न लला सकुचो^३ जिय जागत है^४ मुरु लोग लजाहू ।
 हाथ गही न बही न^५ कछु कवि देव जू भौन मे देत्री दियाहू ।
 हाहा रहो हरि हाथ^६ छुओ जिनि^७ बालत वात लजात न काहू ॥२६॥

^१ मुक्ती रसु सोर—ज० । ^२ मुर ताहू—जा० । ^३ अली मकुचं—नी० हि० । ^४ जान है जु—ज० । ^५ गहपो न बहपोन—भा० । ^६ मोहि—भा०, ध्यानी—मा०, गात—का० ।
^७ छिनि—का० ।

मुग्धा सुरत-उदाहरण ।

खाट की घाटी रहै लपटाइ करौट की ओट^१ कनेवर काँपे ।
 घूमत चौकति चदमुखी कवि देव कपोल निचोलनि^२ चाँपे ।
 गाल बपू मिछियानि के वाजन लाज तें मंदि रहै अँविया पे ।
 आँसु भर विमर्क रिसकं मिमकं^३ करि भारि^४ न्हुकं मुक् भौपे ॥२७॥

^१ जोर—भा० । ^२ मु लोन कपोलनि—भा० सा० । ^३ विसकं रिसकं—का० । ^४ बर-घारि—नी० ।

मुग्धा सुरतात-उदाहरण ।

मनभावन के टिग तें उठि भामिनि^१ भोरही भूपन हाथ लिये ।
 रंगभौन के भौनर भाजि परी भय भार भरी अति साज हिये ।
 मजनी जन नें^२ दुरि के कवि देव^३ निहारनि हार विहार किये ।
 निय बारहिगार सँवारहि के^४ निरवारनि वार^५ के वार दिये ॥२८॥

^१ भावनी—का० । ^२ मजनी जब तें—ज० । ^३ मव वं—नी० हि०, मव—का० ।
^४ निरवारहि के—नी० हि०, सँवारनि ही—भा०, सँवारहि की—का० मा०, सँवारहि वेग—ज० । ^५ निरवारहि वार—नी० हि० का०, निरजुरनि वार—भा० ।

मान-उदाहरण ।

मीति को नाम^१ नियो मपने कहुँ मीति को मग कियो पिय जाइवं ।
 देव कहुँ उठि प्यार की मंज नें न्यारी परी^२ पिय प्यारी^३ रिमाइ वं ।
 नाह निसक गही भरिअक मु तें^४ परजक धरी घन घाइ वं ।
 आँसुन पोछि उरोज अँपोछि नई मुक् चूमि हिये गो नमाट वं ॥२९॥

^१ सोनुप मानि—ज० । ^२ मई—जा० । ^३ जिय जाय—नी० हि० । ^४ सुनो—मा० ।

मध्या-लक्षण ।

जावे होति^१ गमान द्वे एव सज्जा अरु काम ।

तानो कोविद कवि मरें^२ बरनन मध्या नाम^३ ॥३३॥

^१ होत—नी० हि० । ^२ ताही को कोविद मरें—नी० हि० । ^३ वाम—नी० हि० ।

मध्या-भेद ।

रुढयौवना नाग^१ प्रादुर्भूत मनोभवा ।

प्रगल्भवचना वाम^२ कहि^३ विचित्रमुरता बहुरि ॥३४॥

^१ आरूढ यौवना वाम—नी० हि० । ^२ नाम—नी० हि० । ^३ अति—अ०, है—भा० सा०, ०—नी० हि० ।

मध्या चार प्रकार की यहि विधि बरजत लोड ।

उदाहरन तिनको सुनी जाको जैसो होइ ॥३५॥

रुढयौवना-उदाहरण ।

राधिका सी सुर सिद्ध सुता नर नाग सुता कवि देव^१ न भू पर ।

चद करी मुख देखि निछावर केहरि कोटि राटी कटिहू पर^२ ।

वाम कमानह को भुकुटीन पै मीन मृगीनहू को दूय दू पर ।

बारी री^३ कचन कज कली पिकबैनी के ओछे उरोजन ऊपर ॥३६॥

^१ कहि देव—का० । ^२ लची कटिहू पर—नी० हि०, लटो कटि ऊपर—भा० । ^३ बारी ही—का । ^४ मृगवैनी—का० ।

प्रादुर्भूत मनोभवा-उदाहरण ।

वाल बधू के विचार यही जु गोपाल की ओर बिलोकियो^५ कीजै ।

एयो चितवै^६ चित चातुरी सो रुचि की रचना बचनामृत पीजै ।

भूपन भेष बनावै सब अरु केसर के रंग सा अंग मीजै^७ ।

आपने आगे औ पीछे तिरिछे हूँ^८ देह को देखि सनेह सो भीजै ॥३७॥

^१ चितवै बोई—भा० । ^२ चितवै चित यो—नी० हि० । ^३ लीजै—अ० । ^४ तिरिछे कै—सा० ।

प्रगल्भवचना-उदाहरण ।

मेरेहू अब जो आवै निसक सी हाँ उनवे परजकहि जैही ।

पान खवाइ उन्हे पहिले तय ताय बे हाथ के पाननि लैही ।

ऐसी न होइ^१ जो दह की दीपति देव रो दीप समीप दिरौही ।

मोहन को मुख चूमि भदू तब ही अपना मुख चूमन देखी ॥३८॥

^१ होउ—का०, ही हु—सा० ।

विचित्रमुरता-उदाहरण ।

केनि करै रस पुज^१ भरी नव कुज मै^२ प्यारे सो प्रीति की पैनी ।

भ्रित्तिनि सा भट्टनाइ कै^३ विविनिबोलै सुखी सुख लौ सुखदंभी ।

यो विद्यियानि बजावति बाल मराल के बालनि ज्या मृगवैनी^४ ।

कोमल कूज^५ वपोत बे पोत^६ लौ नूनि उठै पिव लौ पिकबैनी ॥३९॥

^१ रसवत—नी० हि० । ^२ वन कुजन—भा०, वन कुज मै—सा० । ^३ लो भनवाइ वै—का०, ली भट्टनाइ कै—नी० हि० गा० । ^४ बाल मु बाल मरालनि वै मृगवैनी—वा० । ^५ कुज—भा०, नूनि—नी० हि० । ^६ विपोत—नी० हि० ।

मध्या सुरत-उदाहरण ।

जागतही मव जामिनि जाइ जगाइ महा मदनज्वर^१ पावक ।
 अजन छूटि लगे अधरान में लोइन लाल रंगे जनु जावक ।
 कामिनि केनि के मदिर में कहि देव करै रति मानत रावक^२ ।
 सगहि योनि उठे तजि बाबर लावक पोत^३ कपोत के सावक ॥४०॥

^१ मदनापुर—नी० हि० । ^२ मानस रावक—नी० हि०, मानहु रावक—ज० ।

^३ छावक छावक पोत—नी० हि० ।

मध्या सुरतात-उदाहरण ।

रंगरावटी त उत्तरी परभातही भावती^१ प्यारी के प्रेम पगी ।
 अलसाति जम्हाति सु देव सुहाति रदच्छद में रदपाति लगी^२ ।
 सब सौतिन की^३ छनिषां छिाही में सुहागिलु की^४ दुति देखि दगी^५ ।
 उतराति सी वै^६ उत राति भई इतराति बधू इतराति जगी ॥४१॥

^१ भामिनि—धा० । ^२ अलस्याति जम्हाति सुहाति रदच्छद गाल में बाल के है जु लगी—का० । ^३ सौतिन की—नी० । ^४ सुहागिन की—भा०, सुहागकला—नी० हि० ।

^५ देखि रंगी—ज० । ^६ सी वै—नी० । ^७ इतराति भई—नी० हि० ।

प्रौढा-लक्षण ।

मति गति रति पति सां रचं रतिपति सकल बलान ।
 बोबिद अति मोहित^१ महा प्रौढा ताहि बखान ॥४२॥

^१ मोहन—ज० ।

प्रौढा-भेद ।

लम्पापति रतिकोविदा श्रान्तनाइका^१ सोइ ।
 सविभ्रमा^२ यहि भांति करि प्रौढा चौविधि होइ ॥४३॥

^१ आकृतिगुप्ता—नी० हि० । ^२ सभ्राता—नी० हि० ।

लम्पापति-उदाहरण ।

राम के सा सदा हम डोलै जहाँ पिक बोले^१ अलीगन गुजै ।
 छाहन माहँ उछाहनि सो छहरै जहाँ पीरी^२ पराग की पुजै ।
 बेलिन में रस बेलिन कैं^३ बवि देव बरी^४ चित की गति लुजै ।
 मारिन्दी कून महा अनुकून ते पूरति मजुल बजुल^५ कुजै ॥४४॥

^१ बोली—मा० । ^२ पीरी—भा० । ^३ बेलिन में रस बेलि चुकें—मा०, बोलनि में रस बेलिन कैं—भा० । ^४ बरहू—नी० हि० । ^५ मजुन मजुन—भा० ।

रतिकोविदा-उदाहरण ।

बेति में बेनि बौनि कं रम हाग हुनाम बिलामनि मोहै^१ ।
 बामल नाद कपा रसवादांरि काम बला बरिबं मन मोहै ।
 छेदि बगछ की बोरनि मा गुन मा पनि वो मन मानिक पोहै ।
 जाननि तू रनि की गियरी गनि लोमी बयू रतिकोविद को है ॥४५॥

१ सो अनि सोहै—ज० ।

आक्रान्तनाथिका-उदाहरण ।

हार बिहार मै टूटि परे^१ अरु भूपन छूटि परे हैं समूलनि ।
जोरि सबे पहिरायो^२ सम्हारि के अग सम्हारि^३ सुधारि दुकूलनि ।
सीतल सेज बिद्याइ कै बालम बाल मृगालनि के दल मूलनि^४ ।
वंसिये वेनी^५ बगइ लला यहि गँघ्यो गोपाल गुलाब के फूलनि ॥४६॥

१ छटि परं—भा०, टूटि गये—ज० । २ पहिरावें—भी० हि० । ३ सँवारि—नी० हि० का० । ४ बिद्याइ कै बाल मृगालनि के दल कोमल मूलनि—का० । ५ वेनी—ज० ।
१ गुह्यो—वा०, गूची—नी० हि० ।

सविभ्रमा-उदाहरण ।

हँसत हँसत आई भावते के मन भाई देव कवि^१ कवि छाई सोने^२ से सरीर सो ।
तँसी^३ चद्रमुखी के वा चद्रमुख चद्रमा सो होड परं^४ चादनी औ चांदनी^५ से चीर सो ।
सोथे की सुवास अग वास औ उसास बास जासपास बासि रही सुखद समीर मो ।
कुज तजि^६ गुजत गभीर गिरि^७ तीर तीर रह्यो रग भोन भरि भौरनि की भीर सो ॥४७॥

१ कहै—नी० हि० । २ छाई वर सोने—भा० । ३ तँती—नी० । ४ हँ ही परं—भा०, होय परं—हाथिये पर—सा०, होय परं—का० । ५ सुँ चादनी से—सा० । ६ कुजत सी—भा० । ७ गीर—भा० ज०, वीर—नी० हि० ।

भौटा सुरत-उदाहरण ।

साजि सिंगारनि सेज चढी तबही तँ सखी सब सुद्धि भुलानी ।
कचुकी के बद टूटत^१ जाने न नीवी की डोरि न छूटत^२ जानी ।
ऐसी विमोहित हँ गई ही जु न^३ जानति राति किवै^४ रति मानी ।
साजी कवै रसना रस केलि मैं बाजी कवै विद्युवानि की बानी ॥४८॥

१ छूटत—भा० । २ डोरि न टूटत—भा० गाँठिओ छूटत—नी० हि०, गाँठि न छूटत—का० । ३ जनु—भा० ज० वा० । ४ राति कँ मैं—ज०, राति कवै—सा०, राति कँ मैं—भा० ।

भौटा सुरतगत-उदाहरण ।

आगे धरि अधर पयोधर सघर जानि जोरावर जघन सघन सरे सचिकै ।
बार-बार देति बबसीस जंतवारनि को बारनि को बाँधे जे^१ पिछारे दुरे वचिकै^२ ।
उरनि^३ दुकूल दँ उरोजनि^४ का फूलमान^५ थोठनि उठाए गान घाइ खाइ^६ पचि कँ ।
देव कहै आजु मानो^७ जीत्यो है अनग रिपु पी के सग सगर सुरनि रग रचिकँ^८ ॥४९॥

१ जो—भा० । २ ते सु वचिकँ—भा०, डर वचिकँ—ज०, जोर दुरे जात वचिकँ—का० । ३ दसन—हाथिये पर—वा० । ४ दूरंगन—का० । ५ फूलमनि—भा० । ६ खाइ खाइ—वा० भा० । ७ इहि—सा० । ८ पी न मग प्यारी सुरनि रग रचिकँ—वा०, पी ते सग मग रम सुरत रग रचिकँ—भा० ।

मध्या प्रौढा मान-त्तक्षण ।

मध्या औ प्रौढा दुओ होहि त्रिविधि^१ वरि मान ।

धीरा अरु मया बहै^२ और अधीग^३ जानु ॥५०॥

^१ त्रिविध—भा० । ^२ अधीर जहै—नी० हि० । ^३ समीता धीरा—बा० ।

वत्र उक्ति^४ पतिसो बहै मध्या धीरा नारि ।

मध्या देहि^५ उराहनी वचन अधीरा गारि^६ ॥५१॥

^४ वक्र युक्ति—भा० । ^५ धीराधीरा—नी० हि० । ^६ अधीरा नारि—ज० ।

मध्या धीरा-उदाहरण ।

भारे ही^१ भूरि भराई भरे अर^२ भांतिन भांतिन^३ के मन माए ।

भाग घडो बहि भामती^४ को जिहि भामते लै रंगभौन^५ बमाए ।

भेप भलोई भली विधि सो वरि^६ भूनि परे किछी काह भुलाए ।

साल भले ही भलो मुग धीनो भली भई आजु भले बनि आए ॥५२॥

^१ भारे हू—सा० । ^२ उर—बा० । ^३ भांति नभान्तिन—भा० । ^४ वही भामते—बा० ।

^५ रंगभौन के भीतर जाय—बा० । ^६ बहि—बा० ।

मध्या मध्या-उदाहरण ।

आजु बछू अंमुवान भरे दृग दलिये सो न कही जिय जो है^१ ।

चूव परी हमही नें बछू किछी जापर^२ कोप कियो बह कोहै ।

चूव अचूव हमारियै है कही^३ को नहि जोवन के मद मोहै ।

स्याम सुजान सुजानै^४ बलाइ ल्यो^५ जोइ करी सु तुम्है सब^६ मोहै ॥५३॥

^१ बहै जिय जाहै—नी०, बरे जिय जो है—हि० । ^२ चूव परे किछी दोस इनही को

बापर—नी० हि० । ^३ चूव अचूवहू चूव करे कहा—नी० हि० । ^४ सुजान—सा० ।

^५ भली विधि—नी० हि० । ^६ सग सोई ती—नी० हि० ।

मध्या अधीरा-उदाहरण ।

भोरही भौन मैं भावनो आवन प्यारी चित्त बँ इतं दृग फेरे ।

बाल त्रिलोकि बँ लाल बह्यो बहु^१ बाहेतें लान त्रिलोचन^२ तेरे ।

बोति उठी मुनि बँ^३ निय बोल सु देव बहै अनि कोप^४ करेरे ।

बाहू के रग रंगे दृग रावरे रावरे रग रंगे दृग मेरे ॥५४॥

^१ चप—बा० । ^२ वही बहि—नी० हि० । ^३ लोचन लाल भे—ज० । ^४ तवही—नी०

हि० । ^५ सु शोध परी बनि देव—बा० ।

प्रौढा मान-भेद ।

उदमीन रनिकोप अति^१ पनि सो प्रौढा धीर ।

तत्रं मध्य उदाम त्रं^२ ताहन^३ करे अधीर ॥५५॥

^१ रानि के मर्म—नी० हि० । ^२ दरजं धीर जधीर तिय—नी० हि०, तत्रं मध्यम उदाम

तहै—गा० । ^३ नोउन—ज०, ताहि न—भा० ।

प्रौढा घीरा उदाहरण ।

क्रोध कियो मनभावन सो सुद्धिपाइ लियो^१ पिकबैनी^२ के बोलनि ।
 राख्यो हियो अति^३ ईर्षा बाधि खुल्यो उन घंघट को पट खोलनि ।
 ज्यो चितई इत^४ आली की जोर सु गांठि छुटी भरि भौंह विलोलनि ।
 लोइन कोइन ह्वै उभनयो^५ सु बताइ दियो कौपि कोप^६ कपोलनि ॥५६॥

^१ सुद्धि पाइ ठियो—सा० । ^२ इक बैनी—भा० । ^३ तेहि—नी० हि० । ^४ अति—का० ।

^५ उचकयो—ज० । ^६ कौपि गोल—नी० हि०, ववि कोप—भा० ।

प्रौढा मध्यमा-उदाहरण ।

रूथिये बात सुनी समुझी^१ अरु सूधो कही करि^२ सूधो सर्व अग ।
 ऐसी न काहू के चातुरता^३ चित जो चितवै^४ कवि देव ददें सग ।
 याही के जैयै^५ बलाइ ल्यो^६ बालम हौं तुम्हें नीको^७ बतावति^८ हौं बग ।
 देव कहै^९ यह जाको सनेह महा उर बीच महाउर को रग ॥५७॥

^१ सुनै समुझै—जी० हि० । ^२ कहै कहि—जी०, करै कहि—हि० । ^३ आतुरता—सा० । ^४ चतुराइ चितै—का० । ^५ बोलै—ज०, जाव—नी० हि० । ^६ ज्यो—नी० ।

^७ तुम पै जु—बा० । ^८ बताय है—सा० । ^९ प्यारो लगै—भा०, करी न कही—नी०, मयो न वहै—हि० ।

प्रौढा अधीरा-उदाहरण ।

पीक भरी पलवै भलकै अलकै^१ जु गडी सु लसै भुज^२ खोज की ।
 छाइ रही छावि छैल की छाती मै^३ छाप बनी कहूँ ओखे उरोज की ।
 ताही चितौति बडी^४ अँखियान तें ती की चितौनि चली अति बोज की ।
 बालम ओर विलोकि कै बाल दई मनो खैचि^५ सनाल सरोज की ॥५८॥

^१ अलकै अवकै—नी० । ^२ सुसै सुज—सा०, सु लसै भय—ज० । ^३ कै—ज० । ^४ लगी—का० । ^५ चिनै बडरी—नी० हि० । ^६ चोट—नी० हि० ।

मध्या प्रौढा दोम विधि ज्येष्ठा और कनिष्ठ ।

अधिक नून पिय प्यार करि^१ बरनत बुद्धि गरिष्ट^२ ॥५९॥

^१ बुहुत पिय प्यार करि—का०, अधिक प्यार ज्येष्ठा कहै—नी० । ^२ बरनत ज्ञान गरिष्ट—भा०, है हित थोर कनिष्ठ—नी०, बरनत बुद्धि वरिष्ट—जा० ।

उदाहरण ।

सेलत फाग खिलार खरे अनुराग भरे^१ बडभाग बन्हाई ।
 एकहि भौन मे दोउन देखि कै^२ देव करी इक चातुरताई ।
 लाल गुलाल सो लीनी मुठी भरि बाल के मान थी ओर चलाई ।
 वा द्यु मूँदि उनै^३ चितयो इन भेंटी इत^४ वृषभान की जाई ॥६०॥

^१ गरे—नी० । ^२ देखि कै दोउन—नी० हि० । ^३ इत—सा० । ^४ उनै—सा० ।

परकीया-लक्षण ।

जात्री गति^१ उपपति^२ सदा पति गो रति मति^३ नाहि ।

सो परकीया जानिय टवी^४ प्रीति जग माहि ॥६१॥

^१ रति—ज० । ^२ उपज—नी० हि० । ^३ रति गति—भा० । ^४ जामु—नी०, नामु—
हि० ।

परकीया-भेद ।

ताहि परोटा^१ कन्यका ट्टे विधि कृत प्रवीन ।

गुपित चेष्टा परोटा^२ कन्या पिनु आघोन ॥६२॥

^१ ताही उटा—नी० हि० । ^२ गूड की—नी०, टय मौं—ज० ।

परोटा-उदाहरण ।

मोहन मोहि न जान्यो इहां वनि बाल को बोल सुनायो नजीक तें ।

बाँकि परी चहुँ ओर चिन गुरनोगनि देखि उठी नहि डीक तें ।

देखियो बान चल न वहुँ यह छूटिहींगी कुल लोख की^१ लीख तें ।

पूमनि है घरही में घनी यह धायल लीं घर घाल घरीक तें ॥६३॥

^१ छूटिगी लाग लखी पुल—ज०, कुसा कानि की—नी० हि० ।

परोटा-भेद ।

तामै गुप्ता विदग्धा लक्षिनार^१ कुसटानु ।

अनरभूत वञ्चानिये अनुमयना मुदितानु ॥६४॥

^१ पुनि सुलक्षिता—ज० ।

गुप्ता-उदाहरण ।

भंफरी वे भरोलनि^१ हूँ के भकोरति रावटीहूँ मैं^२ न जाति सही ।

कवि देव तहाँ वही^३ कसै के मोइये^४ जी की^५ विषा मु परं न कही ।

अघरानु को फोरति^६ अग मरोरति हारनि तोरति जोर यही^७ ।

घर भीतर बाहिरहूँ^८ बन वागनि बैरिनि^९ बीर बयारि वही ॥६५॥

^१ भकोरल—नी० हि० । ^२ भकोर वदी हियहूँ मैं—नी० हि०, भकोर लिए उठिहूँ
मैं—ज० । ^३ वही वहि—ज० । ^४ कैमिक मोइये—ना०, कैमि के आइये—नी० हि० ।

^५ जात्री—भा० । ^६ कोरति—वा०, कोरति—ना० ग०, फेरनि—ज० । ^७ जेय
रही—सा० । ^८ घर बाहिर जाहिर भीतर—भा० । ^९ ०—भा० ।

विदग्धी-भेद ।

कहत विदग्धा भानि ट्टे मत्रल^१ मुमनि वर लोइ^२ ।

वाक्विदग्धा एर अरु^३ त्रियाविदग्धा दोइ ॥६६॥

^१ मुकवि—भा० । ^२ मत्र कोइ—ज० । ^३ वहुनि अरु—ना० मा०, कहि बहुर—न० ।

वाक्विदग्धा-उदाहरण ।

व्याह की वीधि^१ बुनाये गये मर जोगन नागि गये दिन दूने ।

देव तुम्हारी^२ मौं बैठि अवेनिये ही^३ अपने उर आनति ऊने ।

क्यों तिन्है^४ वासर बीतत बीर बनाये है जे विधि वधु बिहूने^५ ।

कोन घरी घर के घर आवैं लखे घर घोर घरीक के सूने ॥६७॥

^१ व्याह कौ वधु—नी० हि०, व्याह कौ न्यौति—का० । ^२ तिहारी—नी० हि० । ^३ अकेली अहो—नी० । ^४ रोहिन्है—सा० । ^५ बिना रजनी बितवे विध वधु बिहूने—का० ।

क्रियाविदग्धा-उदाहरण ।

वंमुरी स्नि देखन दीरि चली^१ जमुनाजल के भिस बेग तव^२ ।

कवि देव सखी के सवोचन सो^३ करि ऊढ सु औसर^४ को वितव ।

दूपमान कुमारी भुरारी की ओर बिलोचन कोरनि सो चितव^५ ।

चलिवे को घरै न करं मन नैक धरै^६ फिरि फेरि भरं रितव^७ ॥६८॥

^१ दोर चले—ज०, बाल चली—नी० हि० । ^२ को—नी० । ^३ ऊढम औसर—सा०, ऊढम औसर—नी० हि०, रुठन औसर—ज० । घटं—भा०, घटे—नी० हि० ।

लक्षिता-उदाहरण ।

जौ लगि जीवन^१ है जग मैं नाँह तौ लगि जीव सुभाव टरंगो^२ ।

देव यहै जिय जानिये जू जन^३ जो करि आयो है सोई करंगो ।

कोटि^४ करौ षोड प्राण हरे विनु^५ हारिल की सकही न हरंगो ।

भूलेहू और चलारव न चित्त जो नपक चौगुने फून फरंगो ॥६९॥

^१ जीवत—ज० । ^२ डरंगो—ज० । ^३ जन—ज० । ^४ कोरि—नी० हि० । ^५ नर | नी० हि०

कुलटा-उदाहरण ।

छोरि दुकूल सवोरि कै अग मरोरि कै^१ वारनि हारनि^२ छूटै ।

मोडि नितबहि पीडि^३ ययोघर दावत दत रदच्छद फूटै ।

ज्यो कररी करि^४ केलि करै^५ निवरै न कहूँ कुल सो^६ चिनि^७ टूटै ।

सौ लगि जानै कहा जुवती^८ सुख जो न जुवा^९ दिन जाभिनि छूटै ॥७०॥

^१ बगारि कै—नी० हि० । ^२ हारति—का० । ^३ पीन—नी० हि० । ^४ यो कवि कीरति—नी० हि०, यो बरके तिर—सा० । ^५ बोलि कहै—ज० । ^६ घरतें—का० ।

^७ कुल कानि को—नी० हि०, कवि—सा० । ^८ जवही—ज० । ^९ जोवन था—ज० ।

अनुशयना-भेद ।

घान हानि तिहि हानि भय^१ प्रिय आगम अनुमान^२ ।

अनुशयना एहि विधि त्रिविधि बरनत सकल मुजान ॥७१॥

^१ भय है तहां—ज०, भय जहँ हहाति—सा० । ^२ मुमान—मा०, प्रिय गम अनुमान—मा०, प्रिय अगमन मान—मी० हि० ।

उदाहरण ।

सत्र ऊजरे^१ भीन बये तवतें^२ तरनी तननाप रही भरिचं ।

मुनि चेत अचेन माँ हूँ चिन मोचनि^३ जैहै^४ निकुञ्ज घने भरिचं ।

ततवाल्कि देव गुपाल गये वन तें^५ बनमान नर्दैं^६ धरिचं ।

जदुनायहि जोवत जवाल भई जुवती बिरहज्वर^७ माँ जरिचं ॥७२॥

- १ मय ऊ तहाँ—नी० हि० । २ जयों—का० । ३ ह्वै रहीं चित सो—नी० हि० ।
 ४ जोहै—मा०, निवृज सो पत जँहै—ज० । ५ वन है—ज० । ६ लई—सा० ज० ।
 ७ विरहानल—नी० हि०, विरहाभर—हानिये पर 'विरहाजर'—का० ।

मुदिता-उदाहरण ।

सौंभहि^१ वारी घटा धिरि आई महाभर सो वरमे भरि मावन ।
 धोरिय कारिये^२ आइ गई गु रम्हाड के^३ घाइ^४ षं लागी चुनावन ।
 माइ कह्यो कोइ जाइ कहै^५ किनि मोहूँ ना आज कह्यो उन आवन ।
 यो मुनि आनद त उठि घाई^६ अकेलिये वाल गुपाल बुनावन ॥७३॥

- १ सौंभ की—भा० । २ धोरिए माय जु—नी० हि, धोरिहू कारिये—मा०, धोरिय को
 जु पि—का०, धोरह कोटिए—ज०, धोरिहू कोरिये—भा० । ३ मु फनाड के—हि०, मु
 पन्हाइ के—नी०, मुनि माइके—ज०, सु रमाड के—मा० । ४ कहै जाइ कोऊ—
 नी० हि० । ५ दौरि—का० ।

कन्यका-उदाहरण ।

भूमि घटा उरुक्कं वहुं देव सु दूरि तें दौरि^१ ऋगोमनि भूली ।
 हाम हु गस मिनाम भगी मृग खजन मीन^२ प्रकामनि तूली^३ ।
 चारिहू^४ ओग चलै चपनै मु^५ मनोज के तेज^६ मरोज सी फूली ।
 राधिका की अँवियाँ लवि कँ लखियाँ सब मग की कौतुक^७ भूली ॥७४॥

- १ देवि—का० । २ मीन—ज० । ३ लूली—नी० । ४ बाहिर—का । ५ जु—मा० ज०,
 सो—नी० हि० । ६ मनोज की तेय—भा० सा०, मनोज की मानो—का०, मनोज की
 मौज—नी० हि० । ७ अग के कौतुक—नी० हि० ।

चित्र म्यपन^१ परतच्छ करि दरमन त्रिविधि बषानु ।
 देस कान भगीनु^२ करि श्रवन^३ तीनि^४ विधि जानु ॥७५॥

- १ स्वप्न चित्र—नी० हि० । २ गभीर—नी० हि०, भागीन—का०, भूगीन—ज० ।
 ३ वचन—मा० । ४ चारि—नी० हि० ।

दर्शन-उदाहरण ।

घार चरित्र विचित्र बनाइ कँ वित्र मे जे निरने अकरेले ।
 चोरि लियो तिन चित्त चित्तीनही त्योही बने मपने महि पने ।
 जाजु ते^१ नद के मंदिर तें निरगे धनमुदर^२ रूप विमपे ।
 होहूँ^३ अटारी नरू चढो^४ भागने में हरिजू नरिजू^५ दृग देखे ॥७६॥

- १ तो—नी० हि० । २ वन मुदर—का० । ३ देव—नी० हि० । ४ होहूँ अटा मरी भारी
 नरू चढ—मा० । ५ ०—गा० ।

श्रवण-उदाहरण ।

ऊँचे अटा चढि^१ मेत्र मनी^२ तो कहा हरिजोन इहाँ^३ निमिजाने^४ ।
 फूलि रहे वन वृज बहाती यात में चो न सना अनुरागे^५ ।

देव^१ सब गहने पहिरे चुनि^७ चाद सो चार^८ बनायं है वामे^९ ।

सुदर सुदर^{१०} लागिहै तो बहिहै जब^{११} सुदर स्याम सभागे ॥७७॥

^१ सजि—भा० । ^२ चढी—नी० हि० । ^३ पछिताति बहो री कहा—नी० हि० ।

^४ अनुरागे—वा० । ^५ लखि पागे—वा० । ^६ दाव—नी० हि० । ^७ पुनि—नी० हि० ।

^८ चाव—सा० । ^९ इहि भाये—वा० । ^{१०} मदिर—वा० । ^{११} तब—नी० हि० ।

वैश्या-स्वप्न ।

रीऊ नही गुन रूप की सामान्या के जीय^१ ।

जोही ली धन देहि जो तौ लौ ताकी तीय ॥७८॥

^१ जाय—सा०, पीय—ज० ।

उदाहरण ।

सोहति किनारी लाल बादले^१ की सारी गोरे अगनि उज्जारी कसी कचुकी बनाइ कै ।

जेवर^२ जडाऊ^३ जगमगत जवाहिर के जूती जोति^४ जावक की जीती^५ पग पाइ कै ।

भौहनि भ्रमाइ भूरि^६ भाइ करि नैननि सौं^७ नैननि सो बंननि कहति मुसवयाइ कै^८ ।

चीकनी चितौनि चाह केरे करि चतुरनि^९ बितु^{१०} लियो चाहै नित लियो है चुराइ कै ॥७९॥

^१ बादला—भा० सा० । ^२ भूपन—का० । ^३ जराव—ज० । ^४ जुही होत—नी० हि०,

होति जोति—वा० । ^५ जाती—सा०, जोत—का० । ^६ भरि—का० । ^७ भायक बताइ

करि—नी० हि० । ^८ विहसाइ कै—वा० । ^९ चोर होत चातुरी सौ—नी० हि० ।

^{१०} बितु—नी० हि० ।

स्वकीया-भेद ।

पर रति दुखिता^१ प्रेम अरु रूपगविता जान ।

मानवती अरु चारि विधि स्वीयादिकन बखान ॥८०॥

^१ पोखित दुखिता—वा० ।

पररतिदु खिता-उदाहरण ।

सोमही स्याम को लेन गई सु बसी धन में सब जायति जाइ कै ।

सौरी बयार छिदे अथवा उरभे उर भौखर भार मभाइ कै^१ ।

तेरी सी^२ को करिहै करतूत हुती^३ करिवे सोकरी तै^४ बनाइ कै ।

भोरही आई मटू इत मो^५ दुखदाइनि बाज इनी दुख पाइ कै ॥८१॥

^१ भा मभाइ कै—नी० हि०, भार भराइ कै—वा० । ^२ सौं—वा० । ^३ हती—भा०

ज० । ^४ करि बेग—ज० । ^५ को—वा०, नो—ज० ।

प्रमगविता-उदाहरण ।

ये बिनु गारी दये गुल्लोगन टेरेई सैनन नैन नटेरेई^१ ।

देव नहै दुरि द्वार लौं जात कितो करि हारी तऊ हरि हेरेई ।

पाय^२ यही घर बैठि रहौ^३ जु लीवे मिल खेत्तन आवत भेरेई ।

पेग भरै^४ घर बाहिर के अर ये सु फिर घर बाहिर घेरेई ॥८२॥

१ टेरिये नैनन सैनन नग्इ—ज० । २ बापु—नी० हि० । ३ रही—नी० हि० वा० ।
४ घरं—नी० हि० । ५ तो फिर—नी० हि० ।

विना-उदाहरण ।

हरि जू सा ह्टा हटकोगे^१ भटू जनि वान कहै जिय सोचनि की ।
कहि^२ पवजननी वुलाद कं माहि दई मुपमा^३ दुख मोचन की ।
उनही मा उराहनो देळं ततो उमगं उर रासि मकोचन की ।
बलि वारों री वीरजु^४ वाग्जि कौ जु वरावरि वीर^५ विनोचन की ॥८३॥

१ टकटोरि—ज० । २ कहै—वा० । ३ उममा—ना० । ४ वीर जु—नी०, वार जु—
हि० । ५ होय—ना० ।

है मयाग वियोग में बरन्यो मान^१ प्रकार ।
ताही के मन मानिनी कबिवर करहु^२ विचार ॥८४॥

१ नाम—नी० । २ बरल—भा० ।

इस्या-भेद ।

स्वामीना उत्कृष्टिना वानकमग्गा वाम ।
कनहनरिका नडिना विप्रलजिरा नाम^१ ॥८५॥

१ वाम—भा० मा० ।

ताते प्रीपिनप्रेयसी अमिसारिका बचान ।
भाठ अवस्या भेद ये एक एक प्रति जान^१ ॥८६॥

१ अष्ट नायका ये त्रिषा बरनै मुकवि मुजान—नी० हि० ।

वाधीना-सक्षण ।

बॅण्यो रहै गुन टप मो^१ जाके पनि आधीन ।
स्वामीना मो^२ नादका बरनन परम^३ प्रवीन ॥८७॥

१ नं—वा० । २ स्वामीनपनिना—नी० हि० । ३ मयन—नी० हि० ।

उदाहरण ।

मानिन हँ हरि^१ माल गुहै चितवै मुख चोगे^२ नये चिनचाटन ।
पान मवादं मवामिन हँ कं मवामिन हँ मिदवै^३ मव भाटन^४ ।
बॅदी दै देव दिडाट कं^५ दपंन जावक दन भए जय न्यदन ।
प्रेम पन पिय पीन पटी पर^६ प्यारी के पांदि पमारी से^७ पांटेन ॥८८॥

१ रहै—ज० । २ चोरी—ज० । ३ निदवै—ज० । ४ मिदवै मव भूपन नेप मुभाइन—
वा० । ५ दिवावत—वा० । ६ पीन पिछोरी मा—नी० हि० । ७ पांदि यमारी मे—
भा०, पांदि यमारी मे—ज० ।

उत्कृष्टिना-सक्षण ।

पनि को गूट बाये बिना मोच बडे चिन जाहि ।
हनु विचारै चिन म उत्कृष्टिना कट्टु ताहि^१ ॥८९॥

१ उत्कृष्टा कट्टु ताहि—भा० ज० मा०, उत्कृष्टिना मुनाइ—नी० हि० ।

उदाहरण ।

मारग हेरनि हौं फव की कही^१ काहे ते आये नही अवहूँ हरि ।
 आवत हे विघौ पैहै अवे ववि देव के राखे है काह कछु करि^२ ।
 मोहैं तें न्यारी को^३ प्यारी गुपाल की हाय^४ विचारिये री चित में धरि ।
 जो रमनी रमनीय लग वसि वावे^५ रहै सजनी रजनी भरि ॥६०॥

^१ कहि—नी० हि० । ^२ आवत हैं विघौ आए न देव के राखे है काह तिया ने कछु करि—
 नी० हि० । ^३ के—भा० सा० ज० । ^४ के—भा० सा० ज० । ^५ ताके—नी० हि० ।

वासकसज्जा-लक्षण ।

जाने पिय को आइवो निहचै वार^१ विचारि ।
 मग देखै भूपन सजै वासकसज्जा नारि ॥६०॥

^१ वार—भा० सा० ज० ।

उदाहरण ।

घोरि धनी धनसार सो बेसरि चदन गारि के अग सम्हारै^१ ।
 मोतिन मांग के वार गुहे^२ अर^३ हार गुहै वलि बेगि^४ सवारै ।
 देव कहै सब भेष बनाइ के आइ के फलनि सेज सुधारै ।
 बंठी बहा उठि दखौ मटू हरि आवन हैं^५ घर भाज हमारे ॥६२॥

^१ सवारै—नी० हि० । ^२ चारु गहे—सा० । ^३ किन—का० । ^४ केस—नी०, केलि—
 हि० । ^५ आवन हैं—ज० ।

कलहतरिका-लक्षण ।

पहिले पति^१ अपमान^२ करि फिर पीछे पछताइ ।
 कलहतरिका नाइका ताहि कहै कविराइ ॥६३॥

^१ पिय—नी० हि० । ^२ सो कोप—वा० ।

उदाहरण ।

पिय जा हित प्यारे ही के^१ पदपकज पुजिरे को पश्यो पन सा ।
 सु बिसारि दियो तेहि मोहि निरादर^२ घोर पति गृह को धन सा ।
 यह पापन ही^३ विप बीरी^४ भई अर सीरी^५ बयारि बरै तन सो ।
 कहि क्यों न अंगार मो हार लगै हिय में धनमार धनी धन सो ॥६४॥

^१ पिय जा प्यारी के वे—नी० हि०, पिय जा हित प्यारी के—भा०, पिय जा हित
 प्यारि ही के—सा०, पिय जानहि प्यारिहि के—वा०, पजाइ के प्यारि ही के—ज० ।
^२ तिहि मेहि निरादरे—भा०, हित मोहि निरादर—नी० हि० । ^३ इन पापन ही—
 भा० सा०, या पापनि ही—नी०, यह पापनि ही—हि०, यह पापन ही—वा० ।
^४ विप बीरी—भा०, विप बीर—नी० हि । ^५ सोच—नी० ।

सद्विज्ञा लक्षण ।

जाने^१ भवन न जाड पति रहे कहूँ रति मानि ।
 सडिनवारि सु खडिना^२ कविवर^३ कहन बरतानि ॥६५॥

१ पीके—मा० । २ छट्टिवार मू मडिना—वा०, वनिता वाहि सु मडिना—ज० ।
३ पहिन—नी० हि० ।

उदाहरण ।

मेज मुघारि मेवारि मत्रे अग अंगन^१ के मग में पग रोरे ।
चद की ओर चिनीन^२ गई निमि नाट की चाह चट्टी चित चोरे ।
प्रानही प्रीनम आये कहे वनि देव कहे^३ न पर छवि मोरे ।
प्यारी के^४ पीके भरे अघरा तें^५ उट्टी मनौ कपन कोप को^६ कोरे ॥६९॥

१ आवन—वा०, अगनि—ज० । २ चिनीनि—ज० । ३ कप कट्टी—मा० । ४ प्यारे
के—नी० हि० । ५ अंगराने—वा० । ६ कप को—ज० ।

विप्रलब्धा-सलण ।

जाको^१ पनि की दूनिका^२ नें^३ पट्टे रनि घाम ।
तहें पति मिले न जाहि^४ मो विप्रलब्धिवा वाम^५ ॥६०॥

१ जाके—ज० । २ दूनी मग निज—नी० हि०, पनि मकेन वदि—वा० । ३ नहि—
वा० । ४ तहें न मिले पनि खेद जहि—नी० हि० । ५ विप्रलब्ध बहु नाम—वा० नी०,
विप्रलब्ध तेहि नाम—हि० ।

उदाहरण ।

दूनी लेवाइ गई तहें बाल की^१ जा बन बालम^२ मों मिनि नेल्यो ।
भेषु बनाट के भूपन माजि मुगमि तमोर को साज^३ सुकेल्यो ।
आनद ही तें दहां तें गई निद^४ देवि तहां रति कूज^५ अनेल्यो ।
बीरी बगारि^६ सन्धीन मों रादि के^७ हार उनादि उठे गहि नेल्यो ॥६१॥

१ बाम की—सा० । २ बालहि—ज० । ३ जाम—नी० हि०, ममू—वा० । ४ बह—
नी० हि० । ५ त्यों तहें रति कूज—नी० । ६ बिगारि—ना० मा० । ७ गारि दे—
वा० ।

प्रोपिनप्रेयमी-सलण ।

मो निय प्रोपिन प्रयमी जाको पनि पदम ।
वाटू बागन तें यगो देके^१ अरवि प्रवेन ॥६२॥

१ कहि के—वा० ।

उदाहरण ।

होरी हरे हरे आद गहे हरि जाए न हेरि हिमो हट्टेगी ।
वानि^१ बनी अम वागनि की कवि देव विनोकि वियोग करंगी ।
नाउ न मेहु^२ वनन को गी मुनि हाउ कहे पछिपाय मरेगी ।
कंमे के^३ जोहे^४ विमोरी जो केनारि भीर मों बीर अंगन भरेगी ॥१००॥

१ केनी—नी० हि० । २ नहि नाम मु नेउ—ज० । ३ कंमिब जोही—मा०, कंमे कहे
सु—ज०, कंमे को जोहे—हि० ।

अभिसारिका-लक्षण ।

जो घेरी^१ मद मदन करि आपुहि पति पर जाइ^२ ।

वेप अग अभिसारिका समै^३ समान बनाइ ॥१०१॥

^१ घेरी—नी० का० । ^२ प्यारे पह तिय जाइ—ज० । ^३ सजे—भा० ज० ।

उदाहरण ।

घटा घहराति निज्जु छटा छहराति आधी राति हहराति^१ कोटि कोट रति^२ रुज लीं ।

हूकत उलूक बन कूबग फिरत^३ केह भूवत जु भैरौं भूत^४ गाय अति गुज^५ लीं ।

भिल्ली मुग मूँदि तहाँ^६ धीछीगन गँदि बिप व्यालनि को लँदि कँ मृनालनि के पुज^७ लीं ।

जाई बृपभान की कन्हार्ई के सनेह बस आई उठि ऐसे में अकेली बेलि कुज लीं ॥१०२॥

^१ अति आत—ज० । ^२ कोट रति—भा०, कोटि रितु—नी० हि०, कोटि हति—सा०

^३ मयूर—ज० । ^४ हृद—ज० । ^५ अति गुज—सा० । ^६ भिल्ली मुड कूँ दिलाव

तहाँ—ज० । ^७ मुनारनि के—का०, मृनाल पुज—ज० ।

स्वीया तरह भेद अरु^१ दोह भेद परनारि ।

एक वेस्या ये^२ सब सोरह कहीं विचारि ॥१०३॥

^१ करि—भा० । ^२ एक एक प्रति ये—सा० ।

एक एक प्रति सोरहो आठ^३ अवस्था जान ।

जोरि सब ये एक सौ अट्टाईस बखान ॥१०४॥

^१ भेद—ज० ।

उत्तम मध्यम अधम करि^१ ये सब त्रिविधि विचार^२ ।

चौरासी अरु तीन सै जोरे सब विस्तार ॥१०५॥

^१ कहि—नी० हि० । ^२ बखान—ज० । ^३ ज्यो ज्या सब विन्तार—नी० हि०, सकल

नादका जान—नी० हि० ।

उत्तमा लक्षण ।

मापराध पति देखि कँ करै न^१ मन म मान ।

दोप जनावै सहज ही^२ सो उत्तमा बगान ॥१०६॥

^१ करै जु—ना० सा० । ^२ सहजरी—नी० हि० ।

उदाहरण ।

बेगर सो उवटपो सब अग धडे भुवतान सा मांग संवारी^१ ।

चारु सु^२ चपक हार हिये उर^३ ओछे उरोजन की छवि न्यारी ।

हाय सा हाय गह^४ कवि देव सु साय तिहारैई नाथ निहारी^५ ।

हाहा हमारी सौं साँची बहो बह को हुती^६ छोहरी छीवर वारी ॥१०७॥

^१ सम्हारी—भा०, समारी—सा० । ^२ से—नी० हि० । ^३ अरु—नी० हि० । ^४ गुहे—

मा० । ^५ हाथ निहारै ही आज निहागी—नी० हि० । ^६ बह बौन ही—नी०, बह बौन

मी—हि०, बट थो—भा० ।

मध्यमा-लक्षण ।

जाहि जानि त्रिष मानिनी वन वरं मनुहारि ।

पांड परं कोपहि तजं वही^१ मध्यमा नारि ॥१०८॥

^१ वही—नी० हि० ।

उदाहरण ।

नेह सां नीचे निहारि निहोरत^१ नाही वं नाह की थोर चिंतवो ।

पीठ दं मोरि^२ मरोरि वं क्षोडि सकोरि वं सोह मां भौह^३ चटवो ।

प्रोतम मां वक्ति देव रिमार कं पाड सगाइ हिये^४ सा नगंवो ।

नेरो री भोहि महा मुख देन सुधारमहू ने^५ रनीनो रिमंजो^६ ॥१०९॥

^१ निहोरनि—ज० । ^२ तोरि—नी० हि० । ^३ भौह सा सोह—वा० । ^४ लिये—नी० ।

^५ सुधाधर हूँ तें—वा० । ^६ रनीनो चिंतवो—वा० ।

अधमा-लक्षण ।

विनु दोषहि ष्ठै तजं रिमा मनाये मानु ।

जाको रिम रम हेतु^१ विनु अधमा नाहि वगवानु ॥११०॥

^१ होत—नी० हि० ।

उदाहरण ।

आनु रिमोही न सोही^१ चिनीनि किनीन सखी पति प्रेम पटावें^२ ।

नाह सो नेह को नाती^३ न नेहु जऊ पर^४ पाइ प्रतीति बटावें ।

पीठ दं बैठी अमंठि सी डीठ वं कोदन कोप की^५ जोप बटावें ।

सीर से तानि निरीछे पटाछ कमान भी भामिनि न^६ हैं चटावें^६ ॥१११॥

^१ सी मोहें—नी० हि० । ^२ प्रति प्रीत बटावें—वा०, पुनि नाको पटावें—नी० हि० ।

^३ मोहन सो सखि नाती—ज० । ^४ तऊ पर—नी० हि० । ^५ को वक्ति—नी० हि० ।

^६ बटावें—ज० ।

सखी-लक्षण ।

बहु^१ विनांद भूपन रचें वरं जु चित्त प्रमन्न ।

प्रियहि मितावें^२ उपदिनें रहे मदा जामन्न^३ ॥११२॥

^१ वन—ज० । ^२ प्रियहि मनावें—वा०, ऐसी मत्री यग्वानिये—मा० । ^३ मग्नी वजन

तिय वान त्रिष गनें वच्छू न भिन्न—ज० ।

पति को देइ उराहनो वरं विरह^४ आम्वान ।

ऐसी मग्नी यग्वानिये जावे जो विज्वाय ॥११३॥

^४ मदा—नी० हि० । मा० प्रति में द्वितीय चरण घुटिन है ।

उदाहरण ।

वाल वषू वे रिमोद बटाइ भनी त्रिषि भूपन नेप वनावें^१ ।

चाद मो चिन प्रमन्न वरं रम रग में मय मयान^२ मितावें^३ ।

दैं कैं उरहनी दोउन को गन राखि कैं देव^१ दुहन मिलावैं ।

नाह सा नेह ततो^२ निवहै जव भाग ते ऐसी सखी करि पावैं ॥११४॥

^१ वनाइ कैं—ज० । ^२ सयानि—भा० सा० । ^३ सियाइ कैं—ज० । ^४ ०—भा० ।

^५ राखि कहे कवि देव—भा० । ^६ तवैं—नी० हि० का० ।

दूती-भेद ।

घाइ सखी दासी नटी गालि सिल्पनी^१ नारि ।

भालनि नाइनि वालिका विधवा बधू विचारि ॥११५॥

^१ गालनि सिल्पनि—नी० हि० ।

सग्यासिन भिक्षुक बधू सयधी^२ की वाम ।

ऐती होती दूतिका दूतपन^३ अभिराम ॥११६॥

^४ अर सबधी—नी० हि० । ^५ दूत प्यार—ज० ।

उदाहरण ।

देव जू की दूती बृषभान जू के भीन जाइ राधिका बुलाइ^१ बहु बातनि^२ सियाइ कैं ।

हास रस सानी^३ हुनि जागन ते द्वार गानी हित की कहानी कहि हिय^४ सो मिलाइ^५ कैं ।

हरे^६ हंसि कह्यो कैं^७ सखी भी परतु है^८ अहै^९ नदनद ती बियोग सी^{१०} बिलाइ कैं^{११} ।

बिरह बढाई प्रेम पद्धति पढाइ^{१२} बित्त चोपहि चढाइ दीनी^{१३} मोहन मिलाइ कैं ॥११७॥

^१ जगय—का० । ^२ भातिन—नी० हि० का० । ^३ हासन ससानी—का०, हास रस

मानी—नी० हि० । ^४ हाय—जा० । ^५ हिलाइ—भा० का० । ^६ हरि—सा०, हारे—

का० । ^७ केस—मा० । ^८ परतु ह—नी० हि० । ^९ है—नी० हि० । ^{१०} यह—ज० ।

^{११} बिताइ कैं—नी० हि० । ^{१२} यथाइ—नी० हि० । ^{१३} चली—नी० हि० ।

इति चतुर्थ विलास ।

कविता कामिनि सुखद पद सुवरन सरस सुजाति^१ ।

अलकार पहिरे निगट अदभुत रूप लखाति^२ ॥११॥

^१ मुजान—का० । ^२ बगान—का० ।

ताही तें कवि देव कहि अलकार की भाति^३ ।

मुनि मत थे अनुकार तें तें कछु लक्षण जाति^४ ॥१२॥

^५ के भेद—का० । ^६ दुरि होहि जिनके सुनत अवननि के सज खेद—का० ।

अलंकार-नाम ।

प्रथम स्वभावउक्ति उपमेय उपमान सतय^१ अनन्वय अरु रूपक वरानिये ।

अनिसय औ^२ समाम वक्रउक्ति परयायउक्ति सहित सहोक्ति सविशेषउक्ति^३ जानिये ।

ताते व्यतिरेक औ विभावना^४ उत्प्रेक्षा शेष दीपक उदात्त औ^५ अपन्हुत को आनिये ।

पंक्ति असंलघा न्यास अर्थान्तर व्याजस्तुति अग्रस्तुत अस्तुति सु अलकार मानिये^६ ॥१३॥

^१ उमेयोपमेय सय—भा० । ^२ ०—भा० । ^३ ये विशेष—नी० । ^४ हे विभाव—भा०

मा० । ^५ है—भा० सा० । ^६ अर अमलेखा व्याजस्तुति अर्थान्तर अस्तुति परिकर द्विविधि

अलवृत्त में मानिये—नी० हि० ।

आवृत्ति निदसंना विरोध^१ परिवृत्ति हेतु रम्यत ऊरज ममूद्धम^२ वताइये ।

प्रेय क्रमा^३ समाहित तुल्ययोगिता औ लेम भाविक औ सकौरन जामित मुनाइये ।

अलकार मुष्टय उननातिम ये^४ देव कहें येई पुराननि मुनिमननि में पादये ।

आधुनि^५ कविन के सम्पन अनेव जीव^६ इनही के भेद और विविध विवि गाइये^७ ॥४॥

^१ विरोधता—नी०, विरोधा—हि० । ^२ प्रेयस्वतमा—नी० हि० । ^३ प्रेमक्रम—नी०

हि० । ^४ हैं—भा० । ^५ आधुनिक—नी० हि० । ^६ भिये—नी० हि० । ^७ विविध

वताइये—भा० मा० ।

स्वभावोचित-लक्षण ।

जहाँ स्वभाव यखानिये स्वभावोचिन सो^१ नाम ।

सुखि जाति वर्णन करत कहत मनत अभिराम^२ ॥५॥

^१ सु स्वभावोचित—भा० । ^२ काव्य मूमन अभिराम अति छास्त्रन में मनमान—नी०

हि०, शास्त्रन में मान्यो यही कवि मति अति अभिराम—का० ।

उदाहरण ।

आगे आगे आसपाम कैननि तिमल^१ वास पोछे पोछे भारी भीर औरनि के गान की ।

तातें अति नीकी क्विनी की भनकार होति मोहनी है मानो मन^२ मोहन के दान की ।

जगमग होति जात जोति^३ नवशोवन की देखे गनि भूले^४ मति देव देवतान की ।

सामुहे गली के जु अली के मग भलीभाति चली जाति देवो बहु^५ लली वृषभान की ॥६॥

^१ विविध—नी० हि० । ^२ मद—भा० । ^३ जगरमगर होनि जोति—भा० मा० ।

^४ गात भूले—भा०, गति भूमी—नी० हि० । ^५ चली जानि देखी न—भा०, देखी

बहु चली जानि—नी० हि० ।

उपमा-लक्षण ।

जेहि जेहि^१ भाति रगरी जहाँ वस्तु^२ में होय ।

सो उपमा कवि देव कहि बरनन हैं कवि होय ॥७॥

^१ जेहि तेहि—का० । ^२ अर्थ—का० । भा० म० प्रतिये, मे दांटे का पाठ है

“नून मुनति जहँ अत्रिक गुन कत्रिये बगनि ममान ।

अलवार उपमा कहन तातो मुनति मुजान ॥”

उदाहरण ।

राति जगी^१ अमिरात इने यहि^२ गंन गर्द गुनकी निधि^३ गोरो ।

रोमवनी त्रिवनी पे लनी^४ नुमुमा अंगिपाह लकी उन्^५ जोरो ।

आंठे^६ उरोननि पे होनि के कनिर्क पहिगी गहगी रग बोरो ।

परि गिवार^७ मरोन गनाव चटी मनी डद्रवधुनि की जोरो ॥८॥

^१ मारी—नी० हि० । ^२ यहि—भा० । ^३ विधि—भा० का० । ^४ लकी—नी० हि० ।

^५ दुति—नी० हि० । ^६ ऊंचे—का० । ^७ गिवाव—का० ।

उपमेयोपमा-लक्षण ।

उपमा अरु उपमेय जहँ क्रम तें^१ एक होइ ।

सोई उपमेयोपमा कहत सुकवि^२ सब कोइ ॥६॥

^१ की जह क्रम—भा०, जह जह क्रम—का० सा० । ^२ करनि कहै—भा० सा० ।

उदाहरण ।

तेरी सी बेनी है स्याम अमा अरु तेरीयें बेनी है स्याम अमा सी ।

पूरनमासी सी तू उजरी अरु तोसी उज्यारी है पूरनमासी ।

तेरो सो आनन^१ चद सबै सुख आनन में सखि चद समासी^२ ।

तोसी वधू रमनीय रमा कवि देव है^३ तू रमनीय रमा सी ॥१०॥

^१ तियानन—नी० हि० । ^२ अमा सी—नी०, प्रकासी०—हि० । ^३ कि—वा० ।

सशय-लक्षण ।

जहँ उपमा उपमेय को आपुस में सदेहु ।

ताही सो सशय उकति^१ समति जानि सब^२ वेहु ॥११॥

^१ कहत—हि० । ^२ सुचि—हि० । नी० प्रति मे सपूर्ण दोहा चूटित है ।

उदाहरण ।

श्री वृषभानु कुमारी के रूप की न्यारीयं को उपमा उपजावै ।

वचल नैन वि मैन के धाम कि खजन मीन न^१ कोइ बतावै ।

आनंद सो बिहैमाति जब कवि देव तब बहुधा मन धावै ।

कै^२ मुख मँघौ कलाधर है इतनो निहचोई नहीं^३ चित आवै ॥१२॥

^१ एती न—का०, से इत—नी० । ^२ तो—नी० हि० । ^३ कै—सा० । ^४ निहचो

इतनो—नी०, निहचो जु नही—सा० ।

अनन्वय-लक्षण ।

तैसो सोई^१ बरनिये जहाँ न और समान ।

ताहि अनन्वय नाम कहि बरनत देर^२ सुजान ॥१३॥

^१ तैसोई तहँ—वा० । ^२ सुकवि—नी० हि० ।

उदाहरण ।

केस सां केस सबै मुख सो मुख नैन से नैन रहे रग सो छकि ।

देव कहै सय अग से अग सुरग दुकूलनि में भक्तकै भकि^१ ।

और नही उपमा उपजै जग ढूँढी सबै सब भाँतिन सो धकि ।

श्री वृषभानु कुमारी^२ री तेरो सो तोसी तुही अरु कौन मरै^३ बनि ॥१४॥

^१ नै—हि०, सो—नी०, मँ यो—वा० । ^२ कवि—वा० । ^३ राधिका श्री वृषभानु कुमारी—भा० । ^४ सरै—भा० ।

और अतिरापोक्ति-लक्षण ।

मम समान जैसे जनों^१ जिदि ज्यो^२ मानो नूत् ।

और सदश^३ कवि देव ए पद उपमा के मूल ॥१५॥

१ जहाँ—वा०, जती—नी०, जतै—हि० । २ तिमि त्या—का० । ३ सरिस—भा०, सदा—नी० हि० ।

जहँ उपमा मै ये न पद^१ सोई रूपव जान ।

सीमा तें^२ अति वरनिये अनिसय ताहि बखान ॥१६॥

१ जहँ उपमा ये नही—नी० हि०, जहँ उपमा मै ये नही—वा० । २ सीमा तें—नी० हि० ।

रूपक-उदाहरण ।

मदहाम चद्रिका को मंदिर बदन षट सुन्दर भधुर वानि मुधा भरसाति^१ है ।
इदिरा के ऐम नैन^२ इदीवर फ्लि रहे विद्रुम अधर दत मोतिन की पाति है ।
ऐसो अदभुत रूप भावती^३ को देवी देव जाये त्रिनु देवे छिन छाती न सिराति है ।
रसिक कन्हाइ बलि पूछन^४ हों आई तुम्हें ऐसी प्यारी पाद कँमे न्यारी रागी जाति है ॥१७॥
१ के—नी० हि० । २ रसमाति—नी० हि० । ३ नैन ऐम—नी० हि । ४ धुन मालिनि—
नी० । ५ राधिका—भा० सा० । ६ जाहि देखे रावरीयो छतिया मिराति है—मा०,
जाहि देखे की । की न छनिया सिरानि है—नी० हि० वा० । ७ बूमन—नी० हि० ।

अतिशयोक्ति-उदाहरण ।

रापे के रूप निहारि सर्वे कवि मूय भये उपमा नहि आवैं ।

को करि बुभनि बँहरि कीर री^१ कुद कली षटलीन गनावैं ।

बचन^२ कचन कीन्हो अकचन को चिन चपक चोप ददावैं ।

देव जू निदित इदीवरै सब^३ इदिरा इदु न आदर पावैं ॥१८॥

१ कीरनि—का० । २ गवावैं—नी० । ३ कचन—नी०, पचन—का० । ४ देव सुनी कल
कोबिला से कच—वा० ।

समामोक्ति-लक्षण ।

कछू यस्तु चाहै कही^१ ता सम वरनँ और ।

समामोक्ति सो^२ जानिये अलवार^३ सिरमौर ॥१९॥

१ बरनयो चहै—नी० हि० । २ सु—समामोक्ति—भा० सा० । ३ बरनन कवि—नी० हि० ।

उदाहरण ।

मालती सांमिसये^१ निमि चौमहू या^२ मुखदानि हँ^३ ज्यो समभयै ।

प्रोनि पुरानी पुरनि के रंनि रही नियरे न विपत्ति बहैयै ।

ऊपरही गुन रूप अनूप निरतर अतर मै न पत्यैयै ।

ये अनि दून्ह^४ भूतेहू देवजू चपन फूल के भूज न जैरै ॥२०॥

१ मलिये—भा० । २ चौसहि प्यो—हि० मा० । ३ कँ—मा० । ४ पुरंन बरंन—हि० ।

५ हूहू—सा० ।

यशोक्ति-लक्षण ।

कातु बचन श्लेष कनि^१ ओग अरथ हँ जाट ।

यो यशोक्ति मु बगनिये^२ बरनि कहन कविराड ॥२१॥

१ कावु वचनलेश करि—सा०, वचन रचना श्लेष करि—का० । २ बखानिये—नी० हि० । ३ उत्तम काव्य सुभाइ—भा० सा० ।

उदाहरण ।

मति कोप करै^१ पति सो कवहूँ मति को पवरे पति सो निवहै ।
कवि देव न मान वधू रत है^२ सब भापत आन वधू रत है ।
अब सो न बहूँ^३ अवलोकि तुम्है अब लोक तुम्हें सुख देत रहै ।
किनि नाम कहौँ हमसो तिनको हम सौतिन को किहि भौँति कहै ॥२२॥

१ करी—नी० हि० । २ तु कहा हम मान वधू बस है—का० । ३ अवलोकनहू—नी० ।

४ है रहौ—हि० ।

पर्यायोक्ति-लक्षण ।

मन की कहे न ताल^१ ये बरने और प्रकार ।

परजायोक्ति सु नाम सो^२ अलकार निरधार ॥२३॥

१ बाल—का०, ताप—हि० । २ सु नाम जो—भा०, बखानि जो—हि० । बखानिये जो—हि०

उदाहरण ।

मैं सुनी काहिहूँ परीं लगी सासुरे^१ साँचेहूँ जैही^२ बहौ सखि^३ सोऊ ।
देव कहै केहि भौँति मिल जाने को^४ काहि^५ कहा कब^६ कोऊ ।
खेलि^७ सो लेहु भद्र संगे^८ स्याम के आजु ही की निसि आये हैं ओऊ ।
हौँ अपने दृग मूंदति हौँ घरि धाइ के घाय दुरौ^९ तुम दोऊ ॥२४॥

१ सासुरे कालि परीं लगी—का० । २ जैहीँ सु साँची—भा० सा० । ३ किनि—भा० सा० । ४ को जानै—भा० सा० । ५ काहिहूँ—सा० । ६ अब—का० । ७ भेंटि—भा० सा० । ८ उठि—भा० सा० । ९ आज मिलो—भा०, धाइ मिलो—सा० ।

सहोक्ति-लक्षण ।

जहाँ सहज गुण सो सहित^१ कीजे वस्तु बखान^२ ।

अलकार कवि देव कहि सो सहोक्ति उर आन^३ ॥२५॥

१ सो सहोक्ति जहँ सहित गुण—भा० । २ वस्तु विचार—नी० हि, सहज बखान—भा० । ३ सो सहोक्ति पहिचानिये देव कहै लकार—नी० हि० ।

उदाहरण ।

प्यारी के प्रान समेत^१ पिया परदेस पयान की बात चलावै ।
देव जू छोम ममेन^२ छपा छनिया में छपाकर की छवि छावै ।
बोली अली बन बीच बसत की बीच ममेत नगीच बतारवै^३ ।
बाम के तीर ममेत^४ समीर सगीर में लागत पीर बजार्व^५ ॥२६॥

१ गमीच—बा० । २ छोम समान—बा० । ३ भौर समेत नगीच न आवै—हि०, भौर ममेत रगोचन आवै—नी० । ४ समान—नी० हि० बा० ।

क्षेपोक्ति-संज्ञान ।

जानि कमं गुन भेद की विवल्पना करि जाहि^१ ।

वस्तुहि वरनि दिखाटये दिनेपोक्ति कटि ताहि ॥२७॥

^१ विवल्पान कटि जाट—हि०, विवल्पना करि जाय—नी० ।

साहरण ।

जोवन द्वाघ^१ नहीं^२ अर वैननि मोहनी भन नहीं अवरोह्यो ।

भौह कमान न वान विनोचन तानि तरुपनि को चिनु पोह्यो^३ ।

देव घनाची^४ सची न रची नू दियो नहि देवना को तन तोह्यो^५ ।

तापर बोर जहीर को जाई री तं मनमोहन को मन मोह्यो ॥२८॥

^१ द्वाघि—नी० हि० । ^२ नहीं—भा० । ^३ चोह्यो—हि० । ^४ घनाची—का०, धूनची—भा०, घनाची—हि । ^५ तोह्यो—नी० हि० ।

अतिरेक-लक्षण ।

जहं ममान विधि^१ वस्तु को कांज भेद वचान ।

अनकार व्यतिरेक सो देव मुमनि पहिचान^२ ॥२९॥

^१ जहं—हि०, ०—नी०, हं—वा० । ^२ व्यतिरेक को देवदन उर वानि—नी० हि०, व्यतिरेक सो देवदत्त परि जान—वा० ।

साहरण ।

कौन के होद न ही में द्वाघ^१ मु जान^२ सब दुन देखनही दधि ।

जाहि लये बिलखे यहि भानि परे मनु मीनि मरोचनि पै पवि^३ ।

याही ने प्यारी निगरी मृगयुनि चद समान बखानन हैं^४ कवि ।

आनन ओषन होन मनीन^५ पै छान ह्वै^६ जानि छराकर की छवि ॥३०॥

^१ विलास—वा० । ^२ जो जान—नी० हि० । ^३ पै पवि—नी०, पै पवि—का० । ^४ तो—वा० भा० । ^५ मनीन न होनि—भा० । ^६ वं—भा० ।

विभावना-लक्षण ।

हेतु प्रमिद्ध निरास करि कहिये हेतु गुनाउ ।

अनकार सो देव अति विभावना कहि गाउ^१ ॥३१॥

^१ सो विभावना गाउ—भा० ।

उदाहरण ।

ये धींगी^१ त्रिनु काजर वागी अस्पागी^२ चिने चिा में चपटे मो ।

मीठी नई वनिपां मुन मीठिओ^३ मूने मव मीनिन को दपटे मो ।

अगहूराग बिना अग जग^४ नरो^५ मृगयन की नपटे मो^६ ।

प्यारी निगरी ने मडि नई त्रिनु जायक पावक को दपटे मो ॥३२॥

^१ अपागी—भा० । ^२ मु जमीठिअं गां—वा०, जमीठिओ दाने—नी०, अत ईठिओ दाने—हि० । ^३ मीठिन को मूने वं दपटे मो—भा०, यो मीनिन के उर में दपटे मो—भा० । ^४ अगनि ने त्रिनु अगहूराग—नी०, जगहि में मू त्रिना जंगग—वा० । ^५ गग

सुगधह के लपट सी—नी०, सुगध भकोरें हिए भपटं सी—बा० ।

उत्प्रेक्षा लक्षण ।

और भांति की वस्तु को कीजें और बखान^१ ।

सो कहिये उत्प्रेक्षा बहु वितर्क जहँ जान^२ ॥ ३३ ॥

^१ और वस्तु को तर्क करि बरनै निहचं और—भा०, और वस्तु को त्याग करि करने निहचं और—सा० । ^२ अनुमानादिक दौर—भा० सा०, जहँ वितर्क जू जान—नी० हि० ।

उदाहरण ।

हियो हरे लेती पसुपच्छी बस करे लेती छिनी विछुरे तें^१ छिदि छिदि उठै छतिया^२ ।

सुनि सुनि मोही हौं न^३ जानति हौं कोही अब ओही रूप रही^४ अबरोही^५ दिन रतिया^६ ।

पलौ ना^७ परत मोन मान को बरं रे कौन भूल्यो भीन गौन नई लोक साज धतिया^८ ।

मेरे मन आवत मुनिन मन^९ मोहिजे को मोहनी के मन हूँ रे मोहन^{१०} की धतियां ॥ ३४ ॥

^१ विछुरे हौं—भा० सा० । ^२ लेत छीन छतियां—का० । ^३ हिय—भा० । ^४ रठी—नी० हि० । ^५ अतिरूही—बा० । ^६ रह्यो न—भा सा० । ^७ ज्ञान भूलो जात भई लोक छलियां—नी०, ज्ञान भूलो जात भई लोक लाज धतियां—हि० । ^८ मही के मन—नी० हि० । ^९ मोहिनी—भा० सा० ।

आक्षेप और उदात्त-लक्षण ।

बरत कहत कछु वस्तु को^१ बरनै है^२ आक्षेप ।

उदात्त में^३ अति बरनिये सपति दुनि अबलेप ॥ ३५ ॥

^१ फेर सो—भा० सा० । ^२ बरनै वच—भा० सा० । ^३ ये—नी० हि० ।

आक्षेप-उदाहरण ।

नूतन गुलाल^१ नूत मजरो की मालनि सौ कीजे गजमुख सनमुख सनमान की ।

करिहै^२ सकल सुख विमुख वियोग दुख ग्यारे जनि जानो प्यारे प्यारी हू के प्रान की^३ ।

बायें दोलं मीर पिय सोर^४ बरै सामुहेहूँ दाहिने सुनो जु मत्त मधुकर^५ गान की ।

सगुन भले हैं बलिब को जो चली हौं कत^६ आवत बसत कत^७ करिये पयान की ॥ ३६ ॥

^१ गुलाब—बा० । ^२ बरि के—नी० हि० । ^३ जानिये न प्यारे ये हमारे प्रिय प्रान की—भा० सा० । ^४ सगुन भले हैं दोलं मीर—नी० हि० । ^५ मीर मीर—नी० हि० । ^६ चली चितु—भा० सा० । ^७ चित—नी० हि० ।

उदात्त-उदाहरण ।

वाल को न्योति गुलाबवे को बरमाने लौ हौं पठई नंदरानी ।

श्री वृषभानु की सपति देखि धकी गति औ मति औ खति बानी^१ ।

भूलि परी मनि मदिर^२ मे प्रतिबिबन देखि बिसय भुलानी ।

चारि धरी लौ चितौत चितौत मरु बरि चदमुगी पटिबानी ॥ ३७ ॥

^१ जति ही गति औ मति बानी—भा०, अनि ही गति औ अनि बानी—बा० । ^२ रग मदिर—नी० हि० ।

दीपक-लक्षण ।

अरथ कहै एकं त्रिया जहाँ आदि मधि अन्त ।

अथवा जहँ प्रतिपद त्रिया दीपक कहत सु सत ॥३८॥

उदाहरण ।

मोहि लई लखि कं हिरनी^१ हरि नीरज सी बढरी अमियानि सा ।

सारिका सारसिका रसिका सु^२ कपोत कपोती पिकी मृदुवानि सो^३ ।

देव कहँ सब भूप सुता अनुरूप अनूपम^४ रूप क्लानि सां ।

गोप बधू^५ विधु से मुख नी मधुसूदन वा मधुरी^६ मुसकयानि सा ॥३९॥

^१ हिरनी लखि कं—भा० सा० । ^२ मार सुवा सो कपोती—नी० हि० । ^३ ह सुवारे सुवानि सो—नी० हि० । ^४ अरूपक—हि० । ^५ पै न बधू—सा०, गोप सुता—का० ।

^६ घन सुन्दर हेरि हरी—भा०, घन सुन्दर भद मुरे—सा० ।

अपह्नूति-लक्षण ।

मन को अरथ छिपाइ कं^१ औरं अयं प्रकास ।

देव कहै कीजै तहाँ नाम अपन्हृति ताम^२ ॥४०॥

^१ छिपाइये—भा० सा० । ^२ श्लेष वचन वाकु स्वरनि कहत अपन्हृति तास—भा० सा० ।

उदाहरण ।

हाँही ही और कि ये सब और कि बोलत आजु को औरै समीरी ।

याते इन्ह तन ताप^१ मिरात पै मेरे हिये न धिरातु है धीरी ।

ये कहँ^२ कोबिल बूब भली सु तौ^३ कान सुने जम^४ आवत नीरी ।

लोग ससी को सराहत है^५ तब ताहू लगै सखी साँचेहू सीरी ॥४१॥

^१ सनताप—नी० हि० का० । ^२ कही—नी० हि० । ^३ मुहि—भा० मा० । ^४ परे जनु—नी० हि० । ^५ री—भा०, है री—मा० ।

श्लेष-लक्षण ।

जहाँ बवित्त के पदन में^१ उपजै अन्त अनन्त ।

अलवार अश्लेष सो^२ बरनत है मतिमन्त^३ ॥४२॥

^१ जहाँ वाच्य के पदन में—भा०, जो है वाच्य बच्छून में—सा० । ^२ सब—नी० हि०

^३ बरनत सत बिहृत—नी० हि०, बरनि कहँ मतिमन्त—बा० ।

उदाहरण ।

ऐसी गुनी गये लागत ही न रहै तन में सनताप^१ री एकी ।

दब गन्तारग वास निवाम^२ बढो मुग वा उर वास किये को^३ ।

रूप निदान अनूप विधान सु प्राननिवी फस जासो बिये को^४ ।

माचेहँ है^५ सखी मन्दबुमार कुमार नही यह^६ हार हिये को ॥४३॥

^१ तनताप—हि० । ^२ अवाग—बा० । ^३ बढो मुग जो मुग जा उर वाम किये को—हि० । ^४ मूरतिमत बमत विनास बढावत ही में हुलास हिय को—बा० । ^५ साँचेहँ री

—हि० । ^१ सखि—सा० ।

अर्थान्तरन्यास-लक्षण ।

उक्त^१ अर्थ दृष्ट करन को वाक्य जु कहिये और^२ ।

अर्थान्तर को न्यास सो अलकार सिरमौर^३ ॥४४॥

^१ युक्त—भा० । ^२ आनै अर्थ जु और—वा० । ^३ सो अर्थान्तर न्यास कहि बरनत बस कवि रस भौर—सा० सो अर्थान्तरन्यास कहि बरनत रस बस भौर—भा० हि० ।

उदाहरण ।

चैन के ऐन^१ ये नैन निहारत भैन के को^२ कर मैं न परं री ।

तापर नैसिक अजन देत निरजन हू के हिये नौ हरं री ।

साधुओ होहि असाधु कहूँ^३ कवि देव जो कारे के सग परं री ।

स्याह हियो^४ अरु स्याम^५ सुतौ^६ सखी आठहू जाम कुकाम^७ करे री ॥४५॥

^१ राय—हि० । ^२ कोउ—भा० बयो—वा० । ^३ कोऊ—हि० । ^४ स्याह रह्यो—हि०, स्याही रह्यो—भा०, स्याही भरो—वा० । ^५ स्याह—भा० सा० हि० । ^६ सखा—हि० । ^७ अकाम—का० ।

अप्रस्तुतप्रशंसा और व्याजस्तुति-लक्षण ।

जहाँ सु अप्रस्तु अस्तुति निदा की अचान^१ ।

निदा अप्रस्तुत करै जहाँ^२ सो व्याजस्तुति जान ॥४६॥

^१ अप्रस्तुति ता स्तुतिल निद अचान—सा० । ^२ निदै और जहाँ सराहिये—भा० सा० ।

अप्रस्तुतप्रशंसा-उदाहरण ।

बडभागिनि येई विरचि रची न इती^१ सुख आन कहूँ^२ तिय के ।

बिछुरै न छिनो भरि बालम तें कवि देव जू सग रहै^३ जिय के ।

तून^४ चारु चरं रचि सो चहुँ और चल चितवै सुचि सो^५ हिय के ।

मय तें सब भाँति भली हरिनी निसि वासर पास^६ रहे पिय के ॥४७॥

^१ रप तो—हि० । ^२ किहूँ—का० । ^३ बीच बसै—का० । ^४ बन—हि० । ^५ सुव सा—हि० । ^६ सग—वा० ।

व्याजस्तुति-उदाहरण ।

को हमको तुमसे तपसी विनु जोग सिन्वानन आइहे^१ ऊयो ।

पं यहि पूछिये जू^२ उनको सुवि पाछिनी^३ जावति है कवहूँ धो ।

एक भली भई भूप भये अरु भूलि गये दधि मानन दूधो ।

बूचरी सो अति सूधी वध को मित्यो वर देव जू स्याम सो सूधो^४ ॥४८॥

^१ आए है—हि० । ^२ अब एती कही—वा० । ^३ पाछिनी सुवि—वा० । ^४ जउ—का० । ^५ वर पायो भ्रिभगीर्य स्याम सो सूधो—वा० बहु पायो भरो घनस्याम सो सूधो—हि० ।

आवृत्तिदीपक-लक्षण ।

आवृत्ति दीपक भेद के ताहूँ त्रिविधि बखान ।

आवृत्ति अर्थावृत्ति अरु परपदार्थावृत्ति जानु^१ ॥४९॥

^१ वृत्ति अर्थ आवृत्ति अरु पद पदार्थ जूत जान—हि० ।

उदाहरण ।

बेति लसै प्रिलसै जब^१ पल्लव फूल^२ ग्विले उखिलै^३ नव^४ कोरै ।

मोरल^५ मान बो गान अलीन के कूकि पिची भुनि की मन मोरै ।

शोलत पौन सुगध ललै^६ अरु मैन के दान सुगध के डोरै ।

चचल नैननि मो तरनी अरु नैन बगछनु मो बितु चोरै ॥५०॥

^१ बन—का० । ^२ भूलि—का० । ^३ उखिलै—भा० । ^४ मोरल—हि० । ^५ चलै—भा०, ललै—हि०, ललै—'म' हागिये पर—का० ।

निदर्शना-लक्षण ।

औरै वस्तु बखानिये फन तत्र ताहि^१ ममान ।

जहाँ दिवाइये और बहि ताहि निदर्शन जान^२ ॥५१॥

^१ फूलत ताहि—सा० । ^२ जहा दिवाइये निदर्शन कहत सु ताहि मुजान—का०, जहा दिवाइये और बहि ताहि निदर्शन जान—हि० ।

बदाहरण ।

देखिबे को निनको दिन राति रहे उर में अति आवुर लूँ हरि ।

कोरि उपाइन पाइये जे न रहे जिनबे विरहग्वर सो जरि^१ ।

पार न पंयलु^२ आनद बो तिनि आनि भटू उठि भेंटे^३ भुजा भरि ।

आनि परं नहि देव दया विष देत मिली विषया जु ममा करि^४ ॥५२॥

^१ पाइ पिपे न बहै न मुनै अनुसाइ महा विरहग्वर सो जरि—का० । ^२ पाइये पार न—का० । ^३ अगही तिन्ह आइके भेंटे—का०, उठि भेंटे भटू सु—हि० । ^४ भातिन भाग वही मन भावती मीत मिले जु दया करि—का० ।

विरोध-लक्षण ।

जहाँ विरोधी पदारम^१ मिलै^२ एकही और ।

अनकार सु विरोध त्रिनु विष पिभूप विष कोरै^३ ॥५३॥

^१ पद अरथ—हि० । ^२ होहि—का० । ^३ हूँ बरनत कवि सिरमोर—का०, यह विषय पूष विष कोर—हि० ।

उदाहरण ।

आयो बमत लम्बो बरमावन नैननि तें गरिता उमठै रो ।

बो मगि जीव छिपाये छपा में छपावर की छवि छाड रहे रो ।

चदन गो छिगरे छियायाँ अनि आगि उठै दुःख^१ नैन मठै रो ।

मीनन मद सुगध गभीर बहै दिन दूषनी देह दहै रो^२ ॥५४॥

^१ उर—का० । ^२ दख जू मीनन मद सुगध मु मधवही लगि देह दहै रो—भा० ।

परिवृत्त-लक्षण ।

जहाँ वस्तु^१ वरननि पदनि^२ फिरि आवतु^३ है अर्थ ।
साही सो परिवृत्त कहि वरनत सुमति समय ॥५५॥

^१ भाव—वा० । ^२ विषय—वा० । ^३ जाननु—सा० ।

उदाहरण ।

बेवली^१ समूह लाज टूटत^२ द्विठाई पर्यं^३ चातुरी अगूढ गूढ मूढता^४ के लोच हैं ।
सोभा सील^५ भरत अरति^६ निकरत सब मुरि^७ चले खेल पुरि^८ चले चित चोज हैं ।
हीन होति बटि तट पीन होत जघन सघन सोच लोचन ज्यो नाचन मरोग हैं^९ ।
जाति सरिकाई तरनाई तन आवत सु^{१०} बँलन मनोज देव^{११} उठत उरोज हैं ॥५६॥
^१ कै चली—हि० । ^२ ऊठती—सा० । ^३ पाह—सा० । ^४ गढत—का० । ^५ माल—
हि० । ^६ अरत—हि०, जरति—सा० । ^७ मुहि—भा० । ^८ जुरि—का०, पुर—हि० ।
^९ लीन होति कटि तव पीन होत जघन बदेत सुख नैन लेत उपमा सरोज हैं—का० ।
^{१०} है—का० । ^{११} है री—हि० ।

हेतु भीर रसवत-लक्षण ।

एतु सहित जहँ अरथ पद^१ एतु वरनिये मोइ ।

मौह रस में सरसता जहाँ सु रसवत होइ^२ ॥५७॥

^१ वरनिये—का० । ^२ अधिक सरस जो वरनिये मो रसवत होइ—का० ।

हेतु-उदाहरण ।

देव यहै दिन राति बहै हरि बँसेहूँ राधे सो^१ बान बहैबी ।
बोल के कुज अनेली मिले बवहूँ मरिऊँ भुज भँटि न पँबी ।
याठहूँ मिद्धिनबो निधि वीनिधि है विरची बिधि मान्निनि ऐबी^२ ।
मेठि वियोग मनेटि हियो भरि भँटि कबै सुखचन्द अँचैबी ॥५८॥

^१ वापर—का० । ^२ छोरि छिपाइ विछोरि विछोह छिनो छतिया तिया सो छवैबी—
का० । ^३ चूमि सो चपन मी चिनुकँ वर चाँपि बँ सुखचन्द अँचैबी—का० ।

रसवत-उदाहरण ।

बेली नबेली लतानि सो बेलि कै प्राण अन्हाइ मरोवर पावन ।
प्रिजद मजरिका छहराइ^१ रञ्जइ छाइ छपाइ छपावन ।
सीतल मद मुगध महा वपुरे विरही वपुरीनि तपावन ।
आजू वो आयो नमीर सली री सरोज बँपाइ बरेजो बँपावन ॥५९॥

^१ जहराइ—मा० । ^२ जुवरनि तपावन—मा०, जिरहीनि तपावन—हि० ।

ऊर्जस्वल और सूक्ष्म-लक्षण ।

अहवार गवित वचन सा ऊर्जस्वल होइ^१ ।

सजा ना प्रगटँ जरथ नूद्धम बहिये^२ मोइ ॥६०॥

^१ जहाँ मु उरज होट—का०, उर्जस्वत मो हाट—हि० । ^२ वरनहूँ मूछा—का० ।

२ जंस्वल उदाहरण ।

देव दुरत दवा^१ अँचयो जिहि कालिय कील^२ धर्यो सु वहे है ।
 यी लीं वकी हों वकी वक वच्छ अघादिक^३ को अधु कं कं^४ अघं है ।
 वान्ह^५ के आगे न वाहू वो कोप वहुँ ववहुँ निवह्यो न निवँ है ।
 छाँडि दे मान री मान वह्यो वहुँ भानु पं तेज वृसानु को रहै^६ ॥६१॥

^१ दवा—मा०, दमी—भा० । ^२ केलि—वा०, कील—हि० । ^३ वक वछ नवारक—
 हि०, वकवछ अपारिव—भा० । ^४ कं वो—मा० । ^५ कोप—हि० । ^६ भानु को तेज
 वृसानु कं रहै—भा० ।

सूक्ष्म-उदाहरण ।

बैठी बहू गुरलोगनि मे लखि लाल गये करि के वसु ओल्यो^१ ।
 ना चितई न भई तिय बचल देव इनै न उनै^२ बिन डोल्यो ।
 वानुर आतुर जानि उहँ^३ अन्हो छन चाहि सखीन^४ सो बोल्यो ।
 त्योही^५ नितव मयकमुन्वी दूग मूँदि कं घूँघट को पट^६ खोल्यो ॥६२॥
^१ बोल्यो—हि० । ^२ उनते—मा० । ^३ जान बहै—वा० । ^४ सखीन—हि० । ^५ मीही—
 हि० । ^६ तैं मुल—वा० सा० ।

प्रेम और क्रम-लक्षण ।

कहिमे जो अनि प्रिय बचन प्रेम^१ वलानी ताहि ।
 उपमा अरु उपमेय को क्रम सु प्रमोक्ति जाहि^२ ॥६३॥

^१ प्रेम—भा० । ^२ सु नहै प्रम जाहि—वा० प्रम सु क्रमोक्ति जु आहि—हि० ।

उदाहरण ।

बेम थाल भुङ्गि^१ मयन श्रुति औ वपोल नामिका अघर दन^२ विनुन विचारिये ।
 बठ कुच नाभी त्रिवली औ रोमावली कटि नुज कर जानु पग प्यारी के निहारिये ।
 मुहुँ^३ तम बंद चाप मजन बनन पुट पत्र मुक रिब मोनी चपकनी^४ वारिये ।
 वनु^५ निवु कूप नदी सैवान भुनात लता पल्लव नदति बज्र बेरे करि डारिये ॥६४॥
^१ भुङ्गि—गा० । ^२ देन—ना० । ^३ त्रौनी रोमावली जोग—भा० । ^४ कट्ट—भा० ।
^५ बंद बली—का० । ^६ कुच—हि० ।

समाहित-लक्षण ।

जहँ वारज वनंध्य को मायन विधि बल होइ ।
 उक्त्मात ही देव कहि कही समाहित सोइ ॥६५॥

उदाहरण ।

गुनगौरि वियो गुफ भाज मु र्मन सत्रा के हिये सहराइ उट्यो ।
 मनुगौरि के हारी मणोगन^१ रँगमीनहि तें^२ भरराइ^३ उट्यो ।
 तव मीं चट्टेराई घटा पहराइ कं विगु छटा छहराइ उट्यो ।
 कवि देख जू भाय तें भावनी को भय तें हियरा हहराइ उट्यो ॥६६॥

^१ गौरा गुन—मा० गा० । ^२ रँगमीनहि में—हि० । ^३ हहराइ—गा० । ^४ भरराइ—सा०

तुल्ययोगिता लक्षण ।

जहँ सम करि गुन दोस कै^१ कीजँ वस्तु वमान ।

स्तुति निदारथ^२ जहाँ तहा^३ तुल्ययोगिता जान ॥६७॥

१ समान करि उल्लेख गुन—का० । २ स्तुतिन पदारथ वी—भा० । ३ तहा ही—हि० ।

उदाहरण ।

एक तुही वृषभानसुना अरु तोनि हैं^३ वैजु समेत सनी है ।

देवी रमा^४ कवि दस उमा ये तिलोक में रूपकी रासि मची है ।

औरन केतिक राजन के कविरामन की रसना पै^५ नची है ।

पै^६ वर नारि महा सुकुमारि ये चारि विरचि विचारि रची है ॥६८॥

१ तीयन है—हि० । २ उमा—वा० । ३ रमा—वा० । ४ रमना यै—भा० । ५ यै—

हि० । ६ चार—का० । ७ विचारि विरचि—हि० ।

इलेय लक्षण ।

प्रगट परय^१ जु लस करि कीजे ताहि निगूढ ।

लेस कहत तासो सुकवि जे बुधि बन आरूढ़^२ ॥६९॥

१ अथ जु प्रगट—वा० । २ सु अगूढ—हि० ।

उदाहरण ।

वाल विलोकत ही भनवी सो^१ गुपाल गरं जलविदु^२ की मालं ।

आपुस में मुमक्यानी सखी हरिदेव^३ जु बात वनाइ विसानै ।

सापज्या घौन गिले^४ उगिले विय ज्या रवि ऊपम^५ भागि^६ उगालं ।

जात घुस्यो^७ घर ही म घने तप छीन भयो^८ तनु घाम के घालं ॥७०॥

१ सो—सा० जु—का० । २ अरविद—हि० । ३ सय देव—का० । ४ घौ निगलं—

हि० । ५ विय प्रीपम ज्या रवि—वा० । ६ आनि—भा० । ७ घयो—वा० । ८ तपघी

उभयो—हि० सा० तप घीन भया—भा० ।

भूतल लक्षण ।

भूतर भावी^१ अरथ को बतमान सु बखान^२ ।

भाविक वस्तु गभीर को मोई भाविक जान^३ ॥७१॥

१ भूतर भावी—हि० भूत भाविक—वा० । २ जहँ कवि वरत बखान—वा० । ३ कं

गभीर जो वस्तु को भाव सो भाविक जान—वा० ।

उदाहरण ।

जा दिन तें वृजनाथ^१ भनू दह भोकुन तें मयुराहि गये हैं ।

छाकि रह्यो तरनैं छवि सो^२ छिन छूटति ना छतिया म छय^३ हैं ।

वैसिय भाति निहारनि ही हरि नाचति चारिदी कून टय हैं ।

गधु सहारि कं छत्र घरया सिर दखनि द्वारिकागध भय हैं ॥७२॥

१ जदुराह—हि० । २ छवि सैं तर तें—वा० । ३ गध—हि० ।

गभीरोक्ति-उदाहरण ।

सवहीं वे मनो मूय वा गुग्ज^१ दृग मोहन को गुन^२ जान^३ रिये ।
 यमुया सुय^४ मिषु मुधारन^५ पूग्न जान^६ चले दृग की गनिय ।
 कवि देव कहै एहि भाँति उठी कहि बड़ की कोइ कहूँ जनिं ।
 तयली^७ सवहीं यह मोर परयो कि चली^८ चनिं जू चली चनिं ॥७३॥

^१ उरिये—का० । ^२ दुनि—का० । ^३ जानि—हि० । ^४ वगुवा घर—हि० । ^५ मुधा घर—का० । ^६ जानि—हि० । ^७ तय ती—हि०, तव ही—का० । ^८ कव ली—का० ।

सकीर्ण और आशिय-स्तवण ।

जलवार जामे वहत मो मरीरन^१ होइ ।

चाह चित्त^२ अभिनाप को^३ आमिन्व वरन^४ मोट ॥७४॥

^१ ममरना—मा० । ^२ प्रारथना—का०, चारु चित्त—हि० । ^३ की—हि० मा० ।

सकीर्ण-उदाहरण ।

बोलति है जहें वाम नना^१ मु तर्षा कुच गुच्छ^२ दुग्ह दुधा की^३ ।

कौलसाल कि बाल^४ के हाथ द्विती बटि^५ कानि की^६ भाँति मुधा की^७ ।

देव यही मन आवति है सविनाय वधू विधि है बट्टा की^८ ।

बाल^९ गुही मुक्तालर मान^{१०} मुयाघर में मनो धार सुधा की ॥७५॥

^१ कौमलता—का० । ^२ तबि कचन गुच्छ—का० । ^३ न कं बरधा की—का०, दग्ह उपा की—भा० । ^४ कीर्षी प्रबाव कि बान—का० । ^५ छपी करि—हि० । ^६ कानि की—मा० हि०, कानि के—का० । ^७ भूजा की—का० । ^८ कि प्रकाम ग्ही तहि रामि प्रभा की—का० । ^९ भाग—हि० । ^{१०} मान म मोनी की मान तर्ष—का० ।

आशिय-उदाहरण ।

भाग मुत्राग भरी अनुराग मो रावे ज मोहन को मुव जोर^१ ।

भूपन भेप बनावै नये निन मोनिन के बिन बादिल गोव^२ ।

रोजन गोहन पुत्र चरो पय दाम कुली दरि दानो रिनावे^३ ।

पूग्न काम हँ^४ आउहू जाम उ स्थान की मेज मद्रा मुख मोव^५ ॥७६॥

^१ है—मा० का० ।

अनवार वे मुदन है इनो भेद अनन ।

आनप्रथवे पय सवि^१ जानि लेहू^२ मतिमन ॥७७॥

^१ मनन ने—का० । ^२ जाहू—का० ।

अपनी बुद्धि समान र्य कयो क्यू निरधार ।

नाने मोपर करि कृपा लेहू^१ मुमनि मुपा^२ ॥७८॥

या माहित्य समुद्र जो बडेन न पायो पार ।

हमने ओछे कविन की तहाँ कहीं आचार ॥७९॥

देव-प्रयावली

सोसरिया कवि देव को नगर इटाए वास ।
जोवन नवल सुभाव वर कीनो भाव विलास ॥८०॥

इति पञ्चम विलास ।

इति भावविलास ॥

रस विलास

प्रतियाँ : प्रतियों की बहिरंग परीक्षा : पाठ-मपादन में प्रयुक्त 'रसविलास' की विभिन्न प्रतियाँ का विवरण इस प्रकार है

१ अ०—अर्थात् श्री ब्रजवल्लभ की प्रति यह प्रति कानी नागरी-प्रचारिणी सभा के संग्रह में है। सभा के सूचीपत्र में इसकी संख्या ४६७१२ है। प्रति लगभग १२ इंच लम्बी तथा ७ इंच चौड़ी है। प्रति में १०६ पत्र तथा प्रत्येक पृष्ठ पर १६ पक्तियाँ हैं। इसके अक्षर आकार में साधारण में अधिक बड़े हैं। इसकी प्रतिलिपि भरतपुर के श्री ब्रजवल्लभ ने सन् १८६७ में अपने लिए की थी। यत्र-जत्र प्रति में पत्रों के पाठ पर हस्ताक्षर फेरकर पाठ-संगोचन भी किया गया है। ध्यान से परीक्षा करने पर ज्ञात होता है कि प्रति में पौनी तथा गेरए वर्णों की हस्ताक्षर का प्रयोग हुआ है। इनमें से पौनी हस्ताक्षर का उपयोग प्रतिलिपिकार में तथा गेरए रंग की हस्ताक्षर का उपयोग किसी अन्य मपादनकर्ता ने किया है। इस प्रति के पृष्ठ विलास में भा० मी० शास्त्री की किसी प्रति से पाठान्तरों की तुलना तथा पाठ-संगोचन हुआ है। ऐसे सभी पाठ-संगोचन गेरए रंग की हस्ताक्षर की महायत्ना में हुए हैं। प्रति में आठ विलास तथा भोगीलाल-सम्बन्धी अधिक छन्द मिलते हैं। प्रति की अंतिम पुष्पिका इस प्रकार है—“इति श्री रस विलास सम्पूर्णं सन् १८६७ मिति जामाड कृष्ण १ भौम वासरे त्रिप्य वृत्त ब्रजवल्लभ बह्मस्ते स्वात्म पठनायम् भरतपुर मध्ये राज्ये बलवत् मिश्रजी शुभ । श्रीरस्तु”

प्रति का पाठ अत्यन्त विस्वमनीय है।

२ मी०—अर्थात् मोहनजी की प्रति : यह प्रति भी नागरी-प्रचारिणी सभा के संग्रह में है। इसकी सूचीपत्र-संख्या ४६६१२ है। प्रति में कुल ४० पत्र हैं तथा प्रत्येक पृष्ठ पर २१ पक्तियाँ हैं। प्रति की लम्बाई लगभग १२ इंच तथा चौड़ाई लगभग ८ इंच है। सन् १८८१ में बालमुकुन्द मिश्र ने मोहनजी फौजदार का निमित्त यह प्रति लिपि तैयार की थी। इस प्रति में अनेक स्थला पर पाठ के एकाध वर्ण प्रमादवश छूट गए हैं। भोगीलाल-सम्बन्धी छन्द तथा अष्टम विलास इस प्रति में नहीं है। अंतिम पुष्पिका इस प्रकार है—“इति श्री रस विलास कवि देवदत्त द्विती मन्त्र विद्योग दत्ता वर्णतो नाम सप्तमो विलास ७ मिति श्रावण वदि २ नौमबामरे सन् १८८१ पौषी फौजदार श्री मोहनजी लिखित मिश्र बालमुकुन्दजी शुभ भवतु श्री ॥”

प्रति का पाठ सामान्य रूप में विस्वमनीय है।

३ भा०—अर्थात् भारतकोचन प्रेस द्वारा प्रकाशित 'रस विलास' का संस्करण : सन् १९०० में भारतकोचन प्रेस के सञ्चालक श्री रामचरण वर्मा ने 'रस विलास' का स्वयंपादित संस्करण प्रकाशित किया था। मी० प्रति के समान इस प्रति में भी भोगीलाल-सम्बन्धी अधिक छन्द तथा अष्टम विभाग नहीं है। मुद्रापृष्ठ पर ज्ञापित सूचना के अनुसार श्री वर्मा जी को यह ग्रन्थ मिहोर-निजामी, गुजरात के प्रसिद्ध कवि श्री गोविन्द गोलानाई की सहायता से प्राप्त हुआ था। श्री वर्मा जी ने अपनी जाधार-प्रति के विषय में अन्य सूचनाएँ नहीं दी हैं।

सम्पादक ने अपनी ओर से पाठ में अधिक परिवर्तन नहीं किया है अतः इस सस्वरण का पाठ भी विश्वसनीय है।

४ सा०—अर्थात् हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की हस्तलिखित प्रति सम्मेलन-सग्रहालय के सूचीपत्र में इसकी सख्या १३४६।२११२ है। प्रति आकार में लगभग ७ इंच चौड़ी तथा १२ इंच लम्बी है। प्रति में केवल ३४ पत्र तथा प्रति पृष्ठ पर ३४ पक्तियाँ हैं। प्रति जिल्दबद्ध नहीं है, यद्यपि पत्रों के फर्में बगल से एक-दूसरे से सिले हुए हैं। अन्तिम पुष्पिका से यह ज्ञात होता है कि नागपुर-निवासी सीताराम ने बाजीराव भोसले के समय में सवत् १८६२ में इसकी प्रतिलिपि की थी। इस प्रति में भोगीलाल-सम्बन्धी छन्द अधिक तथा अष्टम विलास मिलते हैं। प्रति में पञ्चम विलास के अन्त में पुष्पिका नहीं है किन्तु पृष्ठ विलास में छन्दों का सख्या नम १-२ से प्रारम्भ होता है। अन्तिम पुष्पिका इस प्रकार है—“इति रस विलास ग्रन्थ सम्पूर्ण सवत् १८६२ सके १७५७ आषाढ वृष्ण तेरह त्रयोदशी शुभ वासरे भृगु वासरे सीताराम मोतीरामात्मज तेन श्वहस्तेन लिखित पठन पाठनार्थ आत्मा अर्थ परोपकारार्थ। मुकाम नागपुर सहर राजे बाजीबा भोसले। सन् फसली १२४५।”

सा० प्रति का पाठ सामान्य रूप से विश्वसनीय है।

५ नी०—अर्थात् नीलगाँव, जिला सीतापुर की अपूर्ण प्रति इस प्रति के आरम्भ में ग्रन्थ-नाम ‘रस विलास’ न होकर ‘जाति विलास’ है। मध्य के विलासों की पुष्पिका में ग्रन्थ-नाम का उल्लेख नहीं है। मुझे यह प्रति राजा नीलगाँव के राजपुस्तकालय से प्राप्त हुई थी। प्रति आकार में लगभग १० इंच लम्बी तथा ७ इंच चौड़ी है। प्रति में कुल २१ पत्र तथा प्रत्येक पृष्ठ पर २१ पक्तियाँ हैं। प्रति का अन्तिम अक्षर सड़ित होने के कारण इस प्रति के प्रतिलिपिकार का नाम, उसका स्थान अथवा प्रतिलिपि सवत् इस प्रति में नहीं है परन्तु ‘भाव प्रकाश’ तथा ‘उमराव कोप’ आदि जिन अन्य ग्रन्थों के साथ यह प्रति एक जिल्द में बँधी है उनमें से अन्तिम, ‘उमराव कोप’ की पुष्पिका से ज्ञात होता है कि श्री गौरीशंकर दुग्ग ने सवत् १६४३ में इन सभी ग्रन्थों की प्रतिलिपि की थी। इस प्रति में पाठ केवल ‘केरल बंधू’ ५ ४७ तक मिलता है। भोगीलाल-सम्बन्धी अधिक छन्द इस प्रति में नहीं है।

प्रति का पाठ अत्यन्त विश्वसनीय है।

६ ग०—अर्थात् श्री बच्चराज पुस्तकालय, गधौली, जिला सीतापुर की हस्तलिखित प्रति ‘रस विलास’ की यह प्रति आकार में लगभग १४ इंच लम्बी तथा ९ इंच चौड़ी है। पत्रों की सख्या ५१ तथा प्रति-पृष्ठ पक्तियों की सख्या २२ है। प्रति ‘रस मारास — दाम, ‘बाय’ — ब्रजराज, ‘उमराव कोप’ — सुवदा, आदि ग्रन्थों के साथ एक माटे रजिस्टर में बँधी है। वही-वही पंजिल से हादिये पर पाठान्तर भी सग्रहीत हैं। ग० प्रति में पञ्चम विलास के अन्त में पुष्पिका नहीं है एवं पृष्ठ विलास में छन्दों का सख्या-नम १-२ से प्रारम्भ नहीं होता। (देखें सा० प्रति का विवरण) अन्तिम पुष्पिका के अनुसार स्वयं मुगलविधोर मिश्र ने सवत् १६४२ में इन ग्रन्थों की प्रतिलिपि की थी। ग्रन्थ में भोगीलाल-सम्बन्धी अधिक छन्द तथा अष्टम विलास मिलते हैं। प्रति का अन्तिम पुष्पिका इस प्रकार है—“इति श्री नृप भोगीलाल हित बानी देव प्रवास रस विलास शृंगार रस नायिका नायक हाव भाव दस हाव वर्णनो नाम सप्तमो विलास ॥३॥

गमाप्त शुभमस्तु । श्री सबन् १२४२ चैत्र शुक्ल १३ शनी । लिखित मिद पुस्तक जुगलकिशोर मिश्रेण स्वार्थे ॥”

ग० प्रति के पाठ में एकाधिक शाखाओं की अनेक प्रतियों से पाठ-मिश्रण हुआ है अतः यह प्रति अविद्वसनीय है ।

७ गजा—अर्थात् गद्योली की ‘जाति विलास’ की अपूर्ण प्रति इस प्रति के आदि में तथा मध्य में विलासा की पुष्पिका में ग्रथ-नाम ‘जाति विलास’ दिया है । यह प्रति आकार में ‘रस विलास’ की ग० प्रति के प्रायः समान है । इस प्रति में ३० पत्र तथा प्रति-पृष्ठ पंक्तियों की संख्या १६ है । प्रति का अन्तिम अक्षर अपूर्ण होने के कारण प्रति में प्रतिलिपिकार का नाम तथा प्रतिलिपि-संख्या नहीं दिये हैं ।

इस प्रति के पाठ में अन्य प्रतियाँ के पाठ का मिश्रण होने के कारण इस प्रति का पाठ भी अधिक विद्वसनीय नहीं है ।

अन्य प्रतियाँ ‘रस विलास’ की ऐसी प्रतियों का विवरण जिनका उपयोग ग्रथ के पाठ-संपादन में आशिश रूप में हुआ है अथवा जिन्हें अप्रयुक्त छोड़ दिया गया है, इस प्रकार है —

८ आ०—अर्थात् आर्यभाषा पुस्तकालय की हस्तलिखित प्रति काशी नागरी-प्रचारिणी सभा के आर्यभाषा पुस्तकालय में इस पोथी की सूचीपत्र-संख्या १२२ है । प्रति कुल ४४ पना की है तथा इसके प्रत्येक पृष्ठ पर ११ पक्तियाँ हैं । प्रति का आकार लगभग १५ इंच तथा ४ इंच है । प्रति की अन्तिम पुष्पिका खंडित होने के कारण प्रतिलिपिकार की असावधानी से वर्ण तथा मात्रा अनेक स्थलों पर छूट गए हैं । प्रति के पाठ में संशोधन भी कम हुआ है । हाशिये पर पाठान्तर भी एक दो स्थलों पर ही है तथा हस्ताक्षर का प्रयोग भी कम हुआ है । भा० मो० प्रतियों में तथा इस प्रति में पाठान्तर तथा पाठ-विवृतियाँ समान मिलने के कारण हमने इस प्रति का आशिश उपयोग किया है ।

संक्षेप में इस प्रति की विशेषताएँ इस प्रकार हैं

आ० प्रति में भोगीलाल-सम्बन्धी अधिक छन्द नहीं हैं परन्तु अष्टम विलास मिलता है । प्रत्येक विलास के अन्त में भोगीलाल के नाम सहित अधिन छन्द भी आ० प्रति में नहीं है तथा अष्टम विलास के अतिरिक्त किसी भी विलास के अन्त की पुष्पिका में भोगीलाल का उल्लेख नहीं मिलता । प्रति में पष्ठ विनायक के अन्त में पुष्पिका नहीं दी है परन्तु इसके पश्चात् छन्दों का संख्या क्रम १-२ में प्रारम्भ होता है । सप्तम विलास के आरम्भ में ‘रानी राधा हरि सुमिरि’ दोहा नहीं है यद्यपि अत्र तत्र प्रथम, द्वितीय आदि विलासों के आदि में यह दोहा आया है । इस प्रति में भोगीलाल का नामो-ल्लेख केवल अष्टम विलास के प्रथम ‘द्वय जिन्हें मित्रि’ छन्द में, अष्टम विलास के अन्तिम दो छन्दों में तथा प्रति की अन्तिम पुष्पिका में हुआ है ।

इस विवरण से यह प्रगत है कि प्रति का पष्ठम विलास तब का पाठ भा० मो० प्रतियों की शाखा में एक इस स्थान के पश्चात् ग्रथ के अन्त तक का पाठ ग्र०, ग०, सा० प्रतियों की शाखा की शिमी प्रति से लिया गया है । इन प्रकार यह प्रति विभिन्न शाखाओं की प्रतियों से पाठ-मिश्रण द्वारा संवार हुई है । पाठ-मिश्रण के आधार वाली इन दोनों ही शाखाओं की प्रतियों का गणान-नाम के निमित्त चरण हो चुका है अतः हमने आ० प्रति से पाठान्तर केवल द्वितीय

विलास के अत तक दिया है यद्यपि हमने इसके आगे भी पाठान्तरो की तुलना करके देल लिया है।

६ आर०—अर्थात् आर्यभाषा पुस्तकालय की 'रसविलास' की प्रति पुस्तकालय में प्रति की सूचीपत्र-संख्या ११५ है। प्रति आकार में लगभग ७ इंच लम्बी तथा ६॥ इंच चौड़ी है। प्रति में ११४ पत्र तथा प्रति पृष्ठ पर १५ पक्तियाँ हैं। प्रति बिलकुल आधुनिक है क्योंकि सबत् १९७७ में ग० प्रति से इसकी प्रतिलिपि हुई थी। ग० प्रति की सभी विशेषताएँ तथा पाठ-विकृतियाँ इस प्रति में मिलती हैं एव ग० प्रति संपादन कार्य में प्रयुक्त हुई है, अत इस प्रति को महत्वहीन जानकर हमने छोड़ दिया है। अन्तिम पुष्पिका इस प्रकार है—'समाप्तम शुभ-मस्तु। श्री सबत् १९७७ श्रावण सुदि पूर्णिमा १५॥

१० हिर०—अर्थात् हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद की 'रस विलास' की प्रति प्रति आकार में लगभग १३ इंच लम्बी तथा ८॥ इंच चौड़ी है। प्रति में ७९ पत्र तथा प्रति पृष्ठ ३२ पक्तियाँ हैं। यह प्रति भी अत्यन्त आधुनिक है। प्रति के अन्तिम पृष्ठ पर प्रतिलिपिकार की टिप्पणी है, "नागरी प्रचारिणी सभा ने हिन्दुस्तानी एकेडमी के निमित्त यह प्रतिलिपि कराई।' इस प्रति के पाठ की परीक्षा करने पर ज्ञात होता है कि यह प्रति भी आर० प्रति की प्रतिलिपि है अत इसे भी अनावश्यक जानकर छोड़ दिया गया है। इस प्रति की तथा आर० प्रति की अन्तिम पुष्पिकाएँ बिलकुल समान हैं।

११ आजा०—अर्थात् आर्यभाषा पुस्तकालय की 'जाति विलास' की अपूर्ण प्रति . पुस्तकालय में प्रति की सूचीपत्र संख्या ११७ है। प्रति में ५४ पत्र है तथा प्रति पृष्ठ पर पक्तियाँ की संख्या १५ है। प्रति का आकार ७ इंच लम्बा तथा ६॥ इंच चौड़ा है। प्रतिलिपिकार का नाम तथा प्रतिलिपि यद्यत् यद्यपि प्रति में नहीं है परन्तु आर्यभाषा पुस्तकालय की देवदत्त भाव-विलास—सूचीपत्र-संख्या ११४, शब्द रसायन—सूचीपत्र-संख्या ११२, ग्रन्था की प्रतियों का लेख तथा आजा० प्रति का हस्तलेख एक ही है। इन पूर्वोक्तलिखित प्रतियों की पुष्पिका में प्रति लिपिकार का नाम बटुकप्रसाद कायस्थ है इसलिए आजा० प्रति के प्रतिलिपिकार भी यही सिद्ध होते हैं। आजा० प्रति अत्यन्त आधुनिक है। इस प्रति में गजा० प्रति के समान केरल-बधू तक ही पाठ है। इस प्रति के पाठ की तुलना गजा० प्रति से करने पर यह गजा० प्रति की प्रतिलिपि सिद्ध होती है। गजा० प्रति संपादन कार्य में स्वीकृत हो चुकी है अत आजा० प्रति का उपयोग नहीं किया जा रहा है।

१२ हिजा०—अर्थात् हिन्दुस्तानी एकेडमी, इलाहाबाद, की 'जाति-विलास' शीर्षक सङ्घित प्रति हिजा० प्रति में ३९ पत्र तथा प्रतिपृष्ठ ३२ पक्तियाँ हैं। प्रति आकार में १३ इंच लम्बी एव ८॥ इंच चौड़ी है। इस प्रति में भी गजा० प्रति के समान केरल-बधू तक ही पाठ मिलता है। हिजा० प्रति के समान इस प्रति की प्रतिलिपि भी नागरी प्रचारिणी सभा वाणी, ने एकेडमी के लिए कराई थी। गजा० प्रति की सभी पाठ विकृतियाँ इस प्रति में मिलती हैं एव गजा० प्रति पाठ-संपादन के निमित्त स्वीकार हुई है अत हमने इस प्रति को भी छोड़ दिया है।

प्रतियों की अतरंग परीक्षा : भा० मो० प्रतियाँ : पाठ-विकृति

१ : १६ देवी ।

“आठहू पहर कर आठो आठी भिद्धि लिये सखट में सेवक सहाइ सदा दाहिनी ।”

अर्थात् सिद्धाहिनी देवी सर्वदा अपने भक्तों के मकट में उनकी सहायिका होनी है। भा० मो० प्रतिया में सेवन-ग्रमाद में सेवक में सेवक पाठ है। ‘सेवक में सेवक’ का कोई सगत अर्थ नहीं है अतः ‘सखट में सेवक’ पाठ, जो ‘सुखसागर तरंग’ में १६ तथा २४६ मस्यामा पर आये इसी छन्द में भी मिलता है, यहाँ स्वीकृत हुआ है।

१ २६ घाघ-सखण ।

‘घारे पाले प्याइ पै स्यानी करे मियाय ।”

‘घार’ का अर्थ है बाल अर्थात् ‘बालिका’—‘घारेई बंस बही चतुरे ही—’ जो स्त्री बालिका को पसपान करावे, उसे मिखा पडा कर स्यानी बनावे, उसे घाय कहते हैं। भा० मो० प्रतिया में ‘घारे पीठे’ पाठ है, जिसमें ‘बान्याबन्धा के परचात् जो अपना पसपान कराये—’ आदि भ्रान्त अर्थ निवृत्ता है।

१ ३३ मखी नायक में ।

“कुजनि के घारे मनु केनि रम घारे मान तातनि के छोरे बाल आवति है नित को।”

भा० मो० प्रतिया में प्रतिनिधिकार ने कदाचिन् ‘मनु’ के ‘मन’ रूपान्तर को पाठ-विकृति जान कर ‘मैन’ पाठ-संशोधन अपनी ओर से किया है। ‘मैन केलि रस’ पाठ अमगत है। कवि का अभीष्ट भाव है, ‘मानो केलि-रम में निमग्न होकर बाला कुज में आवती है।’ ‘बाध्य रमापन’ म ६ ३४ मस्या पर भी ‘मनु’ पाठ स्वीकृत है।

इसी छन्द के तृतीय चरण में ‘घारे घोर जोवन’ के स्थान पर भा० मो० प्रतियों में ‘जवन’ विकृत पाठ है। यह पाठ निरर्थक होने के कारण विकृत माना गया है।

१ : ४४

“नन्द कुमार जत अति ठाकुर राये इत अति ही ठकुराइन ।”

भा० मो० प्रतिया में ‘इत जत’ पाठ है, तदनुसार चरण का अर्थ होगा, “नन्द कुमार यहाँ यहाँ ठाकुर हैं और राधिका यहाँ (—ही) अति ठकुराइन हैं।” इस पाठ की निरर्थकता स्पष्ट है।

१ ४५

“श्री बृषभानु के नीन को शेषक एई है राधिका राजकुमारी ।”

भा० मो० प्रतियों में विकृत पाठ है दाह कराह है। ‘एई’ में ‘राई’ पाठ-विकृति ‘ए’ के प्राचीन रूपान्तर में भ्रम होने से सम्भव है। सर्वथा निरर्थक होने के कारण हमने इस पाठ को विकृत माना है।

२ : २८

“सोने से सोहने गातन सोहै सुहागिनि की अति सूही सुहाई ।”

‘सूही’ का अर्थ होना है खाल रग की साडी। यहाँ चूनी की ओर भी कवि वा सनेत सकता है। भा० मो० प्रतियों में पहले आये ‘सोहै’ पाठ के कारण लेखन-प्रमाद से ‘सोहै’ सुहाई’ पाठ हो गया है। पद-विन्नाम करने पर इस पाठ की अमगति प्रगट होती है।

२ : ३१ तमोरिनि ।

“रगित चोली तें टोली खरी चुनि चाइ सों गांठि उरैरि अमंठी ।”

‘चोली’ पान रखने की डलिया को कहते हैं—“फेरि फेरि फननि फनीस पलटत जसि टोली खोलि टोली ज्यो तमोली पाके पान की”—गुमान। तमोरिनि अपनी डलिया से पान की एक अच्छी टोली चुनती है और पान निकालने के लिए कानि की डोर का सिपटा हुआ मिरा कीचकर डमकी फेर खोलती है—इसी भाव को कवि ने ‘चाह मो गांठि उरैरि अमंठी’ शब्दों में प्रगट किया है। भा० मो० प्रतियों में आलोच्य स्थल पर ‘सो आउं’ पाठ है। ‘आउं’ का अर्थ अच्छे होने के कारण इस पाठ की चरण में सगति नहीं बँठती। स्वीकृत पाठ ‘मुगनागरतग’ २६८ सख्या पर आये इसी छन्द में भी मिलता है।

३ : ११

“...प्रेमररम पागी अनुरागी रखियनि मैं ।”

प्रतिनिषिकार के दृष्टि-भ्रम से प्रथम चरण के ‘रग रखियनि में’ पाठ पर जाने में भा० मो० प्रतियों में ‘रखियनि’ के स्थान पर ‘रगियनि’ पाठ मिलता है।

३ : १६

“रासै समाधान ममाधान के दिखियनि को ईगुर सी अगनि गुराई है पंवारि में ।”

भा० मो० प्रतियों में ‘सै अगनि आंगुरी’ पाठ है। निरर्थक होने के कारण यह पाठ-विद्विनि अप्राह्य मानी गई है।

३ : ३३

“मोहे महा पन्नग अनेक अग नग लग वान दै दै कोल भीन केते भीमि रहे हैं ।”

योगिन ने अपने मग्न-वस्त से अनेक विकराल मर्षों, पर्वतों तथा पक्षि-पल्लवों तक को अपनीभूत कर लिया है। ‘अग’ तथा ‘नग’ समानार्थी शब्द हैं, दोनों ही का अर्थ है—‘वृक्ष, पर्वत, मूष, सर्प’। भा० मो० प्रतियों में वर्णों के विपर्यय से ‘अनेक अनगन लग’ पाठ है। अनेक तथा ‘अनगन’ का अर्थ एक ही होने से हमने इस पाठ को वर्ण-विपर्ययजन्य पाठ-विद्विनि माना है। तुलना, “अग नग नाग नर किलर अगुर मुग”—‘मुमिलविनोद’ ८ २ १।

४ : १०

“अनगिने दिनन अनूप दुनि आनन की देखत ही उपजै जनूठो अनुराग है।”

भा० मो० प्रतियों में ‘उपजै’ के स्थान पर ‘उपजत’ पाठ होने में चरण में एन वर्ण की नियम-विरुद्ध पाठ-वृद्धि होती है यत हमने इस पाठ को भी विवृत माना है।

४ : २७

“आपने ओक रहै अयनोवि तिनोक की मोक की मोक सदा निरजोमी।”

‘ओक’ का अर्थ है ‘घर’, उदा० सग ‘ससोर वसी वन ओक’—काव्यरसायन ६ ८६। परन्तु लेखन-प्रमाद से भा० प्रति में ‘ऊक’ तथा मो० प्रति में ‘ऊक’ पाठ मिलता है। कुल-वती नायिका को प्रस्तुत सदभं में ‘घर में’ रहने के अर्थ में ‘ओक’ पाठ ‘ऊक’ अर्थात् ‘उत्सा’ की अपेक्षा अधिक सगत है। ‘ओर’ से ‘ऊक’ पाठ विवृति प्रतिलिपिकार के दृष्टिभ्रम में अथवा सामान्य लेखन-प्रमाद से सम्भव है।

५ : २

“जाति बर्म गुन देन जर वान यहिअम जानु।

प्रवृति सख नायिका के आठौं भेद बखानु॥”

भा० मो० प्रतियों में रेखांकित स्थान पर ‘आठौं वेद’ तथा द्र० प्रति में ‘आठौं अग’ पाठ है। इनमें से द्र० प्रति की पाठ-विवृति पिछले विनाग में नायिका के अप्याग का वर्णन होने के कारण प्रतिलिपिकार के प्रमाद में हुई है। भा० मो० प्रतियों का ‘आठौं वेद’ पाठ भी असुद्ध है क्योंकि वेदों की संख्या आठ नहीं है। कवि ने प्रस्तुत विनाग में जानि, कमं, गुण आदि जिन आधारों पर नायिका-भेद किया है, प्रस्तुत दोहे में कवि ने उनकी नामावली गिनाई है। इनकी संख्या भी आठ है अतः हमने यहाँ ‘भेद’ पाठ को मूल का माना है। भा० मो० प्रतियाँ की यह पाठ-विवृति प्रतिलिपिकार के सामान्य लेखन प्रमाद से सम्भव है।

५ : १५

“बाइक बाचिक पनिहि रति मनमा उपजनि जुवन।

गुन तन कुल धर्म को सो परतीया उवन॥”

स्त्रीया नायिका रति के अवसर पर तन, मन और बचन में अपने स्वामी में अनुरक्त होती है परन्तु परकीया तन-वचन में अपने पति के लिए अनुराग प्रगट करने हुए भी मनमें किसी अन्य पुरुष में लिप्त होती है। इस मदभं में ‘उपपति जुवन’ पाठ गलत है किन्तु ‘जुवन’ के नैबट्य के कारण लेखन-प्रमाद में ‘उपपति’ के स्थान पर भा० प्रति में ‘उपजत’ तथा मो० प्रति में ‘उपजति’ पाठ मिलता है। ये दोनों ही पाठ निरर्थक होने के कारण पाठ-विवृति की कोटि में आते हैं।

५ : ४३

“बोतनि घाति तिनोरनि गो दिन ही दिन दूनुन नेट नगारं।”

अर्थात् मालवदेश की सुन्दरी स्त्री अपनी मधुर वाणी, अपनी सुंदर चाल तथा अपनी मनोहारी चितवन से दर्शक के मन में दिन-प्रतिदिन दूना स्नेह उत्पन्न करती है। 'बोलनि' पाठ इस प्रकार सगत है, परन्तु लेखन-प्रमादवश मात्रा छूट जाने से भा० मो० प्रतियों में बेलनि चालि' पाठ मिलता है। यह पाठ किसी प्रकार भी सगत नहीं है।

५ : ५६

"काम ह्य मन्दरा सी देव काम कदरा सी इदिरा को मंदिर सु सुदरी सुबीर की।"

'मन्दरा' एक प्रकार के वाद्य-यंत्र का नाम है—'मदरा तबल सुमर खजरी डोलक धामक"—सूदन। हिन्दी-शब्द सागर में ही 'मदिरा' का अर्थ 'मजीर' दिया है। अस्तु। वाद्य यंत्र के अर्थ में उद्धृत चरण का 'मदरा' पाठ सगत है परन्तु भा० मो० प्रतियों में प्रतिलिपिकार ने कदाचित् 'मदरा' को निरर्थक जानकर इसके स्थान पर 'सुदरा' पाठ अपनी ओर से रख दिया है—'सुदरी' पाठ वह आगे आकारान्त 'कदरा' शब्द होने के कारण नहीं रख सका। 'सुदरा' पाठ निरर्थक होने के कारण पाठ विकृति की कोटि में आता है।

६ : २९

'ऐसी तरुणाई आई ता सुरतरगिनि सो सिसुता ज्या सुरसुता मिलि बली बपि कं।'

वय प्राप्त करने पर मुग्धा नायिका के शरीर में तरुणाई का संचार होता है तो ऐसा सगता है जैसे सिद्धता-रूपी गंगा से तरुणाई-रूपी सूर्यसुता यमुना का सगम हो रहा हो। आलोच्य स्थल पर भा० मो० प्रतियों में प्राप्त 'सुरासत' पाठ अर्थहीन होने के कारण विकृत है।

६ : ५०

तिनके लच्छन भेद सब जानहु नाम समान।

है प्रसिद्ध ससार में जाति सुभाइ प्रमान ॥"

यहाँ 'नाम समान' से कवि का तात्पर्य इस दोहे से ठीक पहले आये सत्त्व भेद दोहे में प्रयुक्त खर, बपि, काग आदि सजाआ से है परन्तु मो० प्रति में लेखन-प्रमाद से 'नीम' तथा भा० प्रति में सपादक अथवा प्रतिलिपिकार द्वारा इस पाठ को सार्वक रूप देने के कारण 'नीब' पाठ मिलता है। प्रसंगानुसार ये दोनों ही पाठ असगत हैं।

७ : १६

"ओच ही ऐंचि के निमक भरि अक प्यारी पारी परजक सो ससक अकुलाति है।"

भा० मो० प्रतिया में चरण का पाठ विकृत रूप में इस प्रकार मिलता है—"ओच ही ओच के निसव भरि अब प्यारी पाटी परजक साँस सकि अकुलानि है।" 'ओच के' पाठ-विकृति 'ओच ही' पाठ के कारण लेखन प्रमाद से हुई है। 'ओच ही' का समानार्थी होने के कारण इन प्रतिया का यह पाठ अप्राप्त है। दृगी प्रकार 'सकि' अर्थात् सप्तकित होने एवं अकुलाने के परस्पर-विरोधी भाषों का एक समय पर होना असगत है, अतः हमने 'साँस सकि' पाठ को भी

वदत माना है। स्वीकृत पाठ 'सुखसागरतरंग' में भी ७८१ मस्या पर इसी छन्द में मितना है।

७ : ६२

"घोर लगी घर बाहरिहू डर नूत पलाम लगे पजरे से।"

चरण के डर, नूत आदि शब्द वृद्धवाची हैं, देने—“चपक दाडिम नूत महाडर साडर डार टरावनी फूली।” ध्यान रहे कि इन दोनों ही स्थलो पर भय के अर्थ में डर शब्द नहीं आया है क्योंकि पहले उद्धृत चरण में इसी अर्थ में 'घोर' तथा द्वितीय चरण में 'डरावनी' शब्द हैं ही, अतः मेरे विचार में 'डर' का अर्थ भय मानना अनुचित होगा। 'नूत' शब्द भी न तो 'नवीन' के अर्थ में आया है, जैसा कि पंडित वृष्णविहारोजी का विचार है ('दिव और विहारी, पृष्ठ २७४) और न यह आमवाची ही है, जैसा कि मिश्रवधु मानते हैं ('दिव-मुघा', पृष्ठ १२८)। मेरे विचार में मसृत्त के 'नुत्त' जयवा 'नूद' से 'नत' शब्द की व्युत्पत्ति सम्भव है। मौनियर विलियम्स ने अपने मसृत्त-अंग्रेजी कोष में 'नुत्त' का अर्थ 'एक प्रकार का वृक्ष' तथा 'नूद' का अर्थ 'शहतूत का एक भेद' दिया है। शहतूत का फल जब पक्कर कुछ काला होता है तो शहतूत का वृक्ष वास्तव में जला हुआ-सा मालूम देता है। पलास के फूलने पर उसकी पाली सर्वप्रसिद्ध है, अनेक कवियों ने जलते अगारों से इसकी समता की है। (स्मरण रहे कि शहतूत तथा पलास के वृक्ष प्रायः एक ही ऋतु में फरने-फूलते हैं।) कवि कहता है कि ये वृक्ष प्रज्वलित हुए-जैसे दिखलाई देने हैं। 'पजरे' यहाँ 'जले हुए, प्रज्वलित हुए' के अर्थ में आया है। ('ज्यों पजरे पर सोन।') भा० मो० प्रतियों में आलोच्य स्थल पर 'लगी उजरे से' पाठ मिलता है। लाल पलास का 'उजर' दिखलायी देना असंगत है एवं चतुर्थ चरण के "—मनि मन्दिर आज अहो उजरे-उजरे मे" पाठ में यही शब्द आने के कारण भी प्रथम चरण में 'उजरे से' पाठ नहीं होना चाहिए।

लिपिजग्य विकृति :

१ : ५८

"नल नग जाल माल अंगुरी विद्रुम माल नूपुर मराल ये अपार रस आउटे।"

नायिका की अंगुलियों के रत्नाभ छोटे मूंगे की माना-जैसे लगते हैं अतः 'विद्रुम' पाठ संगत है, परन्तु भा० मो० प्रतियों में 'विद्रुम' के स्थान पर निधि-भ्रम में 'विधुप' पाठ मिलता है। यह निरर्थक पाठ बिट्टि 'द्र' तथा 'म' वर्णों में भ्रमण 'ध' तथा 'प' का भ्रम होने से हुई है। 'मुषमागरतरंग' में २५७ मस्या पर इस छन्द के पाठ में 'विद्रुम' का पर्याय 'प्रवान' मितना है।

५ : ७

"...देगि देगि दूनो दिग साध उपजति है।"

केवल भा० मो० प्रतियों में 'न' में 'त' का भ्रम होने से 'दूती' विकृत पाठ मिलता है। स्वीकृत पाठ 'गुजानविनोद' में ५६, 'मुषमागरतरंग' में १७३ मस्या पर तथा अन्य प्रयोगों में आये दूती छन्द में मितना है।

५ : ५२

“रति लागै योनी जाती रमा रचि योनी लोचननि ललचौनी मुख जोति अवदात की।”

‘योनी’ का अर्थ हिन्दी-शब्दसागर में इस प्रकार दिया है (१) गाँव में काम करने वाले लोग जिन्हे अनाज की राशि में से कुछ अन्न मिलता है। (२) नाई, वारी, घोवी आदि काम करने वाले जो विवाह-आदि अवसरों पर इनाम पाते हैं। उ०... (ख) “चलो योनि सब गोहने फूलार लं हाथ। विश्वनाग गइ पूजा पदुभावति के साथ।”—जायसी। ध्यान रहे कि यहाँ प्रश्न रमा के रचि का नहीं ‘जाकी’ अर्थात् नायिका की रचि का है अतः ‘रचि’ को रमा से सलग्न करते ए पद का अर्थ इस प्रकार करना कि “रमा की रचि भी योनी अर्थात्, अपूर्ण अथवा अधूरी है।” युक्ति होगी। अतः यहाँ ‘योनी’ रमा के लिए तुच्छ, हीन जाति वाली सामान्य स्त्री के अर्थ आया है। अर्थ होगा, “जिसकी रचि के आगे रमा भी योनी ही लगती है।” परन्तु ‘प’ में ‘ब’ का आम होने से भा० मो० प्रतियों में ‘रचि योनी’ पाठ है। ‘योनी’ पहले ही आ चुका है इसलिए ही इस शब्द की आवृत्ति असंगत है।

६ : १२

“गरे पटु डारि करै धेती मनुहारि ”

मो० प्रति में ‘डारि’ पाठ लिपि-रूपान्तर से यो मिलता है ‘गरि’। भा० प्रति के प्रति-व्यंकार ने कदाचित् इससे अभ्रित होने के कारण रखाचित् स्पल पर अपनी प्रति में ‘रारि’ पाठ रखा है। भगवने के अर्थ में यह पाठ ‘मनुहार करने’ के साथ स्पष्ट रूप से असंगत है।

६ : ३७ प्रथम तथा तृतीय चरण।

“वे दिन नाहि भद्र भय के जब भीतै भई भुकि कं निम्बई ही।”

हीठ भई ढिग सोवत स्याम के वाम कला लिपि ज्यो लिखई ही।”

भीतै भई के स्थान पर मो० प्रति में ‘भातै नई’ तथा इसे सार्थकता प्रदान करने के हेतु भा० प्रति के सम्पादक ने ‘धातै नई’ पाठ-संशोधन किया है। इन प्रतियों में ‘सोवत’ के स्थान पर ‘सोवन’ एवं ‘लिपि’ के स्थान पर ‘लिखि’ विभूत पाठ भी मिलता है। अन्तिम दो पाठ-व्यंक्तिर्था लिपि में दृष्टि-भ्रम के कारण सम्भव हैं। ‘लिपि’ से ‘लिखि’ पाठ-व्यंक्ति सन्निकट के लिखई ही शब्द के कारण लेखन-प्रमाद से भी हो सकती है। स्वीकृत पाठ ‘भवानीविलास’ में २ = तथा ‘मुग्धमातरंग’ में ४४६ सख्या पर इस छन्द में भी मिलता है।

७ : ७

“लघु मडन विच्छित में मन अभिमान विसेप।

विभ्रम सो जु प्रमाद तैं उलटै भूपन भेष ॥”

‘म’ में ‘स’ का भ्रम होने के कारण भा० मो० प्रतियों में ‘प्रमाद तैं’ पाठ मिलता है।

नायक-नायिका जहाँ प्रमादवश वस्त्राभूषण धारण करने में कोई भूल कर जाते हैं तो वहाँ विभ्रम आव होता है। अतः ‘प्रमाद तैं’ पाठ संगत है। (देखें, विभ्रम-उदाहरण ७ - १५)

त्रुटि पाठ :

१ . ४७

“तत्रहो तौ देव देवी देवता भौ ह्येभिनि मी लोभति सो रीभति सो रुनति गिमानो सी ।।”

भा० मो० प्रतियों में मन्दा के विपर्ययसे तथा एक वर्ण नुटित होने के कारण ‘रीभति लोभति सो’ पाठ है। मनहरण छन्द के ३१ वर्णों के चरण में एक वर्ण न्यून होने से छन्दमग दोष होता है।

५ २३ से ३३ तक मर्या के छन्द भा० मो० प्रतियों में नहीं हैं। इनमें से २५ से २७ सख्या तक मध्यमा तथा अथमा नायिकाओं के उदाहरण-छन्द हैं। कवि ने ५ १६, २० दोहों में सख, रज तथा तम, इन गुणत्रय के आधार पर नायिकाओं को क्रमशः उत्तम, मध्यम तथा जघम कौटि में विभाजित किया है। भा० मो० प्रतियों में ५ २२ सख्या पर केवल उत्तमा नायिका का उदाहरण है अतः इन प्रतियों में अन्य भेदों के उदाहरण-छन्द भी होने चाहिए। फिर कवि ने २७ से ३३ मर्या के दोहों में मगध, कोमल आदि उन देना की सूची दी है जिनकी कामिनियों का वर्णन उमने देश-भेद के अन्तर्गत पञ्चम विलास में किया है। भा० मो० प्रतियों में ये दोहों भी नहीं मिलते हैं। अन्यत्र भी कवि किसी विषय का ममारभ करने के पूर्व उसकी रूपरेखा अथवा भेद-प्रभेद की सूची देना आया है। इसलिए हमने यहाँ भी देवों की नामावली के इन दोहों को कविहृत माना है। भा० मो० प्रतियों का समान आदर्श इस स्थल पर उद्धृत था, इस कारण ये सभी छन्द इन प्रतियों में नुटित हैं।

५ : ४८

“बाहे सजमान को सराहै सदा प्रीतमहि प्रीनि को निवाहै रति रोनि अनि जागरी ।।”

मो० प्रति में सपूर्ण चरण नुटित है एव भा० प्रति में इन चरण के स्थान पर पाठ है—
“सुन्दर सुराम बास कोमल बलानिधान जानत तहाँ न ताहि चाहि चिन जागरी ।।” ग० प्रति में पादन पर यही पाठ दूसरे हस्तलेख में ‘द्वितीय पाठ’ के रूप में दिया है। भा० प्रति के पाठ की स्वीकृत पाठ से तुलना करने पर इनमें रचनाकार की आत्मीयता नहीं मिलती अतः हम इस पाठ को भा० प्रति के सम्पादक द्वारा प्रक्षिप्त मानते हैं।

६ : ३८

रागी शिक्षा उदाहरण-छन्द केवल भा० मो० प्रतियों में नुटित है। ६ . ३६ मन्दा पर आये दोहे में कवि मय्या-उदाहृतों तथा मुग्धा-शिक्षा के प्रमग की सूचना पहले ही दे आया है, “मय्यनि सग उदाहृतो मय्यनि शिक्षा जानि ।—” तथा ६ . ३७ सर्या पर ‘उदाहृतो’—उदाहरण-छन्द का घुना है अतः हम मान लेते हैं कि प्रतिलिपिकार के प्रमाद से इन दो प्रतियों में यह छन्द छूट गया है।

७ : ३६

“चित्त कोटि कला उलटै पलटै पल ही पल ज्यो मृग वागरि के ।”

भा० मो० प्रतियो के पाठ मे २४ वर्णों वाले दुमिल सर्वधा के उपर्युक्त चरण से ‘चित्त’ शब्द ऋटित होने के कारण छन्द भग-दोष होता है ।

नी० गं० गंजा प्रतियाँ . पाठ-विकृति

१ : ५२

“चेटक सी चालि चित चोट सी चितौनि हांसी

ठक की मिठाई भौह फांसी की सी लागरी ।”

नी० गं० गजा० प्रतियो मे चरण का पाठ इस प्रकार मिलता है—“ठग की सी फांसी फांसी फांसी लागरी ।” इस पाठ मे ‘ठग फांसी’ प्रयोग तब तो ठीक है—देव ने अन्यत्र भी ऐसा प्रयोग किया है—परन्तु दूसरी ‘फांसी’ लगाना अनावश्यक है अतः हमने इस पाठ को विकृत माना है । घोड़े की तेज चाल के साथ नायिका की चाल तथा हृदय मे ठूक उठाने वाली उसकी हँसी के साथ ठग की मिठाई के समान उसकी हँसी तथा उसकी भौह-फांसी की समति नहीं बैठती है । मेरे विचार से नी० गजा० प्रतियो मे यह असंगत पाठ-प्रक्षेप इन प्रतियो के समान आदर्श मे चरण का यह अर्थ ऋटित होने के कारण हुआ है क्योंकि भा० प्रति मे यह सम्पूर्ण छन्द नहीं है और मो० प्रति मे केवल यही तृतीय चरण ऋटित है और इसी कारण प्रतिलिपिकार ने भा० तथा मो० प्रतियो मे सम्पूर्ण छन्द तथा सम्पूर्ण चरण का पाठ छोड़ दिया है । नी० गं० गजा० प्रतियो के पाठ मे एक वर्ण कम भी है ।

१ : ५४

“जाती ही जो उत ये जो मिल कहूँ पावो समी कहिवे को ठिकाने ।”

नी० प्रति मे ‘उत चा जु’ तथा इसी पाठ को सशोधित करके गजा० प्रति मे ‘उत चीजु’ पाठ मिलता है परन्तु दोनों ही पाठ असंगत हैं । सम्भवतः गं० प्रति मे भी ‘बे जो’ पाठ बाद मे प्रतिलिपिकार द्वारा सशोधित होने के कारण मिलता है ।

४ : २८

“पार न लहत गहिराई न गहत देव केवल सुयाई मधु जैसे भक्तिपन मे ।”

इस कुतवती नारी मे मधुमखिखा से मिलने वाले मधुर मधु के समान केवल सरलता ही सरलता है । इस अर्थ मे ‘मधु जैसे भक्तिपान मे’ पाठ संगत है परन्तु नी० गं० गजा० प्रतियो मे ‘मधु’ के सान्निध्य के कारण लेखन-प्रमाद से हुआ ‘मधु भैसे भक्तिपनि मे’ विवृत पाठ मिलता है । हमने इस पाठ को निरर्थक होने के कारण विवृत माना है ।

पर्याय :

१ : ४६

“काम की दूती पढावत तूती चढी पग जूती वनात लपेटा ।”

नी० ग० गजा० प्रतिया मे ‘तसै पग जूती...’ पाठ है ।

१ : ५३

“आपने ओछे हिये में धुराइ दयानिधि देव बसाय लिये में ।”

नी० ग० गजा० प्रतियों मे प्राय इन्ही शब्दों के भिन्न सयोजन से पाठ इस प्रकार मिलता है—‘ओछे हिये अपने दिन राति’ ।

लिपिजन्य विकृति

१ : २७

“राई-नीन धारति गुराई देखि अगनि की दुरंन दुराई त्या भुराई सा भिरति है ।”

मुहावरा ‘राई नोन वारना’ है, परन्तु नी० ग० गजा० प्रतियों मे ‘राई नान करति’ पाठ मिलता है । ‘वा’ मे ‘व’ का भ्रम होने से यह विकृति समभव है । इसी प्रकार ‘न’ मे ‘त’ का भ्रम होने से नी० प्रति मे ‘दुरंत दुराई’ पाठ है । इसी पाठ का सशोधित वर ‘दुरत दुराई’ पाठ ग० गजा० प्रतियों मे मिलता है । दोनों ही पाठ असुद्ध हैं । स्वीकृत पाठ ‘मुखसागरतरंग’ मे २५१ सख्या पर तथा ‘सुज्ञानविनोद’ मे २ १५ सख्या पर मिलता है ।

१ ५१

“जो कहिये तो कह्यो नहि जात नहेही जिना घर बेते घले जू ।”

नी० ग० गजा० प्रतियों मे ‘केतो छले जू’ पाठ मिलता है । ‘बेते छले जू’ का अर्थ खीच-तान कर किया जा सकता है ‘कितना कष्ट दिया’, फिर भी ‘घर के साथ इस पाठ की असंगति यथावत् बनी रहती है । बितनों के घर नष्ट करने के ‘घर बेते घले जू’ अनुप्रास-भुवन पाठ संगत है ।

२ २

“पुनि अनेव करि हटवइनि कही अनेव प्रवार ।

गनिवा गने न सन असत चाहे धनी उदार ॥”

‘हटवइन’ दूबानदार अथवा अनाज तौलने वाले की स्त्री को कहते हैं ।

नी० ग० गजा० प्रतिया मे ‘द’ मे ‘र’ का भ्रम होने से निरर्थक पाठ है ‘हटवरन’ ।

२ : १६

“चंदमुड़ी मुरि मद हमें मुख भोनिन को गहि सोन्यो डबा सो ।”

चद्रमुखी नायिका डधर मुँह फेर कर धीरे में हँसती है तो मोतियों के समान उज्ज्वल उसकी दंत-पक्कि चमक उठती है। ऐसा लगना है जैसे किसी ने मोतियों से भरा डिब्बा खोल दिया हो। परन्तु 'ड' में 'ड' का भ्रम होने से नी० गजा० प्रतिमा में आलोच्य स्थल पर निरर्थक पाठ है 'खोन्पो उवा सो'।

५ : १६ परकीया ।

"मीन की चितौनि चिन बीच चुनि खुभी गूँ उभी रहै आउनु करेजनि कमकती ।"

विपत्ति की मारी नायिका पलंग पर जपन पति के साथ पड़ी है, परन्तु मन ही मन वह अपने किसी प्रेमी के साथ रमण कर रही है। उसी प्रेमी का चित्र नायिका के सम्मुख खड़ा है, उसी की सुन्दर चित्रवन नायिका के हृदय में पीड़ा उपलब्ध कर रही है। इस प्रसंग में हृदय में कमजोर के अर्थ में 'करेजनि कमकती' पाठ मगन है परन्तु 'ज' में 'त' का भ्रम होने से नी० ग० गजा० प्रतिमा में 'करेजनि' के स्थान पर 'करेतिन' विद्वृत पाठ मिलता है। पद-भंग करने पर भी इस पाठ की मगति नहीं बँटती, जो हमने इस पाठ को जग्राह्य माना है।

५ : २५ द्वितीय-तृतीय चरण—

"माहन मान करै तो गर परि देव मनैवे की जाइ अरसै ।

कानो नयो सबसो दिगरै यह जाको मरै सु तो बान न दुई ।"

नी० ग० गजा० प्रतिमा में द्वितीय चरण में 'जाप अरसै' तथा तृतीय चरण में 'याको' पाठ है। इन प्रतिमा के समान जादश में विद्यमान 'जाव' पाठ से 'जाप' तथा 'ज' तथा 'द' में उच्चारण-नाम्न होन के कारण भ्रमवशात् 'जावो' से 'याको' पाठ-विद्वृति सम्भव है। स्वीकृत पाठ 'मुदानविनोद' में ४ ५७ एव ५ ५२ सख्या पर तथा 'सुनसागरतरंग' में ४६६ मर्या पर भी मिलता है।

५ : ३७

"बचल दृगबल चपन चितवनि चोरि चिनवनि चाइ चदो खारता जगट ही ।"

नी० ग० गजा० प्रतिमा में 'बाप चटी' पाठ मिलता है। 'बाप' का अर्थ धनुष होने के कारण यह पाठ यहाँ असंगत है। यह पाठ विद्वृति 'चाइ' के 'बाम' रूपान्तर में दृष्टि-भ्रम होने से सम्भव है।

५ ४५ मालद-बधु ।

"बोलनि चालि तिनोवनि मो दिन ही दिन दूगुन नेह बटावै ।"

दिन प्रतिदिन अपने प्रिय के हृदय में अविवाहिक प्रेम उपलब्ध करने का प्रसंग में यह पाठ मगधा मगन है परन्तु नी० ग० गजा० प्रतिमा में 'दू' को भ्रम से 'इ' मनकने के कारण 'ईगुन नेह' पाठ मिलता है। 'ईगुन' पाठ निरर्थक है।

नी० गंजा० प्रतियां

नीचे केवल नी० गंजा० प्रतियों में प्राप्त समान विवृत्तियाँ के कुछ उदाहरण दिये जाते हैं। हमारा विद्वान् है कि इन प्रतियों में और भी अधिक समान विवृत्तियाँ रही होंगी परन्तु गंजा० प्रति के पाठ में उमने प्रतिलिपिकार ने ग० प्रति की महायत्ना में अन्यधिक पाठ-मशोधन किया है। इस कारण समान विवृत्तियों के स्थल गंजा० प्रति में लुप्त हो गए हैं।

अधिक छन्द .

केवल नी० गंजा० प्रतियाँ के द्वितीय विनाम म नागर-नागरी के प्रमग में कम्हेरिन, पमा-रिन, चुरहेरिन, धुनिन, जुलाहिन आदि के जयिन उदाहरण-छन्द मिलते हैं। (देखें, २ ६ छन्द की पाठ-टिप्पणी) हमने 'जाति विलास' की प्रमाणिकता शीर्षक के जन्मगत इन प्रतियों में इन अधिक छन्दा की प्रमाणिकता पर विचार में विचार किया है। (देखें, पृष्ठ ५६)

पाठ-विकृति :

१ ६४

"देवल रावल नागरी एहि विधि बरनों देख।

राजनगर नागरि कहीं ग्यारे सच्छन भेब ॥"

नी० प्रति में 'देव' के स्थान पर 'देख' पाठ 'ब' में 'प' का भ्रम होने के कारण मिलता है। यही पाठ गंजा० प्रति में भी है परन्तु गंजा० प्रति के प्रतिलिपिकार ने दोहरे के अगले पद में मम-नुवाग्न पाठ राने के हेतु 'भेव' के स्थान पर 'भेब' पाठ-मशोधन किया है। 'भेद' के अर्थ में 'भेव' पाठ ही यहाँ सगत होगा।

२. १२

"पाठ बाटू में पट निपट बटोहिन के नेक ही निहारे नेह भरे हेरियनु है।"

नी० गंजा० प्रतियों में लेखन-प्रमाद में 'नेह की' पाठ मिलता है। नायिका के 'किंचित् देखने मात्र' के अर्थ में 'नेह ही' पाठ सगत है तथा 'मुन मागर तरग' में २६७ मध्या पर २मी छन्द में भी प्राप्त होता है।

४: १२

'दखन ही जो बन हरे मुख जँडियनि को देद।

रूप बजाने ताहि जो जन चरो वर सेद ॥"

आलोच्य स्थान पर नी० गंजा० प्रतियों में 'जो बन रहे' पाठ मिलता है। जो देखने मात्र में (गजित्त होकर ?) बन-प्राप्त में भाग जाय उमे यदि रूप बजाने हैं तो यह रूप की वितरण परिभाषा है। इन प्रतियों में यह विवृत्ति भ्रमजन 'जो मन' को 'जोयन' का विवृत रूप मानने के कारण हुई है।

गं० गजा० प्रतियोँ

१ : ४१

“जोवन बजार बँट्यो जौहरी मदन सब लोगन को हीरा बाबे हाथ ह्वँ विवति है।”

ग० गजा० प्रतियोँ मे ‘रस’ पाठ है। ‘हीरा’ म श्लेष है—हियरा अर्थात् हृदय तथा हीरा नामक बहुमूल्य रत्न। चरण मे मदन जौहरी का जो रूपक है उसके अनुरूप केवल ‘सब’ पाठ ही सगत है—सभी लोगों के हीरे-जैसे बहुमूल्य हृदय का उसी मदन जौहरी के द्वारा एक-दूसरे के हाथ क्रय-विक्रय होता है। ग० गजा० प्रतियोँ के ‘रस’ पाठ की सगति न ‘लोगनि’ के साथ बँटती है न ‘मदन’ के साथ, इसलिए यह पाठ अप्राप्त है।

१ ४२

“आई निछावर के मन मानिक गोरस दै रस लँ अधरान को।”

ग० गजा० प्रतियोँ मे ‘रस से अधरान’ पाठ मिलता है। यह छन्द इती ग्रथ मे ७ ५७ सख्या पर भी आया है तथा यहाँ भी ग० प्रनि मे ‘रस से अधरान’ पाठ ही है। ‘रस से अधरान’ पाठ की सगति नहीं बैठती अतः इसे पाठ-विकृति मानना उचित है।

१ ४२

“काहू की वक चितबै की सक न लागै कलक बिसै किन बीसी।”

केवल ग० गजा० प्रतियोँ मे ‘बिसी किन बीसी’ पाठ मिलता है। इस पाठ के ‘बिसी’ तथा ‘बीसी’ शब्द समानार्थी होने के कारण यह पाठ असगत माना गया है। मुहावरा है ‘बीसी बिसै’—‘बीसी बिसै बिरावासिन के—’ अतः ‘बिसै किन बीसी’ पाठ ही सगत है। यही पाठ ‘सुख सागर तरंग’ मे २५८ सख्या पर भी इसी छन्द मे मिलता है।

१ ५२

“बेटक सी चालि चित चोट सी चितौनि हाँसी ठग की मिठाई भौह फाँसी की सी लाग री।”

केवल ग० गजा० प्रतियोँ मे ‘बेटक सी चाल थर चिलचोट’ पाठ है। इस पाठ मे ‘अरु’ के दो वर्ण अधिक होने से नियम-विरुद्ध पाठ वृद्धि होती है तथा ‘त’ म ‘ल’ का भ्रम होने से इसका ‘चिलचोट’ पाठ निरर्थक भी है। इन कारणों से हमने इस पाठ को विकृत माना है।

२ ६

“मोहति सी मन पोहति सी जन छोहति सी तनि भौह लचाबं।”

अर्थ होगा, ‘पटाकिन दसाँको का मन मोहती है, मानो जन्ह ही पिरौती है जब वह विधि-शुन्य होते हुए अपनी भौहें वनिम चर लेती है।’ ‘सुख सागर तरंग’ मे २६४ सख्या पर इसी छन्द मे ‘तन चोहतिसी’ निरर्थक पाठ मिलता है और इस ग्रथ से पाठ-मिश्रण के फलस्वरूप यही पाठ ग० गजा० प्रतियोँ से भी विद्यमान है।

३ . १० वैश्यानी ।

“नव जोरनी की जोरनी की जोरि जोरि रही बंसी बनीनीकी बनी नीरी छवि छानी मे ।”

अर्थात् नवयौवना बनीनी के, जिमने यौवन की दीप्ति प्राप्त कर ली है, उरोजा की बंसी मुन्दर छवि है । यहाँ ‘जोरि’ प्राप्त करने अथवा अजिन करने के अर्थ में आया है । ‘मुउ सागर तरग’ में २८३ सख्या पर आव डमी छन्द मे प्रमादवज भाग्य मे छठ जाने से ‘जोरि’ पाठ मिलता है और इस ग्रथ से यही पाठ ग० गजा० प्रतिभा मे भी प्रक्षिप्त हुआ है । नव यौवना की जोरन-ज्योति का ‘जाना’ उमने ढलने यौवन की ओर मन्वैल करता है । हमने इस पाठ को कविकृत भाव के प्रतिबल होने के कारण विवृत माना है ।

३ . १५ घोरिग ।

“जोवन की एठ अठितान मी उठीहें कुच ओठनि अमेठि पट ऐंठि के घरनि है ।”

भाव स्पष्ट है—पाठ पर कपटे घोने वाली घोविन धुले दृए कपडां को ऐंठ कर, तावि के बिउर या उठ न जावे, किनारे रगनी जानी है । ‘मुव सागर तरग’ में २८६ मख्या पर ‘ऐंठि पकरति है’ पाठ मिलता है । यद्यपि दन्तों को ऐंठ कर पकटना कोई विशेष चित्ताकर्षक मुद्रा नहीं है तथापि इस ग्रथ से प्रक्षिप्त होकर यही पाठ ग० गजा प्रतिभो मे भी विद्यमान है ।

३ . २४ मुनि-त्रिया ।

“बोर करे चनरी चय मोर चबोर मूगी मूग चावर भारी ।”

चमरी अर्थात् सुरागाय अपनी पूँछ मुनि-पनी के ऊपर हुता रही है और मोर, चनोर आदि गेवनों का भारी समूह उनकी सेना में तत्पर है । ‘चय’ का अर्थ है ‘ममूह’, परन्तु ‘मुग्गसागर, तरग’ में २६७ मख्या पर लिपि-भ्रम से मिश्रित ‘चम मोर’ पाठ मिलता है । ‘चम’ पाठ निरर्थक है, फिर भी इस ग्रथ में पाठ-मिश्रण करने में तत्पर ग० गजा० प्रतिभो के प्रतिलिपिकार ने यही पाठ अपनी प्रतिभो में रखा है ।

ह्यान-विपर्यय :

३ . ५३

“पान तानन भूत ना तिन आंतिन रूप अनूप विपे मे ।”

ग० गजा० प्रतिभो में प्रमादवज शर्तों का विपर्यय होने में ‘भूतल’ पाठ है । प्रथम स्पष्ट है, पाठ ‘भूता ही होना चाहिए। घरनी के जवं में ‘भूतल’ पाठ यहाँ अमगन है ।

३ . १६ वादिन ।

“गर्गसमापणसनापानके दिग्दयनि को ईशुर नी अगनि गुरादे है गेवारि मे ।

देव बड़े जगमग्योजोरन जुग्रादे तेमी एने पै जुग्रादे पंठी सरावर वारि मे ।

वाग्गि मुतागि उपाहे नीन वाग्गि तुभाग्गि नी नीगन फिरनि चड़े पारि मे ।

अच न अंगोठे जोदे जोदे कुच पोठे तिये कोछे मे नमल होने कादिनि बद्दार मे ॥”

वाञ्छित का जीवन यो ही ज्योत्स्नामयी रात्रि के समान सुन्दर है। और जो उसने सरोवर में स्नान किया तो उसका सौंदर्य कई गुना अधिक हो गया है ! स्नान करने के पश्चात् अपने गीले केश सुखाती है, अचल से देह पोछती है। 'मुख सागर तरंग' में २६३ सरया पर इन्द्र मे चरणों का क्रम १-३-२-४ है। इस क्रम में पाठ-मिथुन होने के कारण ग० गजा प्रतियों भी चरणों का यही क्रम मिलता है। चरणों के विपर्यय के कारण छन्द में असंगति आती है—नायिका के स्नान करने के पहले ही बाल सुखाने के कारण दुष्क्रम स्पष्ट है।

पर्याय

१ ४०

“.....समाय गईं ब्रजराज के रूप में।”

ग० गजा० प्रतियों में 'शरराइ के' पर्याय मिलता है।

ग० सा० प्रतियाँ पाठ-विकृति

६ ३०

“औरत को गौनो होत विरह को औनो होत तुमही अगौनो दुख देखनि दुखाई यह।”

ग० सा० प्रतियों में आलोच्य स्थल पर भी प्रमादवश 'गौनो' पाठ हो गया है। स्नेह प्रिय नायक के गमन पर विरह का आममन होता है, इसी विरोधाभास की धोर कवि कह सकते हैं। किंतु ग० सा० प्रतियों के अनुसार उसके जाने के साथ ही विरह-यथा के भी समाप होने पर तो नायिका में परकीयत्व की भ्रान्ति उत्पन्न होती है अतः इन प्रतियों का पाठ विकृत है।

॥ ४ हाव नाम

“लीला और विलास भनि जी विच्छिन्न बिलोक ।

विभ्रम बिलकिंचित बहुरि भोट्टाइत बिब्वोर ॥”

'हाव के अन्तर्गत एक भेद का नाम है विच्छिन्न । जहाँ रोडे-से अलवार से ही नायिका के मन में सुन्दर होने का अभिमान जाग उठे वहाँ विच्छिन्न हाव होता है—'लघु मडन विच्छिन्न में मन अभिमान विशेष'—७ ७। (देखें, ७ १४ पर विच्छिन्न का उदाहरण) । ग० सा० प्रतियों में लेखन-प्रमाद से 'विधिप्त' विकृत पाठ मिलता है।

विच्छिन्न हाव के कवि देव वृत्त उपरोक्त लक्षण के साथ नेशव तथा मतिराम द्वारा निरूपित लक्षण की तुलना करना रोचक होगा—

“भूषण भूषण को जहाँ होहि अनादर आन ।

सो विच्छिन्न विचारिये नेशवदास मुजान ॥

“शोरे ही भूपन वसन जहँ सोभा सरसाय ।
ताहि बहत विच्छित्ति हैं जँ प्रवीन कविराय ॥”

—मतिराम, ‘मतिराम-अष्टावली’, पृष्ठ ७४,

व्यंज्य विकृति :

१७

“लरी दुपहरी हरी भरी फरी कुज मजु गुज अलि पुजन की देव हियो हरि जाति ॥”

‘फरी कुज’ का अर्थ है ‘फल-युक्त’ (‘दिव-सुधा’, पृ० १५४), परन्तु ‘कुज’ सज्ञा लिंग है, यहाँ ‘फरी’ को उपरोक्त अर्थ में कुज का विशेषण मानने पर लिंग-दोष होगा, अतः ‘फरी’ को मसूहत ‘फलिन’, अर्थात् फल देने वाले वृक्ष, से सम्बद्ध मानते हैं। ग० सा० यो में ‘क’ में ‘क’ का भ्रम होने से ‘करी कुज’ विद्वान् पाठ मिलता है। कहना न होगा कि ‘करी’ पाठ असंगत है।

व्यंजन-विपर्यय :

५७

केवल ग० सा० प्रतियो में चरणों का क्रम १-३-२-४ है, यद्यपि इस चरण-विपर्यय से अर्थ करने में कोई असंगति नहीं उत्पन्न होती।

व्याधि नामदशा का लक्षण तथा उसके अनेक भेदों के नाम सप्तम विलास के, क्रमशः ८२ वें तथा ८३ वें दोहों में मिलते हैं। केवल ग० सा० प्रतियो में पहले व्याधि भेद वाला ८२ वीं दोहा का दोहा, उसके पश्चात् ८१ वीं मर्या का लक्षण-दोहा आने से स्पष्टदुष्टक्रम उत्पन्न होता है। सामान्य रूप में पहले लक्षण पश्चात् उसके भेदों का वर्णन होता है।

विकृत पाठ :

१८

“बोर्यो बम गिरद में बौरी भई बरजति मेरे

बार बार बार बोर कोऊ पैठो बिनि ॥”

एक गोपिका, जो शीघ्रपण से सम्मुख मपूर्ण आत्मसमर्पण कर चुकी है, अपनी किसी सह-चरिणी को समझाती है, “मैं तो यावली थी, मैंने कुल-मर्यादा नष्ट की और मुझे लोकापलोक का भोग मिला। मैं तुम्हें रोवती हूँ, तुम मेरे द्वार से बार-बार न आया-जाया करो, नहीं तुम्हें भी लोका-पलोक का भागी बनना पड़ेगा।” तीसरा ‘बार’ अनावश्यक न होकर द्वार के अर्थ में संगत है, परन्तु ग० सा० प्रतियो में प्रतिलिपिकार ने इसे अनावश्यक जानकर निकाल दिया है तथा इन दो वचनों की शान्तिपूर्ति ‘पान’ शब्द के प्रयोग द्वारा इस प्रकार की है, “बार बार बोर कोऊ पास ठो जनि ॥” ‘पास पैठना’ अर्थ के विचार से असंगत है एवं अन्तिम चरण में—“कोऊ मोहि

मिलि बंठो जिनि" पाठ होने के कारण भी यहाँ पास पठने में पुनरुक्ति-जैसी लगती है।

ब्र० सा० प्रतियाँ : पाठ-विकृति :

५ ३१

"कहौ विघवन मालवा और अमोर विराट।

बुबुन केरल द्रविड अरु कहि तिलग करनाट ॥"

कवि ने प्रस्तुत दोहे में विघवन, मालवा आदि जिन देशों का उल्लेख किया है, उसने इस विलास के ४२, ४३ आदि सरयाओं के छंदों में इसी ऋम से उस देश की नारियों का वर्णन किया है। ५ ४२ के छंदों में विघवन-बधू का वर्णन है—“महोपवि की बूटी सी बधूटी विघवन की।” इस प्रकार उपर्युक्त दोहे का ‘कहौ विघवन’ पाठ सगत है, परन्तु केवल ब्र० सा० प्रतियों में इसके स्थान पर ‘भारखड अरु मालवा’ पाठ है। पंचम विलास में भारखड-नामिनी का कही वर्णन नहीं मिलता, न ही इन दो प्रतियों में भारखड-बधू का कोई पृथक् उदाहरण-छंद है अतः हमने इस पाठ को प्रक्षिप्त माना है।

६ ४२

“प्रवृत्ति भेद करि नायिका त्रियिष कहन कवि सोइ।

ताते सो कफ पित्त अरु वात प्रवृत्ति तिय होइ ॥”

केवल ब्र० सा० प्रतियों में ‘त्रियिष’ के स्थान पर ‘त्र’ में ‘य’ का भ्रम होने से ‘त्रियिष’ विकृत पाठ मिलता है। सगत पाठ ‘त्रियिष’ ही है क्योंकि कवि ने नायिका की प्रवृत्ति के आधार पर कफ-प्रवृत्ति नायिका, वात-प्रवृत्ति नायिका तथा पित्त-प्रवृत्ति नायिका—ये तीन ही भेद किये हैं।

प्रौढा सुरतान्त :

८ ७६

“उतरत सोच लैं सरतीन सुखदंभी थांभी धेनी

लौगी लसे साज भरे कुल फनि के।”

सुरतान्त पर नायिका रोज पर से उतरने लगती है तो उमरी सखियाँ उसे सहाय देती हैं—इस अर्थ में केवल ग० प्रति का ऊपर-उद्धृत पाठ प्रसंग सगत है। इसके स्थान पर ब्र० प्रति में ‘उरतम सेज लैं’ तथा सा० प्रति में ‘उरतम सेज लैं’ पाठ मिलता है। ब्र० सा० प्रतियों की समान पाठ-विकृति ‘उरतम सेज’ विशेष रूप से उल्लेखनीय है। निरर्थक होने के कारण हमने इन पाठों को अस्वीकृत किया है। ‘सुख सागर तरंग’ में २०६ तथा ५०४ सख्याओं पर इस छंद में भी ऊपर-स्वीकृत पाठ मिलता है।

८ ४३ प्रथम-द्वितीय चरण

“बाल लतान में बाल को बोल मुनो बहु सग सखीन के टेरत ।

बाहू बही हरि राधा यही कहि देव जू देखी इतै भूल फेरत ।”

यह पाठ केवल ग० प्रति में, ‘सुग सागर तरंग’ में ६८ मध्या पर एव ‘भाव विलास’

आदि अन्य ग्रंथों में इसी छन्द में मिलता है । प्रथम स्थल पर ब्र० प्रति में लेखन-प्रमाद से “लाल लतान में बाल को बोल” पाठ हो गया है । ‘लाल लतान’ पाठ अमगत है । इस प्रति से सा० प्रति अथवा उमके आदर्श की तुलना होने के कारण ‘लाल’ पाठ सा० प्रति की शाखा में कदाचित् पार्व पर आया होगा और फिर यही पाठ भूल से मा० प्रति में ‘बाल’ के स्थान पर आ गया है—सा० प्रति में पाठ है, “बाल लतान में लाल को बोल...।” लाल का अपनी सखियों (1) को टेरने की अपेक्षा बाल अर्थात् बाला नामिका का अपनी सखियों को हेरना अधिक सगत है अतः हमने केवल ग० प्रति में प्राप्त तथा अन्य ग्रंथों द्वारा पुष्ट पाठ यहाँ स्वीकार किया है ।

इसी प्रकार द्वितीय चरण का ‘मुग फेरत’ पाठ जो केवल ग० प्रति में एव उपर्युक्त अन्य ग्रंथों में मिलता है, ब्र० प्रति में भूल फेरति तथा सा० प्रति में सुग वैरति विवृत पाठों की अपेक्षा अधिक सगत होने के कारण ग्राह्य है । ‘मुग’ से ‘सुग’ पाठ विवृति प्रतिलिपिकार के भ्रम से नभय है ।

लिपिजन्य विकृति :

८ ११

“देव कहै सोवत निमक जब भरी परजक में मयक मुखी सुपमा सचति है ।”

‘व’ में ‘ब’ का भ्रम होने से ब्र० सा० प्रतियों में सोवत पाठ है । नि दाक होकर पर्यक में सोना ही सगत पाठ है अतः केवल ग० प्रति में प्राप्त ‘सोवत’ पाठ प्रस्तुत स्थल पर स्वीकृत हुआ है ।

८ ६०

पोटि भटू तट ओट कुटी के लपेटि पटी सां बटी पट छोरल ।

नामिका बन-बुज में घी तभी जघानक जल-बृष्टि होने लगी । श्रीकृष्ण ने उसे भीगते देखा तो वह तुरन्त वहाँ जा पहुँचे और उसे कुटी के पीछे अपने शरीर के निवृत्त समेटते हुए अपने पीताम्बर में उसे लपेट कर उमरी बटि में निपटा हुआ गीना बन्ध उतारने लगे । ‘समेटने’ के अर्थ में ‘पोटि’ शब्द सर्वथा सगत है । यह पाठ केवल ग० प्रति में तथा ‘गुजानविनोद’ में ५ ५५ तथा ‘सुग सागर तरंग’ में १५३ मध्या पर इसी छन्द में मिलता है । प्रस्तुत ग्रंथ की ब्र० मा० प्रतियों में कदाचित् इस शब्दाय में जपरिचित होने के कारण प्रतिलिपिकार के प्रमाद से ‘ओट भटू तट...’ पाठ मिलना है । यदि श्रीकृष्ण अपना बन्ध ही ओटने हैं तो फिर आगे ‘लपेटि पटी सां’ पाठ किंग प्रकार मग्न होगा ? इस प्रकार ‘पटी’ का एव गाय ओटना तथा लपेटना अमगत होने के कारण केवल ग० प्रति में प्राप्त ‘पोटि’ मग्न पाठ उपर्युक्त अन्य ग्रंथों के साध्य पर यहाँ स्वीकृत हुआ है ।

नी० गं० गंजा० सा० प्रतियां : पाठ-विकृति :

१ ४१

“निवली तरगिनि निकट नामि हृदतट सोमराजी वन घँसि मुकत अन्हात है।”

कदाचित् ‘हृद’ के अर्थ से अपरिचित होने के कारण तथा ‘तट’ के सामीप्य से सा० आ० प्रतियों के प्रतिलिपिकार ने अपनी प्रति में नद पाठ रखा है। इसी ‘नद’ में दृष्टिभ्रम होने से ‘नट’ पाठ नी० गं० गंजा० प्रतियों में भी मिलता है। ‘नद’ पाठ इसलिए असंगत है क्योंकि पहले ही समानार्थी शब्द ‘तरगिनि’ आ चुका है, जत यहाँ इसकी आवृत्ति अनावश्यक है। ‘नट’ पाठ इसी से निवृत्त होने तथा असंगत होने के कारण अप्राह्य है। ताल के अर्थ में आया ‘हृद’ शब्द ‘हृद’ का रूपान्तर है जो गोल नाभि के लिए उचित उपमान है। हमने इसी पाठ को मूल प्रति का माना है।

३ २१ कहारिन

‘चाहेऊ न चाहे चहँ ओर ते गहत बाहँ गाहक उभाहँ रोकि राहै चित हार की।”

मनोहारिणी कहारिन अपने ग्राहक का मार्ग रोक लेती है, उसे बाँहों में चारों ओर में घेरती है और अपना कार्य सिद्ध करती है। सा० प्रति में ‘गहत बाहँ’ के स्थान पर लिपि-भ्रम से कहल चाहै तथा नी० गंजा० प्रतियों में भी गहन चाहै पाठ मिलता है। यद्यपि ये दोनों ही पाठ अशुद्ध हैं फिर भी ‘बाहँ’ के स्थान पर ‘चाहै’ की समान विकृति महत्वपूर्ण है। निश्चय ही गं० प्रति में भी मूल में यही विवृत पाठ रहा होगा। परन्तु इस प्रति को सुख सागर तरग में २६४ सख्या पर आये इसी छन्द के पाठ से संशोधित करने के कारण अब यहाँ शुद्ध पाठ मिलता है। इसी प्रकार आलोच्य स्थल के शेष अक्षरों का पाठ नी० सा० प्रतियों में इस प्रकार है—ग्राहक घनेरी बोरिचित अपहार की। ‘दोरि’ को ‘दोरि’ के समान मान लेने पर भी ‘घनेरी’ पाठ असंगत ही रहता है। यहाँ गं० गंजा प्रतियों में ‘सुख सागर तरग’ से लेकर यह पाठ रखा गया है, ‘गाहक उभाहँ राहै रोके सु बिहार की।’

३ २६ भीलनी

“उरभति भारनि में सुरभि’ पहारनि में गाढी गूढ गंन छैल भीलनी छपी फिरँ।।”

भीलनी पर्वतीय मार्ग पर स्वच्छन्द विचरण करते हुए वही भाडिया में उतर्भनी है, शव कर मूर्च्छित होती है फिर भी उसका आनन्द कम नहीं होता। नी० सा० प्रतियां में ‘उरभति’ की समति पर अथवा ‘भ’ में ‘स’ का भ्रम होने से ‘सुरभि’ पाठ मिलता है। मेरा अनुमान है कि इस स्थल पर गं० गंजा० प्रतियों में पढ़ते ‘सुरभि’ पाठ रहा होगा परन्तु बाद में ‘सुखसागर-तरग’ में २६६ सख्या पर आये इस छन्द के पाठ की महत्ता म इन प्रतियों में पाठ-संशोधन हुआ है।

३ ३०

“गाहक बलावँ सैन करे दैन करे ‘सौदा’ नैनि मरि जाइ मरि मनेरि पी।”

मा० प्रति मे 'सौदा' का एउ वर्ण वृद्धि होने म केवन 'मो' पाठ मिलता है । नी० प्रति 'दैन करे सोस नैन मुग्गइ जाइ .' पाठ भिन्नता है । यहाँ 'सोम' अपमोस के लिए भी युक्त नहीं हो सकता क्याकि यहाँ खेद का कोई प्रसंग नहीं है । 'सुगसागरतरण' म ३०२ सख्या र इस छन्द के पाठ की सहायता से ग० गजा० प्रतियों मे 'सौदा' पाठ सशोभन हुआ है ।

भा० मो० नी० ग० गंजा० प्रतियां : लिपिजन्य विकृति

५ ३८

'प्रीतम के रूप को सुधा सो अचवनि तऊ प्यासोर्य रहति जो सहति सुख मग ना ।

कथि कहता है नि कालिग देवा की कामिनी मे कामोद्रेग की मात्रा दतनी अधिक होनी है नि यह अपने प्रियतम की रूप सुधा का पान करने पर भी प्यासी ही रहती है, सुरति-सुख प्राप्त किये बिना उमे तृप्ति नहीं होनी । नी० ग० गजा० भा० मो० प्रतिया मे 'सुधा' के स्थान पर 'मया' तथा 'तऊ' के स्थान पर 'तन' विदित पाठ मिलता है । इनगे से प्रथम पाठ 'मया' का अर्थ माया आदि होने के कारण अमगत है । इसी प्रकार प्रीतम के तन को अचवना तथा रति-सुख प्राप्त करना प्रायः समान हैं, यद्यपि 'तन अचवना' स्वयमेव अगत पाठ है । 'तऊ' से 'तन' पाठ विकृति 'उ' के प्राचीन रूपान्तर मे भ्रम होने के कारण 'तऊ' मे 'तनु' होने हुए समव है अत हमने 'तऊ' पाठ मूल वा माना है ।

५ ४०

"तीनिहूँ लोच नचावनि ओक मैं मन के मूत बभूतगती है ।

जापु महा गुणवत गुसादनि पाइनि पूजत प्रानपती है ॥"

नी० ग० गजा० भा० मो० प्रतियों मे आलोच्य स्थल पर 'ऊर' पाठ है । घर के अर्थ म 'ओर' शब्द इसी ग्रथ मे अन्यत्र भी आया है—"जापन ओर रहै अयलोकि तिलोच की लीक तदा निरजोगी ।"—४ २७ । स्मरण रहे नि यहाँ भी भा० मो० प्रतिया मे 'ऊर' विदित पाठ मिलता है । 'ऊर' का अर्थ है 'उल्ला', अत इस अर्थ म यह पाठ यहाँ भी अगत है । उपर्युक्त दोनों ही प्रमर्षो मे नायिका स्वकीया है—पहले प्रमर्ष मे नायिका का स्वकीयत्व छद के दूसरे तरण मे प्रगट होता है अत 'ऊर' की अपक्षा 'ओर' पाठ अपने घर मे रहने हुए नैमोन्म वा गचान के प्रमर्ष मे, मूल प्रति वा पाठ है ।

भा० मो० नी० प्रतियां : लिपिजन्य विकृति :

३ ४७

'कटन वर्म ते मेन्वा नीन नानि बड्ड ताहि ।

दर वृपनी अर बेस्या कहन मुबेरिन जाहि ॥"

'म' मे 'ग' का भ्रम होन ग ना० धो० नी० प्रतिया मे 'मुबेरिन' विदित पाठ भिन्नता

है। 'मुकेरिन' पाठ ही शुद्ध है, क्योंकि यही पाठ ३ ३०वें छंद के शीर्षक पर भी है तथा छंद के अन्तिम चरण में भी 'मुवरि मुवेरनि की' पाठ मिलता है।

३ २८

"वानन वरन फूल सोहत जरी दुबूल नय मैं अथक लटकन लटवायो है।"

'अथक लटकन' से कवि का तात्पर्य नय में पड़े उस मोती-लटकन से है जो नासिका के थोड़ा भी हिलने पर निरंतर झूमता रहता है। लिपिभ्रम से 'अथक' का 'अथक्' होते हुए तथा इसे भाव्यता प्रदान करने के लिये केचन भा० मो० नी० प्रतियों में 'अधिक' पाठ मिलता है।

४ २१

"तेरो बह्यो जरि करि जीव रह्यो जरि जरि।

हारी पाई परि परि तीन कीन्ही तैं सम्हार।"

'तैं भा० मो० नी० प्रतियों में नुदित होन के कारण रूप घनाक्षरी के चरण में ३२ वर्णों के स्थान पर ३१ वर्ण ही मिलते हैं।

भा० मो० ब्र० प्रतियाँ : पाठ-विकृति

५ ५६ पर्वत वध्

"एकज से नैन वैन मधुर मयक जैसे अधरनि धरी धार सुधा सरवत की।"

पर्वतीय 'रमणी' के नेत्र कमल के समान सुन्दर तथा उसके मधुर बोल भी चन्द्रमा के समान अत्यन्त सुखकारी हैं। जैसे उसी के अधर पर अमृत-रस की धार गिरी हो ! केवल भा० मो० ब्र० प्रतियों में 'धराधर' पाठ मिलता है। 'धराधर' का अर्थ 'शेषनाथ, पर्वत, विष्णु' होने के कारण यह पाठ यहाँ असंगत है।

६ २८

"जाछी उनमील नील मुभग सरोजन की तरल तनाइयत तोरन तितै तितै।"

चरण का यही शुद्ध पाठ 'सुजानविनोद' में २ ११ पर, 'काव्यरसायन' में १ ४० पर तथा 'सुसमागर तरंग' में ३७१ मध्या पर इसी छन्द में भी मिलता है। हमने 'सुजानविनोद' की भूमिका में इस छन्द के अर्थ पर विस्तार से विचार किया है। चरण में रेखांकित पाठ के स्थान पर भा० मो० प्रतियाँ में 'तरल तनाइमति तोरति' पाठ है—मो० प्रति में अन्तिम 'ति' पार्श्व पर है, ब्र० प्रति में 'तरल तर्ननो मति तोरति' पाठ मिलता है। इन प्रतियों की '—मति तोरति' समान पाठ विकृति, जो 'य' तथा 'न' में क्रमशः 'म' एवं 'त' का भ्रम होने से सम्भव है, विशेष रूप से दृष्टव्य है। जैसा कि इस चरण पर विचार करते हुए हमने अन्यत्र स्पष्ट किया है, 'तनाइ-यन तोरन—' का अर्थ है 'कमला की माना से निमित्त यदनवार।'

७ २३

“इहि विधि दमो प्रकार के हाव होन मयोग ।

अव दपति की दम दसा वरनी बीच वियोग ॥”

आलोच्य स्थल पर भो० ब्र० प्रतियो मे ‘विचित’ तथा वदाचित् सपादक अथवा प्रति-
लिपिकार द्वारा उम पाठ को सार्थक रूप देने के कारण भा० प्रति मे ‘विहित’ पाठ मिलता है ।
वियोगावस्था के मध्य दस कामदशाओं की स्थिति मानी गई है अतः ‘बीच वियोग’ पाठ ही
सगत है ।

७ ४८

“भौर भरे भीतर मरोज फग्गत ऐमी अचखुली ब्रैवियानि उपमा वडाइयतु ।”

भा० भो० ब्र० प्रतियो मे ‘भौर भौर’ पाठ मिलता है । प्रकृत भाव कुछ इस प्रकार है—
घर्षोन्मीलित नेत्र उस फग्गते सपुटित कमल के समान लगते हैं जिसके भीतर एक भ्रमर बदी
होकर पुन स्वतन्त्र होने के लिए कुलबुला रहा है । अतः ‘भौर भौर भीतर’ की अपेक्षा ‘भौर भरे
भीतर’ पाठ अधिक सगत है । यहां ‘भौर’ की पुनरुक्ति भी जनावश्यक है ।

७ ६८ प्रनाप-नक्षण

“दपति वं ‘उद्वेग ह्वं बडे’ विरह मनाप ।

उत्कटित चित प्रेम पिय पेप्यो प्रगट प्रलाप ॥”

दोहे का यही पाठ ‘भवानीविलास’ मे ७ ३७ श्लोका पर भी मिलता है परन्तु यहाँ
केवल भा० भो० ब्र० प्रतिया मे ‘उद्वेग ह्वं बँडि’ पाठ है । उद्वेग तथा उत्कटा आदि विरह-दशा के
उत्तरोत्तर वृद्धि प्राप्त करने पर प्रलाप की दशा प्रगट होती है अतः ‘बँडि’ की अपेक्षा ‘बडे’ पाठ
अधिक सगत है ।

७ ७६ विशेषोन्माद-उदाहरण

“चलि चलि मोमो नहै चलि चनि होनि कित

विचलि विचलि चनि परनि उचरि चरि ।

बाहि तवि तवि चिन विनहि पडायो आतु

देर बहै रहै कौन विया मो त्रिषवियवि ॥”

प्रथम चरण मे भा० भो० ब्र० प्रतियो में आलोच्य स्थल पर ‘वियवि चरि’ पाठ है ।
यही पाठ तृतीय चरण मे भी है एव षोडा मे व्ययिन होने के प्रथम मे सगत है । इसके विपरीत
पक्कर चतुर्थ पदने के अर्थ मे प्रथम चरण मे ‘चनि परनि वियवि चरि’ पाठ की अमगति स्वय-
मिद है ।

७ ७८

“कमल सुनि चोरे जबते मुनेन तुम तरने मुने न म्यामा मनिन के मोगा ।”

जबसे तुमने उसके कमल के समान सुन्दर नेत्रों से अपने सुन्दर नेत्र मिलाये हैं तब से वह तुम्हारे ध्यान में इतनी तल्लीन रहती है कि सखियों के पुकारने पर भी नहीं सुनती। 'जबतें' की सगनि 'तबने' से भी सिद्ध है जत 'जबतें' के स्थान पर भा० मो० व्र० प्रतियों में प्राप्त 'जियत' पाठ असंगत माना गया है।

प्रतियों का प्रतिलिपि—सम्बन्ध •

'रसविलास' की प्रतियों का परस्पर सम्बन्ध अत्यन्त उलझा हुआ है क्योंकि इसकी एक-दूसरे समूह की विभिन्न प्रतियों में परस्पर तथा देव-वृत्त अन्य ग्रन्थों की प्रतियों से भी अबाध माना में पाठ मिश्रण हुआ है। फिर भी प्रतियों में प्राप्त विभिन्न प्रकार की समान विकृतियों के आधार पर प्रतियाँ का सम्बन्ध इस प्रकार निर्धारित होना है—

भा० मो० प्रतियाँ प्रथम संस्करण की वराज तथा एक ही आदर्श की दो प्रतिलिपियाँ हैं। इन दोनों प्रतियों में स्वतन्त्र विकृतियाँ भी मिलती हैं अतः ये एक-दूसरे की प्रतिलिपि नहीं हो सकती।

नी० गजा० प्रतियाँ भी ग्रन्थ के प्रथम संस्करण की खडित प्रतियाँ हैं। इन दोनों प्रतियों में भी स्वतन्त्र विकृतियाँ मिलने के कारण ये एक-दूसरे की प्रतिलिपि नहीं सिद्ध होनी। (देखें, 'जातिविलास की प्रामाणिकता' शीर्षक)

ग० सा० प्रतियाँ प्रथम संस्करण की वराज, एक ही शाखा की दो प्रतियाँ हैं। ग० प्रति में नी० गजा० प्रति से कल्पनातीत माना में पाठ मिश्रण हुआ है।

सा० प्रति की शाखा तथा नी० गजा० प्रतियों की शाखा में ऊपर कही पाठ-मिश्रण हुआ है।

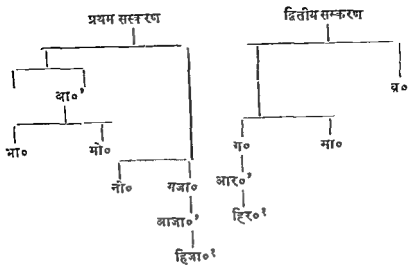
व्र० प्रति दूसरे संस्करण की स्वतन्त्र शाखा की प्रति है यद्यपि इस प्रति में भी, ग० प्रति के समान, अन्य प्रतियों में पाठ मिश्रण पर्याप्त मात्रा में हुआ है। यह पाठ मिश्रण विशेष रूप से ग्रन्थ के अन्तिम अक्षर में अधिक हुआ है।

व्र० तथा सा०, भा० मो० तथा व्र०, भा० मो० तथा नी०, नी० ग० गजा० तथा भा० मो० प्रतियों के समुच्चय गदित प्रतिलिपि-सम्बन्ध के उदाहरण हैं अर्थात् इन प्रतियों का परस्पर सम्बन्ध प्रतिलिपि परस्पर के माध्यम से नहीं अपितु पाठ मिश्रण के द्वारा निर्धारित होना है।

ग्रन्थों के माध्यम से 'रसविलास' की सभी उपलब्ध प्रतियों के परस्पर सम्बन्ध को इस प्रकार स्पष्ट किया जा सकता है —

सपादन-सिद्धान्त

"रसविलास की सभी उपलब्ध प्रतियों में अत्यधिक पाठ मिश्रण होने के कारण इन प्रथम का पाठ-चयन करने में गहरी मार्कता की आवश्यकता है। पाठ-मिश्रण के कारण ही केवल कुछ प्रतियों के समुच्चय ऐसे हैं जिनमें समान विकृतियाँ नहीं मिलती हैं। इस प्रकार के केवल निम्नलिखित समुच्चय निर्विवाद रूप में विश्वमनीय हैं — भा० भा० तथा मो० प्रतियाँ, व्र०



तथा ग० प्रतियो। महायज सामग्री के रूप में अन्य ग्रथों में प्राप्त ममान छद के पाठ का उपयोग भी व्यापक रूप में हुआ है। ऐसे स्थलों का निर्देश भूमिका में कर दिया गया है।

अपवाद

मान्य सपादन-सिद्धान्त के अपवादस्वरूप कुछ स्थल इस प्रकार हैं

केवल द्र० प्रति में प्राप्त तथा स्वीकृत पाठ :

६ १५ सडिना।

“सालन लजात से जम्हात विहँमान प्राण आए अलसान आली देन पेंच पाग के।”

यह पाठ केवल द्र० प्रति में है, अन्य पाठान्तर इस प्रकार हैं—आए आली मेरे गूह—भा० मो; आली उठि आए देखि—ग०। इन सभी प्रतियों में ‘आए जारी’ पाठ समान है अतः इतना पाठ निर्विवाद रूप में स्वीकृत किया जा सकता है। शेष जग में भा० मो० प्रतियों का ‘मेरे गूह’ तथा ग० सा० प्रतियों का ‘उठि देखि’ पाठ अर्थात् न होने पर भी द्र० प्रति का ‘अलसान’ पाठ की तुलना में प्रतिनिधिकार द्वारा प्रक्षिप्त मालूम देना है। नायिका का पनि रात्रि-पर्यन्त किसी जग्य रमणी के साथ विलास कर अपने शरीर पर गुरनि के स्पष्ट चिह्न लिये मुन्धराता, जमुहाता हुआ पर वापस लौटा है। जिन प्रकार जमुहाना आनन्द मचारी का अनुभाव है उगी प्रकार जलगाने हुए आना श्रम मचारी का अनुभाव हो सकता है, अतः यदि की शैली पर ध्यान देने हुए हमने द्र० प्रति का ‘आए अलसान आली’ पाठ स्वीकृत किया है।

८ : १५ मुदिना-उदाहरण

“आरम मां गम मो अंगिरान दनी अंगुरी कर अजन बाडी।”

अत्रि प्रतियों का उपयोग पाठ-नपादन में नहीं हुआ है।

यह पाठ केवल ब्र० प्रति में है, ग० सा० प्रतियों में इनके स्थान पर अञ्जलि पाठ है। मुदिता नायिका आँखों में अजन लगने के हेतु एक या दो अश्रुतियों पर नहीं, आनदातिरेक में अपने हाथ की सभी उँगलियों पर अजन निकाल लेती है। अतः 'अजन' पाठ की सगति स्पष्ट है। वह अपना कसा हुआ नीची-वध खोलकर फिर से बसकर बांधती है एक कबुकी का बधन भी ठीक करती है। नायिका ने इस चित्रण से भी उसने उल्लास का आधिक्य प्रकट होता है। इस प्रकार 'अजन' पाठ सगत होने के कारण यहाँ स्वीकृत हुआ है। तुलना, "अजन नैनी उठी अकुलाइ धरे जगुरी पर अजन बूदी।"—'सुमिलविनोद' ५ ११ २।

केवल ग० प्रति में प्राप्त तथा स्वीकृत पाठ

७ ६२

"धूम घटागह धूपनि की निकसे नव जालनि व्याल भरे से।"

यह पाठ केवल ग० प्रति में तथा 'मुख सागर तरंग' में ५६८ सख्या पर इसी छन्द में मिलता है, भा० मो० ब्र० प्रतियों में इस स्थल पर 'धूम जटागह धूमन के' तथा सा० प्रति में 'धूम जडागह धूपनि की' पाठ है। 'जटागह' तथा 'जटागर' पाठ शब्दार्थ के विचार से अप्राप्त है। भा० मो० ब्र० प्रतियों का 'धूमनि' विकृत पाठ भी, जो लिपि-भ्रम से संभव है, 'धूम' की पुनर्वक्ति होने के कारण असगत है। यहाँ ऊपर उठते हुए धूप, अगर चदनादि के धुँए की टेढ़ी लकीर की ओर, जो वनाकार सर्प के समान लगती है, कवि का सबेत है अतः 'अगर तथा धूप की धूम-घटा' के अर्थ में सर्वप्रथम उद्धृत 'धूम घटागह धूपनि की' पाठ सगत है।

८ १०

"रंग लाल जरी पट घूँघट जोट लसे मुक्तालर की सरबयो।

प्रभात प्रभावर मडल में विधु मडल बिब सुधाबर को।

रदपाँति चुनी चमकै हँसि बोलत देव कछू अघरा फरबयो।

मनो कातिक पून्यो की राति सुधाबर मध्य सुधा भरिकँ डरबयो॥"

नायिका ने लाल बस्त्र के नीचे से भववती हुई मोतिया की माला पर कवि ने उत्प्रेक्षा की है कि यह माला प्रभात के समय की लालिमा में विलम्ब से उदित होने वाले चन्द्रमण्डल का प्रतिबिम्ब है। इसमें स्थान पर सा० ब्र० प्रतियों में प्राप्त 'बिंदुसुधा दरबयो' पाठ, अर्धहीन न होना पर भी, चतुर्य चरण के अन्त में यही पाठ होने के कारण, अप्राप्त है।

८ ३५

"रावरे पापन ओट लसे पग गूजरी वार महानर टारे।"

यह पाठ केवल ग० प्रति में तथा 'वाव्यरसायन' में २ ५४ तथा द्रव्यत अन्त्याय ग्रन्थों में इसी छन्द में मिलता है। ब्र० प्रति में सामान्य लेखन प्रमाद से वर्षों का विपर्यय होने में 'पाप अनौठ' पाठ है। यह पाठ निरर्थक होने के कारण अस्वीकृत तथा केवल ग० प्रति में प्राप्त पाठ

अन्य ग्रन्थों के साधन पर स्वीकृत हुआ है।

■ ५० कुलटा उदाहरण।

“ठान कुठान अठान ठनी ठहकीली रहे गुर लोग गठाये।”

कुलटा परकीया नायिका इधर-उधर दूक कर जयबा बैठार अकरणीय बायों में लगी रहती है इसीलिए उसके गुरजन उसमें दृष्ट रहने हैं। ‘ठहकीली’ शब्द ‘ठहना’ (म० स्या०, प्रा० ठा) अर्थात् ‘किसी काम को करने हुए बीच-बीच में ठहरने’ के अर्थ में इस प्रकार मगन सिद्ध होता है। तुलना—“पूरय पौन के गौन गुमानिनि नद के मंदिर में ठहवाई।” —काव्यरसायन ८४८। ‘ठहकीली’ पाठ बेवत ग० प्रति में मिलता है। यही पाठ बर्ण-विषय में श्र० प्रति में ‘हठकीली’ एव सा० प्रति में ‘हटकीली’ हो गया है। ‘हठकीली’ का सम्बन्ध खीचनान वर ‘हठ’ में जोड़ने पर भी चरण का कोई विशेष मगन अर्थ नहीं मिलता। इसी प्रकार सा० प्रति का ‘हटकीली’ पाठ स्पष्ट रूप से अप्राप्त है क्योंकि ‘हटवना’ का अर्थ ‘रोकना, बर्जित करना’ आदि है एव प्रसंग से ‘हटकीली’ नायिका के लिए प्रयुक्त है तथा नायिका का हटवना अथवा रोकना भी मगन नहीं है।

विशेष संशोधन :

५५४ आभीर वधु।

“वर पद पदम पदमनी पद्मिनी पदम सदम सोभा संपद सी आवती।”

आभीर वधु की पद्मिनी नायिका, जिसके हाथ, पाँव तथा नेत्र कमल के समान सुन्दर हैं और जो कमल-महल में सोभा तथा संपत्ति के समान सुशोभित है, वह चरी आ रही है। यहाँ ऐदयमें तथा मपदा के अर्थ में ‘मपद’ शब्द का प्रयोग हुआ है। विभिन्न प्रतिषों में आलोच्य स्थल का पाठ दग प्रकार मिलता है : नेपद सी—श्र०, संपत्ति सी—ना०, सबद-सी—ग० गजा०, गुणद सी—नौ०, भेखद सी—मो०, मर्व देखन में—भा०। इनमें से सा० तथा भा० प्रति में प्राप्त पाठ के अतिरिक्त अन्य पाठ निरर्थक तथा प्रसंग में अमगत होने के कारण अप्राप्त हैं। इन सभी प्रतिषों के विरुद्ध पाठों पर मूढमता से विचार करने पर ज्ञात होता है कि दत्त विद्यादासपद स्थल में मूल प्रति में स, प तथा द बर्णों-अहित कोई पाठ रहा होगा। सा० प्रति का ‘मपद’ पाठ चरण की ‘द’ अनुप्रास-माला के अनुबल न होने के कारण मूल का नहीं माना जा सकता। इसी कारण भा० प्रति का पाठ भी अमगत है अतः मपदाव ने चरण की बर्ण-योजना पर ध्याना देते हुए ‘मपद सी’ पाठ-संशोधन अपनी ओर में किया है। मो० प्रति की ‘सिउद’ तथा श्र० प्रति की ‘सिपद’ पाठ-विरुद्धि भी इसी पाठ से सम्भव है।

७६६ प्रथम दो चरण

“प्रेम की पीर न जानी तँ वीर जु छँर बटाद्धे सो बट्टे छँरे।

देव तुदी प्रमिहै हँनिहै बलि बागरी हँ रम ननिहै रवंहै॥”

यह पाठ बेवत ‘देवनायक—प्रेमपचीनों’ में २४वीं शरदा पर इसी छन्द में मिलता है।

'रसविलास की विभिन्न प्रतियों में पाठकी स्थिति इस प्रकार है—रस ही रस चंहे—भा०, रस है रस चंहे—मो०, रस है रस च्वंहे—ब्र०, रस रूसी सी ह वै है—सा०, वो रवि सूचि विसंहै—ग०। 'भवानीविलास' में ८ १६ सख्या पर इमो छन्द में 'रस रूमिहै चंहे' पाठ मिलता है। इनमें से 'भवानीविलास' तथा 'रसविलास' की भा० प्रकाशित प्रतियों में प्राप्त 'चंहे' विवृत पाठ परस्पर पाठ-मिश्रण के फलस्वरूप अथवा दोनों ग्रन्थों में सम्पादक को 'रूँ' के प्राचीन रूपान्तर में 'च' का भ्रम होने के कारण स्वतन्त्र रूप से सम्भव है। इन प्रतियों का 'चंहे' अथवा ब० प्रति का 'च्वंहे' पाठ शब्दाथ के विचार से अप्राप्त है क्योंकि नायिका के रूप होने तथा उसने 'चू पड़ने' में कोई सगति नहीं है। ग० प्रति का 'सूचि विसंहै' पाठ तो जीर भी भ्रष्ट है। 'चंहे', 'च्वंहे' तथा 'रूमिहै' आदि पाठ विवृतियों 'रूँ' के प्राचीन रूपान्तर में भ्रम होने से सम्भव हैं अतः इन पाठों को अस्वीकृत करते हुए देववृत उपर्युक्त अन्य ग्रन्थ से 'रूँहै' पाठ यहाँ विशेष सहायन के रूप में स्वीकृत हुआ है।

८ ६२ कुलगविता-उदाहरण

'धोसत वाते वडी वन में मन मैं वृषभान ववा सा अरुभत ।'

जालोच्य स्थल पर ग० प्रति में 'अनूभत' तथा ब० सा० प्रतियां में 'अबूभत' पाठ है। 'भवानीविलास' में ७ २१ सख्या पर इमो छन्द में 'अरुभत' पाठ तथा 'सुखनागरतरंग' में ३४१ सख्या पर 'अनूभत' विवृत पाठ मिलता है। यहाँ यह अर्थहीन पाठ विवृति 'र' के प्राचीन रूपान्तर में 'न' का भ्रम होने से सम्भव है एव इस ग्रन्थ में पाठ-मिश्रण के फलस्वरूप ग० प्रति में भी यही विवृत पाठ आ गया है। ब्र० सा० प्रतियां का 'वृषभान ववा सा अबूभत' पाठ भी न मानने अथवा अवज्ञा करने के अर्थ में, 'अरुभत' के स्थान पर कश्चित् पाठ परिवर्तन नहीं हो सकता क्योंकि इस अर्थ में पाठ 'सा वृभन' न होकर 'वो अबूभत' होता। अतः हमने उपर्युक्त स्थल पर 'भवानीविलास' के 'अरुभत' पाठ को स्वीकार किया है।

'जातिविलास' की प्रामाणिकता

मैंने 'रसविलास' के पाठ संपादन में 'जातिविलास' शीर्षक की नीवपाँव एक गधौली में प्राप्त (भूमिका में नमूना नी० तथा गजा० गजा से अभिहित) जिन दो प्रतियों का उपयोग किया है उनमें अतिरिक्त 'जातिविलास' शीर्षक की केवल कुछ ही अन्य प्रतियाँ अब तक प्राप्त हुई हैं। मद्यपि इन सभी प्रतियाँ का विस्तृत परिचय हमने 'रसविलास' की प्रतियों के साथ दे दिया है फिर भी यहाँ इनका स्मरण दिलाना अप्रासंगिक न होगा कि 'जातिविलास' शीर्षक से प्राप्त इन प्रतियाँ में केवल नी० तथा गजा० प्रतियाँ सवत् १६४२-४३ के निश्चय प्रतिलिपि होने के कारण कुछ प्राचीन हैं एव नागरी-प्रचारिणी सभा तथा हिन्दुस्तानी एक्सेन्सि में संप्रहीत इमकी अन्य प्रतियाँ गजा० प्रति से सवत् १६७७ के बाद प्रतिलिपि होने के कारण केवल साधारण महत्त्व की सामान्य आधुनिक प्रतिलिपियाँ हैं। गजा० प्रति में 'रसविलास' की गधौली की ग० प्रति में तथा अन्यग्रन्थ प्रतियों से पाठ-मिश्रण तथा प्रतिलिपिकार द्वारा अल्पमिश्रण पाठ-सहायन हुआ है, अतः इस प्रति में अपनी आदर्य प्रति का पाठ भी सुरक्षित रह सने की बहुत

नम आदा है। इसके विपरीत नी० प्रति में अन्य स्रोतों से पाठ-मिश्रण नहीं हुआ है इस कारण गजा० प्रति की तुलना में यह प्रति 'जानिविलास' शीर्षक प्रतियों की परम्परा का यथामन्वव सुद्धतम पाठ देती है। इसी कारण हमने 'रसविलास' के पाठ-संपादन में इस प्रति का उपयोग किया है तथा इसी कारण यह प्रति 'जानिविलास' के सम्बन्ध में किसी सगन निष्पन्न तब पहुँचने में सर्वाधिक सहायक हो सकती है।

'जाति विलास'—शीर्षक की नी० प्रति मूहिन सभी प्रतियाँ 'केरल वधू' ५ ४७ वें छद में आगे लण्डन हैं यद्यपि पचम विलास में देश-भेद का विषय-प्रवर्णन करते हुए कवि देश में जिन देशों की सूची दी उससे अनुसार केरल वधू में आगे, द्राविड, तिलग आदि वधुओं का भी वर्णन होना चाहिये। इस सूची में गिजापित सभी देश-भेद 'रम विलास' में मिलते हैं। इसके अतिरिक्त ग्रथ का "जानि विलास" नाम नी० प्रति में केवल प्रति के प्रारम्भ में ही मिलता है 'अथ जाति विनास लिखन्ते—' एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि इस प्रति में विभिन्न विलामों के अन्त में जो पुष्पिकाएँ दी हैं परन्तु उनमें ग्रथ-नाम नहीं है यद्यपि रीतिकालीन अन्य कविया में प्रचलित परिपाटी के अनुसार देव के सभी ग्रथा में निरपवाद रूप से प्रत्येक विनास अथवा अध्याय के अन्त में ग्रथ एवं उसके रचयिता का नाम तथा यदि ग्रथ किसी को समर्पित है तो उस आश्रयदाता का नाम अवश्य मिलता है। नी० प्रति के विपरीत गजा० प्रति (तथा उसकी सभी प्रतिलिपियों) के प्रथम, द्वितीय आदि प्रत्येक विलास के अंत की पुष्पिका में कवि देव का नाम भी मिलता है। आश्रयदाता का नाम नी० मूहिन किसी प्रति में नहीं है क्योंकि यह ग्रथ देव कवि ने किसी को समर्पित नहीं किया है। गधोली के जिन स्वर्गीय श्री युगल त्रिशोर मिश्र के परिवार के सग्रह से यह प्रति प्राप्त हुई है उस परिवार में कई पीढ़ियाँ से कवि तथा काव्य-समर्पक विद्वान् होने जाएँ हैं। मेरे विचार में इसी परिवार के किसी काव्य-रीति से परिचित विद्वान् ने अपनी आदर्श प्रति के आदि में 'जाति विलास' नाम देव कर यही नाम तथा देव का नाम सभी विलामों के अन्त की पुष्पिका में भी दे दिया होगा और इससे प्रतिलिपि होम के कारण यह विशेषता उनकी वर्तमान प्रति में आ गयी है।

'जाति विलास' के इस भिन्न नाम से भ्रमित होकर अत्र तब के विद्वान् इनमें 'रम विलास' से पृथक्, देवकृत स्वतन्त्र ग्रन्थ मानते आये हैं यद्यपि किसी ने 'जाति विलास' को स्वतन्त्र ग्रन्थ मानने का कोई भी कारण नहीं दिया है। आश्चर्य है कि एक बार 'जाति विलास' को पृथक् एवं स्वतन्त्र ग्रन्थ मान लेने के कारण विद्वानों ने इन ग्रन्थ की रचना के सम्बन्ध में विचित्र-विचित्र कल्पनाएँ भी की हैं। उदाहरण के लिए श्री मिश्र वधुओं का अनुमान है कि 'जाति विलास' देव की देवाव्यापी मात्रा का परिणाम है :-

"इस समय देव जो जञ्जे गुणज की खोज में, अथवा तीर्थयात्रा के लिए देश भर में बराबर घूमते रहे। यह महाराज जहाँ गये वहाँ के मनुष्यों की चाल-चाल रीतियों और अन्यान्य दसंसीय पदार्थों पर पूरा ध्यान देते रहे। जान पड़ता है उन्होंने वादमीर, पजाब, बंगाल, उड़ीसा, मद्रास, बम्बई, गुजरात, राजपूताना, बरार आदि सब देशों को घूम-घूम कर देखा। इन महत्पति ने अपने भ्रमण द्वारा प्राप्त अपूर्व ज्ञान को बूझा नहीं सोचा बरन अपनी रचनाओं में स्थान-स्थान पर उसका उपयोग किया है। 'जाति विलास' नामक ग्रन्थ रचकर उन्होंने सब देशों की स्त्रियों

का बड़ा ही सच्चा वर्णन किया है।—इन महाकवि ने इन सब दशा की स्त्रिया का ऐसा सच्चा वर्णन किया है कि जान पड़ता है ये वहाँ गये अवश्य थे। इस समय इनका कोई भी आश्रयदाता न था, यहाँ तक कि इन्होंने 'जाति विलास' किसी को भी समर्पण नहीं किया।"

—“हिन्दी नवरत्न” पृ० २७३

इसमें सदेह नहीं कि जाति-भेद का यह प्रसंग कवि देव की सूक्ष्म दृष्टि का परिचायक है परन्तु इस चित्रण में ऐसी कोई विशेषता नहीं मिलती जिसे देखकर यह स्वीकार करना पड़े कि उस प्रदेश में स्वयं जाए बिना कवि ऐसा सच्चा वर्णन नहीं कर सकता था। इसके विपरीत समग्र रूप से देखने पर कवि के वर्णन में प्रदेश के स्थानीय वातावरण (Local colour) का अभाव प्रकट होता है। मैं केवल एक उदाहरण देता हूँ, देखें, क्या इस सुदूर कोकण देश की वधु के चित्रण में कोई ऐसी विशेषता है जिसका वर्णन कवि उस प्रदेश में जाए बिना नहीं रह सकता था —

“गोरी गजराज गति गुननि गहीर भति भार भाग ही रमति सुरति सकोचनी।
आतिगन धुवन अधर पान नलदान मान सौं बचन रचना सौं रचि रोचनी।
जाने रीति जी की पहिचाने प्रीति नीकी सुलदानि सबही की प्यारी पी की दुख मोचनी।
बेसरि करै न सरि को बनक जावी दरि वाचनदरी की नारि कोरुनद लोचनी॥

—‘रस विलास’ ५ ४६।

इसी प्रकार दस-भेद के अन्य उदाहरणों में भी, समकालीन चेतना के अनुरूप कवि की दृष्टि नारी के रूप-लावण्य पर पहले जाती है, प्रदेश के आधार पर विभाजन तो उमने केवल नाम लेने भर को, गीण रूप में किया है।

आश्चर्य है कि देव की रचनाओं पर प्रथम बार जाधुनिक, वैज्ञानिक दृष्टि से विचार करते हुए डा० नगेन्द्र ने भी देव की दसव्यापी यात्रा के उपयुक्त बाल्पनिक मत का विस्तार कर अपनी ओर से यह भी मान लिया है कि देव को इस यात्रा में कम से कम १५ वर्ष लगे होंगे —

“जैसा कि सभी पंडितों का मत है—जाति विलास एक दसव्यापी यात्रा के फलस्वरूप लिखा गया है। यह यात्रा काफी लंबी थी और दस पन्द्रह वर्षों में अवश्य समाप्त हुई होगी। अतएव, सम्भवतः सन् १७६५ के लगभग राजा मुशर्लासिंह के आश्रय से किसी कारण विमुक्त होकर देव देशाटन के लिए चल पड़े होंगे। इस यात्रा में देव ने समस्त भारत में पर्यटन किया और वहाँ के सौन्दर्य का, सौन्दर्य से तात्पर्य उस समय केवल नारी-सौन्दर्य का ही था, अवलोकन किया।”

—‘देव और उनकी कविता’ पृ० ४६

परन्तु ‘जाति विलास’ प्रति की ‘रस विलास’ के साथ तुलना करने पर, प्रतिया के प्रति-लिपि-सम्बन्ध के अपराधरत शुष्क साध्य को छोड़ देने पर भी, केवल समान छन्दों की स्थिति ही स्वतन्त्र ग्रन्थ के रूप में ‘जाति विलास’ की पृथक् सत्ता के निरिच्छ सबसे सशकन प्रमाण मालूम देता है। ‘जाति विलास’ की प्रति में कुछ अधिक छन्दों का छोड़कर ‘रस विलास’ के ५ ४७ सख्या तक के सभी छन्द समान हैं। इस तथ्य से मित्र वधु भी अवगत हैं—“हमारी धापी में केवल छंद तक का वर्णन लिखा है। उसके आगे पुस्तक अधूरी है।—जहाँ तक ग्रन्थ हमारे पास

है वहाँ तक इसकी रचना रम विलास में बहुत कुछ भिन्न है, यहाँ तक कि दोनों ग्रन्थों में प्रति मंत्रों के अन्त में छन्द एव ही है—'हिंदी नवरत्न', और डॉ० नगेन्द्र जी इस सत्य में अपरिचित नहीं—
“वास्तव में रम विलास को जानि विलास का समोचित और परिवर्धित सम्स्करण करना चाहिए।
जानि विलास और नवानी विलास की अपेक्षा उमम इनने कम नवीन छन्द हैं कि उनकी रचना में नवी को बहुत ही थोड़ा समय लगा होगा।”

—‘दिव और उनकी कविता पृ० ८८।

‘जानि विलास’ शीषक प्रतिया के केवल इन थोड़े से अधिक छन्दों के कारण ‘जानि विलास’ को ‘रम विलास’ में स्वतन्त्र ग्रन्थ माना गया है—यद्यपि किसी विद्वान ने यह कारण नहीं दिया है परन्तु ‘जानि विलास’ प्रति में ‘रम विलास’ से इतनी समानता देखते हुए भी इसे पृथक् ग्रन्थ मानने का फिर दूसरा और क्या कारण हो सकता है ?

‘जानि विलास’ शीषक प्रति में ‘रस विलास’ में जहाँ तक छन्द समान है, उन पर विचार करने की आवश्यकता नहीं है अतः हम केवल ‘जानि विलास शीषक’ प्रति के अधिक छन्दों पर यहाँ विचार करेंगे। इस समूह की प्रतियों में अधिन छन्द नगर नागरी भेद के जन्तगत ‘रस विलास’ २ ६ से आगे मिलते हैं। नगर नागरी भेद के ये छन्द ‘रस विलास’ के अनिर्दिष्ट देव-घुन ‘सुव मागर तरंग’ में भी मिलते हैं। स्मरण रहे कि इस ‘सुव सागर तरंग’ ग्रन्थ के कविवर दो मस्करण हैं। एव, जो पिहानी के अक्षरों का बोधार्थ है, इस लेख में सुमा० (अली०) मंत्र से तथा दूसरा, जो महाराज जसवन्तसिंह के नाम समर्पित है, इस लेख में सुमा० (जस०) मंत्र में उल्लिखित है। ‘जानि विलास’ शीषक प्रतिया, ‘रस विलास’, सुमा० (जस०) एक सुमा० (अली०) ग्रन्थ में इस प्रसंग के सभी छन्दों की प्रतीक-भूषी प्रत्येक ग्रन्थ में छन्द के स्थल निर्देश-साहित्य इस प्रकार है —

नगर-नागरी भेद—रस० २ : ५

‘जानि विलास’ शीषक प्रतिया		‘रस विलास’ सुमा० (जस०) सुमा० (अली०)		
औरिली	‘सौची सुमा’	—	यही ० ७	— यही १०७ — यही २६०
छीपनी	‘संने मे’	—	यही ० ८	— यही १०८ — यही २६३
बमहरिन	‘बला यही’	—	—	—
मुनारि	‘दिव दिशावन’	—	यही ० १०	— यही ११० — यही २६४
हलवादन	‘भांटे महामुंडु’	—	यही ० १४	— यही ११३ — यही २६६
बनेनी	‘मदन के मोद’	—	यही ० १५	— यही ११४ — यही २७०
पटविन	‘रमम के गुन’	—	यही ० ६	— यही १०६ — यही २६४
पमारिन	‘शोपरी सुपारी’	—	—	—
गधिन	‘अरगजे भोनी’	—	यही ० ११	— यही १११ — यही २६६
गानिन	‘बीनन फिरल पून’	—	यही ३ १४	— यही यही २८८
समोक्ति	‘रगिन बोनी से’	—	यही ० १३	— यही ११३ — यही २६८
यदहन	‘बन निहारनि’	—	—	— ‘मोह बराते — यही २७६

अरेरति' ११७ —

सुहारी	'बाणी तचावन' ———	—	'सहलहे जीवन' —	यही २७७
			११८" —	
दरजिन	'अन्तर पैठि' ———	यही २ १७ —	यही ११६ —	यही २७२
तैलिन	'तिष है अमाव' ———	यही २ १० —	यही ११२ —	यही २६७
कुम्हारी	'चदमुखी भुरि' ———	यही २ १६ —	यही ११५ —	यही २७१
भरभूजिन	'सांधरे अग लसै' ———	—	'विज्जु छटा— सी' १०१	
सुरहेरिन	'हाटकलतासी' ———	—	—	
धुनित	'पीतम पास वपास' —	—	—	
जुनाहिन	'लाज अजोरन' ———	—	'वांजुरी भौंहिन —	यही २७४
			११६	
फटेरिन	'जीति सियो सिगरी' —	—	—	
खटाकिन	'मोहत हजारन' ———	—	—	
भठियारी	'चाउ परै भठियारी' —	—	—	
सिनलीगरनि	'चित चोरति सी' ———	—	—	
बूहरी	'चीवन वपोल' ———	यही २ १८ —	यही १२४ —	यही २७८
धमारि	'जोवन जोम सै' ———	—	'मोचिन' रगिल —	यही २७५
			पीठी' १२०	
गनिवा	'चाट उचाट' ———	यही २ १६	यही १२५	यही २७६
		बेंगहरिन 'बेंघी स कटाछनि'	१२१	
		भूंजरी 'बूंजरी ऊजरी बाल'	१२२	यही २७३
		मनिहारि 'माने नही मनुहारि'	१२३	
	नोट —	नाट —	नाट —	
	'रस विलास तथा नी० गजा० प्रनिया में व छद्द परस्पर स्वतन्त्र क्रम से जाए हैं।	दरजिन उदाहरण छद्द तत्र 'रस विलास' एव 'सुसा० (जस०) व छद्दो वा क्रम समान है। इससे आम के अन्य उदाहरण सुसा० अन्य उदाहरण सुसा० (जस०) तथा सुसा० (अली०) में समान हैं परन्तु नी० गजा० प्रतिया के अन्य उदा-	सुसा० (जस०) तथा सुसा० (अली०) में समान छद्द एव ही क्रम से मिलते हैं।	

हरण छन्द अन्यत्र
वहीं नहीं मिलते ।

इस तुनात्मक प्रतीक-सूची के अनुसार 'जाति विनाम' शीर्षक प्रतियों में बन्दहेरिन, पमारिन, चुरहेरिन, घुमिन, बटेरिन, छटमिन, भट्टियारी तथा मित्रलीगरनि—ये कुल आठ उदाहरण अन्य ग्रंथों की अपेक्षा अधिक हैं एवं इन प्रतियों में बडहन, चुहारि, भरभूजिन जुलाहिन तथा चमारि के उदाहरण छन्द अन्य ग्रंथों में इन्हीं शीर्षक के अन्तर्गत आए उदाहरण छन्द में मिलते हैं ।

इन प्रतियों में तथा 'रम विनाम' में दूसरा अन्तर 'रम विनाम' ३ १३ से आगे है, जहाँ 'जाति विनाम' शीर्षक प्रतियों में वारिन 'निह भरी नउ', डोमिन 'तान सुजान की' तथा चडागी 'माँवरी साँट की', ये तीन छन्द अन्य ग्रंथों की अपेक्षा नहीं हैं । 'जाति विनाम' शीर्षक प्रतियों में तथा 'रम विनाम' में केवल इन्हीं मोनह छन्दों का अन्तर है, इन प्रतियों के २१० छन्दों में से दोष छन्द 'रम विनाम' में समान हैं ।

इन अधिक छन्दों के विषय में केवल दो मनावनाएँ ही सरती हैं—एक ये छन्द कवि देवकृत हैं । तथा दो, इन्हें इन प्रतियों में कवि ने रखा है ।

इन प्रतियों के अधिक छन्दों में बटेरिन, मित्रलीगरनि, भरभूजिन, चुहारिन तथा बडहन उदाहरणों में दब कवि की छाप मिलती है । उदाहरण स्वरूप मित्रलीगरनि में यह इन प्रकार है । 'कवि देन कह छिन देवत ही कहि का न कहों छतिया दग्गी ।' भाषा तथा शैली के आधार पर छन्द का निर्दिष्टण कर उमरी प्रामाणिकता का निश्चय विज्ञान के मकते हैं, अतः यह भार में उन पर छोड़ना है ।

यदि ये अधिक छन्द देवकृत हैं तो इन प्रतियों में इनकी उपस्थिति से सम्बन्धित दूसरा प्रश्न महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी प्रश्न के माध्यम से ग्रंथ के रूप में 'जाति विनाम' की प्रामाणिकता का प्रश्न भी मगल है । इस विषय में निम्नलिखित मनावनाएँ विचारणीय हैं—

एक, कि कवि ने 'रम विनाम' की रचना करते समय ग्रंथ का आकार मसिप्त करने के हेतु इन अधिक छन्दों को 'रम विनाम' में नहीं रखा । डा० नगेन्द्र आदि विद्वान भी यही मानते हैं कि 'जाति विनाम' की रचना 'रम विनाम' से पूर्व हुई थी । मक्षेप की यह मनावना फिर भी महत्वपूर्ण है क्योंकि कवि मक्षेप केवल एक स्थान क्यों करेगा, एक बहू मक्षेप करने हुए अन्यत्र भी मिलते वाने छन्दों की छोड़कर केवल ऐसे ही छन्दों को क्यों मसिप्त करेगा जो अन्य-अन्य ग्रंथों में नहीं नहीं मिलते । ऐसा केवल मयोग्य नहीं हो सकता । फिर, 'रम विनाम' के अनेक छन्द 'जाति विनाम' शीर्षक प्रतियों में नहीं मिलते । इस प्रकार भी ग्रंथ के आधार में मक्षेप करने की कवि-प्रवृत्ति मगल नहीं सिद्ध होगी ।

दो, कि तथापि 'जाति विनाम' ग्रंथ की रचना 'रम विनाम' के पदचान् हुई एवं 'जाति विनाम' के अधिक छन्द कवि द्वारा इस दूसरे ग्रंथ की आधार-भूटि के कारण मिलते हैं । परन्तु यह मनावना इसलिये अमान्य ठहरती है क्योंकि 'जाति विनाम' ग्रंथ किसी आधारदाना की मसिप्त नहीं है अतः इसकी रचना का कोई प्रयोजन नहीं है । कोई भी कवि, और फिर देव-सेना कवि, एक ग्रंथ में उन्हीं-उन्हीं छन्दों को लेकर दूसरा के उन्हीं ग्रंथ में दूसरा ग्रंथ न तो निम्न-

दृश्य तैयार करेगा और न केवल इन १५-१६ अधिक छन्दों को सम्मिलित करने के लिए एक नए 'ग्रथ' की रचना करेगा। स्मरण रहे कि 'प्रेम तरंग' तथा 'कुशल विलास' में कुछ छन्द न्यूनाधिक होते हुए भी अधिकतर छन्द समान हैं परन्तु दोनों ग्रथों में छन्दों का मयोजन एवं विलासों का विभाजन स्वतन्त्र रीति से हुआ है, साथ ही ये सभी विशेषताएँ सगत भी हैं इसलिए हमने उन दो ग्रथों को एक दूसरे से स्वतन्त्र तथा 'प्रेम तरंग' को 'कुशल विलास' का आधार ग्रथ माना है। 'जाति विलास' के सभी छन्द 'रस विलास' में उसी क्रम से मिलते हैं। इस कारण इन ग्रथों की स्थिति पहले उदाहरण से भिन्न है।

इन सम्भावनाओं के अमान्य होने पर हम इन अधिक छन्दों को 'जाति विलास' शीर्षक प्रतियों के प्रतिलिपिकार द्वारा प्रक्षिप्त मानते हैं। इन प्रक्षिप्त छन्दों को छोड़ देने शेष छन्द इसी क्रम से 'रस विलास' में भी मिलते हैं अतः 'जाति विलास' शीर्षक ये प्रतियाँ किसी स्वतन्त्र ग्रथ की प्रतियाँ न होकर 'रस विलास' की किसी खंडित प्रति की प्रतिलिपि अथवा 'रस विलास' की अपूर्ण प्रतिलिपि सिद्ध होती हैं। इसका एक प्रमाण नी० प्रति के अनुसार इसके विभिन्न विलासों की पुष्पिका में रचनाकार का नामोल्लेख न होना भी है।

इस खंडित शाखा में ये अधिक छन्द क्यों प्रक्षिप्त हुए, इसका कारण भी स्पष्ट है। 'भाव विलास' की नी० हि० प्रतियों में भी, जो श्लेष लक्षण दोहे से आगे खंडित हैं, इसी प्रकार लगभग ६० छन्द प्रक्षिप्त हैं। हमने माना है कि आदर्श प्रति खंडित तथा उसका पाठ नष्ट-भ्रष्ट अवस्था में होने के कारण प्रतिलिपिकार ने 'भाव विलास' की इन प्रतियों में प्रक्षेप किया है। 'जाति विलास' शीर्षक प्रतियों में प्रक्षेप होने का एकमात्र कारण यह न भी हो कि इसकी आदर्श प्रति का पाठ अत्यन्त नष्ट-भ्रष्ट अवस्था में था, तो भी इसकी आदर्श प्रति के खंडित होने के कारण भी प्रक्षेप की संभावना हो सकती है। मैं केवल एक संभावना के रूप में इस ओर संकेत कर रहा हूँ।

यदि ये प्रक्षिप्त छन्द देवकृत हैं तो इन अधिक छन्दों का प्रक्षेप कहाँ से हुआ? ऊपर दी गई तुलनात्मक तालिका से यह प्रगट है कि प्रक्षिप्त छन्दों के बढे-न, सुहारिन जैसे कुछ ऐसे शीर्षक हैं जो 'रस विलास' में न मिल कर 'सुख सागर तरंग' के दोनों सस्वरणा में मिलते हैं। इनमें भी मुसा० (जस०) सस्वरण में मुसा० (अली०) की अपेक्षा इस प्रसंग के कुछ अधिक छन्द हैं। इसलिए 'जाति विलास' शीर्षक प्रतियों के अधिक छन्द 'सुख सागर तरंग' के दोनों सस्वरणा से भी प्रक्षिप्त हैं और इनमें से ऐसे छन्द जो 'सुख सागर तरंग' की अपेक्षा भी अधिक हैं, जाति-वर्णन विषयक देवकृत किसी अन्य ग्रथ अथवा संग्रह से आए मालूम देते हैं। इन अन्य ग्रंथों की उपस्थिति हमने इसलिए मानी है क्योंकि मुसा० (जस०) सस्वरण में भी कुछ ऐसे छन्द हैं जो मुसा० (अली०) में नहीं मिलते।

हस्तलिखित ग्रंथों की ग्लोब रिपोर्ट में देवकृत 'जाति वर्णन प्रवास' शीर्षक ग्रंथ की सूचना है। (१६२३-२५, पृष्ठ ४५४-४६) परन्तु इसे 'जाति विलास' के समान देवकृत जाति-विषयक नवोपलब्ध स्वतन्त्र ग्रंथ समझ कर जीव न पढ़ना चाहिये। यह 'सुख सागर तरंग' की गद्योली वाली प्रति से २४६ छन्द—सख्या से ३०६ गद्यांश के जाति विषयक अंश की प्रतिलिपि है। इन प्रति में प्रतिलिपि होने का केवल एक प्रमाण दिया जाता है। इन तयानाशिन 'जाति वर्णन

प्रकाश' ग्रथ में तथा गणेश की व उपर्युक्त प्रति में 'मन्य वामिनी' के म्याम पर संन्यो वासिनी शीर्षक मिलना है !

इन प्रतियों में ग्रथ का 'जाति विलास' नाम आदर्श प्रति के खण्डित होने के कारण तो आया ही है परन्तु इस ग्रंथ के उत्पन्न होने का कारण निम्नलिखित दोहा भी है —

“दिवन गवन राजपुर नागरि तौनि निवाम ।

निनके लच्छन भेद सत्र बरलन जाति विलास ॥”

—रस विलास १ १४

प्रतिनिधिकार को भ्रान्ति हुई कि कवि नागरी स्त्रियों का लक्षण तथा भेद इस 'जाति विलास' नामक ग्रथ में कर रहा है। फिर अपने खण्डित आदर्श के जतिम अत्र, पंचम विलास में जाति-भेद वर्णन देखकर उसकी धारणा पुष्ट हुई इसलिए उसने ग्रथ का शीर्षक 'जाति-विलास' दे दिया। मेरे विचार में उपर्युक्त दोहे का अर्थ इन प्रकार करना उचित नहीं है। इस दोहे में कवि ने नागरी-स्त्रियों के प्रथम या केवल त्रिजय-विस्तार अथवा उनके विभाजन की स्पष्ट-रेखा स्पष्ट की है। कवि सर्वदा विषय-विवेचन के पूर्व उसका विभाजन करते हुए उसकी स्पष्ट-रेखा देता आता है। इस प्रकार दोहे का अर्थ त्रिजुल स्पष्ट है, “दिवन नागरी, रावल नागरी तथा राजपुर नागरी, नागरियों के भेदन ये तीन भेद हैं। मैं उनसे लक्षण तथा भेद एव जाति-भेद के आधार पर उनका वर्णन यहाँ कर रहा हूँ।”

यहाँ 'जाति विलास' को 'जाति विलास' ग्रंथ का नाम समझने की भ्रान्ति डा० नगेन्द्र को भी हुई है। इसीमें उन्होंने अनुमान लगाया है कि 'जाति विलास' की रचना 'रम विनाम' में पहले हुई थी। परन्तु डा० नगेन्द्र के ध्यान में 'रम विनाम' का निम्नलिखित दोहा नहीं आया जो 'जाति विलास' की प्रतियों में भी मिलता है और जिसमें 'रम विनाम' का स्पष्ट नामो-हनेम है —

“रम विनाम रचित ग्रथ सो कहत दूसरि वार ।

वही नायिका भेद सत्र मुनटु नवीन प्रकार ॥”

—रम विनाम ४ : ४०

यदि 'जाति विनाम' की रचना 'रम विनाम' में पहले हुई तो 'जाति विनाम' में 'रम विलास' का यह स्पष्ट नामोन्लेख कैसे ?

इसी भ्रान्ति के कारण डा० नगेन्द्र ने 'रम विनाम' को 'जाति विनाम' का सफोपित और परिवर्धित सम्बन्ध मान लिया है। 'जाति विनाम' की सभी उपनगर प्रतियाँ ५ ४७ पर गण्डित हैं जो सत्र वैसे जाना जा सकता है कि इस स्थान से आने इस 'ग्रथ' में पाठ बहो तब या और 'दिव' में किम स्थान में आने पाठ-परिवर्तन कर 'रम विनाम' का परिवर्धित 'सम्बन्ध' तैयार किया। 'जाति विलास' शीर्षक प्रतियाँ केवल वधू ५ ४७ पर गण्डित हैं तथा 'रस विलास' की प्रतियों में इसमें आने भी पाठ मित्रता है। केवल इसीलिए इन बड़े आकार वाले ग्रन्थ को छोटे आकार वाले ग्रथ का शीर्षक-शीघ्र परिवर्धित सम्बन्ध मान लेना उचित नहीं है।

इन समस्त तथ्यों पर विचार कर हमने 'जाति विलास' को देवगन पृथक ग्रन्थ न मानते हुए इस शीर्षक की प्रतियों का उपयोग 'रम विनाम' की गण्डित प्रतियों के रूप में किया है एव

उमके प्रक्षिप्त छन्द परिशिष्ट में दे दिया है।

कवि देव द्वारा 'रस विलास' की आकार-वृद्धि

'रस विलास' की उपलब्धप्रतियों की परीक्षा करने पर ज्ञात होता है कि स्वयं कवि देव ने "सुस सागर तरंग" की तरह इस ग्रंथ के भी दो सस्करण किये थे। ग्रंथ के पाठ-मपादन में प्रयुक्त प्रतियों में से भा० मो० नी० गजा० प्रतियाँ ग्रंथ के प्रथम सस्करण की एव ब० सा० ग० प्रतियाँ ग्रन्थ के परिवर्धित रूप, उसके द्वितीय सस्करण की वसज प्रतियाँ हैं।

प्रथम सस्करण के निम्नलिखित छन्द से प्रगट होता है कि यह सस्करण किमी आश्रयदाता के नाम समर्पित नहीं था —

“धीब भरीचनु के मृग लीं अब धावे न रे सुन बाहू नरिंद के।

जोस की जास धुभ नहि प्यास विसास डमे विनि काल फनिंद के।

भूलै न देव निहारी असारनि प्यास निमारत तार के विद के।

इदु लीं अनन तू जु चिते अरविंद के पायन पूबि मुविंद के ॥

—'रस विलास'—परिशिष्ट १।

इस सस्करण की प्रतियों में प्रत्येक विलास के प्रारम्भ में आए "रानी राधा सुमिरि..." दोहा से भी कवि की सासारिक अवलम्ब के प्रति उदासीनता एवं अपने आराध्य देव के प्रति अतन्याश्रय की भावना पुष्ट होती है।

वदाचित् इस ग्रंथ की रचना पूर्ण हो चुकने पर सुल्तानपुर के राजा श्री भोगीलाल से देव की भेंट हुई। इस समय उनके पास एक 'रस विलास' ही ऐसा ग्रंथ था जिसे यह भोगीलाल को समर्पित कर सकते थे। परन्तु देव सर्वदा अपने पूर्वरचित ग्रंथ की पर्याप्त आकार-वृद्धि कर तब उसे आश्रयदाता को समर्पित करते आये हैं। 'प्रेम तरंग' एवं 'कुसल विलास', 'सुससागर तरंग' के दो सस्करण एव 'सुजान विनोद' की ऐसी ही आकार-वृद्धि में यह मान्यता पुष्ट होती है। तदनुसार देव ने ग्रंथ के प्रथम विलास में भोगीलाल मन्त्री "भूलि गए भोज वीर विक्रम तिसरि गए—" जैसे छन्द सम्मिलित कर, प्रत्येक विलास के प्रारम्भ में आए "रानी राधा हरि सुमिरि—" दोहा के स्थान पर (जिनसे आश्रयदाता के प्रति कवि की यदि अबज्ञा नहीं तो उदासीनता प्रकट होने का ग्रम हो सकता था।) उसके पहले वाले विक्रम के अन्त में भोगीलाल के नामोल्लेख सहित एक छन्द सम्मिलित कर एक ग्रंथ के अन्त में नायिकाका के प्राचीन शास्त्रीय विभाजन का ६४ छंदों का एक सम्पूर्ण अष्टम विलास जोड़कर यह ग्रन्थ भोगीलाल को समर्पित किया।

इस द्वितीय सस्करण की ग्रामाणिवना में सदेह के लिए अधिक् स्थान नहीं है। 'भाव विलास' की नी० हि० प्रतियों में प्रक्षिप्त छन्दों की परीक्षा करते हुए हमने देखा है कि प्रतिलिपि-कार के अधिक् से अधिक् संकट होने हुए भी प्रक्षिप्त पाठ में कोई न कोई ऐसी असंगति अथवा न्यूनता रह जाती है जिससे पाठ प्रशेष ग्रंथ के मूल-आकार से स्वयमेव अलग हो जाता है। 'रस विलास' के द्वितीय सस्करण में निरूपित विषय तथा उसका कविकृत विवेचन न प्रसंग की दृष्टि में असंगत है न उसमें कहीं अनौचित्य दिखाई देता है। उदाहरण के लिए, ग्रंथ में विस्तार में

नायिका-भेद की जावृत्ति प्रथ के अष्टम विलास के रूप में कवि हुए पाठ-परिवर्तन में नहीं हुई है। वस्तुम्विनि इसके त्रिपरीत है, अष्टम विलास में मुग्धा आदि का वर्णन विस्तार प्रथ नायिका-भेद निरूपण को और भी पूर्णता प्रदान करता है। इसके अनिश्चित प्रथ के पाठ में वैसे स्थान मिलते हैं जो कवि द्वारा इन अक्षरों की पाठ-वृद्धि किये जाने के प्रमाण स्वयं प्रकृत किये जा सकते हैं। ऐसे केवल दो उदाहरण दिये जाते हैं—

“वह नायिका भेद सब आठ अक्षर के भाट।

अब भेदानर कहत हों मन प्राचीन मुनाड ॥” —रम विनाम ८ १

“उक्तिगविना आठ विधि आठो अक्षर भगव ।

वह नायिका भेद मैं जोवनादि जग मर्ब ॥” —रम विनाम ८ ५६

उपर्युक्त दोहों में ‘नायिका भेद’ तथा ‘जोवनादि—आठो अक्षर’ का उल्लेख प्रथ के अनुसंधान में ४ ७ में आगे के नायिका के अष्टम वर्णन की जोर मचेत करना है। प्रथ के अक्षरों के अक्षर में तारलम्ब अथवा परम्पर-सम्बन्ध की ऐसी विशेषता स्वयं कवि द्वारा किये जाने पर मव है, प्रशेषकार द्वारा नहीं। स्वयं कवि द्वारा इन अक्षरों की पाठ-वृद्धि करने का दूसरा महत्वपूर्ण प्रमाण इन अक्षरों में कवि के ऐसे अनेक लक्षण-उदाहरण उन्दाका सगत प्रथम में प्राप्त होना जो छन्द देवकृत किसी अन्य प्रथ में नहीं मिलते।

अष्टम विलास के अनिश्चित प्रथ में यत्र-तत्र हुए पाठ-परिवर्तन के भी कवि कृत होने मुझे संदेह नहीं है। ऐसे छन्दों में अनिश्चित छन्द भोगीनाम में सम्बन्धित हैं। इनमें से अनेक अक्षरों में कवि की छाप भी मिलती है। प्रथ का यह सम्बन्ध भोगीनाम को समर्पित है। अतः भोगीनाम के नामोल्लेख एवं कवि की छाप-महिन इन छन्दों का स्वयं हमारने विचार में स्वयं कवि है, कोई प्रशेषकार नहीं।

इन छन्दों की प्रामाणिकता के विषय में केवल एक तर्क ही सकता है कि ये अधिक छन्द अतः प्रथियों में मिलते हैं उनमें समान पाठ-विकृति भी मिलती है। अतः यह समझ है कि ये सभी छन्द किसी एक पूर्ववर्त प्रथि में प्रतिष्ठा होकर अन्य दो प्रथियों में जाएं हैं। परन्तु यह तर्क अधिक पुष्ट नहीं है क्योंकि प्रथम तो ‘रम विनाम’ की न केवल इन प्रथियों में वरन् सभी उपलब्ध प्रथियों में परम्पर तथा अन्य प्रथों से इनका अधिक पाठ-विशेष हुआ है कि इन प्रथियों में सार्व विवृति-साम्य का तर्क निर्णायक नहीं माना जा सकता। दूसरे, जैसा कि ऊपर के विवेचन में प्रकट है, हमने प्रकृत अनुसंधान के आसार पर इन पाठ-वृद्धि की कविकृत पाया है अतः प्रथियों की यह सनावता मान्य नहीं।

हमने प्रथम परम्परा की भा० मो० प्रथियों में प्राप्त ‘गनी गना—’ दोहों एवं अष्टम विलास में आए प्रथ-समापन के दो-तीन छन्दों का पाठ ‘रम विनाम’ के अन्त में परिशिष्ट १ में दे दिया है। विस्तार भय में कविकृत आचार-वृद्धि के समस्त छन्दों के कथ्य पर पुष्ट रूप में विचार करना अगम्य है अतः हम नीचे की सूची में ऐसे छन्दों का केवल संक्षेप-निर्देश कर रहे हैं—

१ : ७—८, १ : १३—१८, १ : ६५, ७ ७०, ३ : ३७, ८ ८१, ७-८०, ८ : १—

रस विलास

पायनि नूपुर मजु बजे कटि किनिनि की धुनि की मधुराई ।
 साँवरे अग लसे पट पीत टिये ह्रसमं बनमाल सुहाई ॥
 माथे किरीट बडे दूग चचल मद हँसी मुखचन्द जुनहाई ।
 जै जग मदिर दीपक सुन्दर थी अजहूँसह देव सहाई^१ ॥१॥

१ कन्हारी-आ० सुहाई-भा०

गिरा गौरि गनपति सुमिरि भुष गिरोस के पाई ।

रस विलास कवि देव यह रच्यो सरन रस राइ ॥२॥

भूलि गये भोज वीर विक्रम बिसरि गए जाके आगे थीर तन दीरत न^१ दीदे हैं ।

राजा राइ राने उमराउ उनमाने निज गुन के गरब गिरखी दैहें ॥

सुजस बजार जाके सौदागर सुकवि चलेई आवै दसहँ दिसान के उमीदे^२ हैं ।

भोगीलाल भूप सास पासर लिवैया^३ जिहि लाजत खरवि रविआखर खरीदे है ॥३॥

१ और तन—ग० । २ उमीदे—ग०, उनीदे—ब० । ३ लिवैया—ग० सा० ।

पावस घन^१ चातक तजै चाहि स्वानि जल विदु ।

कुमुद मुदित नहि मुदित मन जो लौ उदित न इदु ॥४॥

१ घन—ब० सा० ।

देव सुकवि ताते तजे राउ रान सुलतान ।

रस विलास करि रीझिहै भोगीलाल सुजान ॥५॥

पूरन पुन्यनि को महिमा भुव भिखुव भौरन को मकरद है ।

गाधव मोद को मोदक भोगिभुवाल भयो अरि कज निकद है ॥

दिल्ली है सुद्ध सुधा को सरोवर तोमँ लसँ बसुधा को अनद है ।

कीरति वातिव^१ पुन्यो की रीति मे दून्यो विराजत पुनो को चद है ॥६॥

साँझ कँसो चद भीर को सो अरविद स्वाति त्रिदु कँसो बादर बिसाति बसुधा ही की ।

मधु कँसो तरवर शरद को सरवर है मरीचपरवर प्रीति गुनगाही की ॥

जोगीदास नद जुग जियो जगबद चद चदन^१ सी कीरति चलाई चित चाही की ।

दीन को दयाल देव मूरति बिसाल भोगीताल भूमिपाल है मंगल पातसाही की ॥७॥

१ चादनी—सा० ।

पृथ्वी में पृथिन पृथु पुण्यन अमून भीज्यो पृथु नो पुष्टरवा सो निपूर प्रतीप सो ।
मनु सो मनीषी मनधाना सम दाता रघु नहुष यजाति क्षूर मगर^१ महीप सो ॥
जदु सो वृषिष्ठिर सो भीषम नगीरय सो तीरय नदीपति सो दीपनि^२ में दीप सो ।
राजनु है आज भोगीनान देव राज मँहि^३ नवन दुनहिया को दूनह दिनीप सो ॥२॥

१ सूर मागर—० । २ दीपनि—गं० ।

३ देव देवराज—गं० । १:२ से १:८ संख्या के छंद केवल द्र० सा० गं० प्रनियों में हैं,
नी० गंजा० भा० तथा मो० प्रनियों में नहीं ।

मुक्ति मराही मुक्ति हित मुक्ति भुक्ति^१ को धाम ।

मुक्ति मुक्ति अह^२ मुक्ति को मूल मु कहिए कान ॥६॥

१ भुक्ति मुक्ति—नी० गं० गंजा० । २ उर—मो० ।

रमनी रावा समिमुनी पूरं वाम ममुद्र ।

विना वाम पूरन भये लग परमपद छुद्र ॥१०॥

ताते त्रिभुवन सुर असुर नर पशु कीट पनग ।

राक्षस जस पिशाच अहि मुनी सब निय मग ॥११॥

कोटि पोटि शिपि वामिनी^१ निके कोटिन भेव ।

नितमं भाया मानुषी धरनन हूँ वजि देव ॥१२॥

^१ वामना—भा० मो० ।

वामिनी भेद ।

मो नारी बहु नागरी पुनवामिनि ग्रामीन ।

बन्या मँन्या^१ पधिक निद पट विधि वहन प्रथीन ॥१३॥

^१ बन सयना अह०—भा० मो० ।

नागरी ।

देवन रावन राजपुर नागरि तीनि^१ निवास ।

निके लच्छन भेदन धरनन जानि विनाम ॥१४॥

^१ नागरि तरनि—भा० मो० ।

देवल देवी नागरी दूडी पूजनहारि ।

द्वारनाशना नीनरी धरनहु त्रिविदि त्रिचारि ॥१५॥

देवी ।

पूरन सरद समिषण्डन दिनद जोति मठन विनाम मे अग्ट मुल माहिनी ।

जमस जमोल मनि न्तननि रच्यो महा सुन्दर सुमन्दिर अमन्द सुन^१ चाहिनी ।

धाटू पहर वरबाटो बाटो मिडि विवे मरुटने सेनर^२ महाद सदा दाहिनी ।

रूप रग एवी महादेवी देव देवनि की मिहामन बंटी मोहे मो हे निहबाहिनी ॥१६॥

१ मुख—भा०, मो० प्रति मे दूसरे हस्तलेख से "मुख" से "मुख" पाठ सशोधन हुआ है । २ सकट मे सब की—सा० आ०, सेवक मे सेवक—भा० मो० ।

चूरन को रन को विजया मन चूरन तो अजया भयभीता^१ ।
योगिन को गति ज्ञानिन को मति विप्रन वेद विवेक विनीता ।
स्वर्ग सची तल भोगवती भुव भीषम भूप सुता गुणगीता ।
भार्य जुद्ध की भारथी सुद्ध रती वर तीन सतीन म सीता ॥१७॥

१ भयभीता—सा० ।

आदि ब्रह्म विद्या ब्रह्म कहत प्रकृति जासो जोगमाया जानियोई योगिनि समाधी है^१ ।
भारती भवानी भुवनेश्वरी मतनी मात वाली^२ अन्नपूर्णा कपाली अग आधी है ।
एष तें अनेक जानी जल थल मे समानी^३ अगनित घानी सिद्ध साधवनि साधी है ।
माधारन देवी जो असाधान्न रूप सोई^४ बाधा हरिये वो देव राधा अयराधी है ॥१८॥

१ प्रकृति कहत जाहि सोइ ध्यान जागिन समाधी है—सा० । २ वा सी—सा० ।

३ बलानी—द्र० । ४ साधा—ग०, धार्यो—द्र० ।

पूजकिन ।

केसरि कपूर मृगमद चोवा चन्दन चरिच^१ रचि पटुप चढावति महानी के ।
घूप दीप भोजन समीपही निवेदन के वेदन जताइ जपे नाम बर घानी^२ के ।
जानत न जाकी तन जी की फोई देव पहे बाहि रट पीकी^३ भट बाहिर कहानी के ।
कही जदुराइ^४ जदुदाइ बर पादन को हकिमिनि रानी पग पूजत भवानी के ॥१९॥

१ रचि—भा० । २ बरदानी—भा० मो० । ३ जानत न जाकी तन जाकी नहीं देव फोई बाहि रटवी की—नी० ग० गजा० । ४ ०—सा० ।

द्वारपालिका ।

जगमग जोतिन के मोतिन के हार हिये करत बिहार^१ मृदु मालती की मालिका ।
केसर की खीर देव पीरि पर मोहनी^२ सी देव मुनि मोहै बिभुवदन बिसालिका^३ ।
नवला बहुर नवला सी लिये हाथ^४ जवसानि जान देति जब देति^५ बर तातिका ।
एवी^६ अद्भुत वह कंसी ह्वं है^७ देवी जाने मन्दिर^८ के द्वार दखी ऐसी^९ द्वारपालिका ॥२०॥

१ उतहत भार—भा०, ससति भार—मो० । २ मोहन—मो० । ३ बिलासिना—मो० । ४ सग—ग० गजा० । ५ देवी—द्र० । ६ एव—ग० गजा० । ७ मृह—ग० गजा० । ८ महल—ग० । ९ सोहे ऐसी—भा०, ऐसी सोहे—मा०, ऐसी देगी—नी० ग० गजा० ।

रावल नागरी भेद ।

रावल नागरि पांच विधि पहले राजकुमारि ।
तामु पाय दूनी^१ सखी दासी वही गम्हारि ॥२१॥

१ दूनी—भा० ।

राजकुमारी ।

ठुनुराइन^१ सब नगर की सुख सम्पत्ति की मूल ।
गुन गरवीली मानिनी पति जावो अनुकूल ॥२०॥

^१ राजकुंजरि—ब्र० ।

उदाहरण ।

पावरिन पावटे परे हँ पुर पौरि लगि धाम धाम धूपन के धूम धुनियन हँ ।
यन्तूरी अतर सार^१ चोषा रम घनसार दीपक हजारन अंधार^२ लुनियत हँ ।
मधुर मृदग राम रग की तरमनि म अग अग गोपिन के गुन गुनियन हँ ।
देव सुव साज महाराज वृजराज जात्र राधा ज^३ के मदन सिंधारे मुनियन है ॥२१॥

^१ अगर अतर सार—ग०, अगर सार—भा० । ^२ हजार ते अंधार—भा० मो०

^३ राधा जी—नी०, राधा—गजा०, राधिका—ग० ।

उज्वल^१ अगड खड सातयें महल महा महल चौवारी चद्र मडल के चोटही ।
भीतर हू लालन के जालन मिसाल जोति बाहिर जुहाई जगी जोति नके जोटही^२ ।
बरनन बानी और टारत भवानी पर जोर रमारानी टाटी रमन के^३ ओटही ।
देव दिगपालनि की देवी सुखदाइनि ते राधा ठुनुराइन के पाइनि पलोटही ॥ २४ ॥

^१ मजुन—भा० मो । ^२ चट—भा० मो० । ^३ चोट ही—मो० ।

^४ रमनी की—सा० ग० गजा० ।

धाय-लक्षण ।

राजनगर जे बसन जन से राजन के मीन ।
तिमकी तिय नृतमुतनि की होनी धाइ पुनीत ॥ २६ ॥
घारे पाते^१ प्याद^२ वरे^३ म्यानी बरे सिबाव ।
जैहि जाने जननी बूबरि ताहि बखानो धाय ॥ २६ ॥

^१ धार पीछे—भा० मो० । ^२ प्याद के—सा० ।

उदाहरण ।

राइनोन वारति^१ गुराई देखि अगनि की^२ दुरेन दुराई^३ त्या भुराई सा भिरति है^४ ।
ग्यां ग्यो सुषराई^५ सीन लघरन देति^६ त्यो त्यो सुदरि गुषर घर पेरो न भिरति है ।
निटुर डिठोना दीन्हे नीठि निक्सन कहै दीठि सागिबे के डर पीठि दे गिरति है ।
जिा जिन और चित्तचोर चितवत त्योही निन निन और तून तोरति फिरति है ॥ २७ ॥

^१ वरति—नी० ग० गजा । ^२ अगनि मे—भा० मो० । ^३ दुरेन दुराई—नी०, दुरत
दुराई—ग० गजा० । ^४ वे भुराई सी भरति है—भा० मो० । ^५ तरनाई—सा० । ^६ उवरत
देह—भा० ।

धाय-भद्र

घाइ सखी दासी^१ नटी ग्वालि सिल्पिनी नारि ।
मासिनि नाइनि वालिका विघवा^२ बधू विचारि ॥ २८ ॥

^१ दूती—ग० । ^२ पटवा—भा० मो० ।

सग्यासिनि भिक्षुवचधू सम्बन्धी की वाम ।
एती होती दूतिका दूतपग्य अभिराम ॥ २९ ॥
छल सो पैठे राजगृह मोहे राजसुतानि ।
हिलवे मिलवे दम्पतिनि कहे संदेशो आनि ॥ ३० ॥
रवि^३ उपजावे परसपर नित नित^४ नेह यदाइ ।
रहे दुहुनि^५ चित मँ चढी दूती चतुर सुभाइ ॥ ३१ ॥

^१ रस—भा० मो० । ^२ नित नव—ग० गजा० । ^३ दुषी—नी० ग० गजा० ।

उदाहरण

लेहु लली उठि लाई हो बालहि^१ लोक की लाजहि सो लरि रागी ।
फेरि इन्ह सपनेहु न पैयतु ले अपने उर मे धरि राखी ।
देव लला अवला नवला यह चन्दकला कटुला करि राखी ।
आठहु सिद्धि नबो निधि^२ ले घर बाहर भीतरहुँ भरि राखी ॥ ३२ ॥

^१ लेहु लला उठि लाइ हो बाल हि—भा०, लेहु लला उठि लाई हो बात को—मो० ।

^२ नेत्र निधि मो० । ^३ धरि राख—आ० ।

बुजनि केबोरे मनु^१ बेलि रस छोरे लाल तालनि के खोरे बाल आवति है नित मो ।
अमृत निचनेर बल बोलत निहोरे नेक ससिनि के डोरे^२ देव छोले जित तित को ।
बोरे बोरे जवनि^३ बिबोरे देति^४ रूपरासि गोरे मुख भोरे हँसि जोरे लेत^५ हित को ।
सोरे लेति रति दुति भोरे लेति मति गति छोरे लेति लोकलाज बोरे लेति चित को ॥ ३६ ॥

^१ कुजन के बोरे मँन—भा० मो० । ^२ जोरे—ग० ।

^३ जवन—भा० मो० । ^४ देखि—नी० । ^५ गोरे गोरे मुख भोरे भोरे लेत—भा० मो० ।

बन्धु विप्र कुल गुरु सुता औ गुनवन्ती कोर ।
सोद राजसुतानि की सखी सहचरी^१ होइ ॥ ३४ ॥

^१ सहेली—भा० ।

दुहुन मुहावन दुहुन गुन उपजावन रस भाव ।
विरहास्वास दिखावन दोउन^१ विरह जताव ॥ ३५ ॥

^१ दिपाय पुनि दोऊ—भा०, हिन उपजावन भूपनन दोउन—सा०, विरहास्वान दिग्-
रावनन दोउन—आ० ।

इत को इतहि उराहनी इत उन को^१ सदेम ।
इह मिनावन परसपर रचिवो भूपनवेस ॥ ३६ ॥

^१ इत को इत—ब्र०, उन को इतहि—सा० ।

देम वास गुन रूप^१ विधि बरिवो सदा प्रयत्न ।
ए दस कर्म सजोनि के करे रते^२ आनन ॥ ३७ ॥

^१ अतुरद—भा० मो०, अर रूप—ग० । ^२ रही—ग० ।

सयै सयै के काज पै सखी बनेक प्रकार ।
पाइ कहै दूरीं बहूँ दानी कचहूँ की धार^१ ॥ ३८ ॥

^१ बहूँ विचार—भा०, कहै विचार—मो० ।

दस कर्म-उदाहरण ।

आई हीं देखि यमू दव देय सु देखत भूनी सबे मुधि मेरी ।
राम्मो न रूप कछु विधि के घर न्याई है लूटि लुनाई की डेरी ।
एरी जबै बट ऐवं है बैम मरैगी महा विष घूँटि घनेरी ।
जे जे गनी गुनजागरि नागरि हूँदै ते वाने^१ चिर्तानही^२ बेरी ॥ ३९ ॥

^१ हूँहिगी वानी—भा० मो० । ^२ चिर्तानि की—ब्र० ।

देव न देखनि हों दुति दूसरी देखे हैं जा दिन ते^१ यदुभूप^२ मे ।
पूरि रहो री बही पुर वानन^३ वानन आनन^४ ओप अनूप मे ।
मे भोगिमा गणियानि निहारिये जाइ मिली जसबुद^५ ज्यो कूप मे ।
कोटि उपादन पाइये फेरि^६ समान गई ब्रजराज^७ के रूप मे ॥ ४० ॥

^१ जा दिन ते निरखे—मो० । ^२ ब्रजभूप—भा० । ^३ छाई रही री बहै छवि वानन—
भा० मो०, पुर वानन—भा० । ^४ आनन आनन—ग० गजा० । ^५ रस विदु-भा० मो० । ^६ कोरि
करे अथ वयो निकसेगी—भा० मो०, कोरि बरो नहि पाइये फेरि-सा० । ^७ रंगराज के—ग०
गजा०, सुन सावरे—भा० मो० जदुराई—के—आ० ।

रस उपजाइबी—उदाहरण ।

विबली निरगिनि निवट नानि हूद^१ तट रोमराजी बन धौंसि मुक्कन अन्हाव हैं ।
नेह नगरीमें गुन देह^२ उर उंची पौरि देव कुच कचन के बलम लयाव हैं ।
सौवन दवाल सलचावत बटोहिनि बी लाल धनि देजो सास मोननि लहान हैं ।
जोवन बजार बेटयो जीहरी मदन सब^३ सोगनि बीहीरा^४ बाने हाथ हूँ रिवान हैं ॥ ४१ ॥

^१ नट—मो० ग० गजा०, नद—सा० आ० । ^२ मा वेह—ग० गजा०, गुं पेह—
सा० । ^३ रस—ग० गजा० । ^४ हिय—मो० ।

ग्यानि गई दक ह्यो की उहाँ नधि^१ रोनि मुनी भिनु के दयिदान की ।
या तो नट बह भेंटी भूजा मरि नाजो निवानि बछु पहिचान की ।

जाई निछावर के मनमानिन गोरस दे रम ले अधरान^१ की ।
वाही दिना ते हिय मे गडो वह डीठ बडो बटरी^२ अँलियान की ॥ ४२ ॥

^१ मग—भा० । ^२ रम से अधरान—ग० गजा० । ^३ री बडी—भा० मौ० ।

विरहास्वासन ।

काहू की बक चितेवे की सक न लाये कलक बिसे किन^१ बीसां ।
वा ठकुराइन की अब देव विरचि रची रचि रावरे जी सां ।
दही मिलाई तुमैं हा तुम्हारिये आन करौ वृषभानसली सां ।
वाम्हन की सां बडा की सां मोहन मोहि गऊ की सां गोरस की सां ॥ ४३ ॥

^१ बिसी किन—ग० गजा० ।

नन्दकुमार उतै यति^१ ठाबुर राघ इतै जतिही ठकुराइन ।
देव समोग तिहारो दुहुं को बन्यो कुल सम्पति सीम सुभाइन ।
पाँय न खागिय मरी भट्टू नित लागत^२ हाँही लगी इन पाइन ।
आज तुम्ह ब्रजराज मिलाऊंगो राज करी गृहकाज^३ गुसाइन^४ ॥ ४४ ॥

^१ इतै उतै—भा० मौ० । ^२ चाहत—भा० । ^३ लुगाइन पाइन—ग० गजा० । ^४ ब्रज-
राज—ग०, रहि आबु—सा० । ^५ सुसायनि—नी० ग० गजा० ।

परस्पर दिखावन ।

सील की सागरि रूप उजागरि है गुन आगरि नागरि नारी^१ ।
वा बरसाने के बासिन की निसि बासर सोम समान समारी ।
याबिय बेस बडी सुखदाइन ए ठकुराइन^२ है जु हमारी ।
धी वृषभानु के भोन को दीपक एई है^३ राधिका राजकुमारी ॥ ४५ ॥

^१ भारी—भा० मौ० । ^२ नागरी बेस बडी ठकुराइन मौ सुखदाइन—भा० । ^३ दाइ
कराइ है—भा० मौ०, दापति एई है—सा० ।

बानन बूडल माल गर संग मडिन^१ गोपन के कुँवरेटा ।
देव गमन्द से आवत मन्द से देखुरी चन्द स नद के बेटा^२ ।
काम की दूती पडावत तूती चडी^३ पग जूती बनान लपेटा ।
पीरो ऋगा^४ पटुका जिन छोर छरी^५ कर साल जरी सिर फेटा ॥ ४६ ॥

^१ राजत—ग० । ^२ टोटा—सा० । ^३ तसे—नी० ग० गजा० । ^४ भीन ऋगा—सा० ।

^५ तसे—ग० गजा० । केवल सा० प्रति म चरणो का क्रम १.२.३.४ है ।

जब तें बुररकान्ह रावरी बला नियान वान परी बाने बहूँ^१ सुजस बहानी सी ।
तउहीतें देव देखी^२ देवता सी हँसति सी खीकति सी रीकति सी^३ रसति रिधानी सी ।
छोही सी छनीसी छोन सीनीसी छकीसी छीन^४ जकीसी टकीसी लगी यकी^५ यहरा सी ।
वीधीसी वधीसी बिध बूढीसी^६ बिमोहिन सो बँटी बह^७ बकति बितोकनि बिकानी सी ॥ ४७ ॥

१ वाके कहुँ कान परी—भा०, वाके कान परी कहुँ—मो०, दरीक वाके कान कहुँ—बु० ।
 २ देखो—सा०, आ० । ३ रीकति खीकति सी—भा० मो० । ४ छान—आ० । ५ ०—मो०,
 हाशिये पर उनी हस्तलेय से—ग० । ६ वूदति—भा० मो० । ७ बाल—भा० ।

दपति को बिरह-जनावन ।

ऐपन की ओप इन्दु कुन्दन की आभा चम्पा नेतकी को गाभा जोति^१ जोतिन सो जटियन ।
 जगरमगर होत सहज^२ जबहर से अतिही^३ उजारे जब नसक उबटियत^४ ।
 बेसई सुघर^५ सुबुमार अग सुन्दरि के लालन^६ तिहारे पास नेह खरे लटियत ।
 देव तेव गोरी के विलास गल बात सगे ज्यो ज्यो सीरे पानी पीरे पान से पलटियत ॥ ४८ ॥
 १ पीत—नी० ग० गजा० । २ सहज—नी० । ३ नय से—नी० ग० गजा० । ४ उलटियत
 —भा० । ५ सुटार—भा०, सहज—प० । ६ मोहन—नी० ग० गजा० ।

बरनि बपवर मे गूदरी पलक दोऊ कोए राने बसन भगोई मेप रगियाँ ।
 मूडी जलही मे दिन जामिनिहूँ जापे भौंहे प्रम सिर छायो बिरहानल विलखियाँ ।
 आसु जयो^१ पटिक माल लाल डोरे मेली पंविहूँ^२ भई हूँ अनेली तजि नेली^३ सग सखियाँ ।
 दीत्रये दरम इर^४ कीजिये मंजोगिनि ये^५ जोगिन हूँ बंठी है बियोगिनि की अंखियाँ ॥ ४९ ॥
 १ अंबुवा—भा० । २ लाल दोरे सेहो साजि—सा०, मेली पंवि—नी० आ०, सेली सग—मो० ।
 ३ चली—नी० । ४ नेकु—सा० । ५ जस मनिये—मो०, सजोगिनि जू—सा०, मंजोगिन के—
 प्र० नी० ।

दपति को उराहनो ।

तौ गून देव देव मुने जग ते तव तें सुधिऊ न उरें उर की है ।
 पीर नहीं पहिचानत नोग बखानन वेद बिया^१ जुर की है ।
 लाम चढ़ी अनि मोहन पी मति मोह महागिरि तें दुरकी है ।
 थोरिये बंस बियोरी भद्र बज भोरी सी बातनि तें भुरकी है ॥ ५० ॥

१ क्या—ब० ।

ह्यां सुधियो विसरी उत ह्यां गु घरी पल^१ जान हैं प्रान बले जू ।
 जो नहिंय तो गहो^२ नहिं जात^३ कहे ही जिना पर बंते पले जू^४ ।
 देव दुहें विधि बूढ उतही की रावरे बातन ही^५ बदले जू ।
 और उराहनो देत बने न^६ कहा वही कान्ह भले हो^७ भले ज ॥ ५१ ॥

१ पल ही पल—भा० मो० । २ बलो—सा० । ३ मानत—भा० मो० । ४ बंते खले—
 नि० ग० गजा० । ५ बानन ये—भा० मो० । ६ बंद न—मो०, चैन न—आ० । ७ भले जू—ग०
 गजा० ।

देव कामदेव ही को कमान^१ दृथार हो जू अग अग गुननि दियो^२ गुननि आगरी ।
 नेह की निनाई देह^३ दुवि मधुराई नग मिस तें मधुर मधु घन^४ की सी सागरी ।
 घेटन सी बालि^५ बिन चोट^६ सी चितोनी हासी टग की मिटाई भौह पांसी की सी सागरी^७ ।
 भसी हो जू भलो हो सलोनी घाग कीठो विप भीरी आधि मरवस खोरन उत्रागरी^८ ॥ ५२ ॥
 १ कामत—सा० । २ गुनन के ओ—मो०, गुनन कीओ—ब० । ३ देव—सा० ।

४ मधुव्रत—सा० । ५ चली—सा० । ६ चान अरु चितचोट—ग० गजा०, चितचोर—मा० ।
 ७ ठग की सी फाँसी फाँसी फाँसी लाग री—नी० ग० गजा० । ८ सलोनी बात मीठी मुख वि
 सीरी आँखि सरबस चोरन उजागरी—सा० भा० प्रति में सम्पूर्ण छन्द तथा मो० प्रति में छन्द
 वा केवल तृतीय धरण नुटित है ।]

राधे वही है कि तैं छमियो ब्रजनाथ जिते^१ अपराध बिये में ।
 कानन तानन भूलत ना खिन^२ आँखिन रूप अनूप बिये में ।
 आपने ओछे हिये में दुराई^३ दयानिधि देव बसाय लिये में ।
 होंही^४ असाध बसी न कहूँ पल आष अगाध तिहारे हिय में ॥५३॥

१ किते—भा० मो० । २ भूल नाचनी—नी० भूलत नाखिन—ग० गजा० । ३ ओछे
 हिये अपने दिन राति—नी० ग० गजा०, मैं यही अपने ओछे हिये में—सा० आ० । ४ होय—
 मो० ।

जाती हो जो उत वे जो^१ मिलं वहुँ पावो समी बहिये को ठिकाने ।
 हाँ की दशा सुम देखिये है कहियो समुझाइ जो वैं^२ जिय आने ।
 या मन की विन पाये विधा तनकी^३ कवि दव जू कौन बखाने ।
 सीसी हितू हित की विन और सु को इत की^४ चित की गति जाने ॥५४॥

१ जा उत बाजु—नी०, जा उत बाजु—गजा० । २ जो वैं—भा० मो० । ३ सीन की—
 भा० मो० । ४ इन की—नी० गजा० ।

दपति को मिलाइयो ।

जा दिन सँ हित जान्यो इत^१ तव ते नहि तू कहि बाटू सो बोले ।
 तेरेई हूँ रहे^२ भाट भटू सब सो गुन रूप^३ सराहत डोले ।
 देव इन्हे सुख^४ सा सजि ने रस सो रजिके^५ तजि साज ने ओले ।
 राधे अहो हरि भावते को भरि ने भुज भेंटिये मेटि मसोले ॥५५॥

१ ओरयो इत—सा० नी० ग० गजा । २ तेरे हूँ रहूँ—नी०, तेरेई हूँ रहे—सा० ।
 ३ सौगुनो रूप—भा० । ४ सुख—ग० । ५ रजिके—भा० मो०, रजिके—सा०, रजि पैं—नी०
 ग० गजा० ।

दव तजयो गुन गौरव औ गुरु सौगनि सो^१ छल छिद्र करे में ।
 धाय घसी वृषमान के भौन समान के गाय^२ सबे नदरे में ।
 तो हित जाय हितू हित की भई^३ दूती ने दाहनि पाँय परे में ।
 लाल इन्हें उर माल करो गहि डारि है ग्वाल^४ गुपाल गरे में ॥५६॥

१ मैं—ग० गजा । २ समान के गोप—भा० मो०, समामत गोप—आ०, समान के लोग
 —गजा० । ३ हित के भई—भा० मो० । ४ गहि डारा है ग्वाल—नी०, गहि डारिहीं ग्वाल—
 सा०, गहि डारहुँ बाल—भा० मो० ।

दम्पति को भूषण ।

धोवा मिसै भृग मेंव घसे घनठार सो बेसर गारत डोलें ।

भूपन वेप बनाइ नये पहिराइ पुराने विगारत डोलै ।
राघे के अगनि ही गिगरी दिन सगही सग गिगारत डोलै ॥ ५७ ॥

१ लगारत—ग्र० नी० ।

प्रसन्न करन ।

भरे गुन भार^१ मुकुमार सरमिज सार मोभा पर सागर अपार रस^२ आउडे ।
नव नग जान सान अंगुरी विद्रुम^३ माल नूपर मराल^४ ये अनूप रव^५ नाउटे ।
घरिये न पांव बलि जांव राघे चन्दमुखी वारो मद गति^६ पै गयन्दपनि छाउटे ।
ठितिहि छुवन देव दूनी होनि मन्वक पलक छजे ठाटी हो पलक करी पाउटे ॥ ५८ ॥

१ हवि भार—ग० । २ गुन—भा० मो० । ३ विद्रुप—भा० मो०, प्रवाल—ग० ।

४ मदाल—ग० । ५ अनूप रम—भा० । ६ गनि मद—भा० मो० ।

मखिन को मुख मुने मौनिनि को महादुउ होन गुहजनन के गुन को गहर है ।
देव कहै लाख लाख भांनि अभिलापा पूरि पी के उर गमगत प्रेम रस पूर है ।
तेरो बलबोल बल भाषिन को स्वाति बुद जहाँ जाइ पर्यो तहाँ तमोई समूर है ।
ब्याल मुख विप ज्यो विद्रुप ज्यो वपीहा मुख सीप मुख मोठी बदली मुख कपूर है ॥ ५९ ॥

नी० गजा० प्रतियो मे ५८, ५९ मन्व्या के छन्द नहीं हैं । इन प्रतियो मे इन छन्दों के

स्थान पर "देव रज जीवन" छन्द है ।

घाइ सन्वी के दूतिवा के दासी^१ अभिराम ।

जामो दम्पनि हित करे मिछा ताको^२ नाम^३ ॥ ६० ॥

१ मो दासी—नी० ग० गजा० । २ तामो ताको—नी० ग० गजा० ।

३ काम—ग्र० ।

वाग्द^१ वंस वडा क्षतुरी हा बटे गुन देव वडाये बनाई ।

सुन्दरी हो सुपरी हो मनानी हो मीन भगे रमरूप मनाई ।

राजवट बनि राजकुमारि अहो मुकुमारि न मानी मनाई ।

नैमिक नाह के नेह विना^२ खकचूग हूँ जैहै मर्व चिकनाई ॥ ६१ ॥

१ वाग्ि हौं—भा०, वाग्ि हौं—मो०, ही—ग्र० । २ नेह के नेह विना—भा० । (वेवन

मा० प्रति में चरणा का क्रम १-२-४-३ ।)

बासी ।

दम्पनि आयमु^१ बरन को मनमुग्ध रहनि चितोनि^२ ।

दासी नागरि^३ मेवविनि बहूँ हूँ रहनि है मौनि^४ ॥ ६२ ॥

१ आयगु—भा० मो०, आयुम—नी० ग० । २ विनोउ—नी० । ३ बहिये—नी० ग०

गजा० । ४ बहूँ रहनि है मौनि—भा०, बहूँ हूँ रहनि सोनि—मो०, बहूँ हूँ रही मौनि

—ना० ।

दम्पनि एकहि मेर पर पग पीडुरी दावि दहूँ को गिनावनि ।

आपने जेबे^१ उठीहै बठोर उरोरन कोमलै एटि मिलावनी ।

भीहे अमेठि रहै ठकुराइन ठाकुर के उर काम जगावति ।

लौडी अनोखी लडाइति^१ लाल की पाइ पलोटे^२ की चोटै चलावति ॥६३॥

^१ पाइते वैठि—नी० सा० आ० । ^२ लडावति—भा० मो०, लडावते—ग० गजा०, लडावते—सा० ।

देवल रावल नागरी इहि विधि बरनी देव^१ ।

राजनगर नागरि कही न्यारे लच्छन भेव^२ ॥६४॥

^१ देस—नी० गजा० । ^२ भेय—गजा० ।

धाय सौं खीन खिनै खिनखीनसखीनसा नेम न प्रेमसँजोगी ।

दूतिनहू तिनकी थलि पाय न दासी सौ नेन उदास वियोगी ।

भावे न भोजन पान न भूपन दूपन से जन^१ और अयोगी ।

राजबधू विलखे मन गोवे^२ लखे कहुँ लाल भुवपत^३ भोगी ॥६५॥

^१ अत्—ग० । ^२ गोप—सा०, गोल—त्र० । ^३ लाल जू भूपत—मा० । नी० ग०

गजा० भा० मो० प्रतियों में यह छंद नहीं है ।

इति श्री भूप भोगीलाल हित रस विलासे कविदेव कृते देवल रावल नागरी वर्णन नाम प्रथमो विलास ।

राजनगर नागरि दुविधि^१ बरनत मुकवि सम्हारि ।

एक हटबई की बहू^२ डूजी क गनिका नारि ॥१॥

^१ विविध—भा० मो० । ^२ एक हटवाइन कही—नी० ग० गजा० ।

पुनि अनेक करि हटबइनि^३ कही अनेक प्रकार ।

गनिवा गनै न सत असत चाहे धनी उदार^४ ॥२॥

^१ पन—नी० । हटवरन—नी० ग० गजा० । ^२ अपार—नी० ग० गजा० ।

तजि अपने कुल धर्म पन^५ करे और व्योहार ।

सोई जाति प्रसिद्ध है बंटे हाट बजार ॥३॥

^३ धर्म येन—मो०, धर्म एन—भा० ।

राजनगर की नागरी पन^६ अनेक बहु भाति ।

तिनमें मुख्य मनुष्य तिय बरनि कही दम जानि ॥४॥

पुनि—भा० मो० सा० ।

जोहरिनी छपिन कही पटविन और मुनारि ।

गधिन तेलिनि तमोरीन वन्दुनि^७ बनिनि कुम्हारि ॥५॥

^४ किदुनि—भा० मो० ।

दरजिन आदि अनेक लघु जाति चूहरी अत ।

नगरद्वार गनिवा जमै सो चाह धनवन्त ॥६॥

नी० गजा० प्रतियों में जाति-नाम के सरया ४, ५, तथा ६ दोहों के स्थान पर निम्न-लिखित दोहे हैं.—

जोहरनी ।

मोती^१ मुग्धा बुद्धि मो बुद्धन की वेति विधीं मांवे नरि वाढी^२ न्य जीपनि भरनि है ।

पोती पुव^३ रागनि वपुष नखमिख वर चरन अवर विट्टमन ज्यो धरनि है ।

होग मो हेमनि^४ मोती मानिख दमन मेन स्यामता समनि^५ दृग हियार^६ हरनि है ।

जोवन जवाहि^७ मो जगमग होट जोइ^८ जोहरी की जोई जग जोहर करनि है ॥७॥

१ मोती—भा० मो० । २ डागे—ग्र० । ३ पुष—नी०, पुष्य—“प्य” हागिये पर—

मा० । ४ हीग मग मनि—भा० । ५ समनु—आ०, वमनि—गजा० । ६ हीरा की—भा० ।

७ होट जान—भा० मो०, होनि जोति—ग्र० ।

छीपनि ।

मोने मे मोहने^१ गानन मोहै मृहागिनि की अनि मृती^२ मृहाई ।

देव जू अरवें सगी अंगियान में देवनरी मुम की अरनाई ।

ज्यो ज्यो गे पट रग निचोरन त्यो निचुरें जेग जग निवाई^३ ।

दे छवि छापे^४ वर मन छोट^५ मु छीपनि वान^६ छिरे न छिपाई ॥८॥

१ मोने मे मोहन—भा० मो० । २ मोहें—भा० मो० । ३ गोरार्इ—ग० गजा० ।

४ छीपे—ग० गजा० । ५ छीर—मा०, छाप—भा० मो० । ६ छैन—ग० गजा०, वानी—मा० ।

पटवनि ।

रेम के गुन छीनि छग करि छोर उँ^१ ऐबि^२ मनेह रचावे ।

देव दमौ अंगुरी उरमाई के टोरी गुहै रग रग मचावे^३ ।

मोहनि मो मन पोहति^४ मो जन छोहति^५ मो तनि^६ भौह सचावे^७ ।

पचन नैननि मननि मो पटवा की बहू नटवा सी नचावे ॥९॥

१ कर छोरनि—भा० मो० । २ ऐबि—नी० । ३ देव दमौ अंगुरी कर पाइ वर उरमाइ

के रग मचावे—ग० गजा० । ४ मोहन—भा०, जोहति—ग्र० । ५ अनु जोहति—भा० मो०,

मनु चोहति—ग० गजा० । ६ छवि—ग० गजा० । ७ सचावे—नी० ग० गजा० ।

जोहरनी छीपनि वही कमहेरनी मुभाणि ।

ओरदन हनवाहन बनिन^१ जोर पभाणि ॥

१ ओ पटवदन हनवाहन—गजा० ।

गधिनि मानिन तमोगिन बडइन और नुहारि ।

दरजिन नेतिन कुम्हागिन भरनूजिन मनिहारि ॥

धुनिन जुवाहिनि बटेगी और गटविन नागि ।

भट्टिगरी गिबानीगरनि और चूहनी चभाणि ॥

ये कल्पिे मर हटवदन नूप पुर नगरी वाम ।

पुर डागे मनिरा बसे नागरिख अनि भनिराम ॥

देने “जाति विनाम की प्रामाणिकता” शीर्षक—पृ० १७७, तथा परिशिष्ट २, पृ० २६४

सुनारिन ।

देव दिग्वावति बवन सो तन औरन को मन तावै अगौनी ।
मुदगि माँचे में दै भरि वाढी भी आपने हाव गढी विधि सौनी ।
सोहति^१ चूनगी स्याम किमोरी की गोरी गुमान भरी गजगौनी ।
कुन्दन लीक कसौटी मे लेखी सी देची^२ सुनारि सुनागि मनीनी ॥१०॥

^१ मोभित—भा० । ^२ लेखि सु देखि—सा० ।

गंधिनि ।

अरगज^१ भीजी मरगज वागं वनीठनी^२ हाट पर वंठी अनिही^३ मुधरपन सा ।
इन्दु सो बदन मृगमद विन्दु वेंदी भाल भन्कै कपोल गोल दूने दरपन सो ।
मैन मद छाके नैन देखे^४ देव मुनि मोहैं सोहैं सटकारे^५ वार कारे मरपन मा ।
यधु किये मधुप मदन्ध बिये पुरजन^६ बाँध्यो मनु^७ गन्धी की सुगध^८ भरपन मो ॥११॥

^१ अगर जै—नी० । ^२ बाग मनो वनी—सा० । ^३ अनि ही—भा० । ^४ ०—ग० गजा० ।

^५ सैन सोहैं सटकारे—ग० गजा० । ^६ बबुजन—ग० गजा० । ^७ मोह्यो मन—भा० मो० ।

^८ गध की सुगध—सा० ।

तेलिन ।

तिल है अमोल लोल नैनीके कपोल बीच बोटिक अनूप रूप^१ बारि पेरियतु है ।
सोभा सुने जाकी बखि देव कहै कौन को न होत चित चीकनो चतुर बेरियतु है ।
घाट बाटहू मे घट निपट बटोहिनि के नक्ही^२ निहारे नेह भरे हेरियतु है ।
मरम निदान ताके^३ परस की कौन कहै पोनहूँ के परस परोसी पेरियतु है ॥१२॥

^१ कपोल गोल बोलत अमोल जन—ग० गजा० । ^२ नेह की—नी० गजा० । ^३ तकि—

भा० मो० । नी० प्रति मे चतुर्थ चरण बुटित है ।

तमोरिनि

रफिन चोली नैं ठोली^१ खगी चुनि चाइ^२ सो गाँठि^३ उघेरि अमेठी ।
गोगी गुलाब लैं नैं छिरवैं छवि भाव सा देव मुभाव सो एठी
मोने में अग सुरगिन^४ ओठनि कौन के जानि^५ जिये में न पंठी^६ ।
ऊँची दुगान पै वैचनि पान तमोरिनि रचत सीचन^७ बँठी ॥१३॥

^१ टोनी—नी०, डोनी—आ० । ^२ चार—भा० । ^३ सो आँछे—भा० मो० । ^४ सुरगनि
—भा० मो० प्र० । ^५ वाज—नी० । ^६ देव गु देखत ही जिय पंठी—ग० गजा, नैन पंठी—
आ० । ^७ ऐंचत मो चिन—भा०, प्रानन ऐंचनि—ग० गजा० ।

बन्दुनि

मीठो महा मुदु बोन बहै हँमि मोल बहै^१ भुगनाद मुभाइनि ।
दव भुलाइ बटोहिनि बाट इलाजनि चोरि लिय चिन चाइनि ।
रूप अनूप भरी नय लैं गिन मुद मुधारगरी^२ की ग्माइनि ।
हाट के ऊपर हाटर बनि सो बँचनि है इन्वा इन्वाइनि ॥१४॥

^१ मीठो महा हँमि मोद बहै—हँमि जोडि बहै—आ० नी०, मधु बोन बहै—भा०

मो० । ३ सूक्ष्म सुधारस ही—भा०, सुद्ध सुधारस ही—मो० । ३ हटवी—भा० ।

बनिनि ।

मदन के मोदभरी जोवन प्रमोद भरी^१ मोदी की बहू की दुति देखी दिन^२ दूनी सी ।

चाउ रहै चित मे चितंत दारिद न राखी बोल भोल मीठा खांड घौड तें न ऊनी सी ।

राज बाट बीच बाट पारति बटोहिनि की बाट विनु तोल मनु^३ अतिनि मे छूनी सी ।

चूनरी मुरग अग इंगुर के रग देव बंठी परचूनी की दुकान पर चूनी^४ सी ॥१५॥

^१ विनोद भरी—आ० । ^२ देखी तिन—भा० । ^३ विनु तोल मनु लत—आ० । ^४ चूबी

—आ० ।

कुम्हारनि ।

चन्दमुची मुरि मन्द हँमे मुख^१ मोतिनि को गहि खोल्यो डवा सो^२ ।

देव सुधा भये ओठ^३ उठे कुच भेंटि अघात^४ सही मधवा सो^५ ।

रूप उम्हार^६ कुम्हार की जाई के जोवन को न तचायो तवा सो ।

काम के चक्र चढायो न को^७ घट काको^८ न कोनो अवाम अँवा सो ॥१६॥

^१ गुन—मा० । ^२ उवा सो—नी० ग० गजा० । ^३ एँठ—भा० । ^४ भँचात—नी०

गजा० । ^५ नही मधवा सो—मा०, सही मधवा सो—ग० गजा० । ^६ रूप अम्हार—भा० ।

^७ नयो—ग० गजा० । ^८ याको—भा० मो० ।

दरजिन ।

अन्तर पँठि^१ दुहँ पट के बनि देव निरन्तरता उर आन^२ ।

देत मिलाइ घने अपने गुन सार^३ मुई विधौ दूती^४ सुजान^५ ।

ताहि लिये कर मे घर मे रहै^६ जाको^७ सिय भरम^८ सोई ठान^९ ।

होनी^{१०} करे जनि की दरज दरजी की बहू बरजी नहि मान^{११} ॥१७॥

^१ बंठी—मा० । ^२ मान—नी० । ^३ सार—ग० । ^४ दूती—सा० । ^५ फिर—सा० ।

^६ जाहि—भा० मो० । ^७ भरम—गजा०, घर मे—सा० । ^८ धान—भा०, सु बपान—ग०

गजा० । मोइ जान—भा० । ^९ कीन्ही—ग० गजा० । केवन आ० प्रति मे इसके बाद “बढदन

वर्णन’ तथा “कुम्हारिन वर्णन” छन्द अधिब है ।

चूहरी ।

धीकने कपोन कौवा चमक^१ चुनी मे दल चवन दुगबलनि चिनवनि बनिनी^२ ।

बचुकी मे कमे कुच बचन बली मे भीने अचन की ओट^३ भाई रचक उमबनी ।

बटकीनी चुनरी^४ मे चोट मी पलावै भीहे चेटक मी चानि^५ पग जूती कर^६ ककनी ।

पून मे भरत रग भर^७ लामे भाऊ देन चूहरी चतुर चिन चोरनि^८ चमबनी ॥१८॥

^१ तोमे प्याग चवन दुगबलनि बनिनी—भा० । ^२ अचन की ओर—ग० । ^३ चोरन—

नी० । ^४ चेटक मो नावै—ग०, ‘चानि’ गजा० प्रति मे त्रुटित है । ^५ कटि—ब्र०, जूती कर

ककनी—गजा० । ^६ भरत रग उडि—भा०, भरत रग कर कर—नी०, ज रत अग भाग—

भा० । ^७ चोरनि—आ० ब्र० ।

पनिका ।

चाट उचाट सो चेटक मो^१ चुकुटी भृकुटीन^२ जम्हान अमेठी ।
जोवन के इतराहट^३ मो अठिवात अठोठनि ओठनि^४ ऐंठी ।
मौनि भई मन्न नारिन^५ की सगरे नर मोहि मनो मन^६ पंठी ।
देव दृगचन छोरनि मो चित चोरनि यो चित चोरनि^७ बिंठी ॥ १६ ॥

^१ चाटु उचोदसी चटु कुसी—नी० । ^२ चिकुटी चकुटीन—नी०, भृकुटी चिकुटीन—
भा० मो० । ^३ इतराहट—ग० । ^४ अछोटनि ऐठनि—भा० मो०, अठोठनि जोठनि—नी० ।
^५ कुल नारिन—सा० । ^६ मनो मुन्न—मो०, मनो रमन—आ०, हिये मनो—ग० गजा० ।

जौहानी हरिनी ज्या^१ भुलानी छकी छवि छीपिन छोह पछारी^२ ।
मप मदपनि^३ मोहित गधिनी व्याकुल वैन सुनै न मुनारी ।
हूक उठी हलवाइन के हिय^४ तीखे कटाछ तपोरिनि मारि ।
वेर^५ बनी ना गनै गनिका गुन भायक भोगी भुवाल निहारी ॥ २० ॥

^१ जा—ब्र० । ^२ क्षीपनि छोह पदारी—ग० । ^३ मदपनि—ग० । ^४ अनि—सा० ।

^५ बैली—ब्र० । उपयुक्त छद केवन ब्र० ग० सा० प्रतियो म मिलना है, भा० मो० नी० गजा०
प्रतियो मे नही ।

इति श्रीनृप भोगीलास हित बानी देव प्रकारा रस विलास नगर नागरी वर्णम नाम
द्वितीयो विलास ।

पुर कहिये छोटेो नग्न राजनगर के^१ तीर ।
अपने अपने धर्म मे चारि^२ बरन की भीर ॥ १ ॥

^१ राजनगर की—भा०, राजनगर की—मो०, महानगर के—सा० । ^२ नारि—सा० ।

तहाँ विप्र छत्री वनिक काइय कुल अरु मूद्र^१ ।
नाऊ माली रजक ए पुरवामी निरदूद^२ ॥ २ ॥

^१ तहाँ विप्र धर्म छत्री वनिक काइय कुल मूद्र—मो० । ^२ निर हुद्र—भा० मो० ।

पुरवामिनि तिनकी तिया कुल आचार विचार ।

निय धर्म मुभ वर्मपन^१ नाज वाज^२ ध्यौहार ॥ ३ ॥

^१ वर्मपुनि—ब्र०, धर्मकुन वर्म मुभ—सा० । ^२ राज वाज—नी० गजा० नाज

वाज—सा० ।

ब्राह्मणी लक्षण ।

मन्य शीन सतोष निधि विप्र बधू सविवेक ।

न्हान ज्ञान जप तप^१ नियम पूजन यजन^२ अनेक ॥ ४ ॥

नी० गजा० प्रतियो मे दोटे का पाठ डग प्रकार है —

“तहाँ विप्र छत्री वनिक भट कायम्य विगर ।

नाऊ अरु वारी वर्म घोरो डोम चमार ॥

इन प्रतियो मे अनिरिक्त ज्ञानि-नाम के उदाहरण—छद भी है । देखे, “ज्ञानि-विनाम
की प्रामाणिकता” शंख—पृ० १३८, तथा परिशिष्ट २—पृ० २६५ ।

२ न्यान ज्ञान तप जप—नी० ग० गजा०, न्हान गान जप तप—भा० मो० । २ कुल
आचार—नी० ग० गजा० ।

उदाहरण ।

मग तरगिनी बीच वरगनि टाटी करै जप रूप उदोती ।
देव दिवाकर की किर्न निवसै विकर्म मुख^१ पकज जोती ।
नोऱ भरी निचुरं अलकं^२ छुटिकं छनव मनो मांग के मोती ।
त्रिजुन मो भनव लपटे वन^३ बज्जल मो मग उज्जल घोनी ॥ ५ ॥

१ मनु—भा० मो० ब्र० । २ अलकं निचुरं—भा० भो० अलकं निचुरं अलकं—दूमरे
“अलकं” पर हस्तान फेरी है—ब्र० । ३ लपटे भनव वन—भा० मो० ।
क्षप्रिय-लक्षण ।

छत्र धरन छप्रिय बह्यो भूपनि सो ट्टै ठाम ।
पूरव मे रजपून अर पच्छिम छप्रिय नाम ॥ ६ ॥

मा० प्रनि मे दोहा मुटित है ।

रज गगन रज दान^१ भट गाय^२ विप्र हरि पीर ।
ताकी निय क्षप्रिय बधू बरनी गुननि गहीर^३ ॥ ७ ॥

१ रज दान—भा० । २ गये—मा० । ३ गुन गभीर—ग० मा० ।

राजपूतानी ।

भाग भगी अनुराग भगी^१ बड भागिनि मुट्ट मुट्टागिनि छाजै ।
अग अनग तरगनि जानि^२ इकमनिय मव सगिनि माजै ।
सधिन वं रचि वधि बधुनि विरची मु मची मुनि काजै ।
प्रेम भरी पुर भूपमुता गुन रूप रजी^३ रजपूनिनि रजै ॥ ८ ॥

१ अति राग भरी—ब्र० । २ जागि—मा० । ३ रची—भा० मो० ।

लतरानी ।

ज्यो बिनही गुन अब लिखे धुन या बरि वं बरता बरि हार्यो^१ ।
बागिये कोरि मची रनि रानी^२ इनो मनरानी^३ को रूप निहार्यो ।
देव मु बानव देगि अचानव आन कहुँ न को आन कुमार्यो ।
मात्र नचै प्रिय और रचै गो पचै बिन बाज विरचि विचार्यो^४ ॥ ९ ॥

१ करु भार्यो—ग० । २ बरिये बरि कोरि मची रनि रानी—मा० । ३ छनिरानी—
शा० । ४ मात्र नचै प्रिय और रचै बिन बाज विरचि विचारि विचार्यो—भा० मो० ।

नी० गजा० प्रनियो मे मय्या ६, ७ दोऱ वा पाठ डम प्रकार ।

जो रचै गो विप्र को छिनपनि पुर पुरहन ।
रज गगं रन दान भट मो बरिये रजपून ॥
माहो मो छत्री बडै हरं मदा पर पीर ।
माकी निय छप्रो बध बरनी गुन गभीर ॥

केवल भा० प्रति मे चरणो का क्रम १-४-३-२ है । नी० गजा० प्रतियों मे छन्द त्रुटि है और इसके स्थान पर "सूहो पँहे आवति" छंद है ।

वैस्पानी ।

पीरे पीन कुचनि पं^१ कचुकी बदन कसी निकसी निकार्ड पं^२ मूहे की मूहाती^३ में ।
 गोरे गरे तरे लरे मोतिनि की^४ तार्गे भभवति धुकधुकी जैसे दूह^५ वराती में ।
 देव चित चूमे वेप इन^६ खुमे बाजूबन्द ललकन सान लगिवे को रेगगती में ।
 मवजोवनी की जोव नीकी^७ जोति जोति^८ रही कैसी वनीनीकी वनी नीकी छवि छाती में ॥१०॥
^१ कुच नौपे—मा० । ^२ सुहानी—नी० । ^३ मोनी कुमरनि—नी० । ^४ दूररंह—मो० ।
^५ अन—सा० । ^६ जोवन की—सा० । ^७ जानि—ग० गजा० ।

काइयिनि ।

रीरं रिभवारि^१ इहु वदनी उदार मुर रत्न की मी डार डाले रग रगियनि में ।
 मांवरी सलानी गुनबन्तो गजगौनी^२ महा मुन्दर मुघर सग्य लागर^३ लवियनि में ।
 जागी सव रनि वडभागी पिय प्यारे^४ मग प्रेमरम पागी^५ अनुरागी रगियनि में ।
 दारयो से दसन मन्द हँमन विमद भरी सद भरी सोभा^६ मद भरी जँलियनि में ॥११॥
^१ रिभाई—नी० । ^२ जगौ—नी० । ^३ अभिनास—द्र० । ^४ निज पिय—द्र० ।
^५ पतिव्रत पागी—द्र० । ^६ रगियनि—भा० मो० । ^७ "मद भरी"—हासिये पर—द्र०,
 मोभा सद भरी—सा० । नी० प्रति मे तृतीय चरण नहीं है तब गजा० प्रति मे मरुपर्ण
 छन्द त्रुटित है ।

किरारिम ।

नेह सो निचारे चित चोरें डीठि जोरें कौन डारे लाग्यो डोरें डारि^१ मुग्नि अहार की ।
 मोने के सरोज मे उरोज उमगोहे गोरे अग मे मुहाई देव मही जरतार की ।
 बठ सिरीबठ कटि विविनी ककन^२ कर ऊजरी^३ पयनि गूजरी मु भनवार^४ की ।
 चद सो बदन मद हँमनि गयद गति कावरी^५ कुरपनीनी कुंवरि विगार की ॥१२॥
^१ लागी डोरें डारि—भा० मो० । ^२ कनक—ग० । ^३ ऊजरे—भा० मा० । ^४ भनवार—
 भा० । ^५ को अरी—नी० ग० गजा० ।

माइनि ।

घर-घर डोलनि सुघर नर मोहिरे को^१ ऊषगी फिरनि सनमुग^२ गुग रँनिया ।
 अरन वसन यय^३ सग्न चुवन रस कुसटा त्रुटिन कुन^४ जुवननि जँनिया ।
 जावक^५ मिस काम पावक जगावें देव^६ हिय को हग्न यो वरन वरनँनिया ।
 वनी गुहिव को^७ गिववनी सो तननी फिरें^८ वनी चितवनि की चपनननी नँनिया ॥१३॥
^१ मोहनी सी—ग० गजा० । ^२ मव मुग—भा० मो०, मनमुग—गा० । ^३ वन—मा० ।
^४ जग—ग० गजा० । ^५ कुन जुवननि की जँनिया—मा०, जुवननि भरनँनिया—ग० ।
^६ जगावति सी—ग० गजा० । ^७ गूदिन की—ग० गजा० । ^८ डोरें—ग० गजा० ।
 केवल भा० प्रति मे छन्द का द्वितीय चरण नहीं मिलता और छन्द के तृतीय चरण के
 परचात् भा० प्रति मे तृतीय चरण का पाठ हम प्रकाश है ।

“प्रेमी अनुरागिनि को हियरो रिभावं अरुभावं सुरभावं विरुभावं नैन पनिया ।”

मालिन ।

वीनन फिरत फून दार्यो दल मे^१ दुकूल खुने भुजमूल लट धूमै ज्यो^२ अलिनिया ।
 चोमर चमेरी चार पहिरे मियारहा^३ लची^४ कुच भार जोति लीनी है^५ फलिनिया ।
 जुही गुनी मांग अग^६ चपक पगग छुही देव लमे लोचन सजाति है नत्रिनिया ।
 बाग मे विरोकी अनुराग की मी बोहनी मो^७ मोहनी^८ सुघर मन मोहनी मलिनिया ॥१४॥
^१ दार्यो नै लमै—ग० । ^२ छूटी लटै ज्यो—ग० गजा० । घेरि घूमत—नी० सा० ।
^३ चपी—मा० । ^४ फनी जे—ग० गजा० । ^५ अंख—भा०, आग—मो० । ^६ वाहिनी
 मे—ग० गजा० । ^७ मोहनी—भा० मो० । नी० गजा० प्रतिया मे यह छद् द्वितीय
 विलास मे है ।

धोबिन ।

घाट पर ठाठी घाट पागति बटोहिनि की चेटक भी डीठि मन बाको न हरति है ।
 लटकि पटकि पट छियो करि मटकनि देव भुज मूलनि नै फल से भरनि^१ है ।
 जीवन की ऐंठ अठिलात मी^२ उठोहै^३ कुच ओठनि अमेठि पट ऐंठि कँ धरनि है^४ ।
 धोबिन अनोखी यह धोबनि नहायीं करि मूष^५ मुख गखति न ऊधम करति है ॥१५॥
^१ मटकाय देव छोटी कहि ठाठे भुज मूल हामी फल मे भरति है—मा०, मटकाय
 देव छियो बहे बाठे भुजमूल हामी फल मे भरति है—नी०, लटकि लटकि छो करनि
 खुले भुज मूल भुकि भुकि स्वेद बन फूल मे भरति है—ग० गजा० । ^२ अठिनाग
 मी—भा० मो०, अठिनात से—नी० ग० गजा० । ^३ उचोहै—नी० । ^४ ऐंठि
 पकरनि है—ग० गजा० । ^५ धोबिन कहा धीं यह धोबिन अनोखी कर मूष—ग०
 गजा०, करि मुधा—भा० मो० ।

बन मै जो लघु पुर बर्म तामो कहिये गाँव ।

तहाँ बर्म ग्रामीण तिय गँवारी ताको नाँव^१ ॥१६॥

^१ निगूह गँवारी नाँव—भा० मो०, ग्रामनि ताको नाउ—ग्र०, गँवारि मो ताको नाउ
 मा० ।

ग्रामीण नायिका-श्लोक ।

अहिरनि अर बाछनि बट्टी बत्तारि और बहारि^१ ।

और मुनेरि^२ पाँच विधि बग्नटु नारि गँवारि ॥१७॥

^१ बत्तारि और बहारि—मा०, नारि बत्तारि बहारि—भा० मो० । ^२ मुनेरी अर—
 भा० मो० ।

अहोरिनि ।

मागन मो मन^१ दूध मो जीवन है दधि नै अधिक उर ईटी ।

छँन रंगीनी की^२ छाधि के आगे^३ गभेन मुधा वमुधा सब मीठी ।

नैननि नेह चुवं बबि^४ देव बुभावन बँन^५ विषोग धँदीटी ।

ऐमी रग्मानी अहीरी अठे बहो बयो न सयँ मनमोहने^६ मीठी ॥१८॥

१ तन—नी० गगजा० । २ छत्रीली की—सा० नी० । ३ जा छवि आगे छपावर
छाँछ—ग० गजा० । ४ वहि—सा०, कहै—नी० । ५ चंन—भा० नी० । ६ मन-
मोहन—भा० मो० ।

काछिन ।

राखें समाधान ममाधान वं दिलैयनि को ईगुर सी अगनि गुराई^१ है गँवारि में ।
देव कहै जगमग्यो^२ जोवन जुन्हाई ऐसी एते पं^३ जुन्हाई पंठी सरोवर^४ वारि में ।
धारनि मुखावति उपार भीस गावति लुभावति^५ सी खोगनि फिरति चहूँ पारि म ।
मचल झंगोछ^६ ओछे ओछे कुच पोछ^७ भिये बोछे मे कमल डोलै काछिनि बछार^८ मे ॥१६॥

१ मे भगनि आंगुरी—भा० मो०, । २ जगमगी नव—ग० गजा० । कही जगमगी—
भा० मो० । ३ जोति जोवनी—ग० । ४ कुमुद मोदित—ग० गजा० । ५ भुलावति
—भा० मो० । ६ अचर झंगोछि—भा० मो० । ७ औछि औछि कुच पोछि—भा०
मो०, ओछे आछे कुच पोछे—सा० । ८ बगार—भा० । ग० गजा० प्रतिपयो मे चरणो
वा क्रम १-३-२-४ है ।

कलारिन ।

जापु पिबे अरु औरनि प्यावति लाज के तूल ज्या तूमति डोलै ।
जोवन जेद जकी सी कलारि छकी मद सो भुकि भूमति डोलै ।
गावनि रीझि रिभावति त्या मतवारनि को मुख चूमति डोलै ।
काम के खान हनी^१ हिय में घर बाहिर घाइल पमति डोलै ॥२०॥

१ हनी—सा० । केवल नी० प्रति मे चरणो वा क्रम १-३-२-४ है ।

कहारिन ।

जगमगे जोवन जगी है रंगमगी जोति साख लहंगा पं लीली^१ ओढनी बहार की ।
भाऊ^२ की भँवरिया मे सफरी फरफरात वेंचति फिरति बोने बानी मनुहार की ।
बाहेऊ न चाहै^३ चहूँ ओर तें गहत बाहै^४ गाहन उमाहे रोवि राहै^५ चित हार की ।
देवत ही मुख बिप लहरि सी आवै लगी जहर सा नैन करै^६ कहर बहार की ॥२१॥

१ नील—द्र०, पीली—भा० । २ भाऊ—भा०, भाय—मो० । ३ चाहै अनचाहै—
नी० । ४ बहन डाहै—भा०, गहन चाहै—नी० गजा । ५ रहै—भा० मो०, रहै
रोरै—ग० गजा० । ६ गाहन धनेरी दोरि चित अपहार की—नी० सा०, उमाहै राहै
रावै मुविहार की—ग० गजा० । ७ हाँसी करै—ग० गजा० ।

मुनेरिन ।

पीरे अंचरान मेन^१ सुगरा लहर नेत लहंगा की^२ सगी^३ लान रंगी रंगहेरा की^४ ।
गान मे गुमौरहाई^५ अंगिया उचोहै कुच बीच पचरंग पोति ताई सीनि पंरा की^६ ।
हाथनि^७ सखोटा पाड^८ चुरा पचमनी गरे गारी को जुगल जने^९ ठै उन्हारि^{१०} वेग की ।
गजगोनी नोनी^{११} घरे नोन की देग्या भीम^{१२} नीरज मे नैन नारि निरखी मुनेरा की ॥१२॥

१ पीरे पीरे अंचरान मेन—भा० । २ सुगी लहंगा की—ग०, सुगी लाग लहंगा की—
द्र० । ३ पीरे अचरान मेन दष्टिया अघोतर की लहंगा गरा की—भा० नी० गजा० ।

‘रग रीझ रग होरा की—भौ० सा०, रग रेंगो रेंगहरा की—ग० गजा० । ५ गातन में गुभौरपरि—ग० गजा०, गात में गुहै हरार्ड—त्र०, धावत में डोरिहार्ड—भा० । ६ पीन सरी है निक्करा की—नी०, पनि सरह तिफेरा की—सा०, अँगिया उमग उर ताई पन पोही पीन पोनि है तिफेरा की। ग० गजा० ७ हाथ—नी० गजा० । ८ बाहु—नी० । ९ जघ—त्र० । १० कोरी मनी—ग० । ११ लोनी—नी०, ग० प्रति मे भी पहले “नोनी” पाठ था । परन्तु बाद में उमी कलम में उसे “लोनी” बनाया गया है । १२ टरैया मीस—ग० भा० मो०, मिर—नी० सा० ।

बन्या ।

बन्या बनवासिनि बधू ताहू त्रिविधि वसतिनि ।
मुनि त्रिय अह निय व्याध की और भीतनी जानि ॥ २३ ॥

मुनि-त्रिया ।

पूनी लतान को छत्र दिये नव^१ पत्र सुखासन है सुखकारी^२ ।
चौर करे चमरी चय मोर^३ चकोर मृगी मृग चाकर भारी ।
गावत भौर रिभावति^४ कोकिल आड मिले सगरे बनचारी ।
जीति लिये मृगराज सर्वे जत्र राज करे रिपिराजकुमारी ॥ २४ ॥

^१ मन—भा० । ^२ हितकारी—मा० । ^३ ज्यां मरीच मयूर—सा०, चय मोर—ग० गजा० । नी० में “चम” अषठ है । ^४ स्यामा रिभावति—सा०, भौर मजावति—भा० मो० ।

व्याध-बधू ।

है करनीन त्रिये परधीन वजात्रनि गावति मोहनी^१ ताननि ।
मोहि लिये खग औ भृग^२ मानुष मान मुने ममुहे करि काननि ।
मोर पर्यो सगरे वन^३ बीच न कोऊ रह्यो तपसी धिर धाननि^४ ।
वध तिलोकनि वेधि हियो मु वियो वध व्याध बधू बिन^५ वाननि ॥ २५ ॥

^१ मोहति—ग० गजा० । ^२ भृग औ खग—भा० मो० । ^३ वृज—ग० गजा०^१ ।
^४ वाननि—नी०, ताननि—ग० मो० । ^५ वध—त्र० ।

भीतनी ।

स्वामघन ऐमे तन^१ सवन जवन कुच^२ घने घुंघराले बार जोवन जकी फिरे ।
मोरपच्छ भूपन^३ बिराजं मुजमाल^४ गरे मद्र भरे नैनन को^५ टारें न टकी^६ फिरे ।
विलकि विलकि^७ धुनवत नाम विलल हूँ सीतल सलिल अबगाहन^८ थकी फिरे ।
उरभनि भारनि में मुरभि^९ पहारनि में गाडी गूढ गेल छेल भीलनी छकी फिरे ॥ २६ ॥

^१ वेदा—हासिये पर पेंसिल से “तन”—ग० । ^२ जघन उंचे—भा०, मघन कुच—
हासिये पर पेंसिल से “स” के स्थान पर “ज” ग० । ^३ भ्रू पर—मो० । ^४ गलमाल—
नी० गजा० । ^५ नैनन मो—मा०, नैन नेव—भा० मो० । ^६ मटकी—नी० गजा० ।
^७ विलनि—सा० । ^८ नद गाहन—ग० गजा० । ^९ मुरभि—नी० मा० ।

संन्या ।

वटक वसै ते संन्या^१ तीनि भाँति बहु ताहि ।

इक वृपली अरु वँस्या कहत^२ मुकेरिन^३ जाहि ॥ २७ ॥

^१ ते संन्य तिय—ग० गजा० सा० । ^२ वँस्यादुतिय त्रितिय—भा० मो० । ^३ मुकेरिन—भा० मो० नी० ।

वृपली ।

लहलहो जोवन हँसत डहडहो मुख गहगहो काजर चखनि घटकायो है ।

बानन करन फूल सोहत जरी दुकूल नथ म अथक^१ लटकन लटकायो है ।

लालच लपटी टेढी^२ चितवनि मन्द चाल^३ चीकने कपोल गोल को न भटकायो है ।

भौहनि मरोरि मुरि मोरे गोरे गातन सा^४ वातनही सगरो वटक अटकायो है ॥ २८ ॥

^१ अथक—पेसिल मे १-२—सख्या डालकर अथक—ग०, अछत—सा०, अधिक—भा० मो० नी० । ^२ लाल चल वैठी गढो—भा०, लालच लै वैठी एठी—ग० गजा०, वक—सा० । ^३ गति—सा० । ^४ गात देखो—भा० मुरि मुरि मोरि गोरे गात—ब्र०, गात बात—ग० गजा०, गोरे गात—मो० ।

वँस्या ।

उज्जल उज्यारी सी भ्रममलात भीमी मारी^१ काई सी दिखाई देत देह की^२ विलास सी ।

जोवन की जोतिनि सा होरा लाल मातिन सा नल तँ सिखा लीं मिलि एक हूँ महालसी^३ ।

शोलनि हँमनि मन्द चलनि चितौनि चारुताई^४ चतुराई चित चोरिवे की चाल सी ।

सग मैं सहेली सान बेली सी नरली बाल रगमये अग^५ जगमगति मसाल सी ॥ २९ ॥

^१ भ्रमक भ्रमकत भीनी सारी—आ० । ^२ दिखात देह दीपक—सा०, दिखाई देह दीपति—नी०, दिपति देह दीपति—ग० गजा । ^३ जोवन की जोतिनि सा नल तँ सिखा सा मिलि नहै कवि देव ऐसी एक हूँ महाल सी—भा० । ^४ चारु अति—सा० । ^५ सगमग अग—नी०, सग मैं सहेली सो नबेली बाल रगमये अग—भा० ।

मुकेरिन ।

राची वर महदी महावर सा राजे^१ पग घाघर की घूम गति घूमति घनरनि की ।

रग भर गोरे अग अँगिया लसति लीली लाल ओदनी में^२ शीठि डालै चितचोरनि^३ की ।

हाटक बुटी सी^४ वाडी हाट वै हँसति टाडी वाट विनु तोलि^५ बाट पारै बहुतेरनि की ।

गाहन बुलाबै^६ सन करे देन करे सोदा^७ नैननि मुकरि जाइ^८ मुकरि मुकेरिन की ॥ ३० ॥

^१ राची—अ०, भीगे—सा०, भीजे—भी० गजा०, भीने—ग० । ^२ पै—पारखे पर दूसरे हस्तलख म—अ० । ^३ चित चोरनि—मा० मो०, ग० प्रति में हरताल की सहायता से 'चोरनि' या 'चरनि' । ^४ पटी सी—भा० । ^५ तोलै—भा० मो० । ^६ बुलाइ—सा० नी० ग० गजा० । ^७ देन करे सो—सा०, देन करे सोस—भी० । ^८ नैन मुकराइ जाति—ग० गजा० नैन मुकराय जाइ—नी० ।

पथिक-वध ।

सदा वर्यं जां' पथ्य मे पथिक वधू तेहि जानि ।

वनिजाग्नि जोगिनि नटी कंगहेरनि वखानि^१ ॥३१॥

^१ ने—भा० मा० । ^२ कजारनि पट्टिचानि—ग० गजा०,

हगहग्नि पट्टिचान—नी०, वनजाग्नि जाग्नि वनिनि ताहू त्रिविध वप्यान—मा० ।

वनजारिन

एहिनि ऊपर घूमन घाघरो तँमिये मोहनि मानू की मारो ।

हाय हरी हरी छाजे छरी अरु जूती चढी पग फंद फुंदारी ।

ऊँचे उरोज हग घुंघुचीनि के हां कहि हांकिनि^१ बैल निहारो ।

माननही दिग्गट घटोहिन वाननही वनिजै वनिजारो ॥३२॥

^१ हांनि हांकिनि—गजा० ।

जोगिन ।

डोने वन वन जोर जोवन के जाषननि गग वर्य कोने वनवामी बीभि रहे हैं^१ ।

बोंगरी बजावनि मनु^२ मुरगावनि मु घुनि^३ मुनि भीम घुनि मुनि स्त्रीभि^४ रहे है ।

मोहे^५ महा पन्नग अनेक जग नग खग^६ कान दे दे कोन भील केने भीभि^७ रहे हैं ।

टाटे टिग बाघ बिग^८ चीने चितवन दृग भांन मृग माखा मृग रोऊ रोभि^९ रहे हैं ॥३३॥

^१ पित्र हूँ—मा० । ^२ मगुन—मो० । ^३ रोभि—नी० । ^४ सोहे—ब्र० । ^५ अनगन

गग—भा० मा०, पनअनेक अनग नग—नी०, अनेग अग नग—गजा० । ^६ केले

रोभि—भा० मा०, भातू भीभ—ग० गजा० । ^७ बग—मो०, वन—भा०, बीच—

ब्र० । ^८ चितवन भांन मृग माखा मृग मुख रोभि रोभि—ग० गजा०, रोऊ रोभि—

भा० ।

नटी ।

पानर अग उटै त्रिनु पांठनु बोमन भापनि प्रेम भिरी बी^१ ।

जावन रूप अनूप निहारि के लाज भरै निधिराज मिरी बी ।

बीन मे नैन कलानिधि मा मुग्य बी गर्न कोटि कला^२ गहरी बी ।

बाम के गीम अत्राय म^३ नाचनि बी न छरै छवि सोनचिरी बी ॥३४॥

^१ वामन वानि चवान बिगी बी—ग० । ^२ कोटि बना मुनवी—ग० गजा० । ^३ मे—

नी०, पं—ग० गजा० ।

कंगहेरनि ।

मांवर अग मगोज मे नैन उरोज उठे अटिलान कपोरै ।

एठनि मी भुजमूल उटाय भंगूठनि चालि^१ चवाय मां बोरै ।

होगी मे डग्नि फामो बिमानिन पोहनि मी चिन टोहनि टोले^२ ।

मोगपमा घुंघुचीनि के जेउर जेव मो जेवरी बेंचनि डोरै ॥३५॥

^१ अंगूठ नचाय—मा० नी० । ^२ डोरै—ग० गजा० भा० मा०, बोरै—नी० ।

जाति करम गुन अगन पन^१ नारि अनेक प्रकार ।

ताते में सूक्ष्म कछू कही^२ बुद्धि अनुमार ॥३६॥

^१ अग नव—सा०, अन पन—नी०, आपने—गजा० । ^२ कही कछू—भा० मो० ।

मारग मेन अरन्ध तियान कमान, ज्यो भू दूग वान कसी से ।

पेखे पुरदर ज्यो पुरनारि गँवाग्नि सीस लचाइ^१ ससी से ।

भोगी भुवप्पति भूपसुतानि अनूपम जानि बिलाके वसी से ।

रूप मधूनि अँचे उर घूनि सराहि के विप्र बघूनि असीसे ॥३७॥

^१ नवाइ—त्र० । उपर्युक्त छद केवल द्र० य० सा० प्रतियो में मिलता है, भा० मो० नी० गजा० प्रतिया में नहीं ।

इति श्री नृप भोगोत्साल हित रस बिलासे कवि देवदत्त कृते पुर यन सेव्या मार्ग बधू नाम तृतीयो बिलास ।

काम अन्ध कामी^१ जगत लखे न रूप बुरूप ।

हाय लिये डोलति फिरं कामिनि छरी अनूप ॥३८॥

^१ अन्धकारी—भा० मो० ।

ताते कामिनि एक सो^१ कहन सुनन को भेद ।

राचें प्यावै^२ प्रेमरस भेटे मन के खेद ॥३९॥

^१ एक ही—भा० ^२ राचें पावें—भा०, राचें पावें—मो०, राच्यो पावें—ग० ।

रची राम संग भीलनी जदुपति सय अहीरि ।

प्रबल सदा बनवासिनी तबल नागरिन पीर ॥४०॥

कान गर्न पुर नगर बन^१ कामिनि एक रीति ।

दक्षत हरै विवेक को चित्त हरै करि प्रीति ॥४१॥

^१ पूरव नगर—भा० मो० ।

ठाडी ही वाग मे भागभरी मनी काम भुजगम के विप मोई^१ ।

आनि परी चित मीघ अचानक जोवन रूप महारम^२ मोई ।

नागरि थी^३ पुरवासिनिही वि गँवारि बिषी बनवासिनी बोई ।

को गर्न भोजन की जन की पन की तन की मन की मति खोई ॥४२॥

^१ बोई—भा० । ^२ मही रस—सा० । ^३ कैं—द० ।

अष्टागवती नायिका ।

जा कामिनि मे देखिये पूरन आठी अग ।

ताही बरनी नायिका त्रिभुवन मोहन रग ॥४३॥

नायिका के अष्टाग ।

पहिले जोवन रूप गुन सील प्रेम पहिचानि ।

कुस वैभव मूपन बहुरि आठी अग बसानि ॥४४॥

दोवन लक्षण ।

बालापन को भेदि कैं छवि की अशुर होई ।

जग मोहै दिन दिन बढे जोवन कहिये सोई ॥४५॥

उदाहरण ।

खेलत ही मे भयो कछु खेल खेलावनहारी^१ भईं मव सीनें ।
देव जू चौकि चिते चकिते ह्वं चवाव^२ करं उठि आपनी गौने ।
भोरई^३ मांक तें मूर उदो लागि भोरई^४ मांक तें मूर उदौनें ।

रूप की ओप अनूप घरी पल बेलि^५ मी वाटति कान्हि परौनें ॥६॥

^१ खेलावनवारी—भा० मो० । ^२ चकिते मु चवाव—भा० । ^३ औरई—भा० ।
^४ औरई—भा०, ह्वं रही मूर उदो लागि सांक तें औरई—भा० । ^५ बालि—नी०
ग० गजा० भा० मो० ।

लहलही बंस उलही है दुलही की देव^१ उर मे उरौज जैसे उमगत^२ पाग है ।
अनगिने दिनन^३ अनूप दुलि आनन की देवन ही उपज^४ अनूठो अनुराग है ।
तीमीये तरल तीमे अनमोखे^५ नैनन तें^६ निचुरं सनेह^७ सूघो भामते^८ को भाग है ।
मोने मे सुरगनि तें चपा चार भगनि तें रगनि भो उठन^९ तरमनि मुहाग है ॥१०॥

^१ देव दुलही की—नी० ग० । ^२ उमरत—मो०, उमदत—ब्र० । ^३ गुनन—मा०, दिन
मे—नी० ग० गजा० । ^४ उपजत—भा० मो० । ^५ अनमिख—सा० । ^६ नैनन के—
भा० । ^७ निय दिन नेह—ग० गजा०, निय दिन मनेह—नी०, निचुरं निपुन—भा०,
चुरेन सनेह—मी० । ^८ भामनी—नी० ग० गजा० । ^९ सां ऊचन—भा० मो० ।

भात-वीचना ।

पीछे तिरीछे पटाछनि^१ मो इत रं चितवं री जना लनचो है ।
चौगुनो चैन चवाइनि के चित चाई चहै है चवाई मचो है ।
जोवन भायो न पाप लग्यो तवि देउ रह गुरु लोग रिमो है ।
जो मे मजैयै जो^२ जैयै जिनें निनें पयै बनक चिनैयै जो मो है ॥११॥

^१ कटाछ—नी० । ^२ जो मे लजैयै औ—भा० मो० ।

दप-संक्षण ।

देगत ही जो मन हरे^१ मुख अँभियन को देह ।

रूप बगान ताहि जो जग धेरो नर तेह ॥१२॥

^१ जो मन ररे—नी० गजा० ।

उदाहरण ।

बुन्दन मे अग नव जोवन मुरग^१ उठे उरज उतग धम्य प्यो जु परसन है ।
मोहनि जिनारी वारी तनमुग मारी देव मीग मीमपून अधमनुवो दरसन है ।
बँदिया जराउ बडे मोनिन मो नीकी नथ हँमन^२ तरौननि मो रूप मरसन है ।
गोरी गजगौनी सीनी नवल दुलहिपा बे^३ भाग भरे मुग पं मुहाग बरसन है ॥१३॥

^१ बुन्दन मे धग नर जोवन मे मुरग—नी०, नव जोवन मोरग—मा०, जोवन तरग—
ब्र० । ^२ हनन—भा० । ^३ दुहैया तेरे—भा० ।

पुंफट गुना अमे^१ ऊनट तें जंहे देव उदत मनोज जग^२ जुद्ध जूटि परंगो ।
ऐगो न मुरगेन निय को कहे अनोर बान^३ सोर तिहुं सोर की मुनाई लूटि^४ परंगो ।

दैनिक^१ दुराच मुख नतरु तर्ग्यनि को मडल औ मटवि^२ चटकि टूटि परंगी ।
 तो चितै सकोचि सोचि मोचि भद^३ मूरछि कै छोरें^४ छपाकर छना सो छूटि^५ परंगी ॥१४॥
^१ आवं—ब्र० । ^२ ओज—नी० ग० गजा० । ^३ ऐसी न सरूप सीये को कहै अलोक
 वात—ब्र०, ऐसी न सुरोक सीक को के कहै अलोक वात—सा०, ऐसी न सुरोक सिख
 को कहै अलक वात—ग० गजा०, को कहै अलोक वात सो कहै सुरोक सिय—मो०, को
 कहि अलोक वात सो कहै सुरोक सिय—भा० । ^४ लटि—मो० । ^५ दैनिक—भा०, दैनिक
 मो० । ^६ मडल उमडि कै—नी० । ^७ मूडु—सा०, मग—सा०, मेड—ग० गजा० । ^८
 दौरिक—सा० । ^९ टूटि—नी० ।

गुण-लक्षण ।

बाइक वाचिक करम करि बाँधे सब को चित्त ।
 राव रक रीकै^१ गुनहि होइ जगत को मित्त ॥१५॥

^१ माने—मो० ग० गजा० ।

उदाहरण ।

गाइ बजाइ नचाई कै नैन^१ रिभाइ के भाव^२ बताइवो^३ सोह्यो ।
 चित्र विचित्रकला कविता रस देव जू चातुरी सो^४ चित पोह्यो^५ ।
 भोजन भूपन भाप न भेष वितेप सबै^६ रचना रचि रोह्यो ।
 रूप उजागरि^७ राधे अहे गुनआगरि^८ तै जगमोहन मोह्यो ॥१६॥

^१ नारि—भा० मो० । ^२ नाथ—भा० । ^३ बतायो सु—नी० ग० गजा०, तताइवो—
 म० । ^४ देव जू चित्र विचित्र कला कविता रस चातुरी सो—नी० ग० गजा० ।
^५ चोह्यो—नी० । ^६ रचै—भा० मो० । ^७ ए गुन आगरि—नी० ग० गजा० । ^८ जग
 मोहनी—नी० ग० गजा० ।

वेदनहू नने गुन गने^१ अनगने भेद भेद बिन जाको गुन निरगुनहू पहै^२ ।
 केतिक^३ विरच्यो ऐसी रचै रचि^४ रच्यो महा मुलनि को सच्यो जहाँ बच्यो बृजभूप है ।
 सोई^५ सुनि सुनि अवराधा अब राधा जस जानत न देव बोई कहा धौ अनूप है ।
 तेज है कि तप है वि सील है वि सम्पति है राग है मि रग है कि रस है कि रूप है ॥१७॥
^१ ०—मो०, जाके—भा० । ^२ निरगुन रूप है—भा० गजा०, पुहै—ब्र० । ^३ कौतव—
 सा० । ^४ ऊचि—ब्र०, डरि—ग० । ^५ तोही—भा० मो० ।

शील-लक्षण ।

कीमल बचन प्रसन्न मन सज्जन रजन^१ भाइ ।
 दीन दया विरता छिमा ये कहु मील सुभाइ ॥१८॥

^१ सज्जन हूजन—ब्र० ।

उदाहरण ।

भोन भरे सगरे बृज माटि^१ सराहत तेरेई^२ शील सुभाइन ।
 छाती सिराति मुने सबकी चहु ओर तें चोप चढी चित चाइन ।
 ए री बलाइल्यो मेरी भटू सुनि^३ तेरी हौं चेरी परौं इन पाइन ।

सौतिहू की अखियाँ सुख पावति तो मुख देखि^१ सखी सुखदाइन ॥१६॥

^१सोर—सा०, सो जु—नी० गजा । ^२हैं तेई—सा० । ^३ऐरी अहे ठकुराइन सु तेरी भटू सुनि—गजा० ऐरी अहे ठकुराइन मेरी सु भटू सुनि—ग० । ^४देखे—नी० ग० गजा० ।

नेह भरी सब देह^१ स्वरी रस मेह भरी अँखियाँनि विसेपी ।

भौहनि मे भलवें सुसकानि^२ सी नाम वमान मनी अवरेखी ।

देव सुधा बरसै^३ मृदु बोल सुधानिधि^४ मे न इती^५ रुचि^६ पेन्वी ।

कंसहू कयोहू^७ रिसात^८ जु पे सरसात धनी अरसात न देखी ॥२०॥

^१तैं सदेह—भा०, रस देह—मो० । ^२भुक्तान—नी० गजा० । ^३सुभाव रखे—भा०, सभा बरसे—मो० । ^४सुधाघर—नी० ग० गजा० । ^५रती—सा० । ^६छवि—ग० गजा० । ^७केहू—सा० नी० गजा० । ^८सिरात—ग० ।

म सक्षण ।

सुख दुखहू मे एव सी तन मन बचननि प्रीति^१ ।

सहज नेह नित नित नयो जहाँ सु प्रेम प्रतीति ॥२१॥

^१प्रीति—नी० ग० गजा ।

दाहरण ।

रीभि-रीभि रहसि रहसि हँसि-हँसि उठ सासै^१ भरि जाँमू भरि कहति दई-दई ।

चौंनि चौंकि चनि-चनि औचनि उचकि देव छवि-छवि वनि-वनि उठति^२ बई बई ।

दुहुन के गुन रूप^३ दोऊ बरनन फिरै घर न^४ मिरान रीति नेह की नई-नई ।

मोहि-मोहि मोहन को मन भयो राधाभय राधा मन मोहि-मोहि मोहन भई-भई^५ ॥२०॥

^१हासै—नी० । ^२परति—नी० ग० गजा । ^३रूप गुन—नी० ग० गजा० । ^४पल न—भा० । ^५भई-भई—नी० ग० । केवन मा० प्रनि मे उररोकन छन्द नुटित है ।

औचव अगाध सिन्धु स्याही को उमगि आयो तामे तीनों लोक बूडि गये एक भग मै ।

कारे-कारे^१ बागद लिखे ज्यों वागे आग्वर मु^२ न्यारे वरि वाचं वीन^३ रचि^४ चित भग मै ।

नैननि मे^५ निमिर अमावस की रँनि अर जम्बू रस^६ जिन्दु जमनानल तरग मै ।

यो ही मन मेरी मेरे वाम को न रह्यो माई^७ स्याम रग हूँ करि^८ समान्यो स्याम रग मै ॥२३॥

^१कारे-कारे—भा०, वारे-वारे—मो० । ^२वै वारेई बरन लिख्यो—मा०, लिखे ते चार अक्षर गु—नी०, लिखे ते चार अक्षरनि—गजा०, आग्वर लिखे ते चार बागदनि—ग०, बागद लिखे वारे आग्वर ज्या—त्र० । ^३न्यारे वीन वाचं वीन—ग० । ^४होन—मा०, नाचं—नी०, जाचं—ग० गजा० । ^५आग्नि मे—मा० नी० ग० गजा० । ^६जम्बू नद—ग० गजा । ^७आनी—मा० । ^८तूँ वँमो—नी० ग० गजा० ।

सो मजोग वियोग वरि छै विधि^१ बरनन प्रेम ।

मुग्धदायक सजोग मे^२ दुग्ध वियोग को नेम ॥२४॥

^१छै विधि—मा०, त्रिविधि गु—नी० गजा० । ^२हैं—त्र० ।

तेरो बह्यो वरि-वरि जोय रह्यो जनि-जनि हागं पाई^३ परि-परि तौ न धोन्ही न मग्गार^४ ।

ननन बिनोर देव पन न सगाए तवया वन न दीन्ही ते छनन उछननहार ।

ऐसे निरमोही सो सनेह बांधि ही बंधाई आपु^१ विधि बूढ्यो व्याधि^२ बाधा सिन्धु निराधार ।
ए रे मन मेरे तैं घनेरे दुख दीने अब एक वार दै कैं तोहि मूँदि मारो एक वार ॥२५॥
^१ ०—भा० मो० नी० । ^२ आय—भा० । ^३ व्याघ—भा० मो० ।

कुल लक्षण ।

गुरुजन पूजन^१ धर्मपन लीने लोक विचार ।
साज काज गौरव जहाँ सोई^२ कुल आचार ॥२६॥

^१ पूजा—नी० गजा । ^२ सो नहि—सा० ।

उदाहरण ।

आपने ओख^१ रहे अवलोकि तिलोक की लीक^२ सदा निरजोसी ।
साज के काज सुकाज^३ करै मुनि साधु समाज असीस दै पोसी^४ ।
वीन्ह प्रसन्न सब करि सेवन वाहू कहूँ गुर देव न^५ दोसी ।
दो कुल निर्मल मो कुल कीरति गोकुल मो कुल नारि^६ न तोसी ॥२७॥

^१ अकि—भा०, ऊव—मो० । ^२ विलोकिक एक—भा०, तिलोक की एव—मो० ।

^३ साज सुवाज—सा० । ^४ दयोसी—भा० । ^५ गुरु लोगन—नी० ग० गजा० । ^६ नारि नारि—सा० नी० ।

तेरे अनगिने गुन रतन जतन करि गुरुजन पात्रे पेरि प्रेम पलियन मैं ।
पार न सहत गहराई न गहत देव केवल सुधाई मधु जैसे मलियन मैं^१ ।
एरी कुलमधु मेरी राधे ठकुराइनि ही पाइनि परति तेरी चेरी सखियनि मैं ।
सील की सलिलनिधि विधि तू^२ बनाई जावे राजति जहाज भरी साज अलियन मैं ॥२८॥

^१ मेसे मलियन—नी० ग० गजा० । ^२ विधिने—सा० ।

बैभव-लक्षण ।

जहाँ सहज सम्पत्ति सुखद^१ प्रभुता को जभिमान^२ ।
घिरता गति गम्भीरता^३ वैभव ताहि बखान ॥२९॥

^१ सपती न सुख—नी०, दम्पती न सुख—गजा०, दम्पति सुखद—ग०, सपत सुपति—मो०, सम्पति सुपुनि—मो०, सम्पति सुपुनि—भा० । ^२ अनुमान—नी० ग० गजा० ।

^३ गजगम्भीरता—नी०, जग गम्भीरता—गजा० ।

उदाहरण—

फटिक सिलानि सौ सुधार्यो सुधा मंदिर उदधि दधि को सो अधिवाइ^१ उमगे अमन्द^२ ।
बाहर तैं भीतर लौं भीति न दिलिये देव^३ दूध^४ को सो फेन फँस्यो आंगन^५ फरसयन्द ।
तारा सा तरनि तामे ठाडी भिलमिली होति^६ मोतिन की जोति मित्यो मल्लिका को पकरद ।
आरसी अम्बर मे आभा सी उजारी लागे^७ व्यारी राधिका की प्रतिविम्ब सी लगत चन्द ॥३०॥

^१ उपनाय—भा० मो० । ^२ अनद—ग०, अधिक् हूँ भलवे अमद—द्र० । ^३ दिछाई देत—भा० मो० द्र० । ^४ छीर—भा० मो० । ^५ चाँदनी—भा० मो० । ^६ देव जगमग होन—भा० मो०, ठाडी भिनमिलाय—सा० । ^७ देव—द्र०, ठाडी—भा० मो० ।

रूपे ने महल घूपे अगर उदार द्वार भँभरी भरोला मूदे चाम्ब चिकराती में ।
ऊध अध मूल तून पटनि लपेटे चहुँ पटत सुगन्ध मेज सुखद सुहानी में ।
सिसिर मे मीत प्रिया प्रीनम मनेह दिन छिन मे विहात देव राती नियराती में ।
बेसरि कुरग मार रग से लिपत दोऊ दुहुँमे दिपत औ छिपत जात छाती में ॥३१॥
नी० गजा० प्रतियों मे वैभव के उपरोक्त दो उदाहरणों के स्थान पर "पामरिन पाउडे"
तथा "उज्ज्वल अखड खड" छन्द हैं । ग० सा० प्रति मे "पामरिन पाउडे", "फटिब
सिलानी सो" एव "उज्ज्वल अखड खड" छन्द हैं । "रूपे के महल" छन्द इन प्रतियों मे
नहीं हैं ।

भूषण-सक्षण—

चमतकार रचनानि करि बहु निधि भाई^१ गात ।

भूषण वैम विसेप कहुँ^२ अलकार अवदात ॥३२॥

^१ मोहै—ग० गजा० । ^२ विसेप करि—सा०, विसेपहू—नी० ग० गजा० ।

उदाहरण ।

कचन किनारीवारी गारी तामवी में आमपाम भूमो^१ मोतिन की भालरि इवहरी ।
मीसपून बेना^२ बँदी बेमरि ओ बीरनि^३ में हीरनि की भीर में हँसनि^४ छवि छहरी ।
चन्द के बदन भानु भई वृषभानजाई उवनि लुनाई^५ की लुबनि^६ की सी लहरी ।
बाम घाम धी ज्यों पधिलात घनस्याम मन क्यों महुँ ममीप देव दीपति^७ दुपहरी ॥३३॥

^१ तनी—भा० । ^२ बँदा—ग०, बेनी—सा० । ^३ यारनि—सा० । ^४ भीरत मे हँसनि—
सा० ग० गजा०, भीर मे अधिक्—भा० मो० । ^५ यौवन लुनाई—भा० । उवनि
जुनाई—ग० गजा० । ^६ लुनाई—मो० । ^७ देखै या—सा० । बेबल नी० गजा०
प्रतिया मे इन छन्द के पश्चान् "कुदन से भग" छन्द अधिक् है ।

गारे मुह गोल हरे हँमति कपोल बडे लोचन बिलील बोल^१ लोने लीन^२ लाज पर ।
लोभा लामे लाल लखिबे को^३ कविदेव छवि^४ मोभा मे उठत रूप मोभा के ममाज पर ।
बादले की नागी दरदावन^५ किनागी जगमगे जरतारी भीनी भालरि मे माज पर ।
मोनी गुहे कोग्न चमक चहुँ औरन ज्यो नीरन तरयनि की तानी^६ द्विजराज पर ॥३४॥
^१ लोच—भा० मो० । ^२ लोने निज—सा० । ^३ लखि मोभा—भा०, लखि मोभा—
प्रतियों मे इन छन्द के नी० ग० । ^४ नलचात लखिबे को देव—गजा । ^५ दर दामन—
भा० । ^६ तानी—मो० ।

अष्टांगवती ।

सुन्दर जोषन रूप अनूप महा गुन जान नी रागि मची तू ।

सीसभरी कुन दोऊ^१ उदागर जागरि पूरन प्रेम पची तू ।

भाग को भौन मुहाग मो मूषिनि भूमि को भूषण सांचो मची तू ।

आठहूँ भग तरयनि रग^२ मचं रचि^३ मचि विरचि रची तू ॥३५॥

^१ बीच—सा०, रूप—नी० गजा० । ^२ भगनि रग तरग—ग० गजा० । ^३ मचि ।

भा० मो० ।

योरीये बैस बिसाल लसै कच^१ टेढी चितौनी पे^२ सूधी चलै पय ।
गोरे से अग्र^३ कररे कुचवृत्^४ लाज लची^५ गुन ऊँचे मनोरथ ।
लक दुरयो^६ उमग्यो उर^७ देव सु बोल हरे^८ गरुई सो गिरा^९ लय ।
नैन बडे बडे नंसुक अजन मोती बडे बडे नंसुक सी नय ॥ ३६ ॥

^१ करि—सा०, कुच—नी० ग० गजा० । ^२ चितौनी ये—भा० मो०, चितौनि यो—
सा० । ^३ कोवरे से अग्र—भा० मो०, कोरे से अग्र—नी० ग० गजा० । ^४ कुलवृत्—
नी० ग० गजा० । ^५ लची—ग० । ^६ लग्यो—भा० मो० । ^७ कुच—सा० । ^८ देव उठे
कुच लक दुरो लटि बोल हरे—नी० ग० गजा० । ^९ गिरा—नी० ग० गजा० ।

एहि विधि आठी अग करि^१ पूरन नारि जु होइ ।

साही वरनी नायिका जेहि बरनत कवि लोइ^२ ॥३७॥

^१ कहि—नी० । ^२ तिहि बरनै नायिका हौ जिहि बरनी कवि लोइ—भा० मो०, मो०
प्रति मे चरण का स्कीकृत पाठ हाफिये पर दूसरे हस्तलेख में है ।

केसव आदिक महाकवि^१ वरनी सो बहु ग्रथ ।

हौह वरनत ताहि अब सरस अपूरव पय ॥३८॥

^१ आदि महा कविन—नी० ग० गजा० सा० ।

एक वार जद्यपि वही मति प्राचीन प्रकास ।

भाव सहित सिंगार रस रचिकं भावविलास ॥३९॥

रसविलास रचि ग्रथ सो कहत दूसरी वार ।

वही नायिका भेद सब^१ सुनहु नवीन प्रकार ॥४०॥

^१ अब—ग० ।

जौ^१ तिय जोवन रूपवती कुल सील सुधा गुन गौरव रोही ।

प्रेम भरी कुल वीरति मूरति भूपन भेष विभी उभरोही ।

देव जिन्हें^२ अभिमान बडो सनमान^३ बडो ते सबे छवि छोही ।

भोगी भुवाल वे नैन सरोजन रोत्र निहारै मनो जब मोही ॥४१॥

^१ सो—ग० । ^२ जी है—सा० । ^३ मन मान—ग० । उपर्युक्त छन्द केवल ३० ग०

सा० प्रतियो में है, भा० मो० नी० गजा० प्रतियो में नहीं ।

इति धी नृप भोगीलाल हित रस विलास कवि देवदत्त कृते अष्टांग नायिका वर्णनम्

नाम चतुर्थी विलासः ।

नायिका-भेद ।

आठ भेद करि नायिका^१ बरनत हैं कवि मन्त ।

भेद भेद प्रति होन है अन्तरभेद अनन्त ॥१॥

^१ नायकन वे—नी० ग० गजा०, नारीन वे—सा० ।

जाति बर्म गुन देस अरु बाल बहिक्रम जान ।

प्रकृत मत्व नायिका वे आठी भेद^१ बगान ॥२॥

^१ अग—३०, वेद—भा० मो० ।

जाति-भेद ।

पद्मिनि चित्रिनि मग्निनी हृदिनि वही विचारि ।
जाति भेद यहि भाँति सो बहो नायिका चारि ॥३॥

पद्मिनि-लक्षण ।

हम मेप भाषा गमन^१ लघु भोजन मृदु हास ।
सती सत्य^२ मील सुचि पद्मिनि पद्म मुवाम ॥४॥

^१ हम भाष हम गमन—भा० । ^२ सति—नी०, मनि—गजा०, सती—ग० ।

उदाहरण ।

सरद के वारिद^१ में इन्दु सो समन देव मुन्दर वदन चन्द्रिका^२ सो चार चीर है ।
मोघो मुधाविन्दु मकरन्द सी मुकुतमाल लपटी^३ मनोज तर मजरी सरीर है ।
मीलभरी मलज मधोनी मन्द^४ मुमवानि राजें राजहम गनि गुनि गहीर है ।
पैरी चहुँ औरन तें मोरन की भोग भारी मोरन की भीर में चकोरन की भीर है ॥५॥

^१ पारद—मो० । ^२ चाँदनी—नी० ग० गजा० मा० । ^३ निपत—भा० मो० । ^४ मृदु ग० गजा० ।

चित्रिणी-लक्षण ।

मोर मेप भूपन वचन^१ गज गनि^२ अनि मुकुमारि ।
चचल नयनी चितहरनि चतुर चित्रिणी नारि ॥६॥

^१ वचन—भा० । ^२ राजत—मा० ।

उदाहरण ।

देगीन परन देव देगिने की परी वानि देलि देगि दूनी^१ दिव साय उपजनि है ।
मरद उदिन इन्दु सिन्दु सी उगत लगे^२ मुदिन भुगारविद इदिरा सजनि है ।
अद्भुत रूप सी पिपुष भी मधुर वानी मुनि मृनि श्ववननि भूष सी भजनि है ।
मन्त्री बरुयो^३ मैन परन्धी त्रयो^४ वंनि के जिना तार तन्त्री जीभ जन्त्री भी बजनि है ॥७॥

^१ दूनी—भा० मो० । ^२ लगन लगे—भा० । ^३ बह्यो—गजा० ।

शशिनी-लक्षण ।

दीग्य निर कर चरन वटि लघु नितम्ब कुब नैन ।
मुषप छमा^१ सन्तोष मुद^२ सग्निनि तीछन^३ वैन ॥८॥

^१ मुनधु छमा—नी० ग० गजा० । ^२ वद—मा० । ^३ निकन—भा० ।

उदाहरण ।

बोप भरी सपु मुच्छ परी^१ उर बात चले^२ तर डार भी डोलें ।
बाम छरी भी लगे उछरी भी फिर मछरी भी मूभाव विनोरे ।
भौहें चढ़ी कृटिन अगिया जनि भीमे^३ बटाछनि चित्त न मोरे ।
प्यारे मां गगि रहै विन दोष बिना रिम रीम रिमाद वं बोरे^४ ॥९॥

^१ इन मुच्छ परी—नी० ग० गजा०, सपुमुच्छ मरी—मा०, मुन परी—भा० ।

^२ लगे—नी० ग० गजा० । ^३ तीग्य—भो०, तीगी—भा० । ^४ ग्यानी भी डोरे—भा० ।

हस्तिनि-लक्षण ।

धूल चरन कर^१ अघर कटि भारी कुच भुज जानु ।

ठिपनी बहु भोजन गमन हस्तिनि तिय पहचानु ॥१०॥

^१ कर चरन—मो०, सुकर पद—भा० । ^२ भुज कुच—नी० ग० गजा० ।

उदाहरण ।

गुलगुली गोल मलमल^१ कंसो गेंदुआ^२ गडै न गडी^३ जी मे जऊ वरत डिठाई सी ।

चोर की सी गठरी छुटे न छतियाँ तें मुख लागत अँध्यारेहू न लागत सिठाई^४ सी ।

भूखे को सो^५ भोजन न भूलत सवाद नही नैकहू उबीठे^६ नये नेहू की इठाई सी ।

सुरत संयोग^७ वो नही न करे निस दिन भोग वो गुपत गुपचुप की मिठाई सी ॥११॥

^१ मलमल—भा० । ^२ गेंदुआ—नी० ग० गजा० सा० । ^३ गडी—भा० मो० ब्र० ।

^४ मिठाई—भा० । ^५ भूखे को—नी०, भूखन को—ग० गजा० । ^६ उमेठे—भा०,

तें घटे न—सा० । ^७ समाज—सा० ।

कर्म-भेद ।

कर्म भेद करि नायिका तीन प्रकार बखानि ।

सुकिया परकीया कहौ सामान्या अरु^१ जानि ॥१२॥

^१ उर—नी० ग० गजा० सा० ।

स्वकीया-लक्षण ।

कायिक वाचिक मानसिक पति रति^१ सीनी^२ धर्म ।

तासो कवि सुकिया कहै लिभे सकल कुल धर्म ॥१३॥

^१ रत—नी० ग० गजा० ।

उदाहरण ।

सीलभरी बोलति मुसोल बानी सबही सो^१ देव गुरुजननि की लाज सो लचि^२ रही ।

कोमल कपोल पर दीसी हरदी सी दुति चूनी^३ सी सकुच मुसकानि में मचि रही ।

लालन की लाली अखियाँनि में दिग्वाई देत अन्तर निरन्तर ही प्रेम सो पचि रही ।

कुँवरि^४ किसोरी मुख मोरी करे सखिन^५ सो चोरी चोरा^६ चित गति रोरी सा रचि रही ॥१४॥

^१ सही सा—नी०, सही सोहे—ग० गजा० । ^२ सचि—नी० गजा० । ^३ धून—नी०

ग० गजा० सा० । ^४ कोवरी—सा० । ^५ सखियन—भा० । ^६ चोरा चोरी—भा० ।

परकीया-लक्षण ।

काइव वाचिक पतिहि रति मनसा उपपति^१ जुक्त ।

गुप्त तर्ज कुल धर्म वो^२ सो परकीया उक्त ॥१५॥

^१ उपजत—भा०, उपजति—मो० । ^२ गुप्त प्रेम पर पुरुष को—भा० । ^३ परकीया

तासो कहै कवि बोविद मति उक्त—सा० ।

उदाहरण ।

भारी विपत्तिन की पतिऊ भग^१ पीढी मूढ बोरे में अँकोरी देव कामागि निसवती ।

मानेहूँ मुरनि अमुरत विमुरत कहूँ भौहनि^२ भरोगि मुरि उर तें विसवती ।

मीत^१ की चिनोनि चित्र धीच चुमि^२ ग्नुभी रहै उनी रहै जाँबिनु करेजनि^३ बमवनी ।
 मुपने के मिसु करि गोट उठे रिग करि मोही मनही मन मसूमनि मिसवनी^४ ॥१६॥
^१ पनि उछग—भा०, पनिहू मग—ब्र०, पनि जु मग—भा० । ^२ मानेहू मुगनि पं मुरत
 वहू लागी देव भौहनि—भा० । ^३ नीनि—भा० मो० । ^४ चोति चुमि—नी० ग०
 गजा०, निन चदि—भा० । ^५ करेनि—नी० ग० गजा० । ^६ ममवनी—ग० गजा० ।

सामान्या-उदाहरण ।

बाचवही मर मो रषं करं जगत मनुजागि ।
 तन मन धन चाहै मदा मो सामान्या नारि ॥१७॥

उदाहरण ।

हेरतही हरि नेन हियो बस मिस्व कियो रम की बनिया मै ।
 जोवन रूप को ओष अनूप सुख्यो गुन एतो काहू न निया मै ।
 बल कियो धनबल निहारि कं^१ चूवन ना अपनी धनिया मै ।
 हाथ^२ दर्द हौम हौम नरो मुंदरो कर देखि^३ घरी छनिया मै ॥१८॥
^१ विचारि कं—ग० । ^२ हाथ—भा०, हाथी—नी० ग० गजा० । ^३ देन—ग० ।

गुण-भेद ।

कह्यो मत्त रज तम त्रिगुन उत्तम मध्यम धन ।
 सोनि भाति गुन^१ भेद करि कहत नायिका मन् ॥१९॥

^१ गुर—नी० ।

मख प्रवृत्ति उत्तम कह्यो मध्यम रजम^१ मुभाइ ।
 धन तमोगुन प्रवृत्ति निय बरनत कवि ममुदाइ^२ ॥२०॥

^१ गज—ब्र०, रजत—भा० । ^२ हूँ कविराट—नी० ग० गजा० भा० ।

तीनों की चेष्टा ।

अहिनहूँ मो^१ हिन उत्तमा मम मो मम मधि^२ जानि ।
 अपमा हिन हूँ मा अहित^३ नीनो निय पहचानि ॥२१॥

^१ अनहिन मो—भा० । ^२ मध्यम—ग० गजा०, ममाधि—नी०, मु मधिमा—गा० ।

^३ नहिन—भा० ।

उत्तमा-उदाहरण ।

पोंगेहूँ बहै^१ जो बटु बीन तो बटाऊँ^२ जीम छाग डारौं आनिनि की आँसू भनकनि पं ।
 बीन बहै बंभी सोनि मो तो टहुगटनि निचो है वृज बालनि के भान पनकनि^३ पं ।
 हूँ रहीं नजीकी हौं न जोकी दुखिनाई रहीं^४ पा की प्रानप्यारी लहीं^५ नीकी मनकनि पं ।
 दूजो नही देव देव^६ पूजो गापिका के पग^७ पनकन^८ जाऊँ धरि ध्याउ^९ पनकनि पं ॥२२॥

^१ बहूँ—गा०, बनी—भा० । ^२ बटाऊँ—ब्र० । ^३ पनकनि—नी० गजा० ब्र० ।

^४ गही—ग० गजा० । ^५ रहीं—ब्र० । ^६ ०—भा० मो० । ^७ पग पर—भा० मो० ।

^८ पनकन—भा० मो० । ^९ ध्याउ—भा० मो०, न्याउ—ग० गजा० । भा० मो० नी०

गजा० प्रतियां में उत्तमा नायिका के २३ नया २४ मख्या के द्वितीय नया तृतीय उदा-

हरण छन्द नहीं है। मो० प्रनि मे पादर्व पर केवल "रावरे पायन" लिखा है, जो इस छन्द को भी पाठ मे सम्मिलित करने का सकेत है। भा० मा० प्रतियां मे आगे ५ ३३ दोहा से पाठ मिलता है।

रावरे पायन ओट^१ ससै पग यूजरी वार महावर डारे ।
मारो असावरी की भलकै^२ छनकै छवि घाघरे घूम घुमारे ।
आहु जु आहु दुगहु न मोहू सो देव जु चद डुरै न अँप्यारे ।
देखौ हौं कौन सी छँल छिपाइ तिरौछ हँसै वह पीछे तिहारे ॥२३॥

^१ ओप—ब्र० । ^२ सलकै—मा० ।

केसरि मो उवटे सब धग बडे भुकुतान मो मांग सँवारी ।
आरु सु चम्पक हार^१ हिये उर^२ ओद्रे उरोजन की छवि न्यारी ।
हाय सो हाय गहे कवि देव सु साथ तिहारेई नाथ^३ निहारी ।
हाहा हमारी सो साँची कहीं बह को हूँ^४ छोहरी छीवर वारी ॥२४॥

^१ चद तिहार—सा०, चद्रक हार—ब्र० । ^२ अर—ग० । ^३ तिहारे ही आज—ग० ।

^४ कौन ही—ग० । नी० गजा० प्रतियां मे २३-२४ मल्या के छन्द नहीं है ।

मध्यमा-उदाहरण ।

मैं समुभायो नही समुर्क मन को अपनो अपमान न सूकै ।
मोहन मान करै तो गरे^१ परि देव मर्नवे को जाइ अरु^२ ।
काको भयो यह सब सो विगरे यह जाको^३ मरै सुतो वात न बूकै ।
मौनि हमारी सु प्यारे की प्यारी मु प्यारे को प्यार परोमी सो जूकै ॥२५॥

^१ करै—ग० । ^२ जाइ असूकै—ब्र०, आप अरु^३—भी० ग० गजा० । ^४ याको—नी० ग० गजा० ।

कौन भयो दिन चारि नयो रग वे नव^१ जोवन जोति समाले ।
वै अब मेरो हितू हने बूकै को होत पुराननि मो हिन हाने ।
देखिये देव नयेई नये निन नाग मुहाग नये मद माने ।
नाह नये वे^२ नयी दुलही ये नये नये त्रेह नये नय नाने ॥२६॥

^१ चारि प्यारि नओ नये—ग०, गितवै नव—सा० । ^२ नाह न पँये—ग० । केवल ग० प्रति मे चरणों का प्रथम १-३-४-२ है । नी० गजा० प्रतियां मे यह छन्द नहीं है ।

मध्यमा-उदाहरण ।

प्यारी हमारी सो आवी इन कहि देव बुप्यारी हूँ कंसिक अँये^१ ।
प्यारी बहौ मति^२ मोमां अहो प्यारीयो प्यार की प्यारी बुलँये ।
कँ यह प्यार की एनो कृप्यार ओ न्यारी^३ हूँ बँठी मु बात बतँये^४ ।
प्यारे पराये सो कौन परेयो गये परि की लगि प्यारी बहँये ॥२७॥

^१ पँये—गजा० । ^२ जनि—नी० ग० गजा० । ^३ अन्यारी—ब्र० । ^४ बतँये—ग० गजा०, चलँये—नी० ।

विमल विचित्र विविचित्र की सी लिखी चार रचना चरित्र सो विचित्र गति^३ गामिनी ।
भोग उपभोग अग सग सुख जोग जामे प्रेम सो प्रसन्ने लाज सतत^३ विरामिनी ।
देव पति देवता दिपति दुति देवता सी काशी देश कौशल^४ कुशल कुल वामिनी ॥३६॥
१ सीत—नी० गजा० । २ पवित्र गति—सा०, विचित्र भक्त—नी० ग० गजा० ।
३ सजत—नी० ग० गजा०, सनत—भा० मो० । ४ काशी देस कौशल कुटिल—नी०
ग० गजा०, देखी जग मे कुशल एव कौशल—भा० ।

पाटल-वधू ।

चचल दृगचल चपल चितवति चोरि चितवति चाइ^१ चड़ी चारता प्रगट ही ।
हौस भरी हँसति लसति हुलसति हिये बिलसति^२ टालम मा^३ नेह के निकट ही ।
देव हरपत धरपत मानो मेन रस^४ मरम बचन रचना^५ सो रचि रटही ।
मोह की धँध्यारी मे उज्यारी हूँ रमति रति प्यारी पटना की पट लपट निपटही ॥३७॥
१ चाप—नी० ग० गजा० । २ बिलसति हिये हुलसति—ग० सा० । ३ बाल मनो—
भा० मो०, वास मनो—नी० ग० गजा० । ४ सर—नी० ग० गजा० भा० । ५ रमना—
भा० मो० नी० ग० गजा० ।

उरकल-वधू ।

त्रिरज विराजं रज रजित कियो है पति^१ गुंज अलि पुंजन^२ ले कीनी कुजगली सी
मूँदे मुल बाहिर धिनत^३ विन बात डोले अन्तर निरन्तर उनीदी^४ भाँति भली सी ।
रहन अवासही सुवास सो बसायो बन देव अनुकली मग फूली तन फूली सी ।
खेलनि सहेलिन नवल बाल बेलिन^५ मैं देखी उतकसी मारि अद्भुत कली ली ॥३८॥
१ पति—भा० मो० नी० ग० गजा० । २ कुजन—मो० । ३ विजन—सा० । ४ उदीनी—
मो० ग० गजा०, उनीदी—भा० । ५ खेलिन—भा० । ६ अबुज की बली सी—भा०,
देखी जाति कली कोई अद्भुत कली सी—सा० ।

कालिग-वधू ।

मदन के मद मतवारीन बदन^१ ऋके मदन मिरानि न मिराति रति रग ना ।
प्रीनम के रूप को मुधा^२ सा अंचवनि तऊँ^३ प्यामीय रहति जो लहनि सुख सग ना ।
प्रेम रस वस^४ प्याजं प्यार मा अथर रस सागत नव^५ करति सुव^६ भग ना ।
अग अग उमनि अनग अपजावति अलिषन उधात न कलिंग की बुलगना ॥३९॥
१ बहन—नी० ग० गजा०, ग० प्रति मे "हून" पर दुग्धर ह्यनलेप म 'मूमे' पाठ है,
बहन—मो०, वभूमि—भा० । २ भया—नी० ग० गजा० भा० मो० । ३ तन—नी०
ग० गजा० भा० मो० । ४ भावं—सा० । ५ करे विमूप—नी० ग० गजा० मो०, उचिर
भूप—भा० ।

वामद-वधू ।

तीनिहूँ लोक नचावनि ओग मैं^१ मत्र के मून^२ अमून गती है ।
आपु महा गुनबन्ध गुमाइनि पाइनि पूजत प्राणपती है ।
पैनी चित्तीनि चलावनि चेटक को न वियो^३ अम जोगी जती है ।

कामर कामिनि काम कला जगमोहिनि भामिनि भानमती है ॥४०॥

ऊक^१ मे—नी० गजा० मो०, ग० फूक मे—भा० । ^२ दून—भा० । ^३ भयो—सा० ।

बंग-वधू ।

वचन मडिन रूप भरी पहिरे पट लाल प्रकाम विसालनि^१ ।

सुदर स्याम लची^२ अमिराम घरे सिर दाम गरे मृदु मालनि ।

सग रमे कर में न^३ छुटं कटि सो लपटी प्रिय प्रानन पालनि^४ ।

देव रहै हियरे लगि के बरवाल विधौ बर बाल बगालनि ॥४१॥

^१ विलासनि—नी० गजा० भा० मो० । ^२ रची—द्व० मो० । ^३ सग रम न—नी० ग० गजा० भा० मो० । ^४ प्रिय प्रान को पालनि—भा०, लपटी रहै प्रान प्रिया तन पालनि—नी० ग० गजा०, लपटी जु रहै प्रिय प्राननि पालनि—“जु रहै” हासिये पर दूमरे हस्तलेख मे—भा०, लपटी प्रिय प्रानन आनन पालनि—भा० ।

विष-वधू ।

दुंठनि किरनि रतिवन्त को ह्वन्त गृह पनि की सुरनि गनि मनि भूली मन की ।

झोलनि अकेली अबुलानी प्रिय^१ केनि रम केली मी नवेली तरवेनी^२ अनि तन की ।

ठोंडी की बजाइ छोडी लाज उपजाइ नेह गोंडी नारि ठोंडी के डरे न प्रेमपन की ।

भिनमिली भाईं सी दिगाई पनि भार मे महीपधि की वूटी मी वधूटी विधरन^३ की ॥४२॥

^१ गिन—भा० । ^२ तनवेनी—भा०, अतवेनी—द्व० । ^३ वृन्दावन । ग० गजा०, विष-वन—सा० ।

मालव-वधू ।

बोननि चालि^१ त्रिलोननि मो दिनही दिन दृगुन नेह^२ बटावै ।

धगही धग धनग^३ तरगनि आदर सा उटि ओंठनि प्यावै ।

मालवदेम की बाल मनोहर बानम के^४ चिन की गनि पावै ।

जोग मर्व उपभोग भत्ते करि भांतिनि भोग^५ करावै ॥४३॥

^१ बेलनि चानि—भा० मो०, बान—ग० गजा० । ^२ दृगुन नेह—नी० ग० गजा०, दूनी मनह—द्व०, दृगने नर नेह—भा० । ^३ तरग—नी० ग० गजा० । ^४ मानुष की—गा० । ^५ भांति मु भोग—भा० ।

शामीर-वधू ।

विधि की मी आमिर अयेद^१ मेघ भूषन विनेष नय मियर^२ रची रंग मी मुहावनी ।

वर पद पदम पदमननी पदमनी^३ पदम मदम मोना सपद मो^४ आवनी ।

रभोर अदन्न रमा को मी परिरमन दे^५ शमीर मनोज जोर आग्नि निराजनी ।

धनन अनूत गनि आना जनिरामन को अभिगम आभरन जामीरिनी नावनी ॥४४॥

^१ अयेद—द्व० । ^२ सिर नय—भा० मो० । ^३ पदमनी की पदम मो—भा० । ^४ पदमी—द्व०, गपनि सी—भा०, मवद मो—ग० गजा०, मुनद मो—नी०, मेनद मो—मो०, मर देवन म—भा० । ^५ रमा रूप अघर भग्मा का मो—भा०, रमरूप अघ भर मार को सो—ग० । ^६ जागिन निरावनी—भा० ।

विराट-धधू ।

अरुन बसन सदा सोहृत तरुन तन कोमल कर चरत^१ मार सर मार की ।
 पिय के जियत जिय^२ प्यारी पिय जिय वसै प्रेम रस बस छाकी ताकी रति भार की ।
 तीखे नख घातन^३ अघात न अधरपान मानति सुरति रुचि सुरतरु डार की ।
 वारन गमन बडे वारन की वर तनु चपक वरन वर वनिता वरार की ॥४५॥
^१ करन चारु—भा०, करम मन—सा० । ^२ जियनि जीम—भा०, जियति पिय—नी०
 ग० गजा०, जिय जीवनी—भा०, जियनि जिय—द्र० । ^३ तीखे नखिया तन—भा०
 मो० ।

कौंकण-धधू ।

गोरी^१ गजरात गति गुननि गहीर मति भारे भाग ही^२ रमति सुरतिसकोचनी ।
 आलिंगन चुम्बन अधर पान नखदान मान सो वचन रचना सो रुचि^३ रोचनी ।
 जानै रीति जी की पहिचाने प्रीति नीकी सुखदानो सवही की प्यारी पी की दुखमोचनी ।
 केसरि करे न सरि को कनक जाकी दरि कोकनदरी की नगरि लोचनी ॥४६॥
^१ गोरी—भा० मो० । ^२ रग ही—ग० । ^३ रसना सो रस—द्र० ।

केरल-धधू ।

चम्पा के^१ वरन तन चन्दन बसायो बन चन्द से बसन बसे चन्दन के वारि है ।
 खग मृग मीन जल धल के अधीन होत गुजरत भौर पुज कुजनि^२ बिसारि है ।
 कौन करे सेव वहि देय ताहि देखत ही मोहि मन देवता करति मनुहारि है ।
 जोवन की जोतिन सो मोतिन केरली हार केरली कुरगनेनी नारि मुकुमारि है ॥४७॥
^१ चपक—सा० । ^२ कजन—सा० ।
 नोट : भा० प्रति मे अन्तिम चरण नुटित है ।

द्राविड़-धधू ।

देवता दरस पति देवता^१ सरस देव एहि विधि और नहीं^२ देव नर^३ नागरी ।
 सहज सुभाई सुभ सुचि रुचि सीलमति^४ कोमल विमल मन^५ सोभा सुखसागरी ।
 चाहै सममान को सराहै सदा प्रीतमहि प्रीति को निबाहै रति रीति अति आगरी^६ ।
 देवी देस द्राविड की सुन्दरी निविड नेह गुननि जनुप रूप ओपन उजागरी ॥४८॥
^१ दरसियतु देवता—भा० मो० । ^२ नहीं और—द्र० । ^३ नय—ग०, नरी—भा०
 मो० । ^४ सत सुचि रुचि सील मत—सा० ग०, सुति सचि रुचि सील-मति—मो०,
 सुचि सचि रुचि सील मति—भा० । ^५ मनो—सा० । ^६ चरण नुटित—मो०, सुन्दर
 मुनास वास कोमल कथानिधान जानत तहाँ न ताहि चाहि चिन आगरी—भा०, ग०
 प्रति मे छद के पादवं मे बिना सकेत दिये दूसरे हस्तलेख मे "सुन्दर सुवाग.....चित
 आगरी । द्वितीय पाठ"

तिलंग-धधू ।

गांवरी सुधर नारि महा मुनुमारि सोहै मोहै मन मुनिन को^१ मदन तरगिनी ।
 अनगने गुननि के गरव गहीर मनि निपुन सगोत शीत^२ सरम प्रसगिनी ।

कुरु-देश ।

नखसिख नेह भरी मदन तरंगिनी सो अग अग देव रग रग रीक्ति रहिये ।
साचं भरि बाढी मानो नाचं दृग खजन सु देखैं विरहागिनि की आचं पं न^१ सहिये ।
सोहै महासुन्दरी विमोहै मन मुनिन के कोहै ऐसी दूसरी^२ सलोनी नारि लहिये ।
गोरी सी बिसोरी चितवनि चित चोरी^३ करं कोरी^४ कुरु देश की कुरगर्ननी कहिये ॥५४॥

^१ नहिं—भा० मो० । ^२ सुन्दरि—ब्र० । ^३ वीच चोरी—भा० मो० । ^४ भोरी—भा०

करवीर-बधू

नासिका वीर^१ लकीर सी भौहनि तीर से छाँडति^२ है पिकर्बनी ।
भौर अभीरनि भीतर भीतर भीर सुभाव उभी रस दैनी^३ ।
धीरज देव अधीरज होत चितौनि चितौति अधीरज पैनी ।
वीर हरं करवीर की कामिनि छीरज से मुख नीरजनी ॥५५॥

^१ कोर—सा० । ^२ तीर सी तावनि—भा० । ^३ भीतर भीर सुभाइ भरी सु उभय स
दैनी—भा० ।

पर्वत-बधू ।

पकज से नैन^१ बँन मधुर मयक जैसे^२ अधरनि धरी धीर^३ सुधा स^४गत की ।
देव कोई वाके जोग भोगये^५ अग्रण्ड सुख भौहनि प्रकासी जोति वासी करवत की ।
सील के सुभाइनि सो महा सुपदायनि सो बहूँ बाहूँ कवहूँ करत गरवत की ।
इदिरा सरूप इन्दुवदनी अनूप रूप जोवन उग्यारी पियप्यारी परवत की ॥५६॥

^१ सैन—मो० । ^२ मधुर पियूप जैसे—भा० मो०, मधुर रस, परजगे—सा० । ^३ धर
धर—भा० मो० ब्र० । ^४ भोग में—सा० ।

भुटन्त-बधू

चेटक सी चाल चटकीलो रग अगनि को^१ चोट सी चलाई जीठि पोही प्रेम तत की^२ ।
चुम्बन की हीस उपजावति हँसत मुव^३ सारो सी पदति बँन दारो दुति दन्त की ।
मोहै देव देवतन मोहै मुनिहू को मन कन्त वो अपड धन^४ मोही रतिवन्त की ।
धन वन झारनि में सपन पहागनि में दामिनि सी देखियन कामिनि भुटन्त की ॥५७॥

^१ में—ग० सा० । ^२ गति है मनग की—भा० । ^३ मयक मुखी—भा०, हँसत मुली—
मो० । ^४ अतर धन—ग० सा० ।

कासमीर-बधू ।

जोवन के रग भरे^१ ईगुर मे अगनि पं एडिन ली थागो^२ छाजं छविन की भीर^३ की ।
उचके उचोहै कुच भवे^४ भनगति भीनो भिलमिली ओठनी विनारीदार धीर की ।
गुलगुले गोरे गोने^५ बोमल कपोन सुधा विदु^६ बोल इन्दुमुखी नामिना ज्यो वीर की ।
देव दुति लहरात छूटे छहरान केम बोरी जैसे^७ बेसरि बिसोरी कासमीर की ॥५८॥

^१ भरी—ग० सा० । ^२ छवि—भा०, अग—सा० । ^३ बेगन के भीर—भा० मो० ।

^४ भये—ग०, भार—भा० । ^५ गोरे गोरे—भा० । ^६ मुधागिम्ब—भा० मो० । ^७ बोरी
जैसी—भा० मो० ।

सौवर्ण-वधु ।

अभोनिधि कौमो मुना मीनि^१ अभाजन पर दभावि^२ अदभादिन टुनि है मरीर की ।
 जागभिन जोवन निदन^३ वरं रभा रचि रभोर मुगभोर गुगटं गुन भोर री ।
 चन्द्र मे वदन मन्द हीनी की अमद छवि^४ स्वांग^५ मरन्द वास चन्द्रन न चोर की ।
 वाम इय मन्दग मो^६ देव वाम कन्दग मो उन्दिग को मन्दिर मु मुन्दगी मुवीर की ॥४६॥

^१ अभोनिधि की मुना मो मीनि—३०, अमोविधि रामुनाना—भा० मा० । ^२ दभा भाजन—भा०, दमोजन—मो० । ^३ निग्म—ग० भा० । ^४ अमन्दु विन्व—भा० ।

^५ स्याम—भा० मा० । ^६ वाम इय मन्दग मो—भा० मा० ।

इति श्री नृप भोषोत्तल हित रस विलासे क्वि देर कृते जाति गुण देस भेदादि नायिका वर्णन नाम पक्षमो विनाय ।

बाल-भेद ।

जाठ अवस्था नद रगि हात जाठ विधि वार ।
 वरनी ना मयोग नै जाठ भोनि की वार ॥ १ ॥
 प्रथम कहा स्वार्थीनरति रतह्लन्गिना हाट ।
 अमिपारिवा वरानिय विप्ररतिरवा माट ॥ २ ॥
 रटिनार उन्वण्टिता रानरमग्जा वाम ।
 प्रोपिनरतिवा नाश्वा जाती विधि अमिगम ॥ ३ ॥

स्वार्थीनरतिना-लक्षण ।

मनगा वाचा वमना जाये पनि जायीन ।
 मो वामिनि स्वार्थीनरति पनि वम वग्म प्रवीन ॥ ४ ॥

उदाहरण ।

जामो हेंसि एन वार एर वार कटिब वा हीमन मरति कही वा न दूजवान ह ।
 गृपेट मुभादिनि मुदाग वरि गग्नी रगि हात न उदाय वयोह एना भाग भाव है ।
 देव अब आम पुनी नू जी मे अदूदी वनी^१ दूजी निप भूवेह न^२ दान गुत्ताव ह ।
 पाट परि गत्री रेंगियानि भरि गत्री हियग म धरि गत्री वरि गत्री कट माव है ॥४७॥

^१ देव अब आम पुनी सुव अर जी की मेगी भट्ट—गा०, अदूदी रती—ग० । ^२ वान-हृत—मो० ।

रग चूर्व चेंपि कचन नृपुत्र वीन मे पावन मोन वधु ये ।
 अगन रग मनो निचुट्टे रिप मग घर मग मे पग दूके^१ ।
 इदु मे जानन मे अमविदुनि देव गुविद गह मुग पूरे^२ ।
 मो ननि मोनिन की रेंगियानि मे रागि उठी मनी आदि की लरे^३ ॥ ६ ॥

^१ पग दूके—गा० । ^२ मुत्तावन पूरे—ग० । ^३ लूरे—४० । भा० मो० प्रतिना म उपसुंन छन्द मुग्नि है ।

वर्तनतिना-लक्षण ।

प्रेम अजीग्न वीर दुग्मपन रिप मजोद ।
 वर्तनगिना है दुरी गदै न^१ बिया विपय ॥ ७ ॥

१ सहने—भा० ।

उदाहरण ।

सखी के सँकोच^१ गुरु साच मृगलोचनी रिमानी पिय सा जू उन नैव हँमि छुयो^२ गाल ।
देव वे मुभाइ^३ मुसकाइ^४ उठि गय इह सिसकि सिसकि निसि खोई राइ पाया प्रात^५ ।
को जानै रो बीर बिनु^६ बिरही बिरह बिथा हाइ हाइ बरि पछनाइ^७ न कछू सुहान ।
बटे बडे नैननि तै आँसू भरि भरि डरि गोरो गोरो मुख आज^८ आरो सो मिलाना जात ॥८॥

१ सखिन के सोच—भा० मा० । २ छियो—भा० मा० । ३ सहज मुभाइ—भा० ।

४ मुसकाइ—सा० । ५ लायो पाया परमात—भा०, सु रोइ राइ पायो प्रात—सा० ।

६ कौन जानै बीर बिनु—भा० मा०, जानै को बीर बिनु—सा० । ७ इहाँ इक रीति पछताय—सा० । ८ देव गोरो मृग भारो भोरा—भा० ।

अभिसारिका लक्षण ।

आपुहि तँ जो उठि^१ चलै तिय पिय व सक्त ।

निसि दिन तिमिर प्रकाश कछु गनै न सगम हन ॥ ९ ॥

१ उठि जा—भा० मो० ।

उदाहरण ।

मूक्त न गाल बीति आई^१ अघरात अरु^२ साण सब गुरुजन जानि बँ वगर व ।
छिपि बँ छबीली अभिसार को किवार खोलै खुनिग सुगन्ध चट्टे चन्दन अगर व ।
दव कहै भीर गुजि आए कुज कुजन त^३ पूछि पूछि पाछे पर पाहरू डगर व ।
देवता वि दामिनी मसाल किभी^४ जोति ज्वाल^५ भिगरे मचत जाग सिगरे नगर व ॥१०॥

१ आयो—भा० मा० । २ लखि—भा० मा० । ३ दव भ्रमि भीर गुजि आए कुज कुजन तँ—ग०, देव कहै भीर दौरि अई गुजि कुजन त—मा० । ४ है कि—भा० मा० ।

५ जाति जाल—भा० ।

विप्रलब्धा लक्षण ।

आपुहि तँ सक्त वदि बालि पठावै धाम ।

मिसाहि न जहि रतिमदन पनि विप्रलब्ध सा धाम ॥ ११ ॥

उदाहरण ।

गर पटु डारि^१ करै बेती मनुहारि दूतिकानि पग पारि^२ प्रति पूरन पकि रही ।
नोनी नव नारि नया नहानरधारि लाज कजहि^३ विसारि रूप छौं सौ छौंकि रही ।
मिले न मुरारि आपुहि तँ अभिसारि भेय भूपनसँभारि सून कुज भँ^४ जकि रही ।
मोचि दृग बारि साचि सोचति बिचारि दव चिनँ चहूँ पारि धरी चारि लौं चकि रही ॥१२॥

१ रारि—भा० । २ परी—भा० । ३ नव धारि लाज बीजह—भा० मा० । ४ कुजन भँ—भा० ।

सडिता-लक्षण ।

वेसा करै निसि जाइ वट्टे^१ प्रात मिलै पनि आद ।

नारि खडिना मोनि व चिह्न लखे बिनताइ ॥ १३ ॥

१ जीर कट्टे—३०, सँगनि गमाय कट्टे—मा०, वर्गनि गमाय कट्टे—मा० ।

उदाहरण ।

आजु गोपान जू वान वपू भेंग नृतन नतनि कुज वमे निमि ।

जापर होत उजागर नैनन पाग पै पीगी? पगग ग्ही पिमि ।

चोत्र के चन्दन खोन गुने जहाँ जोड़े उगात्र ग्ही उर मे प्रिमि ।

बोरत वान नजान मे जान मु आये इनीन चितौन चट्टे दिमि ॥ १८ ॥

१ पाग क पेच—३० । भा० मो० प्रनिया में यह छन्द नुष्टित है तथा ३० प्रति म जगत छन्द क पञ्चानु है ।

गात तँ गिग्त^१ फून पलट दुबूल थट्टे भाग^२ जाग जाती जाज काट्ट वटभाग क^३ ।

अजन अघर उर बीच नगग^४ वान जावक निवक भात लागो दुनि दाग के^५ ।

भौई अतमाई पग पीक^६ पग पीक रग गानि जम गान नैन भोजे अनुगग क^७ ।

वानन लजान मे जम्हान त्रिहोमान प्राण आण जलमान आरी^८ देन पैच पाग के ॥ १९ ॥

१ भरत—भा० मो० ३० । २ अनुराग उन—भा० मा० । ३ भाग इन बटभाग क—

भा० मो० । ४ मधि मांग—भा० मो० । ५ बलमाई पनमाई—भा० मा० । ६ रनि मैन

मदन मुहाग क—भा० मो० । ७ जाए जाती भये थूट्ट—भा० मा० जाती उठि जाए

दगि—ग० मा० ।

उत्कण्ठिता-लक्षण ।

पनि आधन की रनि मदन जात इत अवार ।

मो उलठिन जो वर्ग बट्ट विमि गाव विचार ॥ १८ ॥

उदाहरण ।

सगी दुपट्टी हगी भगी फगी^१ कुज मजु गुज अनि पुजन की दव हिया इति जानि ।

मोर्ग मद्र नीर तर नीर्गनि ग्हीर छहि मोई पर पविक पुकारे निक्की^२ करि जानि ।

गेम मे^३ त्रिगारी भोरी को गी कृमिनाना मुर पवज मे पाय धग धीरजमा धगि जानि ।

मोई घाम म्याम मग^४ हेरनि इथरी जोट उँचे घाम वाम चट्टि आवनि उनगि जानि ॥ १७ ॥

१ वरी—ग० मा०, ग० में उपर मे मगारन है 'फगी' । २ त्रिक—ग० । ३ गम या—

ग० । ४ पनम्याम मग—मा० ।

घासकसरजा-लक्षण ।

पनि आधन की रनि मदन जाने निहचें हाट ।

मेज वेप भूपन ग्चै^१ वामरमज्जा मोट ॥ १६ ॥

१ गजै—मा० ।

उदाहरण ।

गुर गेजाई माजि मिगार मजे गुटि वार मुगन्ग खवे^१ वमि वं ।

बुनि चूनगी नात गरी पहिगी बत्रि देव मुद्रम रखा लनि वं^२ ।

पिय भटिव का उमगी^१ छतिया सु छिपावनि हरि हिया^२ हसि कं ।

अंगिया की तनी खुलि जाति धनी सुवनी फिरि वावति है कमि कं ॥१६॥

^१ कच गूदि सुवासन सा—ग० । ^२ पहिरी गहिरी रग चूनरी लाल सु धान का बस रह्यो लसिकं—ग० । ^३ उमही—भा० । ^४ नौल तिया—ग० ।

प्रोषितपतिका-लक्षण ।

पति विदक्ष क्याहूँ गया आयम जाधि दिठाय^१ ।

प्रोषितपतिका गैनि दिन विरह दमा अकुलाय^२ ॥१७॥

^१ देवाय—ग० । ^२ विरहाय—ग० मा० ।

उदाहरण ।

बालम विरह जिनि जान्यो न जनम मरि वरि वरि उठै ज्या ज्या बरसै बरफराति ।

बीजन हुलायति सखीजन त्या^१ सोतहू म सीति व सराप तन नापनि तरफरानि ।

दब कहै स्वासनही अमुवा सुखात भुग निबसै न बात एसी सिसवी सरफराति ।

लौटि लौटि परत करोट पट पाटी लै लै मूखे जल मफगी ज्या सेन पै^२ फरफगानि ॥१८॥

^१ सखी ज्या त्या नित—ग० । ^२ परी—सा० ।

प्रवत्सपतिका-लक्षण ।

नारि प्रवत्सतभतिका^१ नवमी कहत^२ बन्वानि ।

वाल भेद नौ विधि बहत एव देस मन मारि^३ ॥१९॥

^१ प्रवेत्सपति भतिका—ग० । ^२ बरत—भा० मा० । ^३ कान भेद म हान यह समुभौ सुकवि सुजान—ग० ।

उदाहरण ।

कल न परत कहूँ ललन चलन कया विरह दवा सा दह दहकै दहकि दहनि ।

सागि रही हिलकी हलक मूखि ज्ञाने हिया दब कहै गरा भग्यो आवत गहकि गहनि ।

दीरघ उसास लै लै ससिमुरी सिसजति मुतप^१ सनोना तक लहकं नहनि नहकि ।

मानत न धरज्या सुदारिद्र स नैननि त वारि का प्रवाह बह्यो आवा बहनि बहनि ॥२०॥

^१ आवन दहक दहक—सा० आवत बहक उहक—ग० । ^२ मुतप—भा० मा० ।

आगतपतिका-लक्षण ।

कही प्रवत्सनभतिका ज्याही नवमी नारि ।

जागतपतिका त्या मुना दममी बहत रिचानि ॥२१॥

उदाहरण ।

आवन मुग्यो है मनभावन का भागिनि त्या नैनन जनन्द^१ ओम् टरनि टरकि उठ ।

दब दूग दाऊ दीरि जान द्वार^२ दहरी लो बहरी सी भासै खरी मरकि खरकि उठ^३ ।

दहलै वरनि दहनै न हाथ पाइ रगमहनै निहारि^४ तनी तरकि तरकि उठे ।

सरकि सरकि सास दरनि आंगी औचर उचाहे बुच परनि परकि उठे ॥२२॥

^१ आखिन जनन्द—सा० । ^२ दोर—सा० । ^३ रोम साममुखी व मु मरकि मरकि उठे—ग० । ^४ विनोदि—भा० मों० ग० । ^५ औचक उचाह बुच परनि परकि आंगी दरनि

दग्नि ज्ञानो मार्गं मग्निं मग्निं उष्टं—सा० ।
वह्निम-भेद ।

वाय वह्निम भेद वग्नि तीन जाति की होइ ।
मुग्ना मध्या प्रयत्नभा' वग्नन द्वै वग्नि लोष्ट' ॥ २६ ॥

' मध्य प्रयत्न वह्नि—सा० । ' मय वोष्ट—भा० मो०, मुग्ना निय की अग हुनि दिन
दिन दूनी होष्ट—३० ।

मुग्ना-नक्षत्र ।

वह्निवापन भा'पूनि दं उमर्ग' जावन जोगि ।
मुग्ना निय की अग हुनि दिन दिन दूनी होनि ॥ २७ ॥

' उतरे—ग० सा० । ३० प्रति म यत् दाष्टा यत्नि है ।
उदाहरण ।

जाति पर्यो जोवन जनायो है मनाय जु' जगमयो जाति अग वाटनि निरै निरै ।
ह' हैमि ह्नि ह्नि त्रयो ह्नि जू रो हिया ह्नि ह्नि नंनो ह्नि मा हिनै हिनै ।
मी रो दिन चाग्नि नं नोछां चिन्वनि प्पागे देव वह नरि द्यु' देवनि जिनै जिनै ॥ २८ ॥
जात्री उननीय नीय मुग्ना मग्नेजन की मग्ना तनाटपन नाग्ना' निरै निरै ॥ २८ ॥

' आज—सा०, मुद—३० । ' ह्नि—सा० । ' द्यु भरि—सा० । ' तनाईमनि
नाग्नि—भा०, ' नि' पाठवं पर—सा० तग्ना तर्ननी मनि नोगनि—३० ।
उमर्ग' उगोत्र गिनि ह्निद्वार' ह्निदे तं शग्पो त्रिहि माग्ना यहीर नाग्नि भपिर्न ।
निर्गो मग्नाई वाई ता मुग्ना मग्निनि मो' मिग्ना उया मुग्ना' मिनि चनी चपिर्न ।
नाम तम वेग मुग्ना मोम निरै' परंमुता' मर्कं मुजान दीनो देव जपि जपि कं ।
मि ह्नि' मेमे ठौर ठाटा काम पुगोहित पति दीनो' मन मानिक निरक सकत्तपि कं ॥ २९ ॥

' उपरि—भा० । ' ह्नि—सा० । ' ना मर तरदन मो—भा०, तामु रनि रगनि
मो—३० । ' मुग्मन—भा० मो० । ' तामि ह्नि गोभा कहूँ केम मिने—भा० मो० ।
' एवं नून—३० । ' मा'—सा०, मट—मो० ह्नि—भा० । ' मोप्यो—ग०, पुग्ना-
होन पेनि दीना—मो० ।

ओग्ना ज्ञानो हाव निरक वा जीनो' हाव मुग्ना' जगता द्युग दानि दुगाई यह ।
मुग्ना मुग्नाचनी मकचनि ही मानातनि गोनों नी मुग्ना यह गोचनि मुग्नाई यह ।
जायो इन बीने को' छिन्नायो नाह बीने वान बीने धी निग्नाई निग्ना गोमी बिमुग्नाई यह ।
जीनो वरि जोनू मनु' नीको वरि देव पीको हीका वरि गग्ने धरि रायो हीग्नाई यह ॥ ३० ॥
' गोनों—ग० ना० । ' जायो इन बीने को—भा० । ' जोग मन—ग० सा० ।
' उगाई—भा० मो० ।

मग्ना-नक्षत्र ।
वह्निवापन जावन जग' होऊ होत ममान ।
नात्र काम मम मध्याना तहरी' वहन मुजान ॥ ३१ ॥
' नागी—मो० । ' मोई मध्या नादिना वग्नन मुग्ना मुग्ना—ग० सा० ।

उदाहरण ।

माधन माम मथीन मैं मुदरि मदिर तँ निरभी वनि^१ ज्यो ममि ।
 देव ज् देवि छके छवि^२ छैव गह्यो न गयो हरि हागि हियो^३ कमि ।
 टागि मसोच कह्यो मव ऊपर गेभो य भांनि रह्यो ब्रज मै वमि ।
 टीठ बचाय नवाय के मीम नचाट के नैन रचाट गई हँमि^४ ॥ ३० ॥

^१ विन—मा० । ^२ देवि ठव वरि देवजू—ग० । ^३ हिन—मा० । ^४ गूल मी मालनि है जय ली लत्रचाय के नैन नचाट चली हँमि—ग० मा० । श्र० प्रति मे यही पाठ हागिये पर दूमरे इन्द्रनेम मे 'दुनिय पाठ' के रूप म दिखा है ।

प्रगल्भा-लक्षण ।

नरिकापन लजि जहँ गई नन जोउन मरिपूर ।

कई प्रगल्भा नायिका जग म जीवनमूर ॥३३॥

मा० प्रति मे यह दाहा नुटिन है ।

उदाहरण ।

माये की मुवाम आमपाम भगि भोन^१ गह्यो भग्न उमाम वाम वामन^२ वमात है ।
 नवन भनित^३ जगनित रव विरिनी के नूपुर गनित मिन^४ मनिन मुहात है ।
 नटन हवन मुर मटन मलमवन मवन दृष्य भुजमूल महगत है ।
 वरन विहार कहि^५ देव बार बार बार छुटि छटि जान हार टूटि टूटि जान है ॥३६॥

^१ भौर—मा० । ^२ वाहन—मा० । ^३ वरिन—मा० । ^४ नूपुरन मिन मनि—मा० ।

^५ कई—ग० । भा० मा० प्रतियो मे यह छन्द नुटिन है । श्र० प्रति मे यह भूल मे मथ्या नायिका शीपव के अन्तर्गत उन्द मथ्या ३० के बाद जाया है ।

रेममी मयूय^१ माल लाल पट लीपे लेप भीन^२ नि^३ मीत रनि की न भीन भाई मी ।

भीनि नग हीरन गहौरनि की वानिन मा गगमगे^४ मव पनि वव छवि छाई मी ।

नगमगी मेज गगमगे देव देवगनि अग^५ जोनि मय्यनि जी अगनि नगाई^६ मी ।

ऊय मे निदान ही मयूय मनि मानिवनि अगनित चाभीर^७ जगिन तचाई मी ॥३५॥

^१ जनूय—श्र० । ^२ निपटे महन भीनरनि—मा० । ^३ नगमग—श्र० । ^४ जनग—मा० ।

^५ नगाई—श्र० । यह छन्द मा० प्रति मे नुटिन है तथा ग० प्रति मे यह हागिये पर दूमरे इन्द्रनेम मे है ।

मय्यनि मग टगरना मुग्गनि मिधा जनि ।

मुमग चेप्या प्रगल्भनि निहँ मदा मुग्गनि^१ ॥३६॥

^१ प्रगल्भ निय नीनि मदा मुग्गनि—मा० ।

उदाहरण ।

वे दिन नाहि भट्ट^१ भयके ब्रज भाँने बई^२ नुरि के भिगई ही ।

चाप दे दे चित म गग की दिन गनित देव दूरे दिगई शै ।

टीठ^३ भई दिन मोरन^४ मयाम के वाम रना निपि^५ म्यो दिगई शै ।

जानहि यथा उर जानट्टु ज् अर नो हरि मी विपयी निगई शै^६ ॥३७॥

१ भये—सा० । २ वात नई—भा०, भात नई—मो० । ३ ढीठे—सा० । ४ सोवन—
मा० मो० । ५ लिपि—भा० मो० । ६ विखई विपई हो—भा० मो० ।
शिक्षा ।

वारी ही वीम वडी चतुई ही बटो गुन देव वडीयें वडाई ।
मुदरे ही मुधुई ही सलोनी ही सील भगी रम रूप सनाई ।
राजवधू यनि राजकुमारि अहो मुकुमारि न मानो मनाई ।
नेमिन नाह के नेह बिना चरचूर हूँ जैहै मरै चिबनाई ॥३८॥

भा० मो० प्रनिया म यह छन्द मुटिन है ।
सुभग-चेष्टा ।

ओभिन हूँ आई भुवि उभवि भरतेया रूप भर भी भगवि गई भलवन भाई की^१ ।
पैने जिनियारे पं गहज बजरारे दृग चोट सी चलाई चिनवनि चचलाई की ।
पौन जानै की ही उठि लागी डीठि माही उर रहे अवरोही देर^२ निधि ही निकाई की ।
अय लगि आगिन की पूतगी बमोदिन म लागी रहे लीक बाकी सोने सी गुराई की ॥३९॥

१ भवन निकाई सी—सा० । २ कोही—मो०, बोई—भा० ।
बान वहिदम^३ भेद करि भेद भेद प्रति भेद ।
होत अनेक प्रकार तें मुनत ह्यन^४ धुनि मेद ॥४०॥

१ टाम वय नम—भा० । २ रहत—मा० ।
नैसु धन्य बिस्तार भय बहे न मँ ममुभाय ।
वरने भाउ विलाम मे लक्षण भेद मुमाय ॥४१॥

भा० मो० प्रतियो मे यह दोहा मुटिन है ।
प्रवृत्ति-भेद ।
प्रवृत्ति भेद करि नायिका त्रिविध^१ कहन कयितोह ।
ताते मो कफ पित्त अरु बान प्रवृत्ति निय होइ ॥४२॥

१ विविध—२० मा० ।
कफप्रवृत्ति लक्षण ।
मो कामिनि कफ प्रवृत्ति जो रूप भीन गुनवन्त ।
नेह पीतने वचन चित नैन केम नग हन्त ॥४३॥

उदाहरण ।
मीन मनीन^१ मनोनी मलज्ज मुभाइनि मज्जनना मग्गाती ।
नेह भये कच चोचन देह मुधा मधु तें बतियाँ अघिकानी ।
दामिनि सो नग दनन दीपनि देगन कामिनी को न मजाती^२ ।
देव जू वा सुगदाइनि को मुत्र देवत^३ अंगियाँ न अघाती^४ ॥४४॥

१ मुमान—ग० २० । २ दान की दुनि देगन हूँ अंगियाँ न अघात—भा० । ३ अन्तर के
अनुगम त्रिने पुनि उतर ही मय देन दिगार्त—भा० ।

पित्तप्रकृति लक्षण ।

जाल दल्ल नग नैन' तन पृथु कुच वेम अगल ।
छमा त्रिय छिन म' दुयो पित्त प्रकृति सा वात ॥८॥

' जान नैन नग दन—मा० । ' दिन मे—भा० मा० ।

उदाहरण ।

वात तमे' नग दल्ल कपात प्रसात म' ओटनु गेंचि नचावति ।
भौंरनि भाट मुभाट वनाट वं यातनही मर गान नचावति ।
आंचवही चुन्कीन वजाट वं गाड वं प्यार का प्रेम नचावति ।
रमि रंहे ररुं रिम वं ररुं रमना रम रग रचावति' ॥८६॥

' वात तमे—भा० । ' मु धारिज—भा० । ' मचावति—मा० ।

वातप्रकृति-लक्षण ।

रमे तन मन वरन वच धूमर' चचन चित्त ।
भूरी घट्टु भाजन गमन वातुन तिय रति मित' ॥४७॥

' वच धूमर—भा० मा० २० । ' वात प्रकृति तिय मित—२० ।

उदाहरण ।

गप रगाट भरी अंगियां रम रागे नही मगिवाति मा दीट' ।
भाजन भूर भरी मदन जर' भूरे म वागनि वाति जमीट ।
चचन चित्त जरी मर मा टिन एक न छाती न छाटनि डटे ।
वाम की घात अधान नही दिन राति रही रतिरग उगाटे ॥ ८८ ॥

' मी टूट—मा० । ' मर भूभर—भा० मा० ।

सत्य-भेद ।

सुर विन्कर अरु जक्ष नर कहि पिमाच अरु नाग ।
सत्त्वभेद मा नागिरा रगनहु गर कपि राय' ॥ ८९ ॥

' नाम—भा० ।

तिनर उच्यन भेद मर जानहु नाम' समान ।
- प्रमिद गगार म जाति मुभाट प्रमान ॥ १० ॥

' नीम—मा० नीय—भा० ।

द्वैतसत्त्व-उदाहरण ।

राम श्री कुमारी मी परम मुकुमारी' यह जारी है कुमारी महा नाम वा जनक व ।
मनर गर्मीर मुकुनाट की मारा मंन मना मा मरानी उन बीना की भनर ते ।
एरी अरुही । उनदेवी एगी देगी दव देवी ते अगन' मुनागन है गला ये ।
वनर वनर तन वनर वनर वन' भनर भनर रर वचन वनर ते ॥ ११ ॥

' मुकुमारी—भा० २० । ' एरा—भा० २० । प्रति म पत्त एरा पाठ वा परगु

' हा पर वनर इरुनात वगावर वी पाठ मगावन है । ' जगम—मा० । ' मन—
भा० मा० । मनर वर—मा० ।

मनुष्यसत्त्व-उदाहरण ।

आई बरमानें नें बुनाई वृषभान मुना निग्वि प्रभानि प्रना भानु की अर्थ मटै ।
 चर चरवानि नें चुकाये चर चोटनि मो चौवन चकोर चकाचौरी मो चरै' मटै ।
 देव नन्दनन्दन के नैननि जनन्दमटै' नन्द जू के मन्दिगनि' चन्द मटै ठै मटै ।
 मन्दिगनि कनिनमटै कुन्दिगनि जलिनमटै योत्रुन की गनिनि ननिनमटै' वं मटै ॥ ५० ॥
 ' मो चिने—भा० । ' नद नदन नैननि अनन्द मटै भटै—भा०, नद जू व नद जू के
 नद जू के नैनन—ग० । ' मदिग नि—मो० । ' जनिनमटै—भा०, व० प्रति म पत्ते
 "जनिन" पाठ था परन्तु हम पर भाव इतना फेरकर उगी इत्यनेन में ननिन
 पाठ—गमोपन हुआ है ।

गधर्वसत्त्व-उदाहरण ।

मुन्दरि मदिग ने न वटी वट्टे नैननि नै नहि नान उमाची' ।
 काह गियाई न मीगी' वट्टे मिय्यानि मो मीन मुभादन मोची ।
 देव जू देगे मुने नहि म्याम पढे विन प्रेम की पढनि वाची ।
 आनद तें अमुगग भगी बनवृत्र में जाड जेचिये ताची ॥ ५३ ॥
 ' इमाची—व० । ' मीग—भा० मो० ।

यक्षिसत्त्व-उदाहरण ।

बचन नैन वटी' वरनी वुट्टिं भुनुटी मुवटै मटवागी' ।
 मोहनी मी मुयमानि' मनोहर चेटव गी वियरी मुववागी ।
 देव गपधन वाव विचधन' गमी न अधन नारि निहारी ।
 वामव लशन के' नवि नचउन रूप विरन्दन लचउनवागी ॥ ५४ ॥
 ' वटी—भा० । ' मटवागी—भा० व० । ' मुवमानि—ग० । ' वाव विचधन—
 भा०, विचधन—भा०, व० प्रति ये पत्ते "विचधन" पाठ था फिर हम पर इतना
 फेरकर उगी इत्यनेन में "विचधन" पाठ—गमोपन है । ' नचउन छो—भा० मो० ।

विशाचसत्त्व-उदाहरण ।

अनर योवनि नाहि जेचिये डोरनि पें नहि' बोचनि देने ।
 येचिये देव त्रिं त्रिन ठौर ही टाही नै पर वाहिर पेने ।
 केनिन रूप वरै पारै मग मामुडे' मून्नन यानि बमेर ।
 नेत्र भगी नव वाम शिवावनि वाम के कौनिक वाम अयेर ॥ ५५ ॥

' डोरनिये नाहि—भा० मो०, व० प्रति ये पत्ते ' ये ' पाठ था, इतना ही मद्रापना
 में हमें "ये" बनाया गया है । ' वरै मग मामुडे आमुडे—भा० व० ।

नागसत्त्व-उदाहरण ।

बराह अयानि नरी रनि रदनि घन अनथ विनाम मिचोटी' ।
 पावरी मोन' यगे मो मटी मो नटी मो नचावै वटी मुन भाटी ।
 जादि मो अग्नि' नें उगिने वट्टे मान मिचिहू न वान नटै' ।
 वान विचे जगिने' वर मयनि जगै उगरे ग्यि ते विम भाटी ॥ ५६ ॥

१ विलास चिलोई—भा० मो० । २ सैन—भा० । ३ चटी सी—द्र० । ४ आगिली सी आग्विन—“सी” पर हरताल—द्र०, आगिनी आग्विन—भा० । ५ जुपिये—द्र० । ६ मननि स्यो—भा०, मतन त्यो—मो० ।

धरसस्व-उदाहरण ।

काम के काज न लागति नाज बुरे मुर बोलति डोलति दीरी ।
स्विय खात नही अनखात भयं दिन राति रही परि टौरी^१ ।
मानन दांलन घातन दूरति^२ केनि कठोर करं डक ठौरी ।
देवि दंतूसर^३ मसर मे मुज घूरि भरे तन धूसर धौरी ॥५७॥

१ रही खरि ठौरी—ग० मा० । २ घातकहें रति—द्र० । ३ दलूसर—भा० मो० । केवल ग० सा० प्रतिभा मे चरणों का क्रम १-२-२-४ है । भा० प्रति म छन्द नुदित है ।

कपिसस्व-उदाहरण ।

न्यारे मैं न्याड^१ अन्याड करे वझे क्या हूँ पत्याड नही अनुकूलैहूँ^२ ।
जीवक चौकि चलें उछनें छल छिद्रनि लोक छनें प्रतिकूलैहूँ ।
धीर धिरानि न पीर पिराति धिराति नही दिन रातिन ऊलैहूँ ।
भूरी सी भूरि भरी उभगाईं मौ^३ राईं भरी यो भुराईं न भूलैहूँ ॥५८॥

१ न्याय मैं न्याय—ग० । २ अनुभूलैहूँ—ग० । ३ भरावभगाईं सा—भा० मो० ।

काकसस्व-उदाहरण ।

व्पाकुस मौ कुल सील उमेठि कै^१ है उमडी मडराइ दिगावै ।
चचलचित्त चितौति खहूँ दिसि^२ एकी घरी घर चैन न पावै ।
जीवक चौकनि घातन ही निज वातनि घातनि^३ वात चुकावै ।
काक ली^४ काक भुवाक सुनाड कंसाधुनि^५ के गुन दोष बतावै ॥५९॥

१ उमेठि कै—द्र०, उमेठि कै—भा० । २ चित्तं दमहूँ दिनि—भा०, चितौ चितहूँ दिनि—मो० । ३ घातनि घातनि—ग० मा० । ४ काक ली—ग० । ५ साधनि—द्र० भा० मो० ।

आठ भेद करि नायिका वर्गनि कही दहि भांति ।

वाग्य बरनी जानि मो मकल रूप गुन वानि ॥६०॥

इति श्री नृप भोगीलास हित रस विलास कवि देव कृते कास भेदघट्टिप्रथम भेद सत्य भेद नायिका वर्णन नाम षष्ठमो विलास ।

मयाग दम हाव वियोग दम दशा ।

इहि विधि वर्गहूँ नायिका आठौ अग विभेद ।

जादि अन सुम्^१ वी प्रवृत्ति जाहि वर्गानन वेद^२ ॥१॥

१ आदि पुराप सुम्—ग० मा० । २ भेद—मो० ।

मो मोहनि नायक मद्दिन प्रवृत्ति पुराप^१ मयाग ।

तन मन वचन अनन्त^२ विधि वर्ग वर्गानन मयाग ॥२॥

१ प्रति पुराप—भा० । २ अनन्त—मो० ।

तावे पिय मजोग मे उपजन है दग हाव ।
अर वियोग मे दम दमा^१ दाघ्न विगृह मुभाव ॥३॥

^१ मद की दमा—मो० ।

हाव-नाम ।

नीना जीर विनाम भनि औ विच्छित्त^१ विनोव ।
विभ्रम विलविचिन वृहृरि^२ मोट्टाइन विव्वोत्र ॥४॥

^१ विक्षिप्त—ग० मा० । ^२ अट्टरि—मो० ।

चह्यो कुट्टमिन अर विहन^१ ललित वल्लो^२ दम हाव ।
निय के पिय सजोग मे उपजन महज मुभाव ॥५॥

^१ विरति—ग० । ^२ ललो—ग० मा० ।

हाव-लक्षण ।

रपट भेग भापानुवृरि^१ नीना मे रम हाव ।
मग्मभाव तन मन वचन रचि को रचन विनाम ॥६॥

^१ यग्यानि ररि—मो०, भागिन वं—भा० ।

नपु मडन विच्छिद्रन^१ मे मन जभिमान विमेष ।
विभ्रम यो जु प्रमाद नै^२ उरहे भूपन भेष ॥७॥

^१ विक्षिप्त—ग० मा० । ^२ प्रमाद नै—भा० मो०, ग० प्रति म पहेने "प्रमाद" पाठ था परन्तु हम्मन को महायना मे "प्रमाद" पाठ-मधोयन उयी इत्यन्तव मे हुआ है ।

विनाश्चिन दकचार भय मुदमद^१ रगरिम मान ।
मिने कपट मोट्टाइन मन वचन आन तन आन^२ ॥८॥

^१ मुदमुद—मो० । ^२ मन वच आनन गनि—ना०, मनहू वचन जान तन आन—मा०, मन वचन पै न मन जान—ग० ।

मन मे मुग्म मरट कपट प्रगट कुट्टमिन हाव ।
पिय मरोग विदशंन घहृ दग भीहनि के भाव ॥९॥

अपनी यो मिय लाव इत विहन आन तन आन^१ ।

मरिन मग्म रचना मनिन वग्मन मुनवि मुजान ॥१०॥

^१ विनज जान तन जान—भा० मो०, हाव विरति पहिचानि—द० ।

मोला-उदाहरण ।

राजपौरिया को रम राधे को बनाट माई गोरी मयुगाने मन्वजन की जनानि मे ।
टेरि बालो वान्ठ मो चर्ना जू धम चाहे तुम^१ बाहे वहे मूटन मुने ही दधि दान मे ।
मग के न जाने मये उदर उगने देव श्याम ममवाने^२ मे पकृरि बर^३ पानि मे ।
लुटि मयो इत मो इती नी^४ की विरोहिनि मे टीनी भट^५ भौह वा उनीयो मुगजानि मे ॥११॥

^१ तुम—भा० । ^२ वान्ठ ममवाने—मो० द०, वान्ठ मकृचानि—ना० । ^३ रीने—द० भा० मो० । ^४ इत ही न जान—ग० । ^५ पनी—भा० मो० ।

विलास-उदाहरण ।

सहर सहर सौंधो सीतल समीर डोलै घहर घहर घनघोरि^१ कै घहरिया ।
 भहर भहर भुकि भनीनी भर लायो देव^२ छहर छहर छोटी बुदनि छहरिया ।
 हहर हहर हंमि हंमि कै^३ हिडोरे चढै थहर थहर तन नमेसल थहरिया ।
 फहर फहर होन प्रीतम को पीत पट लहर लहर होत प्यारी को लहरिया ॥१२॥
^१ घनघोरि—ग० । ^२ चीर लाग्यो देह—मा० । ^३ हंमि हंमि कै—भा० मो० ।
 आली भुलायति भूष दं ई भुवि जानि कटी भननाति भरोरं ।
 चचल अचल बीच चलाचल बेनी बडी सो गटी चित चोरं ।
 या विधि भूलत देखि गयो नवने कवि देव मनेह के जोरं ।
 भूनत है हरियरा हरि को हिय मांभ तिहारे तरा रे हिरोरं ॥ १३ ॥
 भा० मो० प्रतियो मे यह छन्द नुटित है ।

विचित्र-उदाहरण ।

छूटे छवानि ली केम विगजत धार वडे तमनार हने म ।
 लोचन कज मे खजन से दुखभजन देव न^१ जे कहने से ।
 कुन्दन सो^२ तन जोवन जोति जवाहर मे पिय के सहने मे ।
 रग भरे तेरे धग यह^३ विलस बिनही गहने गहने से ॥ १४ ॥
^१ देखत—भा०, देगन—मो० । ^२ कुजनसी—मा० मा० । ^३ वधु—श्र०, भद्र—भा० ।

विभ्रम-उदाहरण ।

आई उठि मज न मुजान सग जागो निमि नीद न दिनहि लागी नीद न परति है^१ ।
 देव सुनै बोल न बुलाये यिन बोलि उठै वीरई मै^२ औरई की औरई धरति है ।
 हांमी^३ मिम रोद रोड मोतै उरहनी दे दे भूटे उरहनी देखे छतिपां बरति है ।
 जनगु न लागत अनोगी फुलदेव सीगी उमटे वमन पैन्हि ऊलट बरति है ॥१५॥
^१ नीद नहि लागी अथ नीदन परति है—श्र०, नीद नही लागी निमि नीद न परति है—
 गा०, नीद निदनेहि लागी नीद न परति है—भा० । ^२ ठांगेई मै—मा०, जीरई मै—
 ग० । ^३ दामी—भा० ।

किलकिचित्त-उदाहरण ।

धोव घाई घाई धाम आई नव वाम मिल मगी^१ मिम देव म्याम मार्ग रंगरानि है ।
 औचाहो^२ गेचि कै^३ निमक भग्नि अक प्यारी पागे^४ परजव गो नगव^५ जकुतानि है ।
 गाननि मे इतरानि^६ वाननि मे मनरानि भौहनि हंमाति अंगियानि म रिमानि है ।
 भारे वर भुरी उर वाम जुर भुरी^७ तन नाज पुरहुरी रम घुरी दुरी^८ जानि है ॥ १६ ॥
^१ मीर्मा—भा० मो० । ^२ औचवहो—ग० गा० । ^३ औच कै—भा० मो० । ^४ पाटी—
 भा० मो० । ^५ परजव मांम सवि—मा० मा० । ^६ दुतिगानि—भा० मो० । ^७ श्र० प्रति
 मे दूमरे इमनेम मे "दुतिगानि" पाठ मनाथा है । ^८ नुर भुरी—श्र० । ^९ रम मीरी
 घुरी—गा० ।

श्रीद्वैत-उदाहरण ।

मोहनी हा तुमही वृज भूपर मर रह्यो मर ऊपर चाम्पा ।
 चाट मौ मेननी मेन मन्वी तुम्हें^१ देख्यो मन्ही मुव रचन गम्पा ।
 वासम त्या न विरोचनी बोरनी जलरम्यावनी ना बरि जाया ।
 जान्या परे न विगग मुझाग^२ तिहागे जहो^३ अनुगग अनाया ॥ १७ ॥

^१ मनीन मा—ग० मा० । ^२ मुहाग विगग—त्र० । ^३ भट्ट—भा० मन्वी० मा० ।

विद्योक्त-उदाहरण ।

वाम तमाम वट निमि कान्हि की देव वसे घन या मन जाट ।
 लोपक कापक पक्ष^१ परे हन आवन भोगही भौहनि ओट^२ ।
 नैन सुरग नचाड^३ अचान गए^४ बरि तीयो वटाक्ष की चाट ।
 मान दिमान के गांव गडे लुटि प्रीनम माह की प्रेम की पाट^५ ॥ १८ ॥
^१ नाग के कोण पटाछ—भा०, लक्ष—भा० । ^२ लोपक काप वटाछ वजाव पर टन
 जावन भौहनि ओट—ग० । ^३ तरग निचाड—भा० । ^४ अचान गए—भा० । ^५ मानहु
 मान के गांव ही लुटिगे प्रीनम माह व प्रेम की पाट—भा० पाट—ग० मा० ।

धुट्टमित्त-उदाहरण ।

छनिया छुवन छदि जीरे होनि आनन की चदन मिलाय मनी बगनि टरनि है ।
 मुर की रगार्द पै रगार्द^१ कछु वैनन की नैनन की चिकनाई चीगुनि घरनि है^२ ।
 नागिवा मरोगि मुग मोगि नेकु नाही बरि चाहि चित प्रीनम की वाही पररनि है ।
 रव मुखमाग^३ मे वडनि भी तान निमा उमसि मुजानहि भुजान मे भगनि है^४ ॥ १९ ॥
^१ भुगार्द—ग० । ^२ रगार्द माह काटि छदि छाई तन अघग रग नैनन रगटय घरनि
 है—भा०, नैनन निगार्द चिकनाटय घरनि है—त्र० । ^३ बरं चरचरी चेत चित वाही
 पररनि है—ग० । ^४ मुजान पै मुजानहि भगनि है—ग० । भा० मो० प्रनिया मे पट
 छन्द मुटिन है ।

बिहृत-उदाहरण ।

बगीबट के तट निरट जमुना जन मे^१ मेननि बूबनि गभा मयिन व पुज म ।
 रगिन वगार्द आई वामुगी बगार्द पुनि मुनि बं^२ रही न मनि गनि मन लुज म ।
 चाति न गरनि धुन्दावन की गतिन बोच बिरन^३ नतिन ननी जतिन की गुज म ।
 देव दुगि जाय अनुनाय मुमुमिा मुन्वी कुमुमिन बकुन वदर बुन बुज म ॥ २० ॥
^१ बगी बट जमुना जो तट के निरट कहे—भा० । ^२ मुनि धुनि बं—भा० मा० ।
^३ सजन—भा०, बिरन—भा०, योजिन—श० ।

सलित-उदाहरण ।

चादिनी महन बंठी चादिनी के कोनुक का चादिनी मी गधा बिछी^१ चादिनी विगावरं ।
 चन्द्र की बन्ना मी दरना मी देव दामो नग फून मे दूबून परे^२ पतनि की मानरं ।
 हृत्न पुझाग के अमन जन भनवन चमरं चंदावा मनि मानिह मझारं ।
 बीच^३ जगत्तगि की हीरनि के हागनि की उगमगी जोतिनि की मीनिन की मानरं ॥ २१ ॥

१ छवि—म० । २ वीजि—मा० । ३ मुक्ता मुधारन रा माह मत्र भाररं—मा० ।
हाव भाव सजाग म' उपजत और अनर ।
तिन म सूक्ष्ममाग महि दम विधि वरनत एव ॥२०॥

४ गृगार म—ग० ।

इहि विधि दमो प्रवाग व हाव हान सजाग ।
अव दम्पति वी दम दमा वग्ना वीच' बियाग ॥२१॥

५ विहित—भा०, विचित—मा० प्र० ।

पिय बियाग म दस दमा हाइ दम्पनी माहि ।
जिनत तिनक तननि म एकी पल वन नाहि ॥२४॥

दस दसा-नाम ।

प्रथम बह्ना' अभिलाप अर चिन्ता मुमिग्न हाइ ।
नात वरनी गुनकथन फिरि उदग मु हाइ' ॥२५॥

१ वही प्रथम—ग० सा० । २ बहाइ—ग० मा० ।

प्रलाप अर उभाद कहि व्याधि जडत्व' वगानि ।
मरन बहत दमइ दमा कविवाविद जिय जानि ॥२६॥

३ अर जडता जु वसान—प्र० जडता व्याधि—भा० ।

तिनके-लक्षण ।

इच्छा जा पिय सग की मा अभिनाप प्रमान ।
पिय चिन्तन चिन्ता बहै' पिय मुमिरन वा ध्यान ॥२७॥

४ वरै—प्र० ।

पिय गुन वणन गुणकथन अर पिय विरह जनग ।
भनी वन्नु नागा लगे सा कहिय उदग ॥२८॥
बिरहिनि वीरी त्र' बर' सा प्रताप पहिचानि ।
वरन बहत जानै न कछु' मा उभाद वगानि ॥२९॥

५ जा री वन्दु—मा० ।

पिय बिरहजुर व्याधि कहि जडता जड हूं जोदो—
मरन मूरछा एर ही विरह दमा दम भाइ' ॥३०॥

६ मरन मो.ज एव' विरह वही दमा दम भाइ—मा० ।

अभिलाप भेद ।

धवनाल्पण्टा दरमन लाज प्रम करि भाष ।
हान परमपर पाँच विधि दम्पति क अभिनाप ॥३१॥

अभिलाप-उदाहरण ।

बाई अचानक आइ कहै' मनसाहन की बनिपाँ अनि मीठी ।
दव निहै मुनि मुन्दर का हरि दग्गन का मनु दत वनीठी ।
एव ही बार चक्या उचक्या' चिन औगिनि लागी मत्री मीठी ।
परि उद मन एव कथाविधि कथाविधि कथाविधि कथाविधि ॥३२॥

१ जानि बह्यो—भा० । २ नचकयो—ब्र० । ३ रूपही नैननि—भा० । ४ उमोटी—
भा० ब्र०, वतानि उमीठी—ग० ।

उत्कटाभिलाष-उदाहरण ।

मोहन रूप चक्षुषो चित मे हिन भोजन भूपन भांनि न भावनि ।
देखन बा गिन ही गिन गीन मधीन मो देख न जी की जनावनि ।
भूनि गयो मुटियान को खेन भरोखनि भांनि छाम गंवावनि^१ ।
वान गने न अबार सवार कि बाग्ब बार^२ विवार नौ जावनि ॥३३॥

१ भांनि वं डूम विनावनि—भा० । २ सु बाग्ब बाग्—ग० भा० ।

दरानाभिलाष-उदाहरण ।

बान्ह बटे वृषभान के ड्वाह हूँ येवन स्याग् पिछावनि धा वी^१ ।
भीनर भीन तै माभुहै नान की बाण विलोकि विनोवनि वाकी^२ ।
हेगे न देख मुखेरी धने दुख चेरी हूँ जाती चितौनहि यारी^३ ।
पौरि नौ जाह फिगे अबुनाइ जटा चटि घाट भगोया हूँ भारी ॥३४॥

१ याकी—ब्र० । २ बेगी वां पूछनि बान पिपा की—भा० ब्र० ।

सज्जाभिलाष-उदाहरण ।

मूरति जो मनमोहन की मनमोहनी के विर हूँ^१ विरकी मी ।
देव गुपान को बांनु मुने छनिया मियगनि मुघा^२ दिरकी मी ।
मीने भगोया हूँ भांनि मकं नहि नैवनि खान घटा धिरकी मी ।
पूनन प्रीति हिये हिरनी^३ निरकी निरकीन फिरि फिरकी मी ॥३५॥

१ मन हूँ—भा० भो० ब्र० । २ मियगनि मुघा छनिया—ग० भा० । ३ हरि वां—
ब्र० ।

प्रेमाभिलाष-उदाहरण ।

धीर्मी धिमें वृषभानमुना पं ही जाननि बान्ह त्रियो^१ बछु टोना ।
राह^२ वहाँ बग्मानं नै गी नदगाव चन्वो जव म्याम मरांता ।
गेरनि ही नि अघानर खीनि चिने चहूँ देव दिय^३ दूग कोना ।
मूल उट्यो उनभूनि^४ गयो मन भूनि गयो मव सेन विरोना ॥३६॥

१ त्रियो—भा० । २ बान्ह—ग० । ३ दिव्यो—भा० । ४ तन रवि—भा० ।

चिन्ता-नेद ।

दग्गनि के अभिनाप नं चिन्ता वट्टे अपार ।

गुण अगुण मगल अर विवन् चारि प्रवार^१ ॥३७॥

१ गुण मगल अर बह्यो विवन् चारि प्रवार—भा० ।

गुणचिन्ता-उदाहरण ।

मूपेहू नैन सग्ये न तयं जव पर्यं वही^१ जव चाहन हेगे ।
बान करे नहि बान नबेव विवान^२ गने अबुनात धनेगे ।
नाबेहि जान मिले उन के टन मोहि मिने मण^३ मेटन मेगे ।

मटा मनोरथ हीं इनको तो मिटै मन भेये मनोरथ तेरो ॥३८॥

^१ पैयै कही—भा० ब्र० । ^२ मजैव विकान—भा० भो० ब्र० । ^३ हिन—ग० ।

अगुप्तचिन्ता-उदाहरण ।

चित्त^१ कोटि कला उलटै-मुलटै पलही पल ज्यो भूग बागरि के ।

वहु तकं विलास चढ़ै चित्त वाम^२ पै देव सरप उजागरि^३ के ।

गति बक निमगही नाच करै गुन डोरि गहे गुनआगरि^४ के ।

नख नह लख्यो नटनागर सा दोउ नैन भये नट नागरि^५ के ॥३९॥

^१ ०—भा० मो०, वरि—ग०, रोरि—मा० । ^२ बाल-भा०, ग० प्रति मे दूमरे हस्त-
लेख मे मगोधन 'वाम' । ^३ उजागर—ब्र० । ^४ गुन आगर—ब्र० । ^५ नगनागर—ब्र० ।

सकल्पचिन्ता-उदाहरण ।

बछु और उपाय बरै जनि गी उन दुख भो मुख सा भरिबी ।

फिरि अन्त से धिन वन्त वमन्त सु आवत जीवतुहि जग्गी^१ ।

घन वीरन वीरि मे जाजैगी देव सुने धुनि कोबिल की डरिबी ।

जल डोनिहै और अबोर भगी सु हहा बरि वीर^२ कहा बग्गी ॥४०॥

^१ जीवत ही जग्गी—सा० । ^२ वीर—भा० ।

विकल्पचिन्ता-उदाहरण ।

सारि^१ नी खेलन जावानिय न नौआलिन के मत मे परती क्य ।

देव गुपानहि देखतिय न तौ या बिरजानन मे बरती क्यो ।

धापुगी मजुल और कीबालि सु बाल गी हूँ उर मे अरती क्यो ।

कोमल कूचि कं^२ बरैलिवा बूर^३ करेबन की बिरचे करती क्यो ॥४१॥

^१ पीरि—ब्र० मो० प्रति मे पहल 'पीरि' पाठ या परन्तु "प" की टेंडी रंग्य पर हर-
नान लगाकर "पीरि" पाठ—सशोधन हुआ है । ^२ कोमल बालिके—भा० मो० ब्र० ।

^३ कोमल कूच—मो० ब्र० ।

स्मरण-भेद ।

स्वद स्वन गोमाच मुग्गय कष्य वेवन ।

ब्रधु प्रनय सुमिरन रिपय मात्त्वव आठी वन ॥ ८२ ॥

स्वैद स्मरण-उदाहरण ।

दुगुर सा मिलि जात पसीजत अग मुग्गन चोनिन^१ पै ।

कवि देव बडू मुसकं मुलकं भनकं^२ उर प्रेम बनोलनि पै ।

हंमि बोले न बाल बिलोकं न आनिन भोरं^३ नही दुग^४ डोलनि पै ।

नलकं भोगिया पलकं न नये^५ भनकं जलदु^६ कपोलनि पै ॥ ८३ ॥

^१ चोनिन—सा० । ^२ उर कं—भा० मो० । ^३ रोरं—ग० । ^४ डग—सा० । ^५ सुनं—
ग० गा०, न लय पलकं—ब्र० । ^६ थमविदु—ग० ।

गानिका प्रा की जोग दिखे जयमुद्रिन मोचन बोग ममायति ।
 वामन बांदि उमाम भरं जय गरिमा देव कहा जवगधनि ।
 भूति गो भोग वह लवि मोग वियोग रिघी यष्ट जोगति मायति ॥ ८८ ॥
 १ उमग—३० । २ दिरं—ना०, गोट हिये—३० ।

रोमाच स्मरण-उदाहरण ।

हृयि हृयि हृयि मन्द विह्वेननि निप वगपि वगपि रम राचे चिन चोत्र है ।
 मुत्रनि मुत्रनि म्यामा म्याम^१ मुमिगनि देव पुत्रनि पुत्रनि उग उठन उगोत्र है ।
 फगनि फगनि वाम वाह कुहुगे नेनि मगनि मगनि मुने मैन मर मोग है ।
 द्रवनि छत्रनि छत्रि छत्रनि पत्रनि लत्रनि मत्रनि मुंदि मोचन मगोत्र है ॥ ४५ ॥
 १ म्याम म्याम—भा० मो० ३० ।

मुरभग स्मरण-उदाहरण ।

धरि वैठी ध्यान बरि वैठी गूढ ज्ञान ज्ञानि जिय ज्ञान मोह माह^१ मा हिय मदन है ।
 मूदि मूदि लोचन चित्तानि नोद मोचन व मोचन^२ मकोच मोच मचन^३ बदन है ।
 भूर्ति भूग प्यार जाम हाम ते उदाम देव देगि दानी दाम जाम पाम ते रदन^४ है ।
 कौन जाने मौन धरि को है जवगये जय राघे मुग आये जाये धारर बदन है ॥ ८६ ॥
 १ ०—ग० गा० मो०, मोह माह—३० । २ मु माचन—३० । ३ मचन—ग०
 मचन—भा० । ४ डग्न—भा०, "ठग्न" पर १—० मस्या डार वर रदन—३०
 मो० ।

वप स्मरण-उदाहरण ।

प्रेम के प्रयास आमवाम की परमेनि वा पृष्टि पृष्टि जानी पद्यनारी मने जनिवा ।
 वंती है कुंवरि^१ वामा बहिषे उतायी भयो^२ वाहू छछू वंनो वं बुबोव बोनो वनिवा ।
 गोरे न^३ विनामा भरि म्याम मुमिग काहि^४ बोननि त्रिनांनि न पीटनि न पविवा ।
 भांनि भांनि गोरे भयनाये दूग भारे देव वांनि वांनि उठे बुच वीर की मी वरिवा ॥ ८७ ॥
 १ वंन है कुंवर—भा० । २ वहा बहिषे मु वंमी अट—ग० । ३ माचने—भा० ।
 ४ वाहू—भा०, वाहि—भा०, गहि—ग० ।

धंवरं स्मरण-उदाहरण ।

मोहन की भूनि गो मोही जग मोहनी^१ मु मोहि मोहि महा मोह मो हिय मदादयन ।
 नीर भरे^२ नीतर मगोन फरवन ऐनी अधरुयी धेयिवानि उमा बटादयन ।
 आठिन की आन उर जाननी न जान आन^३ बगनि न वानही मयानही पदादयन ।
 गोनो^४ मुन मदन पे पट्टन^५ प्रहाम प्यारी^६ जेमे चद मदन पे चदन चटादयन ॥ ८८ ॥
 १ मन मोहनी मु—भा० । २ नीर नीर—भा० मो० ३० । ३ जानी नन जानी जान—
 भा० मो० ३० । ४ नानो—भा०, नोनो—मो०, मोहो—ग० गा० ३० प्रति मे पने
 "गोन" पाठ या परन्तु दू पा गान ह्यनाउ फेर कर "नीन" पाठ—नगोन हुआ है ।
 ५ बुडन—रानाउ फेर कर "पट्टन"—३०, पटन—भा० । ६ देव—भा०, वरि—३० ।

अधु स्मरण-उदाहरण ।

आई नहीं तन मे तरुनाई भई नहि स्याम के सग सजोगिनि^१ ।
 कीने सिलाई सखीघौ कहा सुमिरै धरि ध्यान जनौ जुग जोगिनि ।
 भोजन बास न हास हुलास^२ उसास भरै मनौ दौरष रोगिनि^३ ।
 आंखिन तै अँसुवा नहि सूखत एकही बार हँ बैठी वियोगिनि ॥ ४६ ॥

^१ मजोगनि—ब्र० । ^२ बिलास—ग० सा० । ^३ डोरे सु लाल बही गर सेलि है छाडि
 दिये जग के सब भोगनि—भा० ।

प्रलय स्मरण-उदाहरण ।

सूधेहू न खेल खेलि जानतिही कालिहू लौ काहे की^१ सयानी यानी बोलति है तूतरी ।
 आपु ही तें आजुही सयान मन सीखी सपी सारदा बि राधा के असीस सीस ऊतरी ।
 अधमुँदी अँखियनि^२ खोलति न बोलति न डोलति न साँस चित चल्पो^३ अद्भूत री ।
 कीने हरि भिन लीने बिरह दसा चरिन बैठी है बिचिन^४ रूप चिन की सी पूतरी ॥ ५० ॥

^१ खेलि एलि जानति ही वान्ह कुल जानति—सा० । ^२ नयननि—भा० । ^३ चाल्यो—
 भा० ब्र० । ^४ पचिन—सा० ।

साधारण स्मरण-उदाहरण ।

रजित महावर सो बज स चरन मजु यूजरी बजनि अजी वाननि जगी रहै ।
 अचर उचोहँ कुच सकुच सु लक लची^१ कचन सी देह दुति देव^२ उमगी रहै ।
 भूलती न भावती बी भाति रति रभा की सी सूधी सी सुधानिधि सी सौधे सो पगी रहै ।
 आंखिन न देखै तो सी आंखिन न लागे पल बडी बडी आंखिनि की आंखिन^३ लगी रहै ॥ ५१ ॥

^१ लीन लचकीली लव—अ०, सकुच लची सी जात—ब्र०, सकुच लची—मो० ।
^२ देह—मो० । ^३ आंखे ही—ब्र० ।

घाघरा घनेरो लांवी लटै लटे लाँव पर^१ काकरेजी सारी खुली अधपुली टाड वह ।
 गोरी^२ गजगौनी दिन दूनी दुति होनी देव लागति मलोनी गुह लोगन के लाड वह ।
 चचल चित्तीनि चित चुभी^३ चित चारवारी मार वार वैसरि^४ औ वैसरि की आड वह ।
 गोरे गोरे गोलनि की हँसि हँसि बोलनि की^५ बोमस कपोलन की जी में गडी गाड यह ॥ ५२ ॥

^१ लव पातरे पै—भा० मो० ब्र० । ^२ लोनी—भा० मो० ब्र० । ^३ चुभि रही—भा०
 मो० ब्र० । ^४ चित चोटी वाली मोट वाली वैसरि—भा० । ^५ हँसि हँसि बोलनि की
 गोरे गोरे गोलनि की—सा०, मृदु हँसि बोलनि की—भा० मो० ब्र० ।

गुण कथन-लक्षण ।

सुमिरि परसपर दम्पति रटति सरस रस पाणि ।

बिरह मथन^१ मन गुन कथन बहुवरनन अनुराणि ॥ ५३ ॥

^१ कथन—भा० मो० ब्र० ।

गुणकथन-भेद ।

हरप ईर्षा होइ जर वहियतु चित्त त्रिमोह ।

अपम्मार^१ अरु गुनकथन चारि भाति करि टोह^२ ॥ ५४ ॥

१ जस्मार—भा० मा० । २ कट्टिवोद—मा० ।

हृष-गुणकथन-उदाहरण ।

देव में मीम बमायो मनेह के भात मृगम्भद विन्दु के भाख्यो ।
 कचुकी में चुपर्योकरि चोवा^१ लगाय लयो उर मो अभिलाख्यो ।
 सं मग्नून गुहे गहने रम मूरनिवन्त मिगार के चारयो ।
 मांवेरे म्याम को मांवेरो रूप मे नैननि मे कजरा करि राख्यो ॥ ५५ ॥

१ कचुकी में चोवा लें में चुपर्यो—मा०

ईर्षा-गुणकथन-उदाहरण ।

कंमेहू कोउ करगे उपहाम पं^१ नीके ही नाचनि^२ नेह नदू ही ।
 ओगुन हाइ रिषो गुन देव ररी गुनजाल^३ लपेटि^४ लदू ही ।
 चापन मी घनम्याम को रूप अघानि नही दिन गन रदू^५ ही ।
 दूमगे वाज न^६ लोच की लाज भई वृजराज की भाट भदू ही ॥ ५६ ॥

१ हो—भा० मा० प्र० । २ वाचनि—मा० । ३ गुनवान—प्र० । ४ लपेटो—प्र०,
 मनीटि—मा० । ५ नदू—भा० मा०, प्र० प्रति में पढ़ने के "नदू" पाठ पर हस्तात फेर
 कर "रदू" पाठ मगोधन हुआ है । ६ वानन—प्र० ।

विमोह-गुणकथन-उदाहरण ।

रवानि गई इव ह्यां नि उही मधि रोकि सुतो^१मिनु के दधि दान को
 वें तो भदू वह भेंटी भुजा भरि नानो निचामि बछू पट्टचानि को ।
 आई निछानि के मन मानिक मोरम दे रम लें^२ अघरानि को ।
 वारी दिना तें हिय मे गडो वह दीठ बडो बडरी^३ अंघियानि को ॥ ५७ ॥

१ भारि वही मधि रोकी सुतो—भा० । २ रम मे—मा० । ३ बडो री बडो—भा०,
 प्र० प्रति में पढ़ने के "बडो री बडो" पाठ पर हस्तात फेरकर "बडो बडरी" पाठ
 मगोधन हुआ है ।

अपस्मार-गुणकथन-उदाहरण ।

ना निन टग्न टारे भांनिन मपन पन आंघिन लगे री स्याममुन्दर मनीन मे ।
 देगि देगि गानन अघान म अनूप रम भरि भरि रूप लेन मोचन अचौन मे ।
 एरी बहु को ही ही कही ही कहा करतिहा कंमे वन कुज देव देगिपत भौन मे ।
 राधे ही गदन बेंटी बहनी हों वान्ट वान्ह हा हा कहि वान्ह के कही हैं को हैं वीन मे^१ ॥ ५८ ॥

१ हा हा कंमे हैं कोहें वीन मे—भा०, हा हा वान्ह कंमे हैं कही हैं कोहें वीन मे—प्र०
 मा० ।

उद्वेग-तक्षण ।

रपनि करि करि गुन कथन भरि भरि रम जावेग ।
 पूरन प्रेम विषीग तें प्रगट उर उद्वेग ॥ ५९ ॥

उद्वेग-भेद ।

भली वस्तु नागा लगे नाहू भाँति न ओत^१ ।

त्रिविधि^२ उद्वेग सु वस्तु अरु देस षाल करि होत ॥६०॥

^१ न सोत—ग०, ना श्रोत—सा० । ^२ त्रै—भा० ।

वस्तु-उद्वेग-उदाहरण

वेप भये^१ विप भावे न भूपन भूपन भोजन काँ कछु ईछी ।

मीच^२ की साध न सोवे की साध न दून सुधा दधि मासन छीछी^३ ।

चन्दन त्या चितयो नहि जात शुभी चित माँहि चितानि तिरोछी ।

फूल ज्यो मूल सिलाय सम सेज^४ विछीननि कीच^५ विछी मनु बीछी ॥६१॥

^१ भनी—प्र० । ^२ मीठे—सा० । ^३ देव जू देखे करै वधु सो मधु दूध सुधा तिथि मासन छीछी—ग० । ^४ सलाय मी सेज—सा० । ^५ माँभ—ग० सा० ।

देश-उद्वेग-उदाहरण ।

घोर लगे घर बाहरिहू डर नूत पलास लगे पजरे से^१ ।

रगिन भीतिन भीत लगे लखि रग मही रन रग ढरे से^२ ।

धूम जटागरु धूपनि गी^३ निबसे नव जालनि व्याल भरे से ।

य गिरिकन्दर मे मनि मन्दिर आज अहो उजरे उजरे से ॥६२॥

^१ जरे पजरे मे प० ग०, लसे उजरे से—भा० मो० । ^२ महीतरन रग ढरे से—भा०, मही तल रग ढरे से—^३ धूम जटागरु धूमन के—भा० मो० ब्र०, धूम जटागरु धूपनि की—मा० ।

कालोद्वेग-उदाहरण ।

कन विनु दामर घसन्त लागे अन्तक से तीर ऐमे त्रिविधि समीर लागे लहकन ।

सान अर सार से चन्दन घनसार लागे खेद लाग रते मृगमेद लागे महकन ।

फाँसी से फुटाल लागे गाँसी से गुलाब अरु^१ गाज अरगजा लागे^२ खोवा लागे चटकन ।

अग अग आगि^३ ऐमे लागे है बेसरि नीर^४ थीर लागे जरन अधीर लागे लहकन ॥६३॥

^१ दव—ग० । ^२ गुलाब गाज ऐमे अरगजा—भा० मो० अर अतर अरगनि लागे—
ब्र० । ^३ जाँच—ग० । ^४ लागे नीर बेसरि के—ब्र० ।

प्रताप-सक्षण ।

दगने के उद्वेगराग हूँ बडे^१ विरह सन्ताप ।

उ उठिन चित प्रेम बिय पेगी प्रगट प्रलाप ॥६४॥

^१ उद्वेग हूँ वैठि—भा० मो० ब्र० ।

प्रलाप-भेद ।

सात भाँनि वडु वाद सा होन ज्ञान बैराग ।

उपदेस प्रेम मनाय बहूँ भ्रमनि आप^१ बड भाग ॥६५॥

^१ भ्रम निरधे—ग०, भवन श्रवन—मा० ।

ज्ञानप्रलाप-उदाहरण ।

देखे अनदेखे दुखदाई भयो सुखदानि^१ सुखत न आंभू सुख नोइवो हरे पर्यो ।
पानी पान भोजन मुजन गुरजन भूले देव दुरजन लोग तरन परे^२ पर्यो ।
साग्यो कौन पाप पल एरी न परल बन दूरि गयो गेह नयो नेह नियरे पर्यो^३ ।
होनो जो अजान तो न जाननी^४ इतीव विद्या मेरे^५ जिय जानि तेरो जानिवो मरे पर्यो ॥६६॥

^१ सुखदाई भयो दुखदाई—प्र० । ^२ तरन परे—भा० । ^३ दूरि गौ गहन यौं गुनह नियरे पर्यो—भा०, दूरि गयो गहन यौं नेह नियरे पर्यो—मो० । ^४ हो गी जो अजान ना न जानती—भा० मो० । ^५ परे—ग० मा० ।

बैराग्यप्रलाप-उदाहरण ।

तेरो कह्यो करि करि जीव गह्यो जरि जरि हागे पाँव परि परि सौन कीर्णो नै मष्टार^१ ।
लनन विलोनि देखे^२ पल न मगाये सब यौ^३ बन न दीनी नै छनन उछननहार ।
ऐमे निरमोही मां मनेह बांधि ही बंधाई जाप विधि बूझ्यो म्याधि थापा रिधु निराधार ।
ऐरे मन मेरे तै परेरे दुख दीने अब एणं बार दै वे तोहि मूदि मारा एकवार^४ ॥६७॥

^१ कीर्णो मष्टार—भा० मो०, कीर्णो तै मष्टार—“तै” हागिये पर—प्र० । ^२ निरा-
किचे को—मा० । ^३ देव यौं—प्र० । ^४ तोहि मागे दैवे तोहि एक बार—प्र० ।

बोर्यो वम विरद मै^१ बीरी भई घरजति मेरे बार बार वार^२ बीर बोज पैंठो जनि^३ ।
तुम गिनी मयानी^४ बिगरी अवेणी हौंही गोहन मे छाड्यो मोमो भौंदि अमैंठो जनि ।
भुलटा कलनिनि हीं वामर मुमति बूर वाह वे न वाम की निवाम योती गैठी जिन ।
देव तहई बँटियतु जहई बुद्धि बँठी हां तो बँठी हीं विकल बोज मोहि मिन बँठी जनि ॥६८॥

^१ बोर्यो है वमत विरही मै—भा० । ^२ बूटिन—ग० मा० । ^३ बोज पाम पैंठो जनि—
ग०, बँठी जनि—प्र० । ^४ तुमही मयानी बीर—भा०, तुम मय मयानी है—प्र० ।

उपवेशप्रलाप-उदाहरण ।

प्रेम पी पीर न जानी तै बीर जु छैत बटाछहूँ मो बहूँ छहूँ^१ ।

देव तुहो प्रमिहै हँमिहै बनि वागरी हँ रम रमि है रुरै^२ ।

आई तो मीग मियावा को पं मगी मुनि आपनीयो मनि रुरै^३ ।

मोही मो मोहो मो मोहो कहै अभै^४ नेव मै मोगी मो मोहो मो ह्ये है ॥६९॥

^१ कवि छहूँ है—भा० । ^२ रुरै ही रम रुरै—भा०, रम है रम रुरै—मो०, रम है रम
रुरै—प्र०, रम रुरी मो हुरै—भा०, को रवि मूचि रिमै—ग० । ^३ पिर—ग० ।

प्रेमप्रलाप-उदाहरण ।

वान्हमई कृपमानमुना भई प्रीनि नई उनई त्रिय जंजी ।

जाने को देव बिकानी गी टोर्न सगं गुरलोतन देनि अनंगी ।

ज्या ज्यां मगी बहराबनि^१ बाननि त्यो त्यो बरै बर वागरी गंगी ।

राधिता प्यागे हमारी मो गू बहि कालि की बेनु बजाई मै बंगी ॥७०॥

^१ गुरगवनी—भा० ।

संशयप्रलाप-उदाहरण ।

मोही में दे^१ किधी हौं उनही में कि हो अरु वे इक् मग वमेई^२ ।
 बाहरि भीतर मोही में देख्यो दगी दिमहू में चितोति ठएई^३ ।
 राहे की लाज लजाए री^४ को अरु गोकुल गेह सनेह पगेई ।
 देख्यो सुन्यो नहि दूसरो देव जित^५ जित^६ जाऊँ तित^७ तित वेई^८ ॥७॥
^१मवे—भा० मो० ब्र०, घ० प्रति मे दूमरी हस्तलिपि में “सेवे” । ^२नमेई—भा
^३भीतर हीतर हू दिहरी तर देख्यो सु ठौर ठएई—भा० मो० ब्र० । ^४लजाय पर
 ब्र० । ^५जित तित—भा० ब्र० । ^६चितवेई—भा० मो० ब्र० ।

बिभ्रमप्रलाप-उदाहरण ।

आजु भले गहि पाये गुपाल गृही^१ गहि लाल मुम्है गुन जालहि^२ ।
 होन न देऊँ वहुँ खलि बाल वमाऊँ हिये में मिलाई के मालहि ।
 थोखत वाहे न बाल रमाल ही जानति भाग भरे निज भालहि^३ ।
 सीचत नैन बिमालनि के जल बाल सु भेटति बाल तमालहि^४ ॥७८॥
^१गही—ब्र० । ^२गुन लालहि—भा० ब्र० । ^३निज बालहि—भा० मो० । ^४
 मालहि—मो० ।

निदोष प्रलाप-उदाहरण ।

वाहू की कोई बहावति हौ^१ नहि जाति न पालि न जातं गसीगी ।
 मेरोई हास करी विनि लोग ही की कहि देवजू वाहू हूँगी ।
 गोकुल चन्द की बेरी चकरी हौ मन्द हँमी मृदु फन्द पौगी ।
 मेरी न बात कबो बलि कोई मी बोगिमे हूँ^२ वृज बीच वनीगी ॥७९॥
^१कहा बलि हौं—भा० मो० । ^२बावरी हूँ—ग० । ^३मेरे विद्याल परी न कोई न
 कुजन मे गृह जाइ वनीगी—भा०, मग नगैन मां मांकी सुनै नहि गावने के प्रोग ।
 वनीगी—ब्र० ।

उन्माद-संक्षेप ।

श्रम विवन् भवि थर्व^१ बाढे विग्रह विपाद ।
 विन विचार आचार जहँ मो प्रगटै उन्माद ॥८०॥

^१उटै—मा० ।

उन्माद-भेद ।

मद विमोह अरु विमग्न वहि विच्छेप विछोह^१ ।
 पांच भानि उन्माद ये^२ जहा भूरि भय मोह ॥८१॥

^१विछोह विछोह—भा० । ^२वहि—भा० मो० ।

मद-उन्माद उदाहरण ।

धुनि धुनि मोग धुनि धुनि वामुगी^१ की देव धुनि धुनि चिन जु वरन चिन चागी मी ।
 दिन दिन^२ दूने दुग मूने मे मवन मुग लून विन ज्ञान वडो^३ मोह की कुठारी^४ मी ।
 रचि रचि रग मी उधरि नची अग छग को कने सु बाज^५ तोम लाज रचि शरी मी^६ ।
 बावगे हूँ बोने न^७ मप्रारनि न बोने^८ वृज बीचनि मे डोने भुन मोने^९ मप्रारनि

१ मुरखी—मा० । २ दुनि दुनि—ग० मा० मो०, टनि टनि—भा० । ३ बटी भा० द्र०, नव म्यान बटो—ग० । ४ कुल्हारी—ग० । ५ सुजान—ग० । ६ चाजहि विडारी सी—भा०, ताज मनि डारी भी—ग० । ७ बावरी लॉ डोरे ना—ग० मा० । ८ निचोरे—ग०, न रोरे—मा० । ९ बोरे—ग० ।

सोह-उन्माद-उदाहरण ।

जगतें पुत्रर काहूँ रावरी कानानिधान वान परी वावे कहुँ^१ मृजस कहानी सी ।
तवही तें देय देयो^२ देवता सी हंमनि सी खोभनि सी रोभन सी^३ स्मति रिस्तानी सी ।
छाही सी छलि सी छीड^४ लीनी सी छरी सी छीन जकीं सी टकीं सी लगीं पकीं यहरानी सी ।
बीधीं सी बंधीं सी विप बूडीं सी^५ किमोहनि सी बंठीं कह^६ बकति विरोवनि विरानी सी ॥७७॥
१ वावे कहुँ वान परी—मा०, वावे वान परी कहुँ—द्र० मा० । २ देवी—भा० ।
३ रोभन सी रोभन सी—भा० मो० द्र० । ४ छीनि—भा० मो० द्र० । ५ बडन—
भा० मो०, बूडन—हस्तान फेक्कर “बूडीं सी”—द्र० । ६ बाल—भा० ।

विस्मरण उन्माद-उदाहरण ।

मोहननाम तरे कहुँ वान बियोग की ज्वारनि मा तन डाडनि ।
लागि गई अंगियां चितचोगन भागि गई गुरु रोगकी गाडनि ।
और की और कहे मुने देव महा दुचिताई मग्गीनि के वाडनि ।
नाम तरे मुख ओर चिते रहे सींचि घरीच मैं घुंघट वाडनि ॥७८॥

विक्षेपोमाद-उदाहरण ।

खनि चलि मोमो पड़े खनि खलि होति कित विचनि विचलि चनि परनि उचवि चरि^१ ।
रुमि रुमि हंमि हंमि खोकि खोकि आवे^२ गरी गीकि गीकि जाइ छोह^३ छोहि छवि छवि छनि ।
वाहि गनि तनि^४ चित विनहि पठायो^५ आनु देव कहे रहे वीन विषा मा विषनि घनि ।
रिनही विषाण वं बचन रिनभूमं बीच बहनि बहवि विन वाज उठे चवि यवि ॥७९॥
१ नियवि यवि—भा० मो० द्र० । २ गीजि खीजि आवे—भा० द्र० रहे—ग० ।
३ मोहि छोहि—ग० । ४ तनि तनि वाहि—ग० । ५ विन त्रिय ठाय—भा० मा० ।

विछोह उन्माद-उदाहरण ।

आर राग रपनि विषा मैं बूडि बूडि वान पी की मुधि जाय जो की मुनि गोट गोट देनि ।
बोह भरी बुटनि रिमोह भरी मोहि माहि छोह भरी छनि पं करोट^१ रोड रोड देनि ।
बटो बटो वार लगि बटो बटो अग्निन तें^२ बटे बटे अमुका हिये मे मोड^३ मोड देनि ।
वान रिन वानम विरान बंठी वार वार वपु मे विषम^४ विष वीज बोड बोड देनि ॥८०॥
१ छनि पं छरीं सी—भा०, छनि पं छरीं सी—द्र० । २ बटो बटो अग्निन तें बटो बटो
वार मग—ना० । ३ त्रिय मे ममोय—भा० । ४ विरट—ग० मा०

व्याधि-लक्षण ।

अरि प्रनाम उनमाद नै बन्नर उपजे व्याधि^१ ।

उर मोहन मुन मपन बिनु वाडनि यपु मे व्याधि ॥८१॥

१ व्याधि—भा० ।

ध्याधि-भेद ।

तीन भाँति की व्याधि सो प्रथम होइ मन्ताप ।

दूजी कहियतु ताप तँ तीजी पद्घात्ताप ॥ ८२ ॥

सन्ताप ध्याधि-उदाहरण ।

हाहा ही करति मेरो कहुो कर भेरी बीर पवन जवन धर्म^१ धीर न धरति काम ।

देव धनस्याम बिनु जोवन दवा सो ज^२ ग्रीषम मही सो ही जरीये जाति आठो जाम ।

आयो वैगी मधु बधु कीनो कौन ध्याधिन को काल भई कोकिला छपा कर न होतु छाम ।

ताही को कँपाउ बस^३ करे जिन बालम वै रे जनि^४ कँपावे मो करेजनि कुटिम काम ॥ ८३ ॥

^१ धावँ—भा०, धँसँ—ग० । ^२ ताही को कँपावन बग—भा०, ताही को कँपावन बग—
मो० । ^३ अरे जनि—भा० ।

ताप ध्याधि-उदाहरण ।

साँझ को सो ब्रह्म भोर को मो करि राख्यो मुग भोर की मो काँति भाँति साँझ की मो भई आनि^१ ।

साँझ भोर को सो जम देखिये मलीन मल साँझ भोर चकवा चकोर की मो हिन हानि^२ ।

कँम करि कोमो कामा कही कँमो बगी देव कीनो रिपु कँसी वे सुपेसी की मु रँसी कानि ।

कँमी लाज कँमो काज कँसे धी मयी समाज कँसो घर बँसो वर कँसो डर कँमी कानि ॥ ८४ ॥

^१ साँझ की सो अब भई आनि—भा० कौन काति साँझ की भई है आनि—'कौन
हानिये पर—ब्र०, साँझ कँमी भोर भौई आनि—ग० । ^२ चनवाक की मो भई हिन
हानि—भा० ।

पद्घात्ताप ध्याधि-उदाहरण ।

सूधेही^१ मिवाइ कँ मनीनि ममुभाई होती देव स्याम सुदर के भौई समहाती क्या ।

विचरि विचारे वादि वैरी होते बधु कत^२ बिरह की वेदन विकल बिलप्यती क्या ।

जगमगी जोन्ह^३ ज्वाल जालन^४ मो जारती न जमजाई जामिनि जुगत^५ मम जानी क्या ।

वरंतिहाई बरंनिया को काल लेगी कूब सुनि लील की मो कनिवा कुंवरि कुंभिनानी क्या ॥ ८५ ॥

^१ सूधे द्वै—ग० भा० । ^२ विचरि विचारे बीच वैरीन मुकुत हागे—भा० भा० ब्र० ।

^३ जौन—ब्र०, जौनि—भा० । ^४ जारन—भा० भा० ब्र० । ^५ जुगत—मो० जुगन—
भा० ब्र० । केवल भा० प्रति म चरणा वा ब्रम १-२-४-७ है ।

जडता-नक्षत्र ।

ध्याधि बहत वाद विद्या जिन भोजन जिन नीर ।

निम दिन छिन दिन छीन हँ जड हँ रहन गरीर ॥ ८६ ॥

उदाहरण ।

कमल सुनै न जाये जडने^१ सुनै न तुम तव नै सुनै न स्यामा^२ मयिन के गोरा ।

लागा न जत्र मत्र नत्र पत्रत्र पगी वान परे देव मुने^३ मय चित चागा ।

रागगे^४ रग रमि रह्यो वाते रोम रोम छैन छेद^५ छानी नै दटाछिन के छोरा ।

लाग्योई रगन वाहि मालन पिहागे नह अद्भुत भूत जति पाँची भूत भोग ॥ ८७ ॥

^१ जियन—भा० मो० ब०, वरुनै—भा० । ^२ स्याम—ब्र० । ^३ देव मन—भा० मो०

४०, देव गुण—गा० । ५ गवने के—ब्र० । ६ छेद—भा० मो० ब्र० ।

मरण-लक्षण ।

दमम^१ अवस्था मूरछा वडूँ मरन ह्वै जात ।

नीरम जानि न^२ बरनिधे जीवन जनि मरमान ॥ ८८ ॥

^१ दमई—भा० ब्र० । ^२ मरन न नीरम—ग० भा० ।

उदाहरण ।

देवि के वसीचा लीं अनेनी जकुनाट जाई नागरि मनेली बेवि^१ हेरन हरि पगी ।

बुज पुज तीर तहां बुजन भंवर भीर मुग्द^२ ममीर नीरे नीर की नहरि पगी ।

देव नेहि वान गुहि मान लाई मायिनी गुमान को विरह विष व्यान की नहरि पगी ।

छोह भगी छरी मी छरीनी छिनि मांर पून छरी के छुवन पून छरी मी छरि पगी ॥ ८९ ॥

^१ कुटिन—मो०, बेनी—ब्र० । ^२ मोनर—ग०, मुत्र—मा० ।

देव जिहूँ मिनि^१ वं रम हाम प्रछन प्रचान निमा मुत्र मोई ।

भूरि के भाव ममूरि ने ज्ञावनि पूरि के प्रेम मदा मुत्र मोई^२ ।

ने रिछुरे दिन एक वहा वती वृष्टि वियोग ममुद्र ममोई ।

भोगी भुवान के देवे विना दुःख देवे जेवे दया दम मोई ॥ ९० ॥

^१ निहूँ मिनि—ब्र० । जिहूँ—निन—मा० । ^२ मोई—ब्र० ।

इनि श्री रम विलाते भोगीनाल नृप हेतवे देवदत्त वृते सकल वियोग दशा वर्णन नाम

सप्तमो विलाम ।

नायिका-भेदांतर ।

कहे नायिका भेद सब जाट अम के भाट ।

अन भेदांतर बहत ही मन प्राचीन मुनाट ॥ १ ॥

कंग मी नवना नवन नरनि नवन जनग ।

मुग्ग पांच प्रनार कहि जग मरजगरनि रग ॥ २ ॥

प्रगट घांसना अ प्रगट मदना वचना^१ टीट ।

गुन विचिना चारि रिधि मध्या निर पिय टैट ॥ ३ ॥

^१ मदना मदना—मा० ब्र० ।

रिप्र^१ प्रनाम प्रवीर रनि वन्द्य वन्द्यभा मारि ।

मविभ्रमा प्रोटा वरी चारि भानि निरपारि ॥ ४ ॥

^१ रिप्र—मा० ।

भानि भानि वरनी प्ररम नृपन नृनीया मारि ।

मो भेदांतर मो रगे वेरु भानि विचारि ॥ ५ ॥

मुग्गा-भेद । यय मधि उदाहरण ।

मंगी निगि छोग भोग जावन तो भोग नम जोग मे नगरेर नैन मोरन^१ जगाट वं ।

मेवनि भिन्ने मन गेन मे निरे न रन वचन^२ दृगचन देगावनि^३ दिगाट वं ।

गपट मे पिरं प्रेम उपरी परनि दीटि नारी करी नाह^४ टग मारन^५ जगाट वं ।

जैसे पट कोट ओट पेखनो प्रगट तानि अतर कपट गीत गादये सगाइ कै ॥ ६ ॥
 १ सोचत—सा० । २ अचल—ब्र० । ३ सु देखत—सा० । ४ कहै नेह—ग० ।

नवयोवना-उदाहरण ।

घूषट की घरिया मैं ताय घरयो मोन सो जघरि आयो खोनों मुख ओप अनुराग सी ।
 अति ही अनूप रस रूप उमडे से बडे नैन गडे जात चित चेटक सराग सी ।
 जोवन की वनव वनक मनि मोतिन सा तनक तनक पूरी पानिप तराग सी^१ ।
 गोरे तन सेत सारी नियरे निहारि देव पियरे^२ पुहुप दल ऊपर पराग सी ॥७॥
 १ तनक कनक पुरि यानप तराग सी— सा० । २ चपक—ग० ।

नवला-उदाहरण ।

जानि पर्यो जोवन जनायो है मनोज श्वर जगमगी जोति अग बाढत नितै नितै ।
 हरे हँसि^१ हेरि हरि लियो हरि जू को हियो हेरति हरिन नैनो हितू सा हितै हितै ।
 सीखी दिन धारिक तें तीखी चितवनि प्यारी देव कहै भरि दुग^२ देखति जितै जितै ।
 आछी उनमील नील सुभग सरोजन की तरल तनाइयत तोरन^३ तितै तितै ॥८॥
 १ हेरि हँसि—सा०, हरे हरे—ब्र० । २ दुग भनि—ब्र० । ३ तोरति—ब्र० ।

नवल अनगा-उदाहरण ।

गौने के चार चली दुलही गुरु सोगनि^१ भूपन भेष बनाये ।
 सील^२ सयान सिखायो सखीन^३ सर्व मुप सामुदेहू के सुनाये ।
 बोलिये बोल सदा हँसि^४ कोमन जे मनभावन के मन भाये ।
 यो मुनि ओछे उरोजन पै अनुराग के अकुर मे उठि आये ॥९॥
 १ गुरु नारिन—ग० । २ सील—ब्र० । ३ सर्व सिखयेरु—ग० । ४ अति—ग० सा० ।
 रंग लाल जरी पट घँघट ओट लसै मुकतासर की तरकयो^१ ।
 प्रभात प्रभाकर मडल में विधु मडल विव मुधाघर को^२ ।
 रदपाति चुनी चमकै हँसि बोलन देव कछू अधर फरकयो ।
 मनो वातिक पूग्यो की रानि मुधाघर मध्य मुधा धरि के ढरकयो ॥१०॥
 १ को फरकयो—ग० । २ विधु मुधा ढरकयो—ब्र० सा० ।

सलशरति-उदाहरण ।

देव कहे सावत^१ निसक अक भरी परजक मैं मयन मुग्गी मुपमा मचनि है ।
 साग न धिरति अग अग श्रैगिराति रँगराति न निरानि नियराति न चलनि है ।
 कोरे कर भारनि^२ उषारनि न अघर त्रिहारनि न रच पग्पचनि पचनि है ।
 भौहनि नचति वतियान विरचति श्रैवियान मैं हँसति^३ मगियानि मनुचति है ॥११॥
 १ सोचन—ब्र० मा० । २ जानिन—ब्र० । ३ रचति—ब्र० मा० ।

सिखा उदाहरण ।

औरन को गौनो होत विरह का जीनो^१ होत तुमही अगौनो दुम^२ देयन दिगार्द यह ।
 एहो मृगलोचनी मवोचनि ही सोनो तजि मोने गी गुधर^३ दृष्ट सोचन सुगार्द ब^४ ।

आयो इन कोने को छिपो न कोने कोने कोने धौ मिथार्द विप ऐमी विमुग्गार्द यह ।
जो को करि जोर^१ मन नीरो करि देव पी को ही को करि राग्यो धरि राग्यो ही र्वाद्

यह ॥१०॥

^१ गोनो—ग० मा० । ^२ होन—ग० । ^३ मिथारि—मा० । ^४ जोनु—ग्र० ।

मुरत-उदाहरण ।

बैरिनि मेगे विने गट्टे के कर छांडि उन्है विनि देगन तू दे ।
यो कहि के उचरी परजक पै^१ पुगि र्ही दृग वागि की बंदे ।
जोरन देड नही मुग सो मुग छोरन देह^२ न नीवी को पंदे ।
देव संबोचन मोचन मा मृगबोचनी लान के लोचन^३ मंदे ॥१॥

^१ पै—मा०, नै—ग० । ^२ देनि—ग० । ^३ लोचन लान के—ग० ।

मुरतान्त-उदाहरण ।

मनभावन के टिग तें उटि नागिनि भोग्ही भूपन हाथ निये ।
रंग नीन के भोतर भाजि परी भय नार भरी अनि साज हिये ।
मजनी जन तें दुगि वं कवि देव निहागनि^१ हाग विहार किये ।
निय धारहिहार संबागहि के^२ निग्वारनि^३ वाग केवार दिये ॥१५॥

^१ निवारनि—ग्र० । ^२ संबागनि ही—मा०, संबागहि की—ग्र० । ^३ निग्वागहि—
ग० ।

धाय धग मज्ही के^१ बहे ही रिनाय गयी टनकी मचि रेख्यो ।
ने निरदे हिग्दे^२ कर दे मोहि भोट^३ भई चिन घोट न पेरयो^४ ।
जाय भट्ट बम बन रिमामी के बीमी विमे विमवाम विमेख्यो ।
काह किये^५ मगियां दुगदाटन हीं न इन्है जगियां भरि देग्यो ॥१६॥

^१ धाय बमीधर हीं ने—ग०, धाय धग बम हीं के—मा० । ^२ ०—ग० मा० ।

^३ घोट—मा० । ^४ चिन घोटन मो नहि पेरयो—ग० मा० । ^५ बोहे कां ये—ग० ।

मृगया मान-उदाहरण ।

गकही रैनि मिनी पिय को निय दूमरे द्योग मग्ने मरको है ।
ह्यो उन^१ वातम वात लगे र्है मौनिल के दिग को दरको है ।
तात्र सची मृगबोचनि को चिन मोच संबोच भये मरको है ।
जोगिन तें निमने भ्रंमुग म्गिने अधरा निमने पग्गो है ॥१७॥

^१ मों उन—ग० । नेवन मा० प्रति मे चग्गो वा प्रम १-२-०-६ है ।

मप्या-भेद । आहृद्योचना-उदाहरण ।

जगन बगन मज्जा कोमन कर चरन मज्ज मुग्ग घग घग अमरनिरो ।
गानि को मग्द मगिधर म अधरन्वो वागियन पुनो की प्रभा अमरनि को ।
मज्जगुगप मो मग्ध मपुकर बहो को गर्न मुगध जीग मोधे ममरनि को ।
जोगिन के जूग दग दीगनि दुग्द देग्यो हेंमन ममूग जान पूने कमरनि को ॥१८॥

आहृत्ती अग्गारा नाटनमार्गेचिद कर^१ मृगे मुभादनि ।

कचुकी छोरी^१ उतै उबटवे को इगुर से अग^२ की मुखदामि ।
 देव सत्प की रामि निहारति पाँय ते सीस लां सीम न पाँयति ।
 हँ रही ठौरही ठाढी ठगी सी हँमै बर ठोढी दिये ठकुरायनि ॥१८॥

^१ बधू—ब्र० । ^२ योति—२० सा० । ^३ रग—ब्र० ।

प्रगल्भवचना-उदाहरण ।

हो गहि आनी^१ अचान इतं छन तँ रहो^२ जानति जाहि न बेसी ।
 देखति हौं उन कुज में कान्ठ सो आइ भिगाई तुरी जिय जंसी ।
 छाँह छुयो नहिं स्थाम सलोने की लाज की बात न होने की एसी ।
 कोमा कहा कहि तोमो उतँ रहि गेग कहा तू कहि बँसी^३ ॥१९॥

^१ गई आनी—सा० । ^२ तेरे हौं—सा० । ^३ रहि तू कहि क्या न कही फिरि बँसी—
 ग० ।

प्रगल्भवना उदाहरण ।

होरी मे आजु भिन्न रंग रोरी के^१ आपनो प्यो अपने वस के लै ।
 यां कहि देव मन्वी गहि गोरी को लाई है गोबुल गाँव की गँलै ।
 लाज की मारी सुनी पवहूँ न मु गावत^२ राग लगावत छँनै ।
 खेलत फागु नई दुलही दुग^३ अमिुन लीति उमामन लँलै ॥२०॥

^१ मु—ग० । ^२ जु गावत—ग० । ^३ उर—ग० ।

सुरतिविधि-उदाहरण ।

मांस लेति हँमनि रिमानि मृदु बोलति बलैया लेति राज उर जानि पर गई है ।
 घूषट उधारि मुय दयन न देति रदगेरन बनेयन की कानि^१ परि गई है ।
 देव मुखदानि मुखदाइनि को मगु देगि सौति दुयदाउन क हानि परि गई है ।
 तानि पत्त होऊ दुह पानि पग्बीन ग्य पानिप निहागिने की वानि परि गटै है ॥२१॥

^१ पानि—मा०

मध्या सुरत-उदाहरण ।

कत ते मग इवन नरै रति ओठनि दन नग मुग मोरै ।
 बचुरी छोरीनि छापी उदै भुकि भाँकि भुके जिभई भजभोरै ।
 गाननि में भोगिगानि घनी रिय बातनि में रग रग निचीरै ।
 नीवी वगे उवयै नहि देव हँमै गतराट प्रमै जन नारै ॥२२॥

मध्या सुरतात-उदाहरण ।

वारय उनीदी^१ वाग बारीनि दुइ वरति उन्नत उगेत्र नगरेयं गेव रगियाँ ।
 बचुरी वमनि उममनि ओ हँपनि लनि नीवी अघयुनी त्या लजाती लोच भँगियाँ ।
 अग^२ भँगिरान हृग्गन परगन मोनी^३ दूगिन अघर देमै मोतिदूरे विनगियाँ ।
 बाल के गिफारे तँ निगनि हाव भेज को बिहार भयो बालमनिहार भई गतिर्याँ ॥२३॥

^१ उनीधी—मा० । ^२ जागी—मा० । ^३ हृग्गन मोनी हृग्गन—मा०

प्रोढा-भेद विप्रप्रकास-उदाहरण ।

कुज में ह्वै गर्द नाँम दुहू को चलै चरचा रम की ननियाँ ० ।
 देव घटा जन वंद लगी बरमावन सावन की रनिया की ।
 प्यारी के घर निमक हँ सोए पिया तऊ देह डुली न निया की ।
 चपक बेली ५। वाँरनि मो रही नाह पँ छाह रँ छनिया की ॥२४॥
 १ पिया न दरँ न हली सुतिया की—सा०, पिया ने ५२ रला बतिया की—१०
 २ लागी—ग० ।

रतिकोविदा उदाहरण ।

नेरी अनवानि न अनय भरी आँगिन अनोयी अनयोली रोव ओले से करति है ।
 रोवनि रियानि रमि रमि मुमवानि मुरि मुरि मुरभानि मनुहरति हरति है ।
 एवं एष भव देनि सवनि मयक मुग्ने लव लहवाय परजन पँ परति है ॥२५॥
 प्यार डीट ईट वा अनूठो रम शोहन को भँडे मदि नाचन सराचन भरति है ॥२६॥
 १ बिगभाति—गा० । २ मनु हरति हरति है—ग० । ३ पीने भव भव देन—ग०,
 देनि—१० ।

परावत्तभा-उदाहरण ।

चिपुत उचाइ चार पाइति यपाननि भ्रँगोछनि अलित दोऊ अलव दुधाही के ।
 ललन मा लान ननरावनि तिनव मोनी नव ने निहारे न थके छवि छुधाही के २ ।
 मदन मताप भुजमूलनि समेटि भुज भँटन उटाय घर भोग वसुधाही व ॥२६॥
 गुदर गधार प्रज जीवन जघार देव राधे ते अधार गगे अधर सुधाही व—सा० । १ उटाय—
 १ भ्रँगोछन अलव दाऊ—१० गा० । २ नैन न थके सुधा ही व—सा० । ३ उटाय—
 १० गा० । ४ गदाही—१०, गदार—गा० ।

सविभ्रमा उदाहरण ।

दूह मुग चद ओर चिंवे चवार दाऊ चिने चिन चौगुनो चिन सतचान है ।
 हीनन हँगत विनु हीमी विहँमन मिले गाननि मे गान वान वाननि बिवात है १ ।
 प्यारी तन प्यारो पैगि देगि प्यारी पिय तन पियन न रात नवह न अनगान है ।
 देनि न सवन दगि देनिन थवन देव दगिये की फत देनि देगिन अपान है ॥२७॥
 १ अपान है—ग० ।

गुरत उदाहरण ।

गोधे की मुनाग जागपाम भरि भौन रह्यो भरत उनाग वाग वागन वमान है ।
 ववन भनित भगनिल रव विनिनी के नूपुर रनिन मिरे भनित गुरत है ।
 कुटन हला मुग मदन भनमलान भूतत दुकून भुजमून भरतान है ।
 भरत विहार बहे देव वाग वाग वाग छूटि छूटि जात गार टूटि टूटि जात है ॥२८॥
 १ भौग राग्या—गा० । २ भनन—सा० । ३ रनन—गा० ।

गुरतान उदाहरण ।

मोनी गिवरा हिय जानि वं प्रभाव दिग दोले करि पौनय के गान गुनन के ।

उतरत सेज तें^१ सखीन मुखदेनी थांगी बेनी लांबी लखे^२ लाज मरे^३ कुल फनि के ।
 दासी देवता मी पग दपति के दावि चली^४ दावे पग बसन दबाइ गुलफनि के ।
 लाल की चरन सेव आये दास देव रंगमगी अग जेव जगमगी जुलफनि के ॥२६॥
^१ उगतम सेज तें—ब्र०, उरतम सेज लें—सा० । ^२ खुने—ब्र० । ^३ मारे—सा० ।
^४ बलें—ब्र० ।

मध्या-भेद ।

मध्या अर प्रौढा दूवो तीनि भांति करि मानि ।
 धीरा और अधीर कहि धीराधीरा जानि ॥३०॥
 धीरा देह उराहनो मध्य अधीरा गारि ।
 रोदन गारि उराहनो धीराधीरा नारि ॥३१॥
 धीरा प्रौढ़ उदास रति तरजन करे अधीर ।
 रति उदास वरजन^१ करे प्रौढा धीराधीर ॥३२॥

^१ तरजन—सा० ।

मध्या धीरा-उदाहरण ।

केसरि सो जवटे सब अग बडे मुकतान सो मांग सवारी ।
 वार सु चपक हार हिये उर^१ ओछे उरोजन की छवि न्यारी ।
 हाथ सो हाथ गहे कवि देव सु साथ तिहारेई नाथ^२ निहागी ।
 हाहा हमारी सो मांची कही वह को हुती^३ छोहरी छीवर वारी ॥३३॥

^१ तरे अर—ग० । ^२ तिहारे ही आजु—ग० । ^३ कौन ही—ग० ।

मध्या अधीरा-उदाहरण ।

तन मन ओट पट घूँघट कपट प्योलि उर सो लगाय इनन पै अरसात ही ।
 धाकी अपनाइ अपने से हीं उपाय करि भय अपने न मपनहु न धिरात ही ।
 कंधी बेहि मेल छैल छतिया छिपाई जाके बिरह बीराने देव बोलत न बात ही ।
 प्यारे परजनहू मे मो मुख मयकहू मे^२ सासै लै ससन अरवहू मे अकुलात ही ॥३४॥
^१ घूँघट के तन तन—ग० । ^२ मो मुख मयकहू मे प्यारे परजनहू मे—ग० ।

मध्या धीराधीरा-उदाहरण ।

रावरे पायन ओट^१ ससै पग मूजरी वार महावर दारे ।
 सारी अमावरी की भसकं छनकं छवि धाधरे धूम घुमारे ।
 आहु जु आहु^२ दुहाहु न मोहू सो देव जू चद दुरे न भ्रंघ्यारे ।
 देखी ही कौन सो छैल छिपाइ तिरीछे हंसै वह फोछे तिटारे ॥३५॥

^१ पाय अनौठ—ब्र० सा० । ^२ जाहु जु जाहु—सा० ।

प्रौढ़ा धीरा-उदाहरण ।

धोतेहू जो कहे कटु बोल तो कटाऊँ जीभ छार^१ डारी भाँतिन की आंगू फनकनि पै ।
 गोन कहे वंगी मौति मो तो ठुराइन लियो हूँ वृज बालनि के भाउ फनकनि पै ।
 हूँ रही नजीवी हौं न जीवी दुचिनाई गहीं पो की प्रानप्यारी कहीं नीकी ललकनि पै ।

दूजो नहि देव देव पूजो रात्रिा के पग पलकन ल्याऊँ धरि ध्यान^२ पलकनि पं ॥३६॥

^१ भार—मा० । ^२ ध्याऊँ—मा०, नावों—ग० ।

प्रीड़ा अधोरा-उदाहरण ।

आजु गुपाल जू बाल बघू सँग नूतन नूतनि बजु बसे निमि ।
जागर होन उजागर नैननि पाग पं पीरो पराग रही^१ पिमि ।
बोज के चदन बोज खुने जहूँ ओछे उरोज रहे उर मे पिमि ।
बोनन बान लजान मे जान मो आये इतौन चिनौन चहूँ दिसि ॥३७॥

^१ परी—ग० ।

प्रीड़ा धीराधीरा-उदाहरण ।

भोट ददे उरटे अनभोट के भोट के भोट रहे भपनेहू ।
खेलन हू न इल^१ तजि लाज खुल न फुलेन के चपनेहू ।
ते प्रौग माहि^२ मिले हिय मे तुम होन हिरानो^३ अयानपनेहू ।
देव तुम्हें अपनाइ धनी तुम पं न भये अपने सपनेहू ॥३८॥

^१ दुई—ग० । ^२ माँह—मा०, भोजि—ग० । ^३ रहिरानी—ब्र० ।

जेपेष्ठा-कनिष्ठा-स्तक्षण ।

गर्ई हरई ए मवै पी के लघु गुरु प्यार ।
नहत जेपेष्ठा कनिष्ठा^१ निनमो सुमति उदार ॥३९॥

^१ कहन सु जेपेष्ठा कनिष्ठा निय—मा० ।

उदाहरण ।

मेलन आगि मिहीचनी खेल सु देव गुपाल जू भाति भली बो ।
आपनीये प्रौगिया मिहवाय नहै उनसो छपि जान गनी बो ।
भेटन धोये नबोट^१ क्यूहि डिगं डिग दूबत गूढ़ धनी बो^२ ।
नाउ ललै ललिना बो मला गहि ल्याये तहौ बृषभान लली बो ॥४०॥

^१ भेटन बांटन धोने—ब्र० । ^२ दूट धनी—मा० ब्र० ।

परकीया-भेद ।

कही अनूटा ऊढ़ फिरि परकीया डै भाति^१ ।
निनमै एव अनूढ अर ऊटा कही छे जाति^२ ॥४१॥

^१ जानि—सा० । ^२ भाति—सा० ।

गुप्ता और विदग्ध तिय और लक्षिना जानि ।
कुलटा मुदिना अनुमधन^१ भेद छयो पहिचानि ॥४२॥

^१ अनुगया—मा० ।

अनूदा-उदाहरण ।

बाल सतान मे बाल^१ को बाल गुन्यो कहुँ भग गगोन के टेरत ।
माहू कही हरि राधा यही कहि देव जू देगी इतं मुए पंग^२ ।
है तबउ पन एन नही बल नागन सी अभिभागन घेरत^३ ।

वाही निम्जहि नदकुमार परीक मी वार हजारक हेरत ॥४३॥

१ सात लतान मी बाल—त्र०, बाल लतान मे लाल—सा० । २ सुप्त फेरति—त्र
मुप्त फेरति—सा० । ३ वेरति—त्र० ।

अज्ञा-उदाहरण ।

उठी अकुमाय मुनी जव नेकु^१ कला परवीन तला बृजराज ।

विसारि दई वहि^२ देव तुम्हे अवलोकत ही जव लोक नी लाज ।

इत पर और अवाव अल्पो बरजे भरजे गुर लोक ममाज ।

कहा लमि लाल कछु कहिये इतनी सहिये सब रावरे काज ॥४४॥

१ वीन—सा० । २ कवि—सा० । वेवल सा० प्रति मे चरणो का त्रम १-२-२-४ है ।

गुप्ता-उदाहरण ।

वार सुहारन^१ भोरही ही पठई मति हीन मत को लोमायनि ।

घेरि के वार उपास्त ही अलि भोर अकोर बठोर बुदायनि ।

देव कहा कही देह दसा यह ही सकुची कुल सोग हँसायनि ।

सामुरे को उपहास करो^२ विसवास करो तुम^३ सामु गुसायनि ॥४५॥

१ उहारन—सा० । २ करे—ग० । ३ जिन—त्र० ।

विदाधा-लक्षण ।

कहत विदाधा बुविधि^१ कवि वाक विदाधा एक ।

त्रिया विदाधा दूसरी जानी बुद्धि विवेक ॥४६॥

१ विविध—मा० ।

भाक्विदाधा-उदाहरण ।

बुन्दावन चारन को चलत भवारे गोप सोलत केवार टेरि गैयन^१ के गहगहे ।

जात बछरा लं लोम^२ सरिक दुहाय दधि मवती लोगाई गीत गावती बहवहे ।

रोज पे अकेले आली नीद न परति मोहि पूसत गुलाव देव सेवनी महमट ।

बाहू सो कही न भोन भीतर वगीचा बीच आरंगो इहाँ सो पूल पावेगो पटपटे^३ ॥४७॥

१ गोपिन के—ग० । २ गोप—ग० । ३ लहलहे—ग० ।

क्रियाविदाधा-उदाहरण ।

पूरव पीन के गौन गुमाननि नद के मंदिर मे ठहवाई ।

गावती काम के मत्र मनो गन जत्रन तत्रन^१ सो गहवाई ।

देव ऐलार फलानि सो बुद्धि लसा को सर्व अवता बहवाई ।

आपने ऊँचे अटा चढ़ि बाल अनेली हूँ सात गुडी लहवाई ॥४८॥

१ मत्रन—सा० ।

क्षता-उदाहरण ।

आः ही भोर भली भई देव वसत निगा बगि बीच वगीचे ।

गूहे की सारी सलीट लग मुस चद हूँ^१ मुतानि मरीचे ।

पाँव सोहाय को लूटि जहाँ^२ खिन आखिन^३ प्रेम मुधा रस सीचे ।^४

। रोगी के रेश मु देखि परे मो छिपावति क्यों कृष कचुकी^१ बीच ॥८६॥

^१ लसें—ग० । ^२ सहा—प्र०, तहां—ग० । ^३ स्तिन ही गिन—सा० । ^४ गंने—ग० ।

^५ कचुकी—सा० ।

कुलटा-उदाहरण ।

। लाज की गांठि गई छटिकं नहि गांठि तें बाहू छूटै न छुटायै^१ ।

। बाटहू याम^२ लतें उदि। धावति साठी घरी सु टई है सुठायै ।

। ठान कुठान अठान, ठनी-ठहवीसी^३ रहै गुं सोम रठायै ।

ऐंठि जोठ उठी घोंषिया^४ अठिलानी फिरे^५ भुजभुज उठाय ॥११०॥

^१ झुटै न झुटायै—ग० । ^२ याम—प्र० । ^३ हठवीसी—प्र० । हटवीसी—मा० ।

^४ घोंषिया—ग० । ^५ वरे—प्र० ।

मुदिता उदाहरण ।

बारस सो रस मो घोंगिरात दसो घोंगुरी वर घजन^१ बादी ।

तोरति रयांरी मरोरति प्रौहनि मारति नाव विषा मनी बाटी ।

नीचीं को नाम न रागति सुधे कम उबसाट^२ कम फिरि गादी ।

षष्ट टारि^३ उपारि भुजचल कचुकी के बंद बांरनि ठाटी^४ ॥१११॥

^१ प्रजुति—ग० सा० । ^२ फनेहू कसाय—प्र० । ^३ टारि—ग० । ^४ गाडी—सा० ।

अनुयायना-उदाहरण ।

फगु सो चौस मुहाग मो मपनि राग सी रीक रिभावं मदा मुनि^१ ।

तंसियें जोवन भग^२ भयो रम रग तरग उठै तन सा मुनि ।

बोसि हिमी^३ मय खेलती दब बने नहि लाज बने नहि मा मुनि ।

आवन चैन मुही क्यों बहू बहगवनि मो टहरावनि^४ अमुनि ॥११२॥

^१ मुनि—प्र० । ^२ रग—ग० । ^३ साति हिमियां—ग० । ^४ टहरावनि—प्र० ।

दहि विधि मुक्किया परकिया वरनि कही गुनवन ।

सामान्या सहिते कृती जानहु ताहि अगत ॥११३॥

जानि कम वय भेद जे अरु भेदानर होन ।

तिनहु अनरभेद से ने।सवं भेदानि गोन ॥११४॥

^१ भेदानि सौन—प्र० ।

ये भव सामान्या सहित दुगिन व्यय गभो ।

उक्ति गविता मानवनी त्रिविध कहू कवि नाम ॥११५॥

^१ वरनि मुनाऊं भेद मव न्यारे न्याये । जाण—मा० ।

उक्तिगविता आठ विधि आठो प्रग मखें ।

कंहे नायिका भेद में प्रोवनादि प्रग नरे ॥११६॥

अग्रसभोगदु सिता-उदाहरण ।

काल्हि की गांठि उद्यो कर मांक न दब मरयो नरनें उर मान्यो ।

एव भनी भर्त्त्याप निहाई थी पर जो बदयो चदि न्याय ।

वचक विब्रनि चचु चुभावत कुज ने पिजर मे गहि गाल्यो^१ ।
हो मु कहूँ नहि राखि सकी सो कहूँ सुनि तेही परोसिनि पाल्यो ॥५७॥

^१ पाल्यो—सा० ।

यौवनगर्षिता-उदाहरण ।

जोवन लौं जुवतीन को जीवन जानत ही पं कहा मुख भाखो ।
ताहू को सबंस है पिय प्यारो सु न्यारो रहै न यहै अमिलाखो ।
आपने आनन^१ को रस प्याइ कं साल को रूप मुधा रस चाखो ।
लाजहि को परिहार करो हरि हार बरो हियरा पर राखो ॥५८॥

^१ आनन—अ० ।

कृपगर्षिता-उदाहरण ।

देलुरी दपन दौरि इत रचि मेरे सिगार^१ बिगारयो है ते हरि^२ ।
कचनहू रचि रच^३ रहै नहि मोतिन को मरि मो तिनको सरि^४ ।
देव रहेदवि सो छवि छाती की बोक मरो^५ मनिमाल ब्या धरि ।
भाल मृगमद किदु बनाइ कै इदु सी मोहि गुविद गये करि ॥५९॥

^१ रको आनन मेरो—ग० । ^२ ये हरि—ग० । ^३ कचन को रग चीर—ग० । ^४ मोतिन को सरि मोतन केसरि—ग० । ^५ कौक मरो—ग० ।

प्रेमगर्षिता उदाहरण ।

आजु गई हुती कुजन लौं बरसे उत बुद घने धन धोरत ।
देव कहै हरि भीजत देखि अचानक आइ गये चित धोरत^१ ।
पोटि^२ भट लट ओट कुटी के सपेटि पटी सो बटी पट छोरत ।
चौगुनो रग लह्यो^३ चित में चुनरी के चुचात सला के निचोरत ॥६०॥

^१ मुख मोरत—ग० । ^२ ओटि—अ० सा० । ^३ चढ़े—ग० सा० ।

गुणगर्षिता उदाहरण ।

आखिन मे पुनरी हूँ^१ रहै हियरा मे हरा हूँ सबे मुख लूटै ।
अगन सग बरम अंगराग^२ हूँ जीव तें^३ जीवन मूरि न पूटै^४ ।
देव जू प्यारे के थ्यारे न री गुन^५ मो मन मानिक तें नहि टूटै ।
और तिया सो ततो बतिया बरें भो छतिया भों छिनो जब छूटै ॥६१॥

^१ बजरा हूँ—सा० । ^२ अनुराग—ग० । ^३ जीवत—ग० । ^४ टूटे—ग० । ^५ अरी गुन—सा० ।

कुलगर्षिता-उदाहरण ।

पूछो बडे बवा नद को बस जसोमति माय को मायको मूमन ।
बोनत बात बढी^१ बन मे मन मे नृपमानु बवा सो अरुमत^२ ।
देव दबी हम नेह के नाते ननो पुरिया इन बातन जूमत ।
जीभ सम्हारि न बड़त गारि सु ग्वारि गेवारि हमै हरि नूमन ॥६२॥

^१ राढी—अ० । ^२ अनूमन—ग०, अनूमन—अ० सा०

शीतलपविता-उदाहरण ।

गोन गुमान उनै इत प्रीनि सु चादरि सी भँवियानि पैं वैंची ।
 दूटैं नकानि दुहू सुखदानि की देव सु हौं दुहू ओरतें ऐंची ।
 शील लटो तब हौं पलटो प्रगटो सु निरतर अतर वैंची ।
 या मन मेरे अनेरे^१ दलाल हूँ हौं नदलाल के हाथ सैं वैंची ॥६३॥
^१ दुहू ओरत पैंची—मा०, दुहू औरत पैंची—त्र० । ^२ सलोने—त्र० सा० ।

ब्रह्मपविता-उदाहरण ।

जोरि मरी सजनी जन बीजन^१ रीमन रीरु रिभावन की रिनि ।
 भापन भूपन^२ भेष विसेप सु^३ भोजन पान सुगधन की निधि ।
 देव सभाजन साज समाजन^४ साजन राज ममाजन की मिधि ।
 मामते की उपभोगसभोगनि^५ भोन में राख्यो लोभाय^६ भनी विधि ॥६४॥
^१ सजनी जन बीजन—मा० । ^२ भूपन भापन—ग० । ^३ विसेप न—मा० । ^४ साजन
 भाजन—ग० । ^५ सुभामिनि—ग० । ^६ मुत्ताप—त्र० ।

भूपनपविता-उदाहरण ।

लाल लमैं विनसैं जिय मे हूलमैं हियरा^१ कुच बीच क रोरी ।
 बठ लगे मनि बठ को मानिक^२ मोस को पूल दुकूलनि खोलैं ।
 भाल को विटु सोहाग को कवन बीर को हीर विलास कपोलैं^३ ।
 मोनी भयो नथ मे न घम्है दुरकी मो लग्यो अघरा पर डोलैं ॥६५॥
^१ हिय मैं—ग० । ^२ बटुना मनि बठ हूँ—ग० । ^३ दुकूल अमोद—ग० । ^४ कपोल
 विलोरी—ग० । ^५ मोत्री भयो मोमुर की मो लग्यो अघरा अघरा पर डोलैं—मा० ।
 प्रति मे चरणो का क्रम १-२-४-३ है ।

मप्या प्रौढा भावती त्यहि धीरादिव भेद ।
 मुग्धा लाज प्रधान निय मानम मे लघु सेद ॥६६॥
 उदाहरण सबके कहे भुविया नारि प्रसंग ।
 अब बरनत हौं नायक नमैं सचिव विट सग^१ ॥६७॥

^१ परकीया गनिका बहुरि देन नारि बहु रप—मा० ।
 ज्यों ही एनी नायिका त्यो ही नायक चारि ।
 कहि अनुकूल मु दस अरु^२ मठ अरु^३ घुष्ट विचारि ॥६८॥
^१ दरान धतुर—त्र० । ^२ फिर—सा० ।
 एव नारि अनुकूल अरु मवन नारि सम दस ।
 सापरध सठ सो दिन्वो उपरयो घुष्ट समस ॥६९॥

अनुकूल-उदाहरण ।

पीछे पीछे डोनेन है नामुहे हूँ डोनेन है सोनरु है धुंषट सो प्रानन पुतोन है ।
 पग पग मग मैं विद्याय प्रेम पावहे से भोगेहू न भूते देगा देगो मैं दुनोन^१ है ।

देव सखियानि की सिराईं श्रौषियानि सब निस दिन देति अनदेखेन दुखोत है^१ ।
 इदुवदनी के नीके इंदु से वदन श्रमविदुन^२ गीर्विद^३ अरविदन^४ सुखोत है ॥७०॥
^१ दुखोत—ब्र०, सुखोत—गा० । ^२ देखि देखि निसदिन अनदेखेन दुखोत है—ग० ।

दक्षिण-उदाहरण ।

बोलि बोलि भीतर तें खोलि खोलि घुंघटन मन के मल्लोल जाल, भेटत फिरत है ।
 केसरि गुलाल^१ मुख भाड़े^२ बिनु छांड़े तहाँ आड़े, उर आनंद समेटत फिरत है ।
 नीबी गुन तोरत है कचुकी बिछोरत है चचन लं कुचन अपेटत^३ फिरत है ।
 फाग मिस देव अनुराग भरि भौन^४ रह्यो भुंजा भरि भासिनीनु, भेटत फिरत है ॥७१॥
^१ गुलाब—ग० सा० । ^२ चपेटत—ग० । ^३ अनुराग भरी हिये हरी भौन भौन—गा०,
 अनुराग भरि राग करि भौन भौन—ग० ।

सठ-उदाहरण ।

नीरथ चरन सोन अरुन^१ दुबूल देव रग को^२ रतन वासी सेव-बधु^३ पल है ।
 माया की अवधि हास मोहे मनु मयुरामु देख्यो मैं न कासी को प्रवासु मो अमलु है ।
 शीम मनिकरनी की सोहति^४ निभाग बेनी रावै अब अतिक न द्वारिकाहू पल है ।
 तो मुरनरगिनी के सग अपराधु कंसो अद्भुत भयो नैन पुष्कर^५ मै जसु है ॥७२॥
^१ आनन—गा० । ^२ मोरवध—ग० । ^३ मोहति—ब्र० सा० ।

धूट-उदाहरण ।

आये ही भासिनि भेंटि कुरी^१ लगि फूल धरे अनुकूल उदारै ।
 केसरि जानि^२ तुम्है^३ जु मुहागिनि आसव लं मुख सौ मुख डारै ।
 कीन्ही सनाथ ही माय मया करि ये इत को उतको न बिचारै^४ ।
 शोय अनान मृगी^५ तुम ली अबला नन को अब^६ सानन मारै ॥७३॥
^१ कने—गा० । ^२ जाति—ग० । ^३ मो बिनु को इतनी जु विचारै—ग० । ^४ सवी—ब्र०
 गा० । ^५ जब—ब्र० गा० ।

नम सचिव ।

नम सचिव निनको मया ताहू शिविवि यमान ।
 पीठ मरु^१ विट दमरो और विदूषक जान ॥७४॥
 पीठे मरु अति ईट चित विट बस चतुरै बसीठ ।
 उपहासो मो विदूषन मान भनावन ढीठ^२ ॥७५॥
^१ गन चतुर—ग० । ^२ विदूषकहि म्यानम भवत टीठ—ग० ।

पीठमरु-उदाहरण ।

इंगुन मो गग गडिन बीच भगी अंगुगी अति कोमलताडिन ।
 वदन विदु मना दमरे नन देर चुनी चमरे उगे मुमाडिन ।
 वदन नन्दबुमार निहारै^१ गाधे बहै ब्रज की टपुराडिन ।
 नूपुर मित्रि^२ मनु मनोहर जावक गजिन बज मे पाडिन ॥७६॥

^१ मजत—गा० ।

विट-उदाहरण ।

१ बंटी कहा धरि मीन भटू गे मीन तुम्ह विनु नामन मूनो ।
 । चानक लो तुमहो मरि^१ देव खेवर भयो चिनगी करि चूनो ।
 । मांभ मोहाण की मांभ उदो^२ करि गीति भरोजन कोवन^३ सूना ।
 पावम तें उठि^४ वीजिये चंत अमावम नें उठि वीजिये पूनो ॥७३॥

^१ गटि—द्र० मा० । ^२ नदी—मा० । ^३ बल—मा० । ^४ त्वलि—द्र० मा० ।

विद्रूपक-उदाहरण ।

मानो कह्यो मु भनी कनी^१ मामिनी भावते मो न कह्य परिहो ।
 तुमी उमाम लं ऐमा कुवोन जु ऐमे कह्यो सु लह्यो^२ परिहो गो ।
 देव न मानति है मुगनयनी पै आनु की रंन रह्यं परिहो ।
 पारिहो गो मन्धियान निलं धौसियान प्रवाह बह्यो^३ परिहो गो ॥७४॥

^१ कह्यो—द्र० । ^२ मु कह्यो—द्र० । ^३ बह्यो—द्र० ।

७८ मे ८४ सख्या के छन्द ग० प्रति मे श्रुटित हैं ।

मानभोचन-उपाय ।

। माम दाम अरु भेद अरु^१ प्रनति उपेक्षा भाइ ।
 अरु प्रमग विभ्रम ये मोचन मान उपाइ ॥७६॥

^१ पुनि—मा० ।

तिनके लक्षण ।

माम छिमापन सो कह्यो दानादिव सो दान ।
 भेद सती ममना मिले प्रनति नम्रता जान^१ ॥८०॥

^१ मान—द्र० ।

वचन अन्वया अर्थ जहें मो उत्प्रेक्षा गीनि ।

मा प्रमग विभ्रम^१ जहें अक्स्मान सुन्द भीनि ॥८१॥

^१ विभ्रम—द्र० ।

माम उदाहरण ।

आपनोई अपमान कियो पहिरायवे को मनिमान भोगाई ।
 लं मिलई मिम मोकुमती^१ करिपाइ परेहू न प्रीनि जगाई ।
 । केनि कौनिक वानें कगी^२ कवि देव तऊ नहि प्रेम पयाई ।
 । आनु अचानक आइ लना डरवाट के^३ कामिनी बटनगाई ॥८२॥

^१ मु गगी—सा० । ^२ केनि कौन बुनावे कही—गा० । ^३ उर चापि क—मा० ।

दगन ।

चित्र स्वप्न प्रत्यक्ष करि तिनक दग्गन सीनि ।

मीन भाति तिनके धवन देग काल भगीन^१ ॥८३॥

^१ गभीन—द्र० ।

चित्रदर्शन-उदाहरण ।

न्योते गई वृषभान लली ललिता के जहाँ पति प्रीति^१ पडो है ।
 भीति मे प्रीतम देखे लिखे नवला के हिये नव लाज बढी है ।
 आंखिन भोजी-सी अग पसीजी-सी छोमन छोजी-मी मोह मढी है ।
 चौकी चकी ससकी न सकी चित्त मित्र की मूरति चित्र^२ चढी है ॥८४॥

^१ नव प्रीति—सा० । ^२ चित्त—ग० सा० ।

स्वप्न-दर्शन-उदाहरण ।

घाद कं भव मे सोई निसक हूँ पक्ज-सी अँखियानि भ्रवाभकी^१ ।
 त्यौं सपने मे लखे अपने प्रिय प्रेमपने छवि ही की छकाछकी ।
 ठाढे ही ठाढे भरी भुज गाढे^२ मु बाढी दूह के हिये म सकामकी ।
 देव जमी रतियाहू गई^३ न तिया की गई छतिया की चकाचकी ॥८५॥

^१ छकाछकी—ग० । ^२ बाढ परी भुज ठाढे—र०, भरी भुज ठाढे—सा० । ^३ जग
 —ग० ।

प्रत्यक्ष दर्शन-उदाहरण ।

माये मनोहर मोर लसै पहिरे हिय में गहिरे रंग हारनि ।
 कुडल मडित गोल कपोल मुधा सम बोल^१ बिलोल निहारनि ।
 सोहति री कटि पीत पटी मन मोहति भव महा पग धारनि ।
 सुन्दर नन्द कुमार के ऊपर वारिये काटिक काम कुमारनि ॥८६॥

^१ बोल—सा०

द्वेषध्वन-उदाहरण ।

साँवरो सुन्दर रूप अनूप विसाल रसाल बडे बडे बँन री ।
 या बन आवत गँपन^१ ले नित देव दिखैपन को मुख दँन री ।
 मैं हूँ मुनी सोवहा वहीँ साज की बात कहूँ सखि तू कहिये न री ।
 या जग बचक देखे बिना दुलिया अँखियानि न रचक बँन री ॥८७॥

^१ गोपनि—सा० ।

कालध्वन-उदाहरण ।

बरजो जननी गरजौ गुरु वधु सो हौं कछुवे न बिसेविहौंगी^१ ।
 बल लोग रिखाहु सरीव हँगो बिन पँन^२ कछुलखि लेविहौंगी^३ ।
 नित ही इन आवति है सखि स्वाम प्रभान समे पल^४ पेविहौंगी^५ ।
 कबहूँ तो कहूँ अब देव उन्हें अपनी झँनिया भरि देखिहौंगी^६ ॥८८॥

^१ बिसेलि लहौंगी—र० । ^२ प्रेम—मा० । ^३ लेवि लहौंगी—र० । ^४ पग—सा०, द्रवि
 —ग० । ^५ पेवि गहौंगी—र० । ^६ देखि रहौंगी—र० ।

रचनाध्वन-उदाहरण ।

आवत है धनदयाम बने इत अबर मे चपना की मरीचि है ।
 मोहत मोरपछा धरे सीध गरे बनमाल मनोहर बीचि है ।

पानिप रूप अनूप प्रवाह हिया भरिकं भ्रोगिव्यान उलोचिहै ।
जोवन कीव सुधा^१ बरमाइ के यौवन की बसुधा सब सीचिहै ॥८६॥

^१ जीवन की बरमा—३० ।

यहि विधि दरसन श्रवन करि सुमिरे विधि हरि रद ।

पार लहनि को बरनि के या साहित्य समुद्र^१ ॥८७॥

^१ या विधि सप्त समुद्र—सा० ।

अपनी बुद्धि ममान मैं बरनि कह्यो रम सार ।

रस विलास रस रूप नृप भोगीलाल उदार ॥८९॥

जोगीदाम नंदन भुवाल भोगीलाल को बिसाल जल जाल है प्रताप अति अनंदर ।
धीनर दखि दाव दावानल वान नीर नीर भरनि^१ पूरे मिथुक छहर^२ कदर
मानी मनमय मन मयन सुरूप मानिनीनु मानि सिंधु को मयान^३ मुदित मंदर ।
देवतमहू नयो न साह सुलतान ज्यों सराहै सुलतान सुलतानपुर पुरदर ॥९२॥

^१ बारि भरनि—३०, नीव भरनि—सा० । ^२ छनि—३० । ^३ प्रथान—३० ।

सनन^१ बसंत पाँचै चहुँ ओर चंत नाचै होते लगौ बैरिन के भौन^२ भये भममी ।

बाढ़ी अखतीज सी अमाढ़ी अनबीज खेत दान दरमावनी सरय राखी रसमी ।

दीपमाला साधुन असाधुन अमावस सु मानति सराष बैरी बहु हूँ निगसमी ।

जियो जुग जोगीदास जू को लाल भोगीलाल जाके द्वार सदाही विराजै विजै दममी^३ ॥९३॥

^१ संतत—सा० । ^२ बैरिदू के मान—सा० । ^३ द्वार राजति सदाही विजै दसमी—३० ।

संबत सत्रह से बरप और चौरासी^१ जान ।

रम विलास दममी विजय पूरन सकल कलान ॥९४॥

^१ तिरामी—गं० सा० ।

इति श्री मूप भोगीलाल हित बानी देव प्रकास रस विलास शृंगार रस नायिका नायक
हाथ भाव बसा हूती देश वर्णनी नाम अष्टमो विलासः ।

सुमिल विनोद

भूमिका

देवदत्त अनुपपन्न कृतियों के साथ "सुमिल विनोद" का नामोल्लेख बहुत पुराने समय से होता आ रहा है। कहा जाता है कि आज से प्रायः सौ वर्ष पूर्व मिथत्रयुओं के सम्बन्धी, गधौनी, जिला सीतापुर, के प्रसिद्ध काव्यरसिक श्री ब्रजराज जी ने इस ग्रंथ को स्वयं नहीं देखा था। मिथत्रयुओं ने "मिथत्रयु विनोद" में (पृष्ठ ५६७ पर) स्वर्गीय पंडित कृष्ण बिहारी जी मिथत्र ने "देव और बिहारी" में (पृष्ठ १६ पर) तथा देव काव्य के आनुनिक व्याख्याता डॉ० नगेन्द्र जी ने 'गिरगिह मरोज' के माध्य पर अपने शोध-ग्रंथ "देव और उनकी कविता" में (पृष्ठ ३६ पर) "सुमिल विनोद" का उल्लेख किया है। फिर भी इस कृति की कोई हस्तलिखित प्रति आधुनिक समय में देखने में नहीं आयी थी।

गौभाग्य से इन पत्तियों के लेखक को "सुमिल विनोद" की एक प्रति का विवरण नागरी प्रचारिणी मभा, काशी, के तत्त्वावधान में सचार्थिन "मध्य प्रदेश की गोज रिपोर्ट" को अध्यापक अन्नरामिन पाहुलिन में देखने को मिला। रिपोर्ट में इस ग्रंथ का नाम "सुमिल विनोद" दिया गया है।

मभा की ओर से जिन महानुभाव ने यह प्रति देनी थी तथा उनमें विवरण दिया था, वह भी उस समय मभा में ही थे। उनमें पृष्ठों पर जान हुआ कि किसी को इस प्रति का मिलना तो दूर रहा, इतने दर्शन का पाना भी दुस्तर कार्य है। बाद में प्रति के लिये यत्न करने पर इन गज्जन का बचन ही मलय प्रमाणित हुआ। इन घटना के प्रायः एक-दो माह के भीतर, एक सर्वथा अपरिचित गज्जन मेरे पास आए, जो देव के पाठ पर कार्य करने को दृष्टुं थे। अपनी उपयोगी सूचना लेकर बचन समय एक पत्र बह मुझे देने गये कि कदाचित् इतने निहित सूचना मेरे किसी उपयोग की हो। पत्र बीकानेर के श्री अणरचन्द्र जी नाहटा का था, तथा उनमें नाहटा जी के अग्र्य जैन प्रपात्रय में विद्यमान देवदत्त ग्रंथों की हस्तलिखित प्रतियों की सूची थी। सूची में "सुमिल विनोद" नाम था। कहना न होगा कि "सुमिल विनोद" की इसी प्रति का उपयोग इस ग्रंथ के पाठ-अपादन में किया गया है।

ग्रंथ की प्रामाणिकता

जब देव द्वारा 'सुमिल विनोद' की रचना होने का प्रथम प्रमाण है कि इस ग्रंथ के विभिन्न विनाद मंत्र अध्यायों के अंत में देव का नाम रचयिता के रूप में आया है। बांग्ला

मे इस कवि ने अपने ग्रथों की प्रामाणिकता की समस्या स्वयं ही बहुत कुछ सुलभा दी है क्योंकि इसके प्रायः प्रत्येक ग्रथ में इसी कवि के किसी न किसी अन्य ग्रथ के समान छंद अवश्य मिलते हैं। इसी प्रकार "सुमिल विनोद" में तथा देवकृत "प्रेम चन्द्रिका", "सुखसागर तरंग" एवं "भवानी विलास" में समान छंद मिलने से भी "सुमिल विनोद" देव की ही रचना प्रमाणित होती है। "सुमिल विनोद" में तथा इन उपरोक्त ग्रथों में उदाहरण छंदों के अतिरिक्त लक्षण दोहे भी समान मिलने के कारण इस ग्रथ की प्रामाणिकता असंदिग्ध हो जाती है। इस ग्रथ में समान लक्षण दोहों तथा उदाहरण छंदों के अतिरिक्त देवकृत अनेक छंद ऐसे भी हैं जो देव के अन्य ग्रथों में नहीं मिलते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि "सुमिल विनोद" कवि के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति द्वारा कवि की ही विभिन्न रचनाओं से तैयार सकलन न होकर स्वयं कवि द्वारा प्रणीत स्वतन्त्र ग्रथ है।

ग्रंथ-परिचय

"सुमिल विनोद" का आकार मध्यम कोटि का है, अर्थात् यह "रस-विलास", "सुख-सागर तरंग" अथवा "भाव-विलास" के समान न बृहत् है, न "देवचरित्र" अथवा "देवरातक" के समान संक्षिप्त। इसमें कुल ८ अध्याय हैं, अध्यायों का नाम अन्य ग्रथों के समान "विलास" न होकर "विनोद" है। संपूर्ण ग्रथ में कुल २७६ छंद हैं। उपलब्ध प्रतियों में अंतिम "अष्टम विनोद" में केवल ११ ही छंद मिलते हैं। यही पर प्रतियाँ खंडित हैं तथा नवरसों में शृंगार के विस्तृत वर्णन के अतिरिक्त शान्त तथा वीर रसों का ही वर्णन यहाँ तक हुआ है अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि इस स्थल के आगे भी कम से कम दस-पंद्रह छंद और रहे होंगे।

"सुमिल विनोद" का मुख्य विषय रस-निरूपण है, यद्यपि नवरसों में शृंगार-रस का वर्णन विस्तार से किया गया है। इसी के अंतर्गत नायक-नायिका भेद का विवेचन प्रधान रूप से हुआ है। कवि ने ग्रथ के अन्तिम भाग, केवल "अष्टम विनोद", में वीर आदि शृंगार-रसों का भी वर्णन संक्षेप में किया है।

आश्रयदाता

देव कवि की यह कृति हिमातुल्ला खान नामक किसी धनपति अथवा राजा को समर्पित है। यह हिमातुल्ला खान कौन थे, वहाँ के शासक अथवा निवासी थे अथवा उनका समय क्या था?—अतस्मात् इतना ही मालूम है तथा इतिहास के विस्तृत गभीर सागर से, सर्वज्ञ-सूचिका के सर्वथा अभाव में, इन सूचनाओं का प्राप्त करना सरल कार्य नहीं है। फिर भी आशा है कि भविष्य में इनके चरित्र, निवास-स्थान आदि पर अधिक प्रकाश पड़नेगा।

सम्पादन-सामग्री की बहिरंग परीक्षा

"सुमिल विनोद" की केवल दो हस्तलिखित प्रतियाँ देखने में आयी हैं। इनका विवरण इस प्रकार है—

१ अ०—अमर जैन भंडार, बीकानेर, राजस्थान, की प्रति। इस प्रति के अन्त में प्रतिलिपि-भावत् नहीं है नयापि त्रिम "प्रेमतरंग चंद्रिका" की प्रति के साथ यह प्रति जिल्दबद्ध है

उसकी पुष्पिका इस प्रकार है "श्रावण बुद ३० हरियाली की सम्पूर्ण लिपि गई सवन् १९४४।" इन दोनों प्रतियों का बागज भी पुराना, हाथ का बना तथा मटमैला है। "मुमिल विनोद" की अन्तिम पुष्पिका से यह ज्ञात होता है कि किन्हीं धननाथ जोषी ने प्रतिलिपि तैयार की थी। श्री नाहटा जी के संग्रह की "सुजान-विनोद" की प्रति भी इन्हीं धननाथ जोषी द्वारा सवन् १९४६ में प्रतिलिपि हुई थी। "मुमिल विनोद" की इस प्रति का आकार लगभग आठ इंच तथा बारह इंच है। प्रति अपनी चौड़ाई में लिखी है। लेखन-कार्य में बाली-माल स्याही का उपयोग हुआ है। प्रति में कुल ४१ पत्र तथा प्रति पृष्ठ पर १६ पंक्तियाँ हैं।

स्वीकृत पाठ ८ ११ के पश्चात् इस प्रति में ढाई पंक्ति पाठ और था किन्तु इस पर नया सादा महीन बागज ऊपर से लगाकर लाल स्याही से पुष्पिका लिख दी गई है जो दग प्रकार है— "इति श्री विनोद हेतवे कवि-देव विरचिते मुमिल विनोदे अष्ट सम्पूर्ण—

लिप्य धननाथ जोषी की जं पुरम देवात् ॥

अनुमान है कि बागज के नीचे का पाठ किन्हीं छन्द का अदा न होकर 'मुमिल विनोद' की दूसरी प्रति, खो० प्रति में विद्यमान " ११ यह कवित प्रेम-तरंग चद्रिका म लिये हैं यामे इहा नहीं लिये हैं " पाठ ही था एवं प्रतिलिपिकार अथवा प्रति के स्वामी ने अपनी प्रति का गण्डिन रूप आकृत करने के हेतु इसे बागज से ढँक कर ऊपर में पुष्पिका लिख दी है।

सामान्य रूप में अ० प्रति का पाठ शुद्ध एवं विश्वसनीय है। २ ग्यो० अर्थात् नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा सम्पादित "मध्य प्रदेश की ग्यो० रिपोर्ट" में प्राप्त "मुमिल विनोद" की प्रति का उल्लेख—

दग प्रति के सम्बन्ध में उगनस्थ सूचनाएँ उपरोक्त ग्यो० रिपोर्ट के अनुभार इस प्रकार हैं —

'प्रथ-नाम 'मुमिल विनोद'—मि० का बागज—पत्र १६—आकार ८ इंच, ६ इंच—
प्रति पृष्ठ पंक्तियाँ २०—ग्रथ का आकार ४८० अनुष्टुप—बागज महीन—सजिल्द
—त्रिगिरान १९४७ विजयो—ग्रथ स्वामी प० महेन्द्रप्रसाद पाण्डेय, ग्राम पोस्ट
निपनिया, रोवा, मध्य प्रदेश।"

ध्यान देने योग्य तथ्य है कि यद्यपि विवरण में प्रथ-नाम "मुमिल विनोद" है तथापि दग प्रति में विनोद के अन्त की पुष्पिका में प्रथ-नाम "मुमिल विनोद" ही मिलता है "इति श्री हिमालुन्ना खान विनोद हेतवे कवि देव विरचिते मुमिल विनोदे..... मज्जम विनोद ।" अ० प्रति के समान दग प्रति में भी अन्तिम अंग नुटित है— ८ ११ के पश्चात् इन प्रति में भी पाठ नहीं मिलता है। अष्टम विनोद के ८, ९, १०, ११ मध्या के छद्म अ० प्रति में पूर्ण हैं किन्तु ये ही छद्म दग प्रति में दग रूप में हैं "याही भौन भौनर " मोहि तुम्हें अन्तर १ मगिन विगारि मात्र १० जो न जी में प्रेम ११ यद् कवित प्रेम-तरंग चद्रिका में लिये हैं यामे दग लिये नहीं है।"

वास्तव में उपरोक्त सभी छंद “प्रेम चंद्रिका” में भी मिलते हैं, निपनिया के इस सग्रह में “अष्टयाम” के अतिरिक्त “प्रेम चंद्रिका” की भी प्रति है अतः ऐसा अनुमान होता है कि इस प्रति अथवा इसकी आदर्श प्रति के प्रतिलिपिकार ने वदाचित् शीघ्रता में होने तथा “प्रेम चंद्रिका” की सलग्न पोथी में ये समान छंद विद्यमान होने के कारण यहाँ उन छंदों का केवल प्रतीक लिख दिया है। इस सम्भावना पर इस कारण भी विश्वास होता है क्योंकि अ० प्रति में भी अनेक स्थलों पर सम्पूर्ण छंद के स्थान पर केवल उसका प्रतीक मात्र मिलता है तथा इसका उल्लेख भी कर दिया गया है कि यह छंद “प्रेम चंद्रिका” में है। उदाहरण के लिए ऐसे दो स्थल ४ १५ तथा ४ १७ हैं। इस प्रकार के स्थलों पर विस्तार से विचार हम आगे करेंगे।

“प्रेम चंद्रिका” की प्रति से इस प्रति का सम्बन्ध इस प्रति का विवरण लेनेवाले सभा के प्रतिनिधि के निम्नलिखित नोट से भी पुष्ट होता है, “कहीं-कहीं ग्रंथ का नाम ‘मुमिल विनोद’ के यज्याय ‘प्रेम चंद्रिका’ लिखा है—’ इति श्री देववृत्ते प्रेम-चंद्रिकाया प्रेमवर्णनो नाम प्रथम प्रकाश ।”

इस प्रति की अन्तिम पुष्पिका से प्रतिलिपि सवत् तथा प्रतिलिपिकार का नाम इस प्रकार स्पष्ट होता है—

“इति श्री देव कवि रचिते मुमिल विनोद प्रथम सभादी नगमत १८ सवत् १९४७ के मितौ दुती भाद्रवदि १ का लिखा भाला कुजविहारी ॥”

खेद है कि सो० प्रति सुलभ न हो सकी अतः इस प्रति का उपयोग हम सम्पादन-कार्य में नहीं किया जा सका है।

सम्पादन सामग्री की अन्तरंग परीक्षा

प्रतियों का सम्बन्ध—“मुमिल विनोद” की उपरोक्त दोनों प्रतियों की तुलना इनमें से दूसरी प्रति के अनुपलब्ध होने के कारण सम्भव नहीं है तथापि सुलभ सामग्री के आधार पर ही इन दोनों प्रतियों के परस्पर सम्बन्ध पर नीचे विचार किया जा रहा है।

दोनों ही प्रतियाँ अपूर्ण हैं तथा दोनों ही प्रति एक ही स्थल = ११ पर लण्डित होनी हैं। अ० प्रति सम्भवतः १९४४ की है तथा सो० प्रति निश्चित रूप में सवत् १९४७ की है, अतः दोनों ही प्रतियाँ सम्भवतः एक समान आदर्श की दो प्रतिनिधियाँ हैं। सवत् १९४७ की सो० प्रति से सवत् १९४४ की अ० प्रति का प्रतिलिपि होना तो सम्भव नहीं है परन्तु यह अवश्य सम्भव है कि अ० प्रति में सो० प्रति की प्रतिलिपि हुई हो। एक अन्य सहायक प्रमाण के द्वारा भी इन दोनों प्रतियों का पारस्परिक सम्बन्ध प्रमाणित होता है।

बहुधा एक सग्रह में विद्यमान हस्तलिखित ग्रंथों का दूसरे सग्रह में भी प्राप्त होना इन दोनों सग्रहों की प्रतियों के परस्पर प्रतिलिपि-सम्बन्ध से सम्बन्धित होने की सम्भावना की ओर निर्देष्टा करता है। विशाल सग्रहों की अपेक्षा छोटे सग्रहों के सम्बन्ध में यह सम्भावना अधिक सगत है। “मुमिल विनोद” की इन दोनों प्रतियों का सग्रह ऐसी ही सम्भावना को पुष्ट करता है। बहना न होगा कि इन दोनों ही सग्रहों के ग्रंथों में देवशून केवल “प्रेम चंद्रिका” तथा “मुमिल विनोद” की प्रतियाँ हैं। रीवाँ के सग्रह में “अष्टयाम” की भी प्रति है किन्तु अत्रय जैन

भण्डार में नहीं है, अभय जैन भण्डार में "सुजान विनोद" की भी प्रति है किन्तु निपनिया में इस ग्रन्थ के होने का उल्लेख खोज रिपोर्ट में नहीं है। दोनों ग्रन्थों में समान ग्रन्थों की उपस्थिति के सहायक प्रमाण के आधार पर भी हमारा मत है कि "सुमिल विनोद" की इन दोनों प्रतियों में परस्पर प्रतिलिपि सम्बन्ध है तथा तिथियों के आधार पर स्रो० प्रति अ० प्रति की प्रतिलिपि है।

सम्पादन सिद्धान्त—विभी भी काव्य-वृत्ति का पाठ-सम्पादन उमकी केवल एक प्रति में उपलब्ध पाठ के आधार पर करना प्रायः कठिन होता है। अधिक में अधिक सनक होने पर भी यदि सम्पादित पाठ में कुछ न्यूनताएँ रह ही जायें तो इसमें आश्चर्य नहीं है। कम से कम सम्पादक का उत्तरदायित्व तो ऐसे सम्पादन में अत्यधिक बढ़ जाता है—परोक्ष रूप से वह सम्पादित पाठ के प्रत्येक शब्द के लिए उत्तरदायी होता है।

ऊपर के विवरण में यह प्रकट है कि "सुमिल विनोद" के पाठ-सम्पादन के लिए केवल एक हस्तलिखित प्रति का पाठ उपलब्ध किया जा सका है। फिर भी, केवल एक प्रति के आधार पर इस ग्रन्थ का पाठ-सम्पादन सन्तोषजनक रूप में होना सम्भव हुआ है। विभी रचना का पाठ-सम्पादन केवल एक प्रति के आधार पर करने समय उम प्रति में विद्यमान पाठ-विवृतियों का निवारण करना सम्पादक का प्रथम दायित्व होता है। वास्तव में इन पाठ-विवृतियों का निवारण करना ही पाठ-सम्पादन की वैज्ञानिक विधि का प्रथम लक्ष्य है। इस मार्ग का अनुसरण करते हुए मूल पाठ के अपने गन्तव्य तक पहुँच सवना तो सम्पादन की आदर्श स्थिति है ही, रचना के प्राप्त रूप से पाठ-विवृतियों को विलग कर शुद्ध पाठ के एक गोपान के निकटतर पहुँचना भी सामान्य उपलब्धि नहीं है। अन केवल एक प्रति में प्राप्त "सुमिल विनोद" के पाठ में पाठ-विवृतियों को धृष्ट कर सवने में भी हमने अपना लक्ष्य अगम सिद्ध माना है। पर हम इतने से ही सन्तुष्ट नहीं हैं। केवल एक प्रति के आधार पर देव की इस वृत्ति का सम्पादन करना इस कारण भी अपेक्षाकृत मरल है क्योंकि इस ग्रन्थ में तथा देववृत्त अन्य ग्रन्थों में समान छन्द बहुनायन में मिलते हैं। इस प्रकार इस ग्रन्थ की विभिन्न हस्तलिखित प्रतियों के रूप में मुख्य सम्पादन-सामग्री का अभाव होने पर भी देववृत्त अन्य ग्रन्थों में प्राप्त समान पाठ का उपयोग सहायक सामग्री के रूप में किया गया है।

सहायक सम्पादन-सामग्री के रूप में देववृत्त अन्य ग्रन्थों में प्राप्त समान छन्दों के पाठ का उपयोग सनर्वना में किया गया है। ऐसे ग्रन्थों के सम्पादन में, जिनकी हस्तलिखित प्रतियाँ आवश्यक सख्या में प्राप्त हुई हैं, हम देववृत्त अन्य वृत्तियों में प्राप्त समान छन्दों के पाठ पर बहुत कम आश्रित रहे हैं। इसका कारण स्पष्ट है। हम समझते हैं कि जब कवि अपने एक ग्रन्थ का छन्द अपने दूसरे ग्रन्थ में मरली करता है तो बहुत सम्भव है कि वह छन्द के पाठ में भी कुछ सशोधन-परिवर्तन करता हो। कम में कम इस सम्भावना को अस्वीकृत नहीं किया जा सकता। दो भिन्न वृत्तियों में विद्यमान समान छन्दों के पाठ का इस प्रकार अवैज्ञानिक गीति से परस्पर मिश्रण कर देने पर कवि द्वारा इस पाठ-सशोधन का अध्ययन करना सर्वथा अगम्भव होगा, अतः हमने ऐसा पाठ-मिश्रण कही भी नहीं होने दिया है। "सुमिल विनोद" के सम्पादन में तथा देव की उन वृत्तियों के सम्पादन में जिनकी केवल एक ही हस्तलिखित प्रति मिली है, केवल उगी

स्थल पर अन्य ग्रथ में प्राप्त छंद के पाठ से सहायता ली गई है जहाँ उपलब्ध प्रति का पाठ निश्चित रूप से अशुद्ध था। हमने ऐसे स्थलों पर अपनी ओर से पाठ-संशोधन करने की अपेक्षा कविकृत किसी अन्य ग्रथ में विद्यमान उसी छंद का समत पाठ स्वीकृत करना उचित समझा है। केवल इन्हीं छोटे से स्थलों पर सम्पादित कृति के मूल में कवि द्वारा पाठ-संशोधन किये जाने की सम्भावना और भी कम है इसलिए कवि द्वारा पाठ-संशोधन की सम्भावना के उपरोक्त प्रदन पर भी निर्भर होकर अन्य ग्रथों से पाठ साधारण स्वीकृत किया जा सकता है।

“सुमित्त विनोद” की अ० प्रति के पाठ में केवल उन्हीं स्थलों पर पाठ-संशोधन किया गया है जहाँ अ० प्रति का पाठ निश्चित रूप से अशुद्ध था। इन पाठ-संशोधनों की दो कोटियाँ हैं। प्रथम, ऐसे पाठ-संशोधन जो अन्य ग्रथों में छंद के प्राप्त पाठ द्वारा पुष्ट हैं। इस प्रकार के पाठ-संशोधन के साथ इतर ग्रथ का उल्लेख किया गया है।

समान छंदों का तुलनात्मक पाठ पाठांतर के रूप में नहीं दिया गया है, क्योंकि यह पृथक् अध्ययन का विस्तृत विषय है।

अ० प्रति के पाठ में प्राप्त अपूर्ण छंद

अ० प्रति की परीक्षा करते हुए हमने ऊपर देखा है कि प्रतिलिपिकार ने प्रति के पाठ में कुछ स्थलों पर छंद का पूरा पाठ न देकर प्रारम्भिक दो-तीन शब्द प्रतीक-स्वरूप दे दिये हैं। उदाहरण के लिये अ० प्रति में ४ ७ पर “आली भुलावति” छंद के स्थान पर केवल छंद का संकेत इस प्रकार मिलता है, “आली भुलावति भूवनि सो इत्यादि।” अधिकतर ऐसे स्थलों पर अपूर्ण छंद के साथ उस ग्रथ का नाम भी उल्लिखित है जिस ग्रथ में छंद का संपूर्ण पाठ मिलता है, जैसे ४ १५ पर “जागत जागत खीन” छंद का संकेत इतर ग्रथ के उल्लेख सहित इस प्रकार है—“ध्यान को विरह निवेदन प्रेम तरंग चंद्रिका में है। जागत जागत खीन।” अथवा ४ १७ पर “जे विनु देखे” छंद का संकेत “बचहरण (?) चन्द्रिकाम्या ए विनु।” कहना न होगा कि अन्य ग्रथों में इन छंदों के मिलने का अ० प्रति में प्राप्त यह उल्लेख सर्वदा सही निकला है, जैसे उपरोक्त दोनों स्थलों पर “जागत जागत खीन” छंद अन्यत्र केवल “प्रेम चंद्रिका” ग्रथ में ही २ ३७ पर तथा “जे विनु” छंद भी अन्यत्र केवल उसी ग्रथ में २ ३८ पर मिलता है।

केवल एक स्थल ५ ६ पर ग्रथ का उल्लेख अशुद्ध है। इस छंद का संकेत अ० प्रति में इस प्रकार है, “अथ वासव राज्या अष्टयाम में। देव शखी इव खीने कुलेल।” विन्तु यह छंद “अष्टयाम” में नहीं, अन्यत्र केवल “सुषसागर तरंग” में छंद संख्या ६३२ पर आया है।

इन छंदों के अपूर्ण होने का क्या कारण है? क्या स्वयं कवि ने इन छंदों का पाठ संपूर्ण न देकर उनके प्रतीक मात्र दे दिये हैं? ये छंद-प्रतिलिपिकार द्वारा प्रसिप्त हैं? अथवा प्रतिलिपिकार ने ही सीधे-सीधे कारण इस रूप में संक्षेप किया है? इन छंदों के सम्बन्ध में ये प्रदन विचारणीय हैं।

इतने से प्रथम, कवि द्वारा संपूर्ण छंद के स्थान पर प्रथम छंद दिये जाने की सम्भावना उचित नहीं है। सामान्यतया कोई भी कवि मूल ग्रथ में छंद का संक्षेप इस रूप में नहीं करेगा क्योंकि इससे पाठक तक अपनी रचना पहचानने का उसका प्रारम्भिक उद्देश्य ही राहित होता है। उसे यदि

सक्षय ही अभीष्ट होगा तो वह विषय-विवेचन मेकही मक्षेप करेगा, विवेच्य प्रथम को क्षय-उत्तर से बाट-छाट कर नष्ट-भ्रष्ट नहीं करेगा। प्रथम के आकार को संक्षिप्त करने की यह प्रवृत्ति लेखक की नहीं, पूर्णतया प्रतिलिपिकार की है।

प्रतिलिपिकार द्वारा इन छंदों के प्रक्षिप्त होने की सम्भावना भी इसलिए अमान्य है क्योंकि इन प्रति में इन छंदों का केवल प्रतीक मान मिलता है। पाठ-वृद्धि के रूप में प्रक्षेप करने पर प्रतिलिपिकार का उद्देश्य रचना के कथ्य में पाठ-परिवर्धन करना होता है अतः यदि ये छंद प्रतिलिपिकार द्वारा प्रथम में सम्मिलित की गई पाठ-वृद्धि होने तो स्वभावतः वह सपूर्ण छंद देता, छंद का केवल प्रतीक नहीं। छंद का प्रतीक देने से कवि के समान प्रतिलिपिकार का अभीष्ट भी मिथ्य नहीं होता है।

उपर्युक्त सभावनाओं में अन्तिम, प्रतिलिपिकार द्वारा शीघ्रता के कारण सपूर्ण छंद के स्थान पर केवल प्रतीक रखने की सभावना हमें सगन प्रतीत होती है तथा प्रतिलिपिकार द्वारा ऐसा किया जाने का कारण भी स्पष्ट है। इन विवेच्य छंदों में अधिकतर छंद ऐसे हैं जो अन्य "प्रेम चद्रिका" में भी, अथवा केवल "प्रेम चद्रिका" में ही आए हैं। प्रतिलिपिकार के पाम "प्रेम चद्रिका" की प्रति विद्यमान थी तथा इन प्रति में इन छंदों का पूर्ण पाठ भी था अतः उनमें यहाँ उन छंदों का पाठ पूरा-भूरा न देकर केवल उनका प्रतीक लिख लेना पर्याप्त समझा। ध्यान रहे कि यदि प्रतिलिपिकार का उद्देश्य केवल सक्षेप करना ही होता तो इन प्रति में अनेक ऐसे छंद भी अपूर्ण मिलते जो इस प्रति में तथा "प्रेम चद्रिका" में समान होने के अनिश्चित "मुससागर तरंग", "मुजान विनोद" एवं "मवानी विलास" में समान हैं। "मुमुक्षु विनोद" में तथा इन अन्तिम तीनों प्रथमों में अनेक छंद समान मिलते हैं किन्तु मक्षेप केवल उन्हीं छंदों का हुआ है जो "प्रेम चद्रिका" में तथा इस प्रति में समान हैं।

ऊपर केवल एक स्थल ५ - ६ पर "अष्टयाम" में पूर्ण छन्द मिलने का अनुद्ध उल्लेख केवल प्रतिलिपिकार के भ्रम के कारण हुआ है। "अष्टयाम" के चतुर्थ पहर में एनापिन छंदों में "मुमुक्षु विनोद" के इस छंद के समान, सयियों द्वारा नायिका के शृंगार का वर्णन है अतः सम्भव है कि प्रतिलिपिकार को दोनों छन्द समान होने का मिथ्या भ्रम हुआ हो। "मुमुक्षु विनोद" का छन्द इस प्रकार है—

"देव सगरी इव सीन्हे पृथ्वी मुचोया के शोरनि केवै निचोरै।

एकै लिये कगही इव दर्पन केरी लिये इव बीजन सोरै ॥" आदि

इसमें सुनना के लिये "अष्टयाम" में केवल एक स्थल उदाहरणस्वरूप दिया जाता है—

"चोया गो घुपरि नेम केसरि मुरग अग केसर उरटि अन्वार्द है मुनाय गो।

अतर निरोध आधे अम्बर सँ पोछी जोछी छनिया अगोदि हसि हसि रग भाय गो।"

—'अष्टयाम'—४ ६

"अष्टयाम" की प्रतिलिपि "मुमुक्षु विनोद" की प्रतिलिपि के साथ बीजानेरे के मक्षेप में मी है। यो मागटा जी के कथनानुसार यह प्रति उन्हें अक्षुण्ण में प्राप्त हुई है। समाग अनुमान है कि जयपुर में "मुमुक्षु विनोद" के साथ "अष्टयाम" की प्रति भी अक्षुण्ण रही होगी।

रोवा के सग्रह में तो "सुमिल विनोद" के साथ "अप्टयाम" की प्रति है ही। कहने का तात्पर्य यह है कि प्रतिलिपिकार ने "अप्टयाम" की प्रति भी अपने पास होने के कारण, उसमें तथा "सुमिल विनोद" में एक छंद भ्रमवश समान जानकर यहाँ इस छंद का भी केवल प्रतीक लिख दिया है।

इन छंद-प्रतीकों पर भी क्रमानुसार छंद-संख्या पड़ी है, इससे भी यही प्रमाणित होता है कि ये छंद मूल-ग्रथ के हैं। केवल एव स्थल पर छंद-प्रतीक पर छंद संख्या नहीं पड़ी है पर इसे हम प्रमादवश छूटा हुआ मान लेते हैं।

शेद है कि इन पुठित छंदों का पाठ "सुमिल विनोद" की किसी उपलब्ध प्रति से प्राप्त करना सम्भव नहीं हुआ, है परन्तु सौभाग्य से इन छंदों में से अधिकांश छंद देवकृत अन्य ग्रथों में भी मिलते हैं अतः हमने इन इतर ग्रथों से ऐसे छंदों का पाठ स्वीकार करना इस ग्रथ की पूर्णता के विचार से आवश्यक समझा है। यदि "सुमिल विनोद" की ही किसी प्रति से यह पाठ लिया जाता तो अत्युत्तम होता क्योंकि "सुमिल विनोद" तथा देवकृत अन्य ग्रथों में प्राप्त समान छंदों की तुलना से यह प्रकट होता है कि कवि ने अन्य ग्रथों की अपेक्षा "सुमिल विनोद" के पाठ में यत्र-तत्र संशोधन-परिवर्तन किया है, अतः सम्भव है कि उसने इन छंदों के पाठ में भी इसी प्रकार कुछ परिवर्तन किया हो। फिर भी हमने प्रति अपूर्ण होने के कारण इन स्थलों पर पाठ भी पठित छोड़ देने की अपेक्षा अन्य ग्रथों से पाठ सामान्य स्वीकृत करना श्रेयस्कर माना है। हम इस तथ्य से आश्वस्त हैं कि ये छंद संख्या में केवल छ हैं अतः इनमें किये हुए रवि कृत पाठ-परिवर्तन और भी कम रहे होंगे।

"सुमिल विनोद" के सम्पादित पाठ में ऐसे स्थलों पर अन्य ग्रथों से प्राप्त पाठ का उल्लेख उस ग्रथ तथा उसमें इस छंद के स्थल-निर्देश सहित कर दिया गया है। ये पाठ अ० प्रति में प्राप्त छंद प्रतीक से पृथक् कोष्ठों में दिये गये हैं। "सुमिल विनोद" में इन स्थलों की सूची, छंद-प्रतीक तथा स्वीकृत पाठ के श्लोक का विवरण इस प्रकार है —

- १—सुमिल विनोद ४७ "आली भुजावति"—"सुजान विनोद" ७ २५ से,
- २— " " ४ १५ "जागत जागत गीत"—"प्रेम चंद्रिका" २ ३० से,
- ३— " " ४ १७ "जे त्रिनु देखे"—"प्रेम चंद्रिका" २ ३८ से,
- ४— " " ५ ६ "देव गायी इव"—"गुग्गुगागर तरंग" ६ ३२ से,
- ५— " " ५ २६ "सूभज न गान"—"सुजान विनोद" ४ ३२ से,
- ६— " " ५ ४४ "लागत समीर ला"—"सुजान विनोद" ५ ४४ से

ऐसे पाठ-संशोधन जो देवकृत अन्य ग्रथों में प्राप्त उसी छंद के पाठ द्वारा पुष्ट हैं

१ : ४ स्थायी भाव—

रति हीमी अरु गोरा रिस अरु उदाह छिन मानि ।

आहचरज वीरग्य के नवरम धार्द जानि ॥

उत्साह वीररस के स्थायी भाव के रूप में प्रसिद्ध है। यहाँ उत्साह के अर्थ में ही "उदाह" शब्द प्रयुक्त हुआ है त्रिनु अ० प्रति में "अरु उदाह" के स्थान पर, "उत्साह" पाठ

है। प्रमग की दृष्टि में अमगत होने के अनिरिक्त इस पाठ में दो मात्राएँ न्यून होन व कारण दोहे के चरण की गति भी दूषित होती है। "कान्य रमायन" में ३ १४ पर यह दोहा मिलना है तथा इनमें भी "अर उदाह" पाठ मिलना है। अत यहाँ "अर उदाह" पाठ स्वीकृत हुआ है।

१ : ७

जयं धर्मं तं होत अर होत अयं तं काम।

ताते सुख मुव को नदा रन मिंगार मुत्रयाम ॥

दोहे में धर्म, अयं, काम तथा भोज इन चतुर्वन्तुओं का परस्पर सम्बन्ध योजित है। कवि ने इसी भाव को "भाष विलास" में १ २ पर इस प्रकार प्रकट किया है—“अथ धर्मं तं होत अर काम अयं तं जानु।” ज० प्रति में “अयं धर्मं तं...” पाठ के स्थान पर “अयं दया तं...” पाठ मिलना है। जीवन को धर्म-अर्थादि चार अभिनायक वन्तुओं में “दया की गणना नहीं होती है अत अ० प्रति में प्राप्त “दया” पाठ अमगत है। इसके स्थान पर “मान विनाम” में प्राप्त इस दोहे के पाठ में “धर्म” पाठ यहाँ स्वीकृत हुआ है।

१ : १३

गति पूरत मिंगार नो मिति विनाव अनुभाव।

माविर मचारित भवति भवनवावति हैं हाव ॥

“भवनवावति हैं हाव” के स्थान पर अ० प्रति में पाठ है “भवनवावति वस हाव। स्मरण रहे कि नायिका के हृदय में मितन तथा मर्मों की इच्छा के कुछ-कुछ प्रकट होने का हाव कहते हैं, अत “हाव” के प्रमग में मन्वावाची “दम” शब्द यहाँ प्रयुक्त होना सर्वथा अनुचित है। “भवानी विनाम” में १ १८ पर इस दोहे में भी “...भवनवावति हैं हाव” पाठ है अत यहाँ अ० प्रति के “दम” पाठ के स्थान पर “हैं” पाठ स्वीकृत हुआ है।

१ : २४ प्रथम दो चरण—

छोजन रग पगोजन छग तरगिन रोम त्रियो अभिनारपे।

मोह मडे मग में न वडे पग बोन यडे न पडे मुग भार्ग ॥

इस छंद में कवि ने पूर्व गणित माविरादि अष्ट मचारियों के उदाहरण प्रस्तुत किये हैं। प्रथम चरण में शेषष्णं, स्वेद तथा रामान माविर अनुमाओं का एवं द्वितीय चरण में वंजन स्वर्णमग का उदाहरण है। द्वितीय चरण में “...बोन वडे न पडे मुग भार्ग” के स्थान पर अ० प्रति में कदाचित् “म” में “म” का भ्रम होने में पाठ है “...बोन वडे न पडे मुग भार्ग।” बोन न पडने तथा बटावरोन होने के प्रमग में “मुग” की अपेक्षा “मुग” पाठ मगत प्रतीत होता है अत “गुग्गागर तरग”—१०६ पर इस छंद में प्राप्त “मुग” पाठ यहाँ स्वीकृत हुआ है।

१ : २५ सचारी भाव । प्रथम-द्वितीय तथा पचम-षष्ठम चरण—

है निर्वेद तिनानी मर अनुया मद थन वडु।

आरग रिता वैन्य मोह मुनिग्न धीरग्न वडु।

अरवांग त्रीध जराहिय मति प्राग ध्याति उन्माद मूर्ति।

पौरिधि विनर उषजा तंतीगो मानम प्रहृति।”

द्वितीय चरण के "दैन्य मोह" पाठ के स्थान पर कदाचित् प्रतिलिपिदार के मस्तिष्क में "मोह" की प्रतिध्वनि होने के कारण पाठ है "द्रोह मोह"। "द्रोह" सचारी-नाम के रूप में निरर्थक तथा असंगत है। "प्रेम तरंग" १ ६ पर इस चरण का पाठ इस प्रकार है, "आरस दैन्यर मोह चित् सस्मृति धृति ह्ये कम्।" इस पाठ में प्राप्त "दैन्यर" शब्द के संकेत पर यहाँ "द्रोह" के स्थान पर "दैन्य" शब्द रखा गया है।

इसी प्रकार अ० प्रति में प्रथम चरण के "रास व्याधि" के स्थान पर "ग्रास व्याधि" पाठ है। सचारी-नाम के रूप में "ग्राम" पाठ भी असंगत है अतः इसके स्थान पर "प्रेम तरंग" में प्राप्त "रास" सचारी नाम यहाँ रखा गया है।

१ : २६

"ढोली न आँखिन तानि नहूँ पट जोट तिरीछे बटाछनि बँ रही।
ढोली न आँखिन आँखि लगाइ अचानक आँखिन को सरु बँ रही।
एहो बडी बडी आँखिनवारी निहारि की आँखिन में घरु कँ रही।
नाखिन आँखिन तें निरुच्यो अब प्यारे की आँखिन में घरु कँ रही।।"

प्रियतम से उसकी आँख लगी तो लज्जित होकर उसने अपने नेत्र भुका नहीं लिये वरन् वह कुछ ठिठ्ठाई से उसकी आँखों में ही देखती रही। कदाचित् अपनी इसी प्रगल्भता से उसने अपने प्रिय की आँखों को जीत लिया। यहाँ "मरु कँ रही" सर करने या विजित करने के अर्थ में, मुहावरे के रूप में आया है। अ० प्रति में इसके स्थान पर "सह कँ रही" पाठ मिलता है। यहाँ 'मह' को 'शह' का रूपान्तर मानना अनुचित होगा क्योंकि प्रथम तो मुहावरा "शह करना न होकर "शह देना" है और दूसरे "शह देने से यहाँ विजित करने के अभीष्ट भाव में भिन्न, परास्त करने का भाव प्रबल होता है। "सुप्रसागरतरंग" में छन्द-संख्या ११६ पर इमी छन्द के पाठ में "सरु कँ रही" पाठ तथा छन्द-संख्या ३८८ पर इसी छन्द के पाठ में "सठ कँ रही" पाठ मिलता है। "सठ" पाठ असंगत है तथा लिपिभ्रम से सम्भव है। इसी प्रकार अ० प्रति में "सह" पाठ भी दृष्टि-भ्रम में सम्भव है। अतः उपरोक्त स्थल पर "सरु" पाठ स्वीकृत हुआ है।

इसी प्रकार अ० प्रति में तृतीय चरण का पाठ है "निहारि की आँखिन में घरु कँ रही।" "घरु कँ रही" पाठ निरर्थक न होने पर भी यहाँ असंगत है। तृतीय चरण का भाव है कि "यह बडी-बडी आँखोंवाली नायिका का रूप-मौन्दर्य ऐसा है कि जिमकी भी दृष्टि उस पर पड़ती है उसी की आँखा में वह चिरकती रह जाती है।" बहना नहोगानि "निहारि की आँखिन में" का अर्थ "निहारने-वाले अथवा दर्शक की आँखों में" है। प्रत्येक दर्शक की आँखों में उसका घर कर लेना शब्दार्थ की दृष्टि से भले ही सार्थक हो परन्तु जगत् चरण के "प्यारे की आँखिन में घरु कँ रही" पाठ से यह पाठ अगम्य सिद्ध होगा है। अर्थके विचार से भी "घरु" पाठ असंगत है। यदि वह सभी मामान्य दर्शकों के हृदय में घर कर लेती है तथा उन्हीं के समान अपने प्रिय की आँखा में भी घर कर लेती है तो इससे उगने मौन्दर्य का कोई विशेष चमत्कार तथा उमके प्रियतम का विशेष महत्त्व प्रबल नहीं होता। बकि तो बहना चाहता है कि बडी-बडी आँखोंवाली सुन्दरी नायिका दर्शकों की आँखों में तो चिरकती ही रहती है किन्तु घर करती है केवल अपने प्रियतम की आँखों

में इस विचार में अ० प्रति में प्राप्त तृतीय चरण का "निहारि की अर्चिनि में घर कं गरी" पाठ अमगत है। सम्भव है कि "घर कं" में दृष्टि-भ्रम से, जयवा अग्रे चरण के "घर कं" पाठ पर भ्रम में दृष्टि पढ़नेसे इस प्रति में यहाँ "घर कं गरी" पाठ जा गया हो। "मुद्रिताग्र तरण" में भी उपरोक्त दोनों स्थलों पर इस छंद के पाठ में "घर कं" पाठ आया है अतः यहाँ "घर कं गरी" पाठ स्वीकृत हुआ है।

२ : ५

होन वियोग मयोंग नें मान प्रवाम मयोंग ।

एहि विधि मध्य वियोंग के होन मियाग मयोंग ॥

विप्रलभ शृंगार के भेदों के जन्मर्गन मान हेतुन वियोग तथा प्रवाम हेतुन वियोग की गणना की जाती है। विप्रलभ शृंगार के भेद होने के कारण य दोनों ही हृदय की निरह-प्रधान स्थिति का ध्यान करते हैं अतः यहाँ "मान प्रवाम मयोंग" सन्दावनी उचिनि ही प्रयुक्त हुई है। अ० प्रति में इस स्थल पर पाठ है

"मान प्रवाम सजोग ।" यह पाठ मान-प्रवाम के मन्दर्भ में अनुचित होने के अतिरिक्त अग्रे चरण का तुकान्त "हान मियाग मयोंग" होने के कारण अनुपयुक्त भी है। "भवानी विनाम" में २ ४ पर इसी दोहे में "मान प्रवाम सजोग" पाठ मिलता है अतः यहाँ यही पाठ स्वीकृत हुआ है।

२ : १६ प्रथम-द्वितीय चरण—

अथ निहूँ मध्य पनि अनुकूल दच्छ मठ भावने मची वाचन ।

देग अनुकूल बहूँ दूतह हिये की पून उनही अनूप म्प मही दुतही टर्द ।

दच्छिन हूँ वाचन तनच्छिन मुद्रान तद्दी मुन दे मिलावन दिवावन हूँ टर्द ।

अने लक्ष्य के अनुकूल, अनुकूल पनि अपनी पत्नी को सर्वदा अपने मन्मुख रगना है किन्तु दक्षिण पनि अन्य नायिकाओं में अनुकूल रखने पर भी नायिका के मन्मुख उमका प्रिय बन कर प्रकट होता है, उसे अपनाव की मिथा देता है तथा उसके प्रति अपना अपनाव प्रदर्शित कर नायिका को मृत्यु प्रदान करता है। "टर्द" यहाँ "अपनाव, स्नेह" के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है।

अ० प्रति में "मुन दे मिलावन" पाठ के स्थान पर "मुन दे निगावन" पाठ-विहित मिलती है। यह विहित लेखन-प्रमाद में निकटवर्ती शब्दों में 'म' वर्ण के आधिक्य के कारण सम्भव है। "मुद्रिताग्र तरण" में छंद-मर्यादा २११ पर इस छंद में "मुन दे मिलावन" पाठ मिलता है अतः यहाँ यही पाठ स्वीकृत हुआ है।

२ : २६ ऋदा उदाहरण—

दीरघ धन विषे कर मी टर मी न बहूँ अर्थ्य अटकी मी ।

धीर उदाहन पांड परे चरने न परे उटवे उटकी मी ।

गापनि देह मनेर निराट कटे मनि कोउ बहूँ अटकी मी ।

जैव अनाम नईं उरने मृक गनि-गनि बत्ता नटकी मी ।

छंद के दूसरे चरण का अर्थ होता है नायिका रगने पर अपने धीर मठ-मठ, इस पशुत्या

से रखनी है कि वह रस्से पर से गिरने नहीं पानी, ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह आकाश में लटकी है। द्वितीय चरण का उपरोक्त पाठ "प्रेम चद्रिका" में ३४१ तथा "सुखसागर तरंग" में ७७८ पर इस छंद के पाठ में भी मिलता है। इस पाठ के स्थान पर अ० प्रति में पाठ है "दौरि उपाइ शपाइ धरे"। यह पाठ प्रसंग की दृष्टि से असंगत है। अतः उपरोक्त दोनों ग्रंथों में प्राप्त सगत पाठ यहाँ स्वीकृत हुआ है।

इसी प्रकार इस छंद के तृतीय चरण का "निराट" शब्द किसी वस्तु की सहायता लिये बिना, अनेके, निरवलम्ब अपनी देह सतुलित रखने के अर्थ में सर्वथा उपयुक्त है। "प्रेम चद्रिका" तथा "सुखसागर तरंग" में इस छंद के पाठ में यहाँ "निराट" पाठ मिलता भी है किन्तु अ० प्रति में "निराट" के स्थान पर वदाचित्तु लेखन-प्रमाद से "निराति" पाठ है। यह पाठ प्रसंग की दृष्टि से निरर्थक है अतः इसके स्थान पर भी उपरोक्त दोनों ग्रंथों में प्राप्त "निराट" पाठ यहाँ स्वीकृत माना गया है।

३ : ४ पद्मिनि-लक्षण—

हम भेष भाषा गमन लघु भोजन मृदु हास।

सती मत्पराचि सोल सुचि पदमिनि पद्म सुवास ॥

अर्थात् ऐसी नायिका जिसका वेग हस के समान श्वेत हो, जिसकी वाणी भी हस के समान सुमधुर हो, वह पद्मिनी नायिका कहलाती है। अ० प्रति में "भाषा" के स्थान पर लेखन-प्रमाद से "भूषा" पाठ है जो असंगत है अतः यहाँ "भवानी विलास" में २२२ पर प्राप्त "भाषा" सगत पाठ स्वीकृत हुआ है।

३ : ६ शंखिनी उदाहरण। प्रथम-त्रितीय चरण—

पातरे लक नचं से सचं कर पल्लव बेली ज्यो बाल बनी ये।

कोकिल कूकनि पीन श्री भूकनि भूमति सी गति पूम घनी ये ॥

जैसे बाटिका की छोटी लतिका वायु का तीव्र भोवा आने पर उसके साथ वह नहीं जाती, धरती के साथ जड़ों से बंधी होने के कारण उसका ऊर्ध्व भाग भूमकर जैसे नाच उठता है उन्हीं प्रकार यह क्षीण बटिवाली नायिका भी अपनी पतली बटि पर झुककर जैसे नाच-नाच जाती है। ध्यान रहे कि यहाँ प्रसंग नायिका के नाचने का है, 'पातरे लक नचं' में "पर" अधिकरण कारक चिह्न लुप्त है, "स्वयं" लक के नाचने पर नहीं—यदि ऐसा होना तो पाठ "पातरो लक" होना। नृत्य करती हुई नायिका की हथेलियाँ भी मुद्राओं को प्रकट करने के हेतु तीव्र वायु-दोलन में वन-बेलि के पत्तों की भाँति झुक-झुका जाती हैं। इसी कारण कवि ने कहा है कि 'बेनी ज्यो बाल बनी ये'।

प्रथम चरण का सामान्य रूप में यही पाठ "भुवनाग्र तरंग" में ३५१ पर तथा "भवानी विलास" में २२६ पर मिलता है। किन्तु अ० प्रति में चरण का पाठ इस प्रकार है— 'पातरे लक नचं सिसचं पल्लव बैरिज्यो बाल बनी ये।' इस पाठ में "बैरिज्यो" पाठ सर्वथा असंगत है, इस पाठ को स्वीकार करने पर छंद में वेदि-बाना का रूप ही दिग्ग-भिन्न हो जाता है अतः यहाँ उपर्युक्त दोनों ग्रंथों में प्राप्त "नचं से सचं...बेनी ज्यो" पाठ स्वीकृत हुआ है।

३ : ११ हृस्विनि उदाहरण । तृतीय चतुर्थ चरण—

दं छतिया पर पार परं पिय प्रेम अपार समुद्र में सोऊ ।

काम की सागरि नागरि के उर गागरि से उचके कुच दोऊ ॥

काम की सागर इम नागरी के वक्षस्थल पर उन्नत दोनो कुच गागरियो के समान हैं जिन्हे अपने वक्ष पर लगाकर वह प्रियतम के अपार प्रेम-समुद्र को तैर कर पार कर सकती है । जल पर तैरने के लिए गागरी जैसी वस्तुओं का उपयोग सर्वप्रसिद्ध है ।

अ० प्रति मे तृतीय चरण का पाठ है "दं छतिया पर पायरेई तरग अपार । इस पाठ की गति अगुद्ध है तथा इसकी सार्थकता भी सदिग्ध है अतः यह पाठ अस्वीकृत तथा इनके स्थान पर "भवानी विलास" में २ ३२ पर प्राप्त "दं छतिया पर पार परं पिय प्रेम अपार" पाठ स्वीकृत माना गया है ।

३ : २३ सुरतान्त । तृतीय-चतुर्थ चरण—

गाहक ही जीके जु कहा बहो नीके नाह नाहक गमाइ भाई साज की लसनि यह ।

अवहूँ उपाधि तजी आधिब जियत पर बाधिब बधिब तेरी हा धिब हँसनि यह ॥

सुरति मे अपनी दुर्दशा होने के कारण बेचारी नायिका यहाँ आने पर परचात्ताप करती हुई बठोर नायक से कहती है, "हम तुम्हें अच्छे नायक क्या कह, तुम तो हमारी जान के ही ग्राहक मालूम देते हो । मैं नाहक ही अपनी साजभरी मुपमा का परित्याग कर यहाँ आयी ।" नायक की श्रुता पर पुनः आशेष करती हुई कह कहती है कि "सुरति मे मेरा प्राणान्त नहीं हो गया, मैं अधमरी होकर भी जीवित हूँ, इसलिए भन्ना हो यदि तुम अपनी 'बधिब' उपाधि त्याग दो । तुम्हें लज्जा नहीं आती ? तुम हँस रहे हो ?"

"भवानी विलास" में ५ २१ पर तृतीय चरण का उपरोक्त पाठ ही मिलता है किन्तु अ० प्रति मे "गाहक ही जी के जु" स्थान पर पाठ है "गाहक जो जाने जू" । इस पाठ का "जाने" शब्द प्रस्तुत प्रसंग में असंगत है । "जाने" का सम्बन्ध "साज की लसनि" में जोड़ कर नायक को नवेली नायिका की साजभरी मौन्दर्य मुपमा का ग्राहक बताना भी असंगत लगता है क्योंकि इस व्याख्या को स्वीकार करने पर "कहा बहो नीके नाह" पद सन्दर्भ से उच्छिन्न हो जाता है । "साज भरी लसनि" का ग्राहक होने के कारण नायक को "नीके नाह" न कहना अधिन उपयुक्त नहीं लगता है । नायक को "नीके नाह" न कहने तथा अगते चरण को "आधिब जियत पर बाधिब बधिब" आदि शब्दावली में यही प्रकट होता है कि नायिका शूर नायक को "जी" का ही ग्राहक समझती है ।

"जीके" ध्वनि इसी चरण में आगे चलकर "नीके" शब्द पर प्रतिध्वनित भी होती है । सम्भव है कि अ० प्रति में सामान्य लेखक प्रमाद में "जी" को मात्रा हट्ट मर्द हो । जो भी हो, प्रसंग पर ध्यान रखते हुए "भवानी विलास" में प्राप्त "जीके" संगत पाठ उपर्युक्त स्थान पर स्वीकृत हुआ है ।

३ : २७ प्रगट मरना उदाहरण । प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय चरण—

मन्द जू के वार देव आये घूपभान डार गीशे पोरि दीरि मनी रस्य रज वाम मो ।

पाद गरी पाद दस्यो पाटे धनि आट पं मस्यो न परं घूपट नस्यो न परं धाम मा ।

मदन सहेट जायो मदन मदन नागो पायो पा पूर्यो मा माग्यो जाट गगन मा ॥

द्वितीय चरण में नायिका की उतावली तथा प्रिय-दर्शन की उसकी उत्कट अभिलाषा किन्तु शीघ्रता, सकोच के कारण उसकी परवशता, तिर पर घूँघट डालने में उसकी असमर्थता में तथा घर से बाहर पर रखने में उसकी पराधीनता से प्रकट होती है। अ० प्रति में द्वितीय चरण का पाठ है "प्रेम पैठ्यो नव बधू धूट"। कहना न होगा कि यह पाठ असंगत है तथा एक वर्ण की पाठ-वृद्धि होने के कारण इस पाठ की गति भी अचुद्ध है, इसलिए इसके स्थान पर "सुख-सागर तरंग" में ४०२ पर प्राप्त "पै मध्यो न परै घूँघट" पाठ स्वीकृत हुआ है।

इसी प्रकार छंद के तृतीय चरण का पाठ अ० प्रति में है "मदन सदेस जाग्यो"। नायिका के हृदय में कामदेव का सन्देश जाग्रत होने की अपेक्षा स्वयं कामदेव का और यह भी शारीरी होकर जागना हमें ऊपर वर्णित नायिका की उतावली के साथ अधिक संगत लगता है अतः उपरोक्त स्थल पर भी "सुखसागर तरंग" में प्राप्त "मदन सदेह जाग्यो" पाठ स्वीकृत हुआ है।

३ : ३० मध्या की सुरत । प्रथम-तृतीय चरण—

वातनि मैं चूकति अचूक चित कूकति विभूकति औ झूकति सी लूकति ससति सी ।

भोरति मरोरति विधोरति औ जोरति सी तोरति निहोरति सकोरति ससति सी ॥

छंद में सुरति के समय नायिका की अनेक काविक चैष्टाओं का वर्णन है। अ० प्रति में प्रथम चरण में "भूकति" के स्थान पर "रूकति" पाठ मिलता है। यहाँ जितनी भी चैष्टाओं का वर्णन है वे प्रायः एक-दूसरे में बहुत भिन्न नहीं हैं, जैसे मोड़ने-मरोड़ने, वियोरने-तोड़ने अथवा मिकुड़ने-मसाने की क्रियाएँ। इसी प्रकार प्रथम चरण में विभूकने और झूकने की क्रिया में भी विशेष अन्तर नहीं है क्योंकि "विभूकने" का अर्थ "टेढा होना" है ("नेह उरभे से तन देखिबे को विलभे से विभुकी सी भीह उरभे से डर जात है"—केसव), तथा "झूकने" से भी तात्पर्य स्पष्टतः "भूकने" से है। नायिका के अन्य कार्यों में भी ममानता होने के कारण "विभूकने" के साथ "भूकति" त्रियापद ही संगत है, रोकने के अर्थ में (?) "रूकति" क्रियापद नहीं। "विभूकति औ झूकति" पाठ अनुप्रास-मुष्ट है तथा सम्पूर्ण छंद में प्रयुक्त प्रायः अन्य सभी त्रियाओं के अकर्मक रूप के समान "भूकति" भी क्रिया का अकर्मक रूप है परन्तु "रूकति" पाठ में वे दोनों विशेषताएँ नहीं हैं इस कारण अ० प्रति में प्राप्त "रूकति" पाठ के स्थान पर "सुख-सागर तरंग" में छंद सख्या ४६६ पर प्राप्त "भूकति" पाठ यहाँ स्वीकृत हुआ है। सम्भव है अ० प्रति का "रूकति" पाठ "भूकति" के 'ळ' वर्ण के पार्श्वान्तर में भ्रम होने के कारण हुआ हो।

तृतीय चरण में अ० प्रति में "भोरति-मरोरति" के स्थान पर पाठ है "भोरनमरोरति"। यह पाठ-विकृति भी 'त' में 'न' का भ्रम होने से अथवा लेखन-प्रमाद से सम्भव है। "भोरति मरोरति" पाठ इस प्रसंग में असंगत तथा निरर्थक है अतः "सुखसागर तरंग" में इसी छंद के पाठ में प्राप्त "भोरति मरोरति" पाठ भी यहाँ स्वीकृत हुआ है।

३ : ३२ प्रथम-द्वितीय चरण—

“घाइल करत कर भाइल भृगनि दृग कुटिन बटाछ नर भृट्टो घनुन के ।

कज कर मजु रव कजन अनूप पग भू पर घरन बजे नूपुर कनक के ॥’

अ० प्रति में प्रथम चरण में लेखन-प्रमाद में “घाइल करत” के स्थान पर विद्वान् पाठ है “घाइल करत,” प्रथम-अनुगार पाठ “घाइल करत” ही होना चाहिए। इसी प्रकार अ० प्रति में द्वितीय चरण का पाठ है “कज कर मजु रव” तथा “‘बजे नूपुर कनक के’”। इनमें प्रथम पाठ “कज कर” अमगत है। कवि का भाव है कि नायिका के कमल के समान मुदर हाथों में पड़े कान हस्त-मन्दाकिन में भवुर-स्वर कर उठने हैं। “कर” के स्थान पर “कर” पाठ स्वीकृत करने में आपत्ति इसलिये है क्योंकि “कज” इस प्रथम में “कर” का विशेषण है, “कर” के स्थान पर “कर” पाठ स्वीकृत करने पर “कज” की स्थिति सदिग्ध हो जाती है—“कज” फिर किसके लिये प्रयुक्त माना जाए? इसी प्रकार “नूपुर कनक के” पाठ भी अनुचित है। चरण का भाव इस प्रकार है कि “नायिका के सुन्दर पैरों में पड़े नूपुर धरती पर पैर रखने ही कनक कर धज उठे।” किन्तु अ० प्रति में प्राप्त पाठ के अनुगार चरण का भावार्थ इस प्रकार होगा—“नायिका के सुन्दर पैरों में पड़े सुवर्ण के नूपुर धरती पर पैर रखने ही बज उठे।” यहाँ पर “कनक” पाठ स्वीकृत माना गया है क्योंकि छंद के चतुर्थ चरण के अंत में भी यही शब्द आया है “तनक-ननक यजु सुपर कनक के।” पैरों के नूपुर का सुवर्ण-निर्मित होना इसलिये भी कम सम्भव है क्योंकि पैरों में सुवर्ण-भूषण प्रायः नहीं पहने जाते हैं। “कनक” पाठ-विद्वान् “कनक” पाठ से ‘क’ के प्राचीन रूपान्तर में भ्रम होने के कारण सम्भव है।

उपरोक्त तीनों स्थानों पर स्वीकृत पाठ “मुग्गागर तरग” में छंद-नक्या ३६६ पर इस छंद के पाठ में भी मिलते हैं।

४ : १४ : १

“हरि मूरति को धरि ध्यान रही रति पूरति प्रेम हिनोरन ही ।”

अ० प्रति में “प” में “म” का भ्रम होने में पाठ है “रति-मूरति” इससे रहते ही “हरि मूरति” पाठ आ चुका है तथा अर्थ के विचार में भी यहाँ “मूरति” पाठ अगगत है अतः इनके स्थान पर मयोजित करने के लिये में “पूरति” पाठ स्वीकृत किया गया है।

“भरानी विलास” में ८ २४ पर तथा “मुग्गागर तरग” में ५४६ पर भी इस छंद में “पूरति” पाठ ही मिलता है।

४ : ३० : १ दशम दशा उदाहरण—

“हैं अभिनाय गचिन भई हरि को धरि ध्यान बहै गुन गोरो ।”

कवि ने छंद में कृष्ण विरह में उत्पन्न नायिका की मग्गागमन अवस्था का कारणित विषय किया है। नायिका के कुटुम्ब की स्त्रियों को नायिका के जीवन बच जान की आशा है। कन-परगों में ही उगने पानी-पान-मोहन गवना परित्याग कर दिया था, किन्तु आज आशा में पदमा के निरानो हो मण्डित कमल के समान थोरहिन नायिका को देखकर ये अब नायिका के विषय में गुन चिन्तित हो गई हैं। “हैं अभिनाय गचिन भई” में यहाँ भाव है। अ० प्रति में दृष्टि-भ्रम में “हैं” के स्थान पर “हैं” पाठ है। “हैं अभिनाय” पाठ अगगत है अतः अ० प्रति

के पाठ के स्थान पर “ह्रै” पाठ-संशोधन किया गया है। “सुखसागर तरंग” में भी स
६१४ पर इसी छंद के पाठ में “ह्रै” पाठ मिलता है।

५ : १२ उत्का उदाहरण—

पलं पल पृच्छति विपल दृग मृगनेनी आए न कमलनेन आई ए अलपरी।

जीभ में जलप देव देखिबे की तलप सु भूतल परी है पं सुहाति न तल परी।

रसिक रसिकलाल कलानिधि मिलै तौलीं कलानिधि मुख चितचार्ई की चल परी

केलि के महल कलभाखिनि अकेली सकलप विकलप ही में कयोहू न कल परी

अ० प्रति में अन्तिम चरण का पाठ है “सक कलप विकल ‘तकल परी।” किसी

विधि रचन न मिलने के अर्थ में “कयोहू न कल परी” पाठ यहाँ उचित है तथा इसी पाठ में

में “त” का भ्रम होने के कारण “तकल” विकल पाठ संभव है। दूसरा पाठान्तर विचार

है। अ० प्रति के “सक कलप विकल” पाठ में ऊपर स्वीकृत पाठ के समान आठ वर्ण हैं।

अ० प्रति के पाठ की गति भी सतकं होकर पढ़ते हुए शुद्ध की जा सकती है। इस पाठ के स

चरण का अर्थ इस प्रकार होगा—“उस मधुर भाषिणी नायिका के हृदय में अपने नायक

आने पर विभिन्न शकाए उठती हैं। वह इन शकाओं का ध्यान आने पर कलपती है, वि

होती है—उमें किसी विधि भी रचन नहीं मिलता।” इस पर भी अ० प्रति में प्राप्त यह

निम्नलिखित विश्लेषण को ध्यान में रखते हुए अस्वीकृत हुआ है। इस प्रसंग में “सक”

किसी प्रकार उचित माना जा सकता है किन्तु “कलप विकल” पाठ की संगति सदिग्ध है—

कारणों से। प्रथम तो यह है कि ये दोनों ही शब्द यदि समानार्थी नहीं हैं तो प्रायः एक ही

की व्यञ्जना अवश्य करते हैं। दूसरे “कयोहू” शब्द जो इन्हीं शब्दों से सम्बद्ध है, स्पष्ट स

करता है कि इन दो शब्दों में द्वारा व्यञ्जना एक भाव की नहीं, बल्कि दो भावों की हो

चाहिए—तभी तो कवि कहता है कि “कयोहू न न तो इस प्रकार, न उस प्रकार, कि

विधि भी उससे हृदय को दान्ति नहीं मिलती। इस कारण अ० प्रति के “सक कलप विकल

के स्थान पर यहाँ “सकलप विकलप” पाठ स्वीकार किया गया है। यह सफल विकल्प एकाधि

यस्तुआ की लेकर संभव है। कमलनयन नायक के केलि-बुज में न आने पर नायिका क

उमकी ओर अधिक प्रतीक्षा करे अथवा वह अपने धर बापस लौट जाए अथवा वह स्वयं

नायक के पास जाए। इनमें से एव का सरूप करना, फिर उसे त्याग देना उसने हृदय

व्याकुलता की वृद्धि करता है।

उपरोक्त दोनों ही पाठ “सुखसागर तरंग” में छंद मर्यादा ६३६ पर मिलते हैं एव य

स्वीकृत हुए हैं।

५ : १६ सखी सो

“गोरिन को गुन गर्व सु सर्वसु ग्यारि गंवायन हारि लगी तू।

बानन यो घर जान गने उतपातन की विधि में न नखी तू।

त्याइ भुत्ताइ मु मेरिय भूल पत्नी अपने गुग मेति मत्ती तू।

देव जू मीत अमीत मुने नहि होति मुनी भई सौति मयो तू ॥”

छंद का उपरोक्त पाठ “सुगमागर तरंग” में मर्यादा ६५७ पर भी प्राप्त है किन्तु अ

प्रति मे प्रथम चरण का पाठ है “ ‘मु सर्वं मुत्तारि गवावत हारि लली तू ।” तथा द्वितीय चरण मे “उतपातन” के स्थान पर पाठ है “उतपानन” । हम पहले प्रथम चरण के पाठ पर विचार करेंगे । यदि “मुत्तारि” का सम्बन्ध “मुत्तारा” शब्द से माना जाए तो “मुत्तारि” का अर्थ होगा “मुग्ध देने वाला” । (हेतु विचार हिये जग के मग त्यागि लखूँ निज रूप मुगारा ।”—झिन्दी-शब्द सागर) तब चरण का अर्थ इस प्रकार होगा—“गुण गौरी नायिका अर्थान् निवाहित स्त्री का गर्व ही सज को मुखदायी लगता है किन्तु री नखी, तू मुझे यहाँ लाकर इस गर्व रूपी लाज रूपये के हार को ही गवा रही है ।” इस व्याख्या पर निम्नलिखित आपत्तियाँ हैं । प्रथम तो “मुग्ध देने वाले” के अर्थ में “मुत्तारि” शब्द का “मुगारा” से निमित्त होना निश्चित नहीं है, “मुत्तार” शब्द का पुलिग विशेषण के रूप में यहाँ प्रयुक्त होना और भी सदेह-पूर्ण है । दूसरी आपत्ति साधारण होते हुए भी इस चरण के दूसरे पाठान्तर से तुलना किये जाने पर महत्त्वपूर्ण है । यह आपत्ति “हारि” के इकारात् रूप होने पर है । “हार” में “हारि” सामान्य तथा मामान्यतया प्रतिलिपि होते हुए भी सम्भव है । और यहाँ तो पहले ही “मुत्तारि” या “मुत्तारि” का लुक् अत इनने अनुग्राम पर “हार” से “हारि” होना भी सम्भव है । फिर भी हम इस प्रश्न को उठाना इसलिये आवश्यक समझते हैं क्योंकि अ० प्रति के अतिरिक्त “मुग्धमागर तरग” में सन्ध्या ६५७ पर इसी छंद के पाठ में भी “हारि” पाठ ही मिलता है इसलिये ‘हारि’ केवल रूपान्तर न होकर कुछ और ही है । लाज रूपये के हार के अर्थ में यहाँ पाठ ‘हार’ होना चाहिये, “हारि” नहीं ।

यों “हार” या “हारि” का विशेषण करना महत्त्वपूर्ण नहीं प्रतीत होता किन्तु इन शब्दों को दूसरे पाठ के “गवावत” के साथ रम्यतर विचार करने पर सर्वथा भिन्न अर्थ का उद्घाटन होता है । यह कहना अनावश्यक है कि यहाँ “गवा देने वाली” के अर्थ में “गवावन हारि” प्रयोग सर्वथा उचित तथा प्रसंगसंगत है । “गवावन हारि” के प्रसंग में मन्वी के लिए “गवारिन” के अर्थ में ‘गवारि’ पाठ भी उचित है । यहाँ लगी का सम्बन्ध “हार” में कदापि नहीं है । “लगी” तो ‘देगने’, ‘पाने’ के अर्थ में “तू” के साथ सम्बद्ध है । इस पाठ के अनुसार चरण का अर्थ होगा— “गुण गौरी स्त्रियो के लिए उनका अपना गर्व ही मर्त्यत्व होता है किन्तु ए मन्वी, तू गवारिन गवारि है, तू उरका महत्त्व नहीं जानती । मुझे यहाँ प्रमत्तार ले आने के कारण तो मुझे तू मरे इस सर्वस्य को भी गवा देने वाली दिखलाई देती है ।” “मुत्तारि” में “मुत्तारि” तथा “गवावत” में ‘गवावत’ पाठ-कितृति प्रतिलिपि के सम्यक् सामान्य दृष्टि-भ्रम में सम्भव है । उपरोक्त व्याख्या को विचारगत करने हुए, अ० प्रति में प्राप्त चरण के पाठ को अमान्य तथा “मुग्धमागर तरग” में प्राप्त इस चरण के पाठ को स्वीकृत माना गया है ।

द्वितीय चरण में “उतपानन” के स्थान पर अ० प्रति में “उतपानन” पाठ है । ‘उतपानन’ पाठ अर्थहीन है तथा “उतपानन” में सामान्य दृष्टि भ्रम में सम्भव है अतः इस पाठ के स्थान पर “मुग्धमागर तरग” में उपर्युक्तलिखित रूप में इस छंद का “उतपानन” पाठ यहाँ स्वीकृत हुआ है ।

६ : ४३ : २

पट पौन उतारि उताः दिगो पट सान जरी अपोपो दं ।

अ० प्रति में "पठ पीत" के स्थान पर लेखन-प्रमाद से "पठ पीत" पाठ है। "पीले वस्त्र" के अर्थ में 'पठ पीत' की अपेक्षा "पठ पीत" पाठ समत होने के कारण यहाँ स्वीकृत हुआ है।

यह पाठ "सुप्रसागर तरंग" में छद सख्या ४६४ पर इस छद के पाठ में भी प्राप्त होता है।

६ : ४४ तृतीय-चतुर्थ चरण—

"सग ही सग वसौ उनके अग अग के देव तिहारे सुरीये।

साथ में राखिये नाथ उन्हें हम हाथ में चाहती चारि चुरीये ॥"

अ० प्रति में तृतीय चरण में "तिहारे" के स्थान पर "त" में "न" का भ्रम होने के कारण पाठ है "निहारे"। कृष्ण के सुन्दर अग-प्रत्ययो को "दिखार" कृष्ण के प्रति प्रेम प्रकट करने के अर्थ में भी "निहारे" पाठ इसलिए अशुद्ध माना गया है क्योंकि इस अर्थ में पाठ का रूप "निहारे" न होकर "निहारि" होना चाहिए था। इसी कारण अ० प्रति में इस पाठान्तर का कारण प्रतिलिपिकार द्वारा सचेष्ट पाठ विवृति न मानकर केवल लेखन-प्रमाद माना गया है। ऊपर के प्रसंग में "तिहारे" पाठ ही समत है अतः यहाँ स्वीकृत हुआ है।

यह पाठ "सुप्रसागर तरंग" में सख्या ४६७ पर इस छद के पाठ में भी मिलता है।

६ : ५३

सखी सों मानवती की उचित।

"प्रेम पढाइ बढाइ के बधुनि दीनो बढाइ बढाइ किये कर।

सो अभिलाष्यो न कहू सो भाख्यो इलाज सो लाज नो राख्यो हिमे पर।

सांभ सलीन के सांभ हिरान्यो बिरानो भयो भव जान्यो मुझे कर।

कीनो परोसु सरो मुनि देख्यो सु देव परो सु परोसिन के घर ॥"

पत्नी बदाचित् अपने पति के स्वभाव से पहले से ही भली-भाँति परिचित थी इसलिये उसने देव-मुनिकर, अच्छे पड़ोसवाला घर लिया परन्तु नायक पति अपने व्यवहार से बाज क्यों जाने लगा। पड़ोस के घर की किमी सुन्दरी स्त्री पर मोहित होने पर उसने पहले उस स्त्री के घरवाला से घनिष्ठता बढ़ाई, उनके प्रति अपना प्रेम प्रदर्शित किया और इस प्रकार उन्हें अपने घर में कर लिया।

अ० प्रति में प्रथम चरण का पाठ है "प्रेम बढाइ बढाइ के बधुनि...कपे कर।" यहाँ 'बढाइ बढाइ' की पुनरुक्ति अनावश्यक है—आगे भी देखें "बढाइ बढाइ" है। वास्तव में उस पर के लोगों से अपनत्व बढ़ाने के दो रूप हैं—उनके प्रेम-भाव बढ़ाना तथा इग प्रेम-भाव को उन पर सचेष्ट रूप से प्रकट भी करना। यही सचेष्ट रूप से उन पर प्रेम-भाव प्रकट करने या उगे उन पर आरोपित करने का भाव "प्रेम पढाइ" से प्रकट होता है। अ० प्रति में "कपे" पाठ मूल में था, हस्ताल की सहायता से तथा उसी कतम से "कपे" से "किये" पाठ बनाया गया है। "कपे" पाठ प्रसंग के विचार में निरर्थक तथा "किये" पाठ, कुटुम्बियों को अपने हाथ में, मुट्ठी में अथवा घर में करने के अर्थ में सर्वथा उचित है। सम्भव है कि प्रतिलिपिकार ने पहले "के" में "पे" का भ्रम होने के कारण "किये" के स्थान पर "कपे" पाठ दिया हो किन्तु बाद में इस अशुद्धि को हस्ताल की सहायता में दूर किया हो।

अ० प्रति में अन्तिम चरण में 'परोमु' के स्थान पर "गरोमु" पाठ मिलता है। यह पाठ भी असंगत है। अच्छे, सरे अथवा परमे हुए के अर्थ में भी "गरो" शब्द प्रयुक्त नहीं हुआ है क्योंकि आगे इसी अर्थ में "गरो" शब्द आया है। वास्तव में "गरोमु" पाठ-विद्वान् प्रमादवश "परोमु" में अथवा दूसरे "गरो" के पडोम के कारण हुई है।

इस स्वीकृत पाठों में "रिये कर" पाठ के अतिरिक्त अन्य दोनो पाठ "सुत्रमागर तरग" में ५१८ मन्त्र पर इस छंद के स्वीकृत पाठ में भी मिलते हैं। इस ग्रन्थ में 'रिये कर' के स्थान पर "के मौवर" पाठ है।

७ : ११ : ३ शठ उदाहरण—

"पूरी करी इनहूँ उन प्रीति मले खुनि मेहन बेलत पापर।"

यहाँ "मने खुनि मेहन" तथा "बेनत पापर" दोनों ही का प्रयोग मुहावरो के रूप में हुआ है। "पापड बेनते" मुहावरे का अर्थ "हिन्दी शब्द-मागर" में दिया है "(१) बठोर परियम करना। भारी प्रयास करना। बडी मेहनत करना। जैसे, आपमें किमने कहा या कि इस काम में आप इनने पापड बेने ? (२) बठिनाई या दुःख में दिन बटना।" 'पापड बेनते' का अर्थ धोत्रवान की भाषा में कोठ में दिग् ज्यों में निम्न है। इस मुहावरे का अर्थ है ऐसा काम करना जिसमें निवट के लोको को दुःख तथा बप्ट हो। इस छंद में भी "पापड बेनते" के यही भाव प्रकट होना है। अ० प्रति में 'ब' में 'म' का भ्रम होने में पाठ है "मने खुनि मेहन मेहन पापर।" "मेहन" शब्द की जावृति यहाँ निरर्थक है। "सुत्रमागर तरग" में मन्त्रा ८१८ पर इस छंद के पाठ में भी "खुनि मेहन बेनत पापर" पाठ मिलता है।

विशेष पाठ-संगोपन

१ : १७ दर्शन उदाहरण—

"को ही कहीं पो कहा कहिये री भली भई ही हूँ गहे नहि ओट मी।"

अ० प्रति में पाठ है "के ही कहीं की..." पर प्रश्नकर्ता के "तुम कौन हो ?" प्रश्न का ब्रजभाषा में शुद्ध रूप होगा "को ही..." कदाचित् अ० प्रति में मात्रा की सही रेषा प्रमादवश छूट गई है अतः यहाँ "के ही" के स्थान पर "को ही" पाठ-संगोपन विशेष रूप में रिया गया है।

१ : २२

"गान्धिक भाव मु अग के मचारी चिन माहि।

करी आठ तैनीम अरु गगहि नरि मनराहि ॥"

स्वेद मन्त्रादि गान्धिक अनुभावों की मन्त्रा आठ तथा निबन्धादि मन्त्रादियों की मन्त्रा तैनीम प्रसिद्ध है। किन्तु "करी आठ तैनीम" के स्थान पर अ० प्रति में 'त' में 'ब' का भ्रम होने के कारण पाठ है "करी आठ तैनीम अरु..." गान्धिक अनुभावों तथा मन्त्रादियों की मन्त्रा तैनीम आठ तथा तैनीम होने के कारण मन्त्रादि ने "आठ तैनीम" पाठ-संगोपन अपनी ओर ले रिया है।

१ : २५

“साज चपलता हर्ष वेग जडता अभिमानो ।

दुग उलठा नोद भूल सुप पुनि परिमानो ।”

सचारी नामो के प्रसंग मे भा० प्रति का “भूख सुखु” पाठ निरर्थक है। कवि ने अपने अन्य लक्षण प्रथो मे जिन सचारियों का नामोल्लेख किया है उनमे से केवल अपस्मृति तथा सुपुत्ति ऐसे हैं जो उपरोक्त छप्पम मे नहीं आये हैं। यहाँ अपस्मृति से कवि का आशय अन्य पूर्ववर्ती-परवर्ती कविया द्वारा मान्य अपस्मार नामक सचारी भाव से है अथवा उसने विस्मृति के अर्थ मे अपस्मृति का उल्लेख किया है, यह कहना ठीक है। देव की निम्नलिखित रचनाओ मे ये दोनो ही सचारी नाम मिलते हैं। “विस्मृति सुपुत्ति नोद उन्माद सुपुत्ति मुगोध ...”

“भवानी विलास” १ ३५, “विपाद उलठा उपमुपुत्ति सुपुत्ति हैं”—“कुशल विलास ...” १ ४४, “अर नोद अपस्मृति सुपन अवगोध कोध ...” “प्रेमतरंग” १ ६।

इन सकेता के आधार पर भा० प्रति के “भूल” पाठ की सहायता से इसके स्थान पर अपस्मृति के पर्याय रूप मे “भूल” तथा “सुप” के स्थान पर सुपुत्ति के अर्थ मे “सुप” पाठ सपादक मे विशेष रूप से सशोधित किया है।

२ • ६ द्वितीय-तृतीय चरण—

“झारति चीर अवीर भरे गहि राखे उसारि सलीन के कोछे ।

अंधी उसासनि ऐंचि हियो उचि औचक ही उचके कुच ओछे ॥”

अ० प्रति मे तृतीय चरण का पाठ है “उचके कुच कोछे ।” कुचो के लिए ‘कोछे’ शब्द यहाँ निरर्थक प्रतीत होता है। उन्नत-उरोजा के लिए इस शब्द की अपेक्षा “ओछे” शब्द अधिक सगत है। द्वितीय चरण का तुलान्त भी “सलीन के कोछे” से होने के कारण तृतीय चरण के अन्त मे इसी शब्द का प्रयुक्त होना असगत है। सम्बन्ध द्वितीय चरण के अन्त मे विद्यमान “कोछे” शब्द भ्रमवश तृतीय चरण के अंत मे भी प्रतिलिपि होने समय आ गया है अथवा “कुच” के अनुप्रास पर सचेष्ट या निश्चेष्ट रूप मे “कोछे” पाठ हुआ है। प्रसंग पर विचार करते हुए “कुच कोछे” के स्थान पर “कुच ओछे” पाठ सशोधन विशेष रूप मे किया गया है।

३ २४ मध्या उदाहरण । प्रथम-द्वितीय चरण—

“बैरिनि या अतमेरु करे रही पोठि दिये रही डीठि अमैठी ।

आठहू जामे जिठानी भई रही आठहू अग अठाहठि अँठी ॥”

अ० प्रति मे द्वितीय चरण या पाठ है “जिठानी भई रही ।” प्रथम तथा द्वितीय चरण मे “रही” प्रेरणापंक्त रूप मे मिलते हैं अतः इस स्थान पर भी “रही” पाठ-सशोधन विशेष रूप मे किया गया है।

५ ५

‘प्रिय आगम वीतत नभो उलठिा चिन चीन ।

सहित बार मु गडिना प्रतति आवं गीत ॥’

“पनि के शरीर पर अन्य स्त्री द्वारा रिये हुए गमोग चिह्न को देखकर जो ईर्ष्या मे जन उठे उग नायिका को गडिना बटन है ।” यद्यपि दोह मे वणिग गडिना नायिका का लक्षण

पर्याप्त रूप से स्पष्ट नहीं है, फिर भी दोहों के दूसरे चरण का अर्थ इन प्रकार करना उचित होगा "त्रिमत्ता त्रियतम जन्म स्त्री द्वारा मंडित होकर अर्थात् उनके मनोः चिह्नो महिन प्रातःकाल पर वापस जाए वह नायिका मंडिता कहलानी है।" अ० प्रति में "मंडित वार" के स्थान पर पाठ है "खडित वार"। यह पाठ अर्थ की दृष्टि से सर्वथा अमान्य है। "नवार" शब्द को प्रातःकाल के अर्थ में व्यवहृत मानना भी आगे ममानार्थी शब्द "प्रातर्हि" होने के कारण समभव नहीं है। इस दृष्टि में अ० प्रति में प्राप्त "खडित वार" के स्थान पर "मंडित वार" पाठ-मसौदन विशेष रूप से किया गया है।

५ : २४

"जावन की मनक अचानक ही कान परी आए मूनि देव मवही के सुख साज सो।
अंधी गुन बांधी देह अचल मनेह नाथी जानद की आधी मन गयो उडि बाज सो॥
पौरि ही तें "बौरि दुहू भुजन" में अब भरि भेंटनो जा प्यारो जो समेटतो समाज सो।
वारिधि विरह बहवागिनि की सपट वरि जानी अबलानु अब साज के जहाज सो।"
अ० प्रति में तृतीय चरण का पाठ है "बौरि कं दुहू भुजन अब भरि"। इस पाठ की गति अमुद्ध होने के कारण भामान्य पाठ-परिवर्तन से इने इस प्रकार मुद्ध किया गया है "....बौरि दुहू भुजन में अब भरि"।

६ : १० मान भेद बोहा।

"पनि पर परतिय चिह्न लसि बरनि निया गुरु मान।

मध्यम ता मुव नाम मूनि दरमन ता लघु जानि॥"

गुरु, मध्यम तथा लघु, मान के इन तीना भेदों में अन्तिम लघु मान केवल पर-स्त्री देने मात्र के कारण होता है। अ० प्रति में "दरमन ता लघु जानि" के स्थान पर पाठ है "दरमन लघिम गुजानि।" कहना न होगा कि अ० प्रति का पाठ निरर्थक है अतः उपरोक्त स्थल पर "लघिम" के स्थान पर "ता लघु" पाठ-निर्माण सपादन की ओर से हुआ है।

६ : ३८ : ४

"कौने विधि कुविजा पं पौडिबे को बन आवे ग्याट बाटि देत हैं कि ग्याडो रोदि सेत हैं।"

गोपियों कृष्ण के अतरंग गंगा उडव में प्रदन कर रही हैं कि कुब्जा की पीठ में तो बूड है, फिर उनके साथ कृष्ण का समागम किस प्रकार होना होगा? क्या कृष्ण कुब्जा के बूड के लिए अपनी रीया के बीच का भाग बाट देते हैं अथवा फिर भूमि पर रति करने समय घरती में गड़ा रोद लेते हैं? यहाँ "गटे" के अर्थ में ही "ग्याडो" शब्द प्रयुक्त हुआ है।

अ० प्रति में इस चरण का पाठ है "ग्याट बाटि देत हैं ग्याडो रोदि सेत हैं"। ग्याट बाट देते अर्थात् पेंच देने में कुबडी कुब्जा के साथ कृष्ण का समागम सम्भव नहीं हो सकता है। प्रगम के अनुगार, बीच में ग्याट बाट देना ही, त्रिमम कुब्जा का बूड समा गये, मयन है। "बाटि" पाठ विरति "गाट" में मन्त्र प्रमाद द्वारा भी सम्भव है अतः अ० प्रति में प्राप्त "बाटि" पाठ के स्थान पर 'गाटि' पाठ-मसौदन विशेष रूप से किया गया है।

आलोच्य पाठ-विकृतियों की सूची

स्थल सकेन	सशोधित पाठ	प्रति का पाठ	विकृति का कारण- भूत प्रमाद	प्रति का पाठ अस्वीकृत करने का कारण
१ ४	अरु उद्धाह	उतसव	प्रक्षेप	प्रसग असगत
१ ७	धर्मं	दया	प्रक्षेप	प्रसग असगत
१ १३	हैं	दस	प्रक्षेप	प्रसग असगत
१ २४	मुख	सुख	म स	अर्थ असगत
१ २५	दैन्य, प्राप्त	द्रोह, प्राप्त	प्रमाद	अर्थ असगत
१ २६	सरु कै, धरु कै	सह कै, धरु कै	रु ह तथा व घ	अर्थ असगत
२ ५	ससोग	सजोग	दृष्टि-भ्रम	प्रसग असगत
२ १६	सिखावत	विरावत	लेखन-प्रमाद	निरर्थक
२ २६	धीर उपाइन पाइ धरै, निरात	दौरि उपाइ रूपाइ धरै, निराति	प्रक्षेप	प्रसग असगत तथा निरर्थक
३ ४	भापा	भूपा		अर्थ असगत
३ ६	नचै से लचै, बेली ज्यो	नचै सि लचै, बैरि ज्यो	लेखन प्रमाद	अर्थ असगत
३ ११	पार परे पिय प्रेम	पर पायरेई तरग	प्रक्षेप	अर्थ असगत
३ १३	ही जीवे जु	जो जाते जू	लेखन-प्रमाद	प्रसग असगत
३ २७	मद्दयो न परै धुंघट सदेह	प्रेम पैठ्यो नववधू धुंठ, सदेम	प्रक्षेप	प्रसग असगत
३ ३०	भूकति, मोरति	रकति, मोरन	रू र, ति ग	प्रसग असगत
३ ३२	पाइल वरत, वर, भूव	पाइल वरत, वर; वनव	घ प, व व, रू व	प्रसग असगत
४ १४ १	पूरति	भूरति	प म	प्रसग असगत
४ ३० १	हैं अभिलाप	हैं अभिलाप	हैं इ	अर्थ असगत
५ १२	मवलप विवन्ध, न वल	सक वलप विवन्ध, न त तवल		प्रसग असगत
५ १६	गु गवंगु ग्वारि गवावन हारि, उनपातन	गु गवं सु गारि गवावन, हारि, उपातन	त्रिपि-भ्रम	अर्थ असगत

मुमिन विनोद

६:४४	निहारे	निहारे	त न	प्रमग अमगत
६:५३	पढाद, किये,	वटाइ, कॅपे,	लिपिध्रम	प्रमग अमगत
७:११-३	परोमु	मरोमु	व म	अर्य जमगत
	वेलन पापर	खेलन पापर		

विशेष पाठ-संगोधन

१:१७	को ही	के ही	लेगन-प्रमाद	अगुद रूप
१:२२	आठ तंतोम	आठवें तीस	त व	प्रमग अमगत
१:२५	भून सुप	भून मुलु	निपिध्रम	प्रमग अमगत
२:६	उचके कुच ओठे	उचके कुच कांठे	लेगन-प्रमाद	प्रमग अमगत
३:२४	रही	रहे	लेगन-प्रमाद	अगुद रूप
५:५	खडित बार	खडिम बार	प्रक्षेप	अर्य अमगत
५:२४	दौरि दुहे भुजन	दौरि के दुहे भुजन	प्रक्षेप	पाठ-वृद्धि
६:१०	ता लयु जानि	लडिम मुजानि	ट ड	निरपेक्ष
६:३८ ४	काटि	काटि		प्रमग जमगत

मुमिल विनोद

माहिब मुमिल विनोद हिन कीनो मुमिल विनोद ।
 सहि मुमनि मुन पाइ जेहि जम रम को आमोद ॥१॥
 पहिले मुमिल विनोद में बरन्यो रम मुग मार ।
 मन मुगदाइक नादका नादक रम निगार ॥२॥

निगार हास्य जर करन रम रोइ बीर भइमान ।
 बीनलाद्भुत भात ये नवरम कान्य प्रमान ॥३॥

रति हीमी अर सोक रिम अर उछाह^१ छिन मानि ।
 आहचरन बेराग्य ये नवरम धाई जानि ॥४॥

^१ उतमद—३० ।

भाव गहिन निगार में नवरम भउर अयल ।
 ज्यो कवन मनि बना को वाही में नवरल ॥५॥
 निमंत म्यान निगार हरि देव अवाल जल ।
 उठि-उठि ग्या ज्यो जीर रम निवमन पावन अत ॥६॥
 अर्यं धर्म^१ नें होत थर होत अर्यं नें नान ।
 ठाने मुग मुग को मदा रम निगार मुगपाद ॥७॥

^१ दया—३० ।

नवरस नाम ।

स्यापी भाव ।

नोट 'भाव विलास' में इस दोहे का पाठ इस प्रकार है—

“अरथ धर्म तें होइ अरु काम अरथ तें जानु ।
ताते सुख सुख को सदा रस शृंगार निदानु ॥” १ २

ताही रस सिंगार को अकुर प्रेम अनूप ।
भुक्ति मुक्ति को द्वार है प्रेमानन्द स्वरूप ॥८॥
बाँच्यो जय राँच्यो विपै साँच्यो माच्यो रूप ।
पाँच्यो बस आँच्यो सह्यो नाच्यो प्रेम अनूप ॥९॥
प्रेम सार सिंगार रस ताको सुखद विचार ।
सुख सपति जग-जगमगै दपति रूप अपार ॥१०॥

देव सर्वे सुखदायक सायक सपति सर्वे सु दपति जोरी ।
दपति दीपति प्रेम प्रतीति प्रतीति की रीति सनेह निचोरी ।
प्रीति जहाँ रस रीति विचार विचार की बानी सुधारस बोरी ।
बानी को सार बखान्यो सिंगार सिंगार को सार किसोर किसोरी ॥११॥

शृंगार रस लक्षण ।

दपति प्रेमाकुर प्रथम सो रति रस धिति भाव ।
ताहि विभाव बढावही प्रगट करे अनुभाव ॥१२॥
रति पूरन सिंगार सो मिलि विभाव अनुभाव ।
सात्त्विक सचारिन भक्तकि भक्तकावति हैं^१ हाव ॥१३॥

^१ दस—अ० ।

रस भाव लक्षण ।

मन बच बर्म विलास में उपजत प्रेम सुभाव ।
रस अकुर आवन उलहिसो बहिये रस भाव ॥१४॥

शृंगार स्थायी भाव रति लक्षण ।

प्रीतम जन को देखि मुनि आन भाति चित होइ ।
थाई भाव सिंगार को मुक्कि कटन रति सोइ ॥१५॥

श्रवण उदाहरण ।

मुनि देव अनूप बला ब्रजभूप की रूपनना अनुमान लगी ।
पट्टिचानन प्रीति अचान लगी कछु देखिये को ललचान लगी ।
भरि भाइइ भोह बमान चढाइ बँ तानन लोचन बान लगी ।
बहुँ बान्ह बहानी गी बान परी तव ते तन शान बिवान लगी ॥१६॥

दर्शन उदाहरण ।

को ही^१ कहाँ तो कहा बहिये रो भनी भई होहूँ गटे नहि ओट गी ।
देव अचान सचान सौ आयो चनाइ गयो दृग गजन जोट गी ।

लगर की डव बार छुटी जु छुटी छवि रुपछगनि की पोट मी ।
तोनी चितोनि छुरी मी चनाइ छरी चर चोट वरी चप चोट मी ॥१७॥

१ के हो—अ० ।

शृंगार विभाव सक्षण ।

आलम्बन अवगमिब के रनि बटि होन भिगार ।

उदापन दीपति करे ममि मुगन्ध मुरतार ॥१८॥

आलम्बन उदाहरण ।

बंदी बहु वा दिन अघानक पर्या री चिन बनबारी बानर बन्धो हो जान बन को ।
बहन न आवत कहै विनु बन न मो तू जानै सब जो की पहिचान प्रेमपन को ।
भूत न दावी वहै बोलनि बिलाचनि होनि चारु चरनि चनाए लेन तन का ।
बंदी करी देव बुद्धि गांठिहू की छोरे लेन चोर लेन चपनि मरोग नन मन को ॥१९॥

उदापन उदाहरण ।

षदन हूँ चद हूँ मा षदन मी चांदनी मा चांदी म चदोवा हूँ मा घोर घरतन री ।
पूर्नी मर्न मन्निन हूँ भाननी की घन्निन इलायची लवग जग अग पक्वत री ।
वीना कर बानी मुनि प्रेम की बहानी बौन दमाहौं न जानी स्वामि पौन सरवत री ।
बही धंशियानि मंत्रियानि तैं दिग्यायो दब मोई अब भरी धंशियानि मन्वत री ॥२०॥
मुनि के धुनि चानक मोरन की बहूँ ओरनि कोचिन बूचनि मा ।
कवि देव नई उनई जु पटा बन भूमि भई दब दूचनि मा ।
एगारानी हरी हृगनी लता भुक्ति जामी ममोर की मूचनि मा ।
अनुराग भरे हरि घागनि मै मनि रागन राग अचूचनि मा ॥२१॥

शृंगार सारिब सघारी ।

सात्विक भाव मु अग के मचारी चित माहि ।

बही आठ तैनीम^१ अरु रमाह भवकि भववाहि ॥२२॥

१ आठवें तीस—अ० ।

सावित्रादि अष्टनाम ।

मन स्वद रामाच अरु अग कप मुर भग ।

विवरन आतू मूरदा ये सावित्र रम अग ॥२३॥

उदाहरण ।

छीकन रग पमीजन अग रगनि रोम हियो अनितारो ।
मोह मई मग मै न बडे पदा बान बडे न पडे भुग^१ भाणे ।
रूप की मपनि कपनि छानी मू दपनि ओर उई नहिं राणे ।
ऊँचो उषाम टनं टनटीगी मदी अनुवानि बढी बडो आरे ॥२४॥

१ मुर—अ० ।

सघारी भाव ।

है निवेद गिजानी मक अमुवा मद अम बट ।

आग्य चिना देण^१ भात सुमिगन घोरक रू ।

लाज चपलता हर्षं वेग जडता अभिमानो ।
 दुःख उत्कठा नीद भूल सुष^२ पुनि परिमानो ।
 अवबोध क्रोध अवहित्य मति त्रास^३ व्याधि उन्माद मृति ।
 चौविधि वितकं उषता तैतीसो मानस प्रवृत्ति ॥२५॥

१ द्रोह—अ० । २ भ्रम्य मुग्धु—अ० । ३ त्रास—अ० ।

उदाहरण ।

दीन दुखी मद आरस नीद जो सुपनेऊ सुबुद्धि वकी सी ।
 ईर्ष्या रोष सहर्षं संचित चली चल चाह भगवं वकी सी ।
 धीरज ध्यान विराग सम्हारन लाजुन्माद बुबोध छकी सी ।
 मोह मलिन विद्या डह भीच बो बर्षस त्रास वितकं जकी सी ॥२६॥
 बहि विभाव अनुभाव कडि सात्विक सचारीन ।
 फलवि^१ होत रतिभाव तें पूरन रस परवीन ॥२७॥

१ कलकि—अ० ।

तोद्यो कुलनेम गुन जोर्यो पिय प्रेमगुन हेमगुन रूप हेरि गोहन गिरत हैं ।
 लाज को अमोल इन हिये हरि लियो देव साभ भए हसत रिसाहु तो भिरत हैं ।
 लो इन तिहारे अब लोइन निहारे नाहि चोरी वरि घूषट के घर में धिरत हैं ।
 अलिन निगूढ गूढ^१ गलिन में डूँडि भुग चद के उज्यारे प्यारे डूँडत फिरत हैं ॥२८॥

१ गुरू गलिन—अ० ।

वोली न आखिन तानि कहुँ पट ओट तिरिछे बटाछनि कै रही ।
 डोली न आखिन आंखि लगाइ अचानक आंखिन को सह^१ कै रही ।
 ऐहो बडी बडी आखिनवारी निहारि की आखिन में घर कै^२ रही ।
 ना खिन आखिन ते निकर्यो अत्र प्यारे वी आखिन में घर कै रही ॥२९॥

१ सह—अ० । २ घर कै—अ० ।

नीठि कहुँ मिलि ईठ करी ठिक दर्पण देखत बँठी रायानी ।
 टाढग डोठ बसोठ भए उठि कै उनवी पितवी पहिचानी ।
 पीठ की ओर मरोरि करी टग डीठि गो डीठि लगाइ लजानी ।
 देव सखी डिग तें दुरि कै दूग ही दुरि कै भुरि कै मुग्धयानी ॥३०॥

एहि विधि रति विनि भाव बडि पूरन होत सिगार ।

मिलि विभाव अनुभाव हूँ सात्विक होत सचार ॥३१॥

इति धी परम गुजान धी हिमातुल्ला सान विनोव हेतवे देववत्त कवि-विरचिते मुमिल
 विनोवे सिगार रस स्वहृष घर्षनं नाम प्रथम विनोवः ॥

भाव सहित सिगार नो जो बहियत आघार ।

मो है नाइन नादरा तानो बरन विचार ॥१॥

रम सिगार के भेद द्वै है वियोग लयोग ।

मो प्रच्छन्न प्रयाग तं द्वै द्वै दुहूँ प्रयोग ॥२॥

भृंगार भेद ।

मो पूरव अनुगम जम् मान प्रवाम वियोग ।
वियोग^१ चौबिधि जानिय आनद एक मयोग ॥३॥

^१ योग-मु—४० ।

प्रथम होन दपनीन के पूर्वमुपग वियोग ।
जहाँ विरह को दम दमा ता पौछे मयोग ॥४॥
होत वियोग मयोग से मान प्रवाम म योग^१ ।
गहि बिनि मध्य वियोग के होन निगार मयोग ॥५॥

^१ सजोग—४० ।

प्रच्छन्न वियोग उदाहरण ।

होरी को हेरि बिनोरी रही दुरि देव मृ रगिन जग अगोठे ।
भारनि खोर अवार नरे गहि राखे उमारि मनीन के कोठे ।
अँची उमाननि ऐँचि हियो लचि जीवर ही उचरे कुच कोठे^१ ।
बचन नैनी दृगबन मोरि के जचन मो अँभुवा गहि पोठे ॥६॥

^१ कुच कोठे—४० ।

प्रकाश वियोग उदाहरण ।

देष वियोगिनि के बध के द्वित देखन ही मधु के दिन दोनि न ।
सूनि गई सुमुखी इप ईप बिना उलपान विज्ञान मु को गिन ।
प्रानपनी बिनु प्रान उदाग मु राचनि मारि मारी मुन योनिन ।
हँचन ही बनरठ चिनीन मु भावनि ही दिन जान करोनिन ॥७॥

प्रच्छन्न संयोग उदाहरण ।

जाने न कोई जनायो न बान्ध मो जानि गए त्रिप में जन ही जन ।
भोरनी नाक मरोरनी भौह द्विभोरनी तोरनी ही नन ही तन ।
आनद मूटि के ओट दे बँठी ही देव मनी बिठुरी यन ही यन ।
भोर नै नीन के कान गे सुम्पनाती ही मीन गे मन ही नन ॥८॥

प्रकाश संयोग उदाहरण ।

प्रीति मीन को पीन पदा पहिरे गहिरे रग जोर जग्याती ।
देन जू नैननि बँननि में तन में मन में कुमही नित्र ग्याती ।
दँही मरा दुख बँहो कहन जू वैही मित्रावन हारि न मराने ।
मननी ही मित्रि के दिन मो निन मोदिन के अँमुनिन को प्याती ॥९॥
पानर मुद निगार को मुद मरवापा मारि ।
प्रथम प्रेम बग मग के बने पर दिन चारि ॥१०॥

एवकीपादि नामिका भेद ।

अपनी मुचिया जागिये परनामी परकीच ।
गामाग्या मोद मानिय पर दे आरन तीव ॥११॥

व्याही कुल आचार सो सुद्ध मुकीया वाम ।
मुख सेवा सतान हिउ जस रस निर्मल नाम ॥१२॥

स्वकीया के मुख्य गौण भेद ।

भोग भामिनी दूसरी स्वकिया भूपति भौन ।
अरु सनेहनिधि तीसरी मुकिया मुभग सलोन ॥१३॥
पतिव्रता पहिली तहाँ पति अनुकूल सो ईठ ।
भोग स्वकीया दच्छपति तीजी पति सठ ढीठ ॥१४॥
यह विचार राजान को त्रिविधि स्वकीया नारि ।
कुल प्रभुता प्रभु भिन्नता पातर नेह निहारि ॥१५॥

शुद्ध स्वकीया उदाहरण ।

देवी दिव्य दीपति दिपति दिन राति देव सपति सुहाति जोति जगरमगर की ।
पुन्यपन पीन परवीन पतिव्रत स्त्रीन जानत गली न द्वार दूसरी बगर की ।
नागरी अनूप रूप जोवन उजागरी सबल मुन आगरी बसाई है अगरी की ।
गृह की गुसाइनि सुभाइनि सुसील सुखदाइनि सत्ता की ठकुराइनि नगर की ॥१६॥

द्वितीय राजपत्नी उदाहरण ।

पाँइ धरै कर दावि हियो रहै देबर के डर नेबर दारै ।
देखि गहै ननदँ मन दै मुनि सासुनि बैन उसास न आवै ।
प्राण बसेपति प्राण के प्राण मैं भूपन भोजन पान न भावै ।
आयु के अर्पन दर्पनसे हिय प्रीतम को प्रतिविम्ब दिखावै ॥१७॥

तीसरी राजपत्नी उदाहरण ।

सो तिनहूँ सामने मुहाति अति सीतिन हूँ जो तिन निहारे रूप जोतिन जकत है ।
सिगरो महल जाकी प्रीति की टहल करै प्रीति की प्रतीति ही सो प्रीतम तवत है ।
काहू सो ईरपा न हरत विरोध क्रोध रोष पथगामीन मनोरथ धकत है ।
राजन नयन कज मुख मजु भापिन को जापिन की ओट कोऊ रागि न मकत है ॥१८॥

अथ तिहूँ मध्य पति अनुकूल दच्छ सठ भावते सती वाच्य ।

देगे अनुकूल वहुँ फूलह हिये की फूल उलही अनूपरूप सही दुलही ठई ।
दच्छिन हूँ आवत ततच्छिन मुझत तहाँ मुग्ग दै भियावन^१ दिखावत है ईठई ।
ऐसी गति जहाँ तहाँ को हम कहा किये सुनावत की वार द्वार वारन वसीठई ।
देव वहुँ साधु वहुँ अगम अगाध सठ ढीठई सुभावन सो रागत है ईठई ॥१९॥
^१ देनि आवन—अ० ।

तंसिये मालती मल्लि मलैजनि त्यो गुर वस्तिन होन त्रितोष्यो ।
केतकी देन न भूत सो नेह वदब न बुद न लीग सो लेख्यो ।
मोरनिरी हूँ रच्यो कचनार न बँर वनेरन हूँ सो न देख्यो ।
भौर को और गुभाव न देव कयो माननि रनि पुरनि परेख्यो ॥२०॥

... ..

परकीया मन्थन ।

दुनिन प्रीति निरसीन राति परकीया परकीया ।
 गृहपति मेवति विपति सरि उररति प्रेन अशोर ॥२७॥

परकीया भेद ।

तानो परकीया बहन और पतुडा वारि ।
 मान पिना आपोन जो तरनि मु काम कुमारि ॥२८॥

ऊडा उदाहरण ।

दोरष वत्त लिये कर मै डरमै न कहूँ भरमै भट्ठी सी ।
 धीर उपाइन पाई^१ परं भरतं न परं सट्ठी सट्ठी सी ।
 सायनि देह सनेह निराट^२ कहे मति बोज कहूँ अट्ठी सी ।
 ऊंचे अवास घडे उतरे मु करे दिन राति कता गट्ठी सी ॥२९॥

^१ दौरि उपाइ ऋपाइ—अ० । ^२ निराति—अ० ।

प्रेम चरचा है कुल नेम अरना है पित और भर पाटे भोग पाहे भित्तपारी गो ।
 धाड़यो परलोक नरलोचं भरलोचं बहा रूप न तोर न अलोचं नर तारी गो ।
 धाम तप मेहन न निहारे दुख देह हूँ गो प्रीतम तनेर डर धन न भोगारी गो ।
 भूलेह न भोग बडी विपति वियोग विषा खोगहूँ तें कठिन संजोग परपारी गो ॥३०॥

ऊडा श्री वदितायको ।

बीमो त्रिते रस तापरी सोनन गोपन ही इतो गरि अंधी ।
 हेरि मिल्यो गा बेरी दुःखे तजि ताजनिहूँ बिन काम विरंभी ।
 देय जू यानि करी मुग्धगति गण कुतहानि कान पिनि पैरी ।
 गारी चढे कुतनाग्नि में बहुरयो कयहूँ भी मण कलिभी ॥३१॥

ऊडा श्री सदेश ।

गानरी गोदि बगोनि हूँ त्रिनि गोदि सगद मिगंयो करे गोद ।
 ॥३२॥

बन्यका परकीया की उदाहरण ।

भावनि भरोणा मुकुमारि भयति नद वारिवाति करणा न्य न्य ॥३३॥ श्री ।
 सरद के बादर मै दासनि गगनाभी गगना न्य निग त्रोंति आसनि न्य ॥३४॥ श्री ।
 हीन मान त्रिनि करि नद तनेरी दुःखे हास्य भी सोन सुनिभूत सगद ॥३५॥ श्री ।
 देख दुनि गदन विराजत बदा गाभा न्य न्य ॥३६॥ श्री ।

उदाहरण ।

जोवन की भाई सरिकाई में दिखाई अग मुवरन रूप रग ओपनि चढाये तें ।
दून्यो दिन दीपति नदीपति ज्यो पून्यो देह सरद वे मेह दुति नेह उवटाये तें ।
देव गुन गाइये नगर में वगर बँठे अगर बपूर बास बाढे ज्यो बढाये तें ।
इदु ज्यो मुखारविदु बिदु बिदु वाढत त्यो घटत है लक बिदु बिदुहि घटाये तें ॥१८॥

नवलवधू लक्षण ।

तज्यो तेल गुडियान को चितवनि चित गडि जाति ।
नवल वधू नव देह की वातनि में मडि जाति ॥१९॥

उदाहरण ।

डूलहै निहारि फूलो फूलहै हिये में हिय भूलहै अन्तक वक रचना विरच की ।
लोइन चपल फुल लोइन चंपत चोप बोइन चढावें ओप को इन मुरचु की ।
देव दुलसी न सुलसीन रुचि खेलहि सो खीन होति सीख लें सखीन परपचु की ।
कचन कली ते^१ भुच रचक उचोहै चित सोचि रहे सकुचि सकोचि रही बचुकी ॥२०॥

^१ सी—अ० ।

नवल जनगा उदाहरण ।

भाल पर भागु लाल बंदी में सुहाग देव भुकुटी अराग अनुराग हुलस्यो परे ।
सखिन बँ सग में सुहाग राग रग रुचि रग भरे अगनि अगग उपस्यो परे ।
तन में सुभाउ दोउ तुनि वे रहे हैं पग दुलि वे परे न पैन दुलि के हस्यो परे ।
आनन्द सुगध तें सुगध जैसे फूलनि तें फूल से दुकूलनि तें रूप निवस्यो परे ॥२१॥

प्रथम प्रसंग ।

आमोद विनोद इदु वदनी गुविद गोद उदित उदार मोद आनी आदरीक लौ ।
पी की मुख सेज स्वाद सली सुग पाद ओट यई सुग ओसर तें सरव सरीर लौ ।
अचर उचार्क भर बोरें कुच बोर लागि औचक उचरि परी छवि की छरीर लौ ।
देव देगी बावरी सुहाग की विभावरी में डावरी डरनि भई घावरी परीर लौ ॥२२॥

मुरतान्त ।

हिरदं बठोर ऐसे निरदं निदुर तेरे सिर ई गई ये पामि पाली की पमनि यह ।
सोच न सकोच तुम्हें लोचन न सोहै होत कंसी उरसाद डारी बेरा की बमनि यह ।
गाहक ही जीने^१ जू बहा बहौं नीने नाह नाहक गमाद आई साज की लसनि यह ।
अबहै उपाधि तजो आपिब जियत पर वापिब बपिब तेरी हा पिय हँमनि यह ॥२३॥

^१ गाहक जो जावे जू—अ० ।

मय्या उदाहरण ।

बैरिनि या अनचेरु बरे रही पीठि दिये रही डोठि अमंठी ।
आठरु जाम जिठानी भई रही^१ आठरु अग अटा इठि अंठी ।

प्यारे की ओर चितौनि न देति सरीजनि हूँ दृग में दुरि बंठी ।
देव जू कोटि इलाज कियेहु हौं देखति साज हिये ॥ में पंठी ॥२४॥

१ रहै—अ० ।

मध्याभेद ।

प्रगट यौवना अरु प्रगट मदना प्रगलभ बँन ।
सुरति विचिना चारि विधि मध्या साज समँन ॥२५॥

प्रगट यौवना उदाहरण ।

को है वह देखि महा मोहनी को भेल घरँ नगमिग देव-देवता को अवरोध सो ।
ढगमगे पग मग रूप रममगे अग जगमगे जोवन का जावन विमग्न सा ।
या मुख भयक जीरयो लक भृगराज हू को भृगदृग देखे दृग लग्यो न निमग्न सो ।
मद मृदु हास सौभा सुन्दर बिलास आसपास तँ प्रवास को परन परिवेस सो ॥२६॥

प्रगट मदना उदाहरण ।

नद जू के बार देव आए बृषमान द्वार सींही पीरि दीरि सखी बह्यो कर बाम सा ।
घाइ गही घाइ देख्यो चाहि बलि घाइ पै मडधो न परँ पँधट^१ बडधो न परँ घाम सा ।
मदन सदेह^२ जाग्यो सदन सदेह लाग्यो पाग्यो पन पूर्यो मन लाग्यो जाइ स्वाम सो ।
त्रिभुटी चडाइ को लौं भृकुटी भराइ गहँ सागि रही लोइन तराई लाज काम सो ॥२७॥
१ प्रेम पँटयो नवबधू पँट—अ० । २ सदेस—अ० ।

प्रगलभ धचना उदाहरण ।

लागी प्रेम डोरि खोरि साँवरी हूँ बडि आई नेह सो निहोरि जोरि आनी मन मानती ।
उत तो उताल देव आपु नद लाल इत सींह भई बाल नव साल मुव मानती^१ ।
काहू बह्यो टेरि वं कहां तँ आई को ही तुम लागनी हमारे जानि बोई पनिबानत्री ।
प्यारी कछो फेरि मुल हेरि जू खलेई जाहु हर्म तुम जानन सुन्देहँ हम जानती ॥२८॥
१ मुल सानती—अ० ।

विचित्र सुरता उदाहरण ।

हूँ रहै अचल दुति दोपन सनीप पर आगेही तँ जीने मुखबद की उग्यारी के ।
पिन्नरनि मजू रब सार्यो मुन चार्यो ओर केकी कुल कोबिल कपोत किलकारी के ।
अम अग नाबत अनग रगभूमि नकी भृकुटी नटी से सग नैव नृत्यवागी के ।
चित्रनि बनुर मित्र मुरत विचित्र चिने चातुरी खरिन चित्र मोहै चित्रमारी के ॥२९॥

मय मध्या की सुरत ।

बातनि में खूबनि अचूब चिन बूबनि बिभूबनि औ भूबनि^१ सो सूबनि लसनि मो ।
दोननि अडोल मन खोलति न बोचनि विनोन दृग सोल तनु सोनति प्रगनि मो ।
मोरनि^२ मरोरनि बिघोरनि औ जोरनि सो तोरनि निहोरनि सनोरनि मगनि मो ।
गोबनि गतावनि न दूमनि^३ न तूमनि सो रोबनि रिगानि रमरूमनि हंगनि मो ॥३०॥

१ खूबनि—अ० । २ मोरनि—अ० । ३ रूमनि—अ० ।

प्रौढा चतुर्विधि लक्षण ।

लब्धापति रतिकोविदा वस बल्लभ सविलास ।

चोविधि प्रौढा सुरति सुख सम्मुख मोहन हास ॥३१॥

उदाहरण ।

घाइल करत^१ कर साइल मृगनि दृग कुटिल कटाछ सर भुकुटी धनुक के ।
 कज कर^२ मजु र्व ककन अनूप पग भू पर घरत वजे नूपुर भनक^३ के ।
 देव सोधि सुधारी अगाध सुधा सिधु सुद्ध मुघा सी मुघाई वैन सुघा की बनक के ।
 वदन सुधाघर सुधाघरै अघर कुच तनक तनक वधु सुघर वनव के ॥३२॥
^१ पाइल करत-अ० ।^२ वर-अ० ।^३ वनव-अ० ।

रति कोविदा उदाहरण ।

आरभन धभन सदभ परिरम कुच हनन सरभ अर चुवन घनेरेई ।
 सोजन विमोहन वसीकरन सी करन डाटन उचाटन सु चाटु चित घेरेई ।
 रीति रति प्रीति अनरीति विपरीत अति भीति हार जीतिहू रहति हिय हेरेई ।
 भौर ज्यो सुवास विसवास वस बस्यो रसमस्यो निसि वासर विलास वस तेरेई ॥३३॥

वशावलभा उदाहरण ।

कचन किनारी जरतारी के पटवरानि छाति छहराति छिति छवि को पहल सी ।
 चमकत चामीकर रचित चवारो चार्धो और कौर कौर वर तोरन सहल सी ।
 जगमगी सेज पै मुहाग रगमगे दोऊ दपति को देखै देव सपति सहल सी ।
 सुख की टहल मुकुताहल महल बीच केसर कपूर कीच चदन चहल सी ॥३४॥

हुलास भरे भौहनि विलास भरे भाल मृदुहास भरे अघर सुधारस घुरे परे ।
 अग-भग आतुरी महातुरी नचावै मैन वैन कर सैन चित चातुरी घुरे परे ।
 सुखद सुभाव देव कोमल विभाव हाव भावनि के लाल चलि लालच घुरे परे ।
 सोचनि ही सोचे चित चोर मृग लोचन के लाज भरे लोचन लकोचन घुरे परे ॥३५॥

प्रौढा को सुरत ।

दोऊ रति पांडित अलडित करत वाम स्वाम स्यामा मडित वला कुहू पुरनि की ।
 चूनि चूकि चकनि अनूक उचकनि चौकि चास्ताई मोनिन के चौरन पुरनि पी ।
 गभीर सुरत परिरभ सभरं न देव वीन गनै रति दभ रभास पुरनि की ।
 विनिनी समाजनि की शाजनि मघुर सुर भाजनि विराजनि अनूप नूपुरनि की ॥३६॥

प्रौढा सुरतांत ।

जागे सत्र जागिनि जम्हात जोर जोवन वे जोरि भात अगिरान भुज बोरी बोरी लै ।
 सोपे की सुबाग आसपास लें मघुप पुज गुजि गुजि मामरें भरत सग भोरी लै ।
 भीतरे भवन देहरी छरे न पाउ धरे भ्रानन गहेली द्वार वेत्री गृह पीरी लै ।
 नायिका मुघर वर नायक प्रपच पच नायक रच्यो री गुनि दोरी वर चोरी लै ॥३७॥

प्रौढ़ा को सुहाग-सिखा ।

मदन सदन मुख सनमुख नूपुरनिनाद रस निदरि अनादर अरेरि माह ।
 देव हसि हरे हरे हेरि हर्षई सु करि गर्षई गिरा सो गुन गान न गरेरि माह ।
 तामरम मुख पै तर्प्योनि तमकि तीली तरल चितोनि तीखे चलनि तरेरि माह ।
 बालम की गोद चहुँ कोद को विनोद मोद सुमननि मानि दुसमननि दरेरि माह ॥३॥

सखी की सिच्छा ।

जो रस माने सु रोम करै रस में हनि रोस करे भटको मति ।
 देव मिही गुन प्रेम को तागु पुछो मन मानिब सो भटको मति ।
 है मुख को अँखियानि लै पै सखियानि की बाननि मा भटको मति ।
 है दिन पी के सुहाग सो फूलिकं भाग सो भूलि भटू भटको मति ॥३६॥

जाने सुहाग को भाग भयो अनुराग भयो जग में जसु गैयै ।
 रोसहु में रिस में सुनिहारे सम असमै बस में हरि हैं यै ।
 देव जु सीतलिन सो बलि पूछिये सो निनको सपनेहु न पयै ।
 तासो रिमात लज्ये जु क्यों नहि जाने रिमात रमानल ज्यै ॥४०॥

इनहीं के भेदान्तर ।

इति तृतीय विनोद ।

दगा अवस्था हाव दग जघपि मवन विषानि ।
 तदपि मुखनि प्रम तें बहुत मुग्ध मध्य प्रौढानि ॥१॥
 मुग्धनि पूर्वनुराग में बहो दगा दम भाति ।
 अरु मध्यनि की अवस्था भेद बहो दग जानि ॥२॥

हाव भान प्रौढानि में ताहन निरतर होत ।
 चेष्टा मुग्धा मध्य में भय लज्जा रम पौत ॥३॥
 मुग्धा नवल निनोर के प्रथम पूर्वत्रनुराग ।
 मिलन हेत हिय दुहुनि के विरह दगा दम भाग ॥४॥

बस दसा नाम ।

होय प्रथम अभिनाय अरु बिना सुमिरन भाग्यु ।
 अरु गुननया उद्वेग दुग तब प्रनाय विनु राग्यु ॥५॥
 होत व्याधि उन्माद हँ जडता मरल निदान ।
 विरह दगा दम प्रगट ए पूर्वनुराग प्रमान ॥६॥

आसी भुनावनि भूकनि मा इत्यादि ॥७॥

“आती भुनावनि भूकनिगो भुनि जाति बटी मननानि भरोरे ।
 सपन भयन बीच सतापन बेनी बटी सु गटी पित छोरे ।

या विधि भूलत देखि गयो तब तें कवि देव सनेह के जोरे ।
भूलत है हियरा हरि को हिय माह तिहारे हरा के हिडोरे ॥”

—सुजान विनोद, ७:२५

मिलनेच्छामिलाप उदाहरण ।

पहिले सतराह रिसाइ सखी जदुराइ पै पाइ गहाइये ती ।
फिरि भेंटि भट्ट भरि अक निसक वडे खन लौं उर लाइये ती ।
अपनो दुख औरन को उपहास सवै कवि देव बताइये ती ।
घनस्यामहि नेकहु एक घरी कहू ह्या लागि जौ करि पाइये ती ॥८॥

प्रेम महानिन सां पहिले हरि काननि आनि समीप किये तैं ।
छाडि सकोचन लोचन लालची लोचत ही रहै सोच लिये तैं ।
देवजू झूरि तैं दौरि दुराइ कैं मोहन मोहिं दिखाइ दिये तैं ।
धारिज से बिकसे मुख धँ निकसे इत हूँ निकसे न हिये तैं ॥९॥

चिंता उदाहरण ।

छर्वे के छोभन छोजत ही^१ छतिया सु छिपाइ करं बहुतेरे ।
जीवित नाय सो जीव सनाथ सो साजति साज के साज घनेरे ।
तेरो कछु न लगै बिलगै जिन देव अजयो जिय जान जियेरे ।
पा परि देव रट्यो मरि रे मति मेरो कह्यो करि रे मन मेरे ॥१०॥
^१ छाजत ही—अ० ।

धिरह निवेदन नायिका सो ।

आपिन देख्यो नहीं दुख जो बहु काननि जो न मुनी दुचितार्ई ।
देव बहा कहीं देह दहै सोइ नेह नयो कैं अनोखी मितार्ई ।
भोजन पान कहा मुख सोइयो सैन घरीकन रंनि रितार्ई ।
चट्टिका मदिर चद्र मैं चित्त दै चंत की राति अचेत बितार्ई ॥११॥

ध्यान लक्षण ।

चिंता बडि चित्त विवत हूँ नरै मित्र को ध्यान ।
आठो मात्विक् भाव तह द्राग तत्व विज्ञान ॥१२॥

उदाहरण ।

राधिका बान्ह को ध्यान धरै तब बान्ह हूँ राधिका के गुन गावै ।
त्यो^१ अँमुवा बरसै बरगाने को पानी पिये निगि राधिके ध्यावै ।
राधे हूँ जाइ तेही छिन देव मु प्रेम की पानी लै छाती लगावै ।
आपु त आपुनी मैं उरभै मुरभै बिरभै समुभै समुभावै ॥१३॥
^१ ती—अ० ।

हरि मूरति को धरि ध्यान रही रति पूरति^१ प्रेम हिनोरन ही ।
 ब्रज चद्र जू को चित्त मुदर जानन चद्र चिने चित्तचोरन ही ॥
 कवि देव रही रम घूमि धनी हिये हेरि हनी दृग कोरनि ही ।
 सुकुमारि भु मारि भु मार करी मरुतो मरं मार मरोरन ही ॥१४॥

^१ मूरति—अ० ।

ध्यान को बिरह निवेदन 'प्रेम तरल चद्रिका' मे है ।

जागल जागत खीन ॥१५॥

"जागन जागन खीन भई अब लागत मग खीन को भारो ।
 खेलिबोळ हंसिबोळ कहा सुत्र मो वसिबो बिसो बीम बिमारो ॥
 प्यो मुधि छौम गेबावति देव जू जामिनि जाम मनो जुग चारो ।
 भीरज नैनी निहारिए नैनन धीरज राखन ध्यान निहारो ॥"

—प्रेम-चद्रिका, २ ३७

गुण बचन ।

सुमिरि परसपर दपनी रहन सरम रम पागि ।

बिरह मयन पिप गुण बचन बरनन अति अनुरागि ॥१६॥

वद्य हरण । चद्रिकाया 'ए विनु' ॥१७॥

जे विनु देखे गये दिन बीनि न को पछिनाउ अरो हिय हैए ।

देव जू देगि उट्टै ही दुखी भई या जिय को दुख बाहि दिगैए ।

देखे बिना दिख मापन ही मरि देखुरी देखन ही न जपैए ।

देवन देखत देखन ही रही आपनी देखी न देखन पँए ॥'

—प्रेम-चद्रिका, २ ३८

उद्वेग लक्षण ।

बरनि बरनि गुन मित्र के बाटन बिरह अनेग ।

भरी बस्तु नागा लगे प्रगट होइ उद्वेग ॥१८॥

उदाहरण ।

रग भीन भीनर उभीनर अतर रग रावटी उगीरन तें द्वाइम दह्यो परे ।

ककरी ककरीग मीति मीति दृगनि देव द्वार देहरीनि देगि देह रो दह्यो परे ॥

बूकि कौबिला कुन बरन बन आकुन निबुज मजु गुज अति पुज उमस्यो परे ।

गोपे पग धीरज बिलोरे ये गधीर धीर रानी हरो कोरे हरि भीरे न रस्यो परे ॥१९॥

जीने गुण नीचे बाहू जानन नबीके जानिहारे जाय तापन नबीके जरि जावरी ।

नीर बिन मीन ज्यो मनीर बिन धीन जन दुगी देखिबे को भूरि भूग भरि जावगी ॥

देव घनमार कपुरेनि को बिनार्ये सोपि मेष्टु तुमार ज्यो पुरेनि परि जानगी ।

राजरीट वीनी भृदु मजरी महज मार मार मारिक उरकि के भु मरि जावगी ॥२०॥

प्रलाप लक्षण ।

दयति के उद्वेग हू बाढे विरह अलाप ।
चित्त उतकठा प्रेम पिय पेख्यो प्रगट प्रलाप ॥२१॥

उदाहरण ।

जीभ कुजाति न नेकु सजाति गने कुल जाति न यात बह्यो करे ।
देव नयो द्विय नेह सगाद विदेह की आंचनि देह दह्यो करे ॥
जीभ अज्ञान न जानत ज्ञान जु आन अज्ञान के ध्यान रह्यो करे ।
काहे को मेरो कहावत मेरो जु पं मन मेरो न मेरो कह्यो करे ॥२२॥

नाखिन टरत टारे आखि न सगत पन आखिन सयेरी स्याम सुदर सलोन से ।
देखि देखि गातन अघात न अनूप रस भरि भरि रूप लेत लोचन अचीन से ॥
एरी कहि कोही ह्यो कहा ही कहा कहति ह्यो कैसे धन कुज देव देखियत भौन से ।
राधे ही सदन बैठी कहती ही कान्ह कान्ह हाहा कहि कान्ह वे कहाँ ह्यो कोहँ^१ वीन से ॥ २३ ॥

^१ कैसे—हाथिये पर दूसरे हस्ताक्षर में—अ० ।

सली को वाक्य ।

मैं न कही रो कहा भयो तोहि कहूँ मति मानिक सों मन लोलै ।
आई गमाइ कमाइ कहा कहीं यातन ही उतपातन तो लै ॥
बाहिर पौरि न दीजिये पाँउ रो बाउरी होइ भु आबरी डोलै ।
तेरी बलाइ बनें रो बलाइ ल्यो चूपति तो भुल तू मति योलै ॥२४॥

अयोन्माद लक्षण ।

प्रेम विवक्त वकि-वकि बनी बाढयो विरह विपाद ।
बिन विचार जो बछु करे ताहि कही उन्माद ॥२५॥

उदाहरण ।

आन की कहति आन आनति न आन आन वान आने अनाबानी बरे ध्यान ताहू को ।
बाबरी मयानी की सुमाउ री न जानी जाति बासर बिभावरी मुक्कावे वीन जाहू को ॥
कहि कहि उठति कहाँ है री कहाँ है कान्ह दौरि-दौरि भँटे देव सेवक समाहू को ।
मानति न काहू उर आनति न काहू जिय जानति न काहू पहिचानति न काहू को ॥२६॥

वे अपनी बरनी निनि देगत देव कहा न बनाइ बछू में ।
पादल ह्ये बर मादल ज्यो मृग स्यो उतही जनरादल भूमै ॥
मेटिये को ता ताप दुहूँ भुज भँटिये को भगट भुकि भूमै ।
चित्र वे मंदिर मित्र तुम्है लखि चित्र की मूरति को मृग भूमै ॥२७॥

ध्याधि अचरादि विचार उदाहरण ।

पल से पंनि परे गव अग दुबूननि मैं दुति दोरि दुरी-सो ।
आंगुन के जल पूरति साँसाँ माँ गनि साज इतान सुरो सो ॥

देव जू देखिये दौरि दसा ब्रज पौरि पं रौरि कया विथुरी सी ।
हेम वी बेलि भई हिमरासि घरी पल घाम में जाति घुरी सी ॥२८॥

दसम दसा लक्षण ।

दसम दसा सो मूरछा कहूँ मरन हूँ जात ।
ताहूँ तो विधि बरनिये जामे रस न नसात ॥२९॥

उदाहरण ।

हूँ^१ अभिलाप संचित भइ हरि को घरि ध्यान वहूँ मुन गोत ।
पानी न पान न पौन हूँ चैन भई वकि बावरी कालि परो तै ॥
भारति सौं न सम्हारति आजु भई अरविद ज्यो इदु उदोत ।
केलि के भौन सहेलिन की हिलकी सुनि कं किलकी सब सीत ॥३०॥
^१ हूँ—अ० ।

कान न सुनति आन आनन चितोति कहूँ आनन अनूप रूप छवि की छुधा भरे ।
लोचन कमल कुम्हलाने कुल कमला के बिलखि बिलाने विरहागि वसुधा भरे ॥
ढीठि विप डासी हूँ बिसासी विपधर स्वाम सेवत सुधाही देव दूभर दुधा भरे ।
ज्याइ क्षीजे जाइ प्याइ पीतम सुधाधर सो सुने हूँ तिहारे अकराधर सुधा भरे ॥३१॥
आए अचान सुने पति प्रान भयो सुख प्रान गयो दुख भारी ।
त्यो सुखदाइक को मुख देखि जगो नवल नव साज सम्हारी ॥
मोह समुद्र में बूडति ही गहि वाँह हियो भरि नाह निवारी ।
राह ने आनन तें निवसी विकसी मनो देव ससी वी उज्यारी ॥३२॥

एहि विधि मुग्ध बधूनि में विरह पूर्व अनुराग ।
अभिलापादिक दस दसा तव समोग सुहाग ॥३३॥

इति चतुर्थ विनोद ।

अथ मध्या विषय वशा वर्णनम् ।

मुग्धनि पूर्वनुराग में वही दसा दस माति ।
अथ मध्यनि की अवस्था भेद वही दस माति ॥१॥

अवस्था नाम ।

स्वाधीना वासववती उला उडित वार ।
विप्रलब्ध बलहतरति गतपति वृत अभिसार ॥२॥
आठ अवस्था भेद ये बरनत मत प्राचीन ।
पिय विदेस गमनागमन जुत दस बहत नवीन ॥३॥

अथ तें सक्षण ।

सो कहिये स्वाधीनपति जाने पनि आधीन ।
वासवसज्जा सेज को साजे वार प्रवीन ॥४॥

प्रिय आगम वीतत समी उत्कृष्ट चित चीत ।
खडित वार^१ मु खडिता प्रातहि आवं भीत ॥५॥

^१ खडिस वार—अ० ।

विप्रलब्ध पति मिली नहीं जिहि सनेत बुलाइ ।
कलहतरिता बलहकरि पति सो फिरि पछिताइ ॥६॥
अभिसारिण पिय गृह चलै समै समान रूप ।
प्रोपितपति परदेस पति दै गयो अवाधि अनूप ॥७॥

स्याधीनपतिका उवाहरण ।

जाकी सबै विनु मोल की बेरी मु बोलनि के बल मोल लियो तै ।
साधन जो बिल साधन को मु महा धन तै भरि राख्यो हियो तै ॥
जोरे रहै दृग तो दृग देव जू दर्पन को प्रतिबिंब कियो तै ।
जो मधुरापर आनन सो मधुरापर आनन ओठ पियो तै ॥८॥
अथ वासपसज्जा अष्टयाम में ।

देव सली एव लीने फुलेल इति ॥९॥
'देव सली इव लीगुहे फुलेल मु चोया के जोरनि येव निचौरै ।
येक लिये कगही इव दर्पन बेरी लिये इक बीजन डोरै ॥
चीनी पै चद्रमुनी विनु कचुकी अबर में उचकै फुच फोरै ।
वारन गौनी अपू बडी वार की बैठी बडे बटे वारनि छोरै ॥

—सुरसागर तरण, ६३२

तेज के^१ समीप दीप दीपति जगमगाति दीपनि में चद रचि चद मुल चद की ।
भीति छिति छातिन छहरि उठै सोयो मद पौन में लहरि मालती के मयरद की ॥
नागरि नवीनै परवीनै कर बीनै देव गान रन लीने उर उमग अनद की ।
बान लगी आवनि धनी के धन ध्यान लगी प्रानि प्रानि प्राणप्यारे नद नद की ॥१०॥

^१ मेज की—अ० ।

उरका उवाहरण ।

आए न दवे मु आन दगा भई आनद गाहग की मति मूंदी ।
राजनैनी उठी अबुलाइ धरे अगुरी पर अजन बूंदी ।
पौरि लौं दौरि के देगो री देगो बहे कर दागै रहै पट पूंदी ।
आनी अमोछन अग छुटी गज मोनिन मग एट्टी अपगूंदी ॥११॥
पले पत्र पूछनि बिपन दृग मृगनैनी आए न बमननैन बाई ए अलपरी ।
जीम में जनप देव देगिबे की तनप मु भूतन परी है पै मुहाति न तन परी ।
रगिब रगिन तान बानातिधि भिनै तौनी बलानिधि मुग बिनबाई की धनपरी ।
केति के महन बानभातिनि अनेनी मबनप विनलप^१ ही में बजोह न बन^२ परी ।
^१ मत्र बानप विबन—अ० । ^२ तान—अ० ।

खडिता उदाहरण ।

साम्ब ससी ह्वै कं हसि विहसि कुमुदिनी के रहै चलि नीचे नलिनी के उर मूल तैं ।
कीनी निहचिंत हौं दुरत चित चिता भेटि देव सेवकिनि के सदाही अनुकूल तैं ।
सिसिर मयक सो ससक पवजनि जानि रजनी गमाइ भले भली भई भूल तैं ।
लाल लाल अम्बर उदित बाल भानु हेरि भोर विनु लाइन कमल के से फूल तैं ॥१३॥

मध्या घीरा खडिता को व्यग्य वचन ।

है परमेसुर ते पतिनी को सदा पति नीको जु लोक सहार्व ।
देव जू दोस कहा कहिये दुख औ सुख औ सहिये जु सहार्व ।
दूरिहू ते रहिये कर जोरि निहोरि पगौ गहिये जु गहार्व ।
काहे को रारि घडाइ बूधा कुल नारि चडाइ कुनारि कहाव्व ॥१४॥

विप्रलम्बा उदाहरण ।

निपट निठुर हठि कठिन वसीठी के पडाइ नव लग्यो आई गई दिन दूक ह्वै ।
लं गई भुलाइ गुरु बधु ते दुराइ चित वातनि चुराइ कीनी चातुरी अचूक ह्वै ।
बै उत मिले न मिले पपसर ताने सरदेव परपच रही पूछति कछूक ह्वै ।
केलि धन कुज तैं अवेली उठि बलि कठि नागिनि लौं कूनि भदनागिनि की ऊच ह्वै ॥१५॥

सखी सों ।

गौरिन को गुन गवं मु सर्वंमु ग्वोरि गँवावन हारि^१ सखी तू ।
यातन यो घर जात पने उतपातन^२ की विधि मैं न नली तू ।
ह्याइ भुलाइ मु मेरिय भूल चली अपने मुग्य मेलि मयो तू ।
देव जू भीत अमीत सुने नहिं होति सुनी भई सौनि सयी तू ॥१६॥
^१ मु सर्वंमु खारि गवावत हारि—अ० । ^२ उनपानन—अ० ।

असहतरिता उदाहरण ।

मेरे मन तेरे गुन औगुन घनेरे कहा औगुन गनाऊ गुन गाऊ गहि बोन को ।
देख्यो सीख्यो देव तू दिखामेहू मिखाये बिनु तोही को दिखावे को मिखावे परबीन को ।
तब क्यों रिसान्यो अब पीछे पछितान्यो तं न जान्यो जड जीव या बिचारे दुग्य दीन को ।
तेरो कं पत्यारो प्यारो प्रीतम मैं न्यारो त्रियो प्रानधन जीवन उज्यारो जुवतोन को ॥१७॥

प्रेम पयोधि पर्यो गहिरे अभिमान को फेन रह्यो गहि रे मन ।
कोप तरगन सो बहि रे पछिनाइ पुकारत क्यों बहिरे मन ।
देव जू लाज जहाज तैं कूदि भज्यो मुग्य मूदि अजौ रहिरे मन ।
जोरत तोरत प्रीति तुझी यह तेरी अनीति तुझे गहि रे मन ॥१८॥

प्रोपितपतिव्य भेद ।

अतनहार परदेम पिय अरु पिय आवनहार ।
अरु विदेम पनि तोनि ये गनपनि भेद विचार ॥१९॥

देव कहा बही देखत ही बने सुदरताई को मंदिर सो है ।
चौकनी चौकनि चालि चितौनि बराबर वारन गौन को को है ॥३६॥

विचिह्नत उदाहरण ।

भूपन भेष विसेष बनावै न देखत देख महासुख दैनी ।
चार चितौनि बिलोचन वाननि सान चढाइकरी अति पैनी ।
देव दिपे दुति मोतिन तें अति जोवन जोतिन सो जग जैनी ।
मोहन के मन रजन को करै अजन दै दृग खजन नैनी ॥३७॥

विभ्रम उदाहरण ।

सोषत तें उठि आई प्रभात प्रभा तकि प्रीतम पेम सो पागे ।
देव इतो इतराति अहो इत राति लसै अखिया निसि जागे ।
लक लटे उलटे पट भूपन ऊलटि ओर छुटि सट आगे ।
रूप को मूल अनूप दुखनि मूल मई सु भलै अति लागे ॥३८॥

किलकिंचित उदाहरण ।

देव इती अनरीति अनोति की प्रीति की बातन ही पहिषानती ।
आवती हौं जु बुलाए बिना अनबोले तें बोल कुबोल बखानती ।
खेल में को गनै छोटी बडो अरु बयो हू गबो रत भौंहनि तानती ।
रोषति सी हसती सी रिसाती सिस्पाती बहै पर मान सु ठानती ॥३९॥

मोददाइत उदाहरण ।

भाग बडोई बडो अनुराग सुहाग बडो जग जानत जैसो ।
तापर तूठी सी रूठी रही अहो तूठी न रूठी न मूठी में है सो ।
देव जू प्रीति की रीति न बैर न प्रीतिन बैर कहो मतु तैसो^१ ।
मेरो अयान समयन तिहारो कि मान जिना अपराय गु बँसो ॥४०॥
^१ तुम तैसो—अ० ।

कुद्वमित उदाहरण ।

स्वारय ही के हिनू हित ही के हितारय ही जिय जीवन जीये ।
तगह अगही अग मिले रति सग सरै रिसरै मुग फीये ।
हानि गर्न न मिटै बुनवानिहू जानि मुटावत सोड की लीये ।
देव जू देखे महा मुगदानि हमें दुए दै मुग पावत नीये ॥४१॥

विध्योक उदाहरण ।

आए हैं पंन्हि प्रभातहि प्रीतम मोति की मोहन माल गडाई ।
देव निहारि मु दूरही तें बर नारि सगोन सो राति बडाई ।
टेढी बरी भूबुटी त्रिबुटी भरि डोठि छुटी दुग मान बडाई ।
प्यो द्वियो रोपि निमानो नगच्छत कोपि ज्यो काम बमान बडाई ॥४२॥

विहृत उदाहरण ।

प्यो मुखदैन सौ बोली न वैन गई करि कं कर सैन सहेली ।
ताहि निहारि कं लाज निवाहति चाहत चित्त क्रियो रम बेली ।
बाम कमान सो भौहैं चडाइ कं वान से नैन नचाइ नबेली ।
देव सु दामिनि सी दुरि दौरि कं भामिनि भौन के बोन अकेली ॥४३॥

सलित उदाहरण ।

लागत समीर लक ॥४४॥

“लागत समीर लक सहकै समूल अग फूल से दुकूलनि सुगघ विधुर्यो परै ।
इदु सो बदन मदहासी सुचारिबिदु अरविद ज्यो मुदित मकरदनि मुर्यो परै ।
सलित लिलार थम भलक अलक भार मग में धरत पग जावक धुर्यो परै ।
देव मनि नूपुर पदम पद दू पर ह्वै भू पर अनूप रग रूप निचुर्यो परै ॥”

—सुजान विनोद, ५ ४४

गोरे गोरे गात नवजोवन जगमगात उदित अनूप छवि रूप छवि सा लसो ।
पेलनो सो पेलत विलास हास देव द्रुति देवत उठन द्विये होत अनि हील सो ।
नल सिल खोजत मनोज वे विसिल खोज ओज चित चोत्रनि वो नेह नित नील सो ।
क्रीने भिलमिले पट घूघट में भनवति ललित लुनाई सो कलित मुख बौल सो ॥४५॥
जगमगी जोतिन जराऊ मनि मोतिन की चद्रमुख मडल पै मडित किनारी सी ।
बेंदी बर बीरनि गहीरनि की देव भूम भूमका भूमक भूमक भीर भारी सी ।
अग अग उमड़यो परत रूप रग नव जोवन अनूप की तरग चटवारी सी ।
आगे आगे मनिन तें जगर मगर होत सखिन सजोए पीछे आवनि दिवारी सी ॥४६॥

इति श्री सुमिल विनोदे पद्यम विनोद ।

अथ विधोग शृंगार विषय मानप्रकास करणालोक वर्णन—

पिय को दन्दिन बाम लगि तिय द्विय मान सदेह ।
पूरन मान बखानिये पति सठ घुष्ट सनेह ॥१॥
ज्येष्ठा और वनिष्ठका दुरित अन्य सभोग ।
विप्रसन्ध हू खडिता मान बखानत सोम ॥२॥
मुग्धा मध्या प्रीठ निय ऊठा और अनुठ ।
अम तें इनकी मानविधि बरनन गूठ अगूठ ॥३॥
गुरु मध्यम लघु भाति पनि गुरु मध्यम लघु दोष ।
धीर अधीरा मध्यमा धीरादिन बय पोष ॥४॥
गुरु मध्यम लघु भेद ये अरु धीरादिन भाइ ।
मान अवस्था नियनि की मूढम सहज गुमाइ ॥५॥
स्वकिया सर्वमु मान है परकीया बग प्रेम ।
गमुभन रमिब मुनार ज्यो बन्धो बगोटी हेम ॥६॥

क्रम से लक्षण ।

अबिक नेह पिय जेष्ठ तिय ऊन सनेह कनिष्ठ ।
नेह निबाहे चातुरी रहै दुहू को इष्ट ॥७॥
दासी सखी की दूति सो गुपित करे पति नेह ।
दुखित अन्य सभोग लखि होत मान सदेह ॥८॥

सौतिन के सपति सुने रूप सोल गुन सर्व ।
करति मान को अग लँ प्रेम रूप को गर्व ॥९॥
पति पर परतिय चिह्न लखि करति तिया गुर मान ।
मध्यम ता मुख नाम मुनि दरसन ता लघु जानि ॥१०॥

१ लघिम मुजानि—अ० ।

साम दाम नति गुरु छूटे मध्यम सो गहि पाइ ।
लघु छूटे पति प्रेम गति कया कुतहल भाइ ॥११॥
गुरु मध्यम लघु मान को मुग्धा मूधम भाव ।
अह धीरादिक भाव नौ मध्या प्रौढ सुभाव ॥१२॥

प्रौढा धीरा कोप करि नोप अधीर अधीर ।
धीरा धीरा मध्य रूप रोदन वचन गहीर ॥१३॥
मध्या धीरा ध्यग हल सो अधीर अव्यनि ।
धीराधीरा लच्छना लच्छित दोऊ इनि ॥१४॥

क्रम से उदाहरण । ज्येष्ठा कनिष्ठा उदाहरण ।

खेलत आत मिहीचिनि खेल मिहीचत आति बतावँ न बाहू ।
दूसरी को पट लेत उठाइ छिपावँ मिलँ छतिया छतियाहू ।
देव इतँ कर दाबत याहि कहै उत बाहू सो दूदन जाहू ।
पूछि बछू मति बाहू सो भूमत भूठे ही भूमत भूमत बाहू ॥१५॥

अन्य सभोग बुद्धिता उदाहरण ।

देव को बावरी पावरी होइ बहा पवरँवो जु र्प मरिखे ही को ।
जानि के कौन मरँ बिनु मीच मरँह न काम बछू सरिखेही को ।
सेतो हसो मुनिवँ सलु सोई इलाज करँ मु करो सरिखेही को ।
जार्प मया करँ ताही को भाग जो साक्ष होइ मया मरिखे ही को ॥१६॥

प्रेम-गविता उदाहरण ।

राग रगीले मो री बहिये बत रागटि के मृग रावरे हँही ।
देव दवे रहो देने बिना दिग्माधा ही दुग बावरे हँही ।
घर परँ घर घातिन के घर ही घर टोनन हावरे हँही ।
पोग पनी घनपोर गुनँ घनग्याम घगीन में पावरे हँही ॥१७॥

रूपगविता उदाहरण ।

भूलें मति बधु हें मदध मधुकरनि को तो में तो बधु मुग्ध सुगध सरमाते ही ।
रहिरे कमल जल गहिरे गुमान तजि गहि रे चरन सोभा सबही सुहाने ही ।
वृन्दावन चद देव भए तो जनद वरौ चदमुखी मोहू सो अक्क कहि तातें ही ।
एरे मुख मेरे की बराबरी करत हिमवर भोर होत ही हमारी तैरी बाले ही ॥१८॥

मान उदाहरण । मुग्धा को मान उदाहरण ।

ओठनि तें उठि बैठि कथानि पै अंठि मुरयो न कहूँ मुख मोरन ।
देव बटाछनि तें कठि कोप तिलार चढयो बठि भीह मरोरन ।
अन मैं आई मयल मुची लई लाल को बक धितें दृग कोरन ।
आमुनि बूडघो उसाम उडयो किचो मान गयो हिलकी की हिलोरन ॥१९॥

मुग्धा की सखी ।

सुंदर जोवन रूप अनूप निहारत काहि न सागत नीको ।
देव जू दोस बहा मुख देख्यो परोस पछावर की रमनी को ।
पै इनही को सुभाव अनेसो हिये घरि रागती घोयो धनी को ।
आमुनि बूड दुहू दृग कोरनि धाम गडघो पन ज्यो निघनी को ॥२०॥

अप प्रीका को गुरु मान ।

प्रीतम आए प्रभात प्रभा तनि रग रये कहु सग किये तें ।
दूरि तें आवन देखि हसी द्विप तें उबसो न विराग लिये तें ।
थाने मनाइ परे पिय पाइ मनोहर भाल गमाइ दिये तें ।
नैकु मूरयो बहुरयो विहस्यो मुख मान तर निबस्यां न हिये तें ॥२१॥

मग्धमान उदाहरण ।

दपति सोचत है मुग्ध सेज महा मुग्ध सा मुख सी मुख भौननि ।
ताही को नाम तें टेरि उठे अपने पिय जान बसे रग भौननि ।
सीटि परी मुनि प्यारी बरीट लं मूग्धत आठ उमाग के पौननि ।
नैकु गिरे न फिर बरुनीन रहे अमुवा बमिकें दृग को गनि ॥२२॥

तपु मान घषा ।

ऊधे अटा चडि प्यारी परीग की लोइन लाल उर्न महराये ।
देव मु देखत देखि दुग्गी भई आपु सो देखि हिये हहराए ।
न्यारी हूँ प्यारी परी उठि सेज दुहू दृग तें अमुवा बहराए ।
हासी के बारन दास भए हरवाइ खला तरवा सहराए ॥२३॥

धोरादि बोहा ।

मान मगं सुविद्यानि के व्यग वचन परधान ।
गवन सन्ददा सन्दिदय वाचकद परमान ॥२४॥

तिनकं ध्योरो

व्यग सुचेष्टा धीर तिय वच अव्यग अधीर ।
 व्यग लच्छना कर्म रख प्रगट सुधीरा धीर ॥२५॥
 प्रौढ धीर गुरु मानिनी सादर धीर उदास ।
 साम वाम पति सा प्रनति मानं जानं दास ॥२६॥
 प्रौढा धीरा धीर को व्यग वाक्य रख जानि ।
 केवल वाच्यहिं पुरप सो प्रौढ अधीरा मानि ॥२७॥
 व्यग वचन पति सो कहै मध्या धीरा नारि ।
 धीराधीरा^१ करिखदन अधीरनेह निरवारि ॥२८॥

१ धीराधीर—अ० ।

वाच्य व्यग लक्षणा के लक्षण ।

वाचक सूघे शब्द में वाच्यक अर्थ सुभाव ।
 भलकत व्यजक शब्द में व्यग्य अर्थ को भाव ॥२९॥
 वाच्यक व्यजक शब्द हू वाच्य व्यग के बीच ।
 लच्छ अर्थ लाच्छनिक में प्रगट सीटि नगीच ॥३०॥
 अभिधा सूधी बात है सीटि लच्छना फेर ।
 तातपजं घुनि व्यजना तिहू वृत्ति को हेर ॥३१॥

अथ वाचक शब्द अर्थ की वृत्ति अभिधा के स्थान ।

अभिधा सूधी बात के जाति कर्म गुण वाम ।
 सम्मुख बचननि वृत्तिये अरु निज सज्ञा नाम ॥३२॥
 रुडि प्रयोजन कछु करै वाच्य अर्थ की भूल ।
 लच्छ सीटि प्रगटत निवट होत व्यग को भूल ॥३३॥

अथ लच्छना के स्थान ।

स्वपर अर्थ सारोप अरु बहिये अप्यवमान ।
 सदुदा भाव विपरीतता आछेपक अनुमान ॥३४॥
 कारण कारणहू वही सबल लच्छना द्यु ।
 घुनि सज्ञा मुर चेष्टा घुनि तातपजंहू विमु ॥३५॥

इत तिहू शब्द को प्रस्तार है । अथ अभिधा के स्थान ॥१॥ अथ लच्छना के स्थान ॥२॥ अथ व्यजना के स्थान ॥३॥ जानि वर्णन ॥१॥ सदुदा भाव वर्णन ॥१॥ घुनि विचार ॥१॥ कर्म वर्णन ॥२॥ विपरीत भाव वर्णन ॥२॥ सज्ञा विचार ॥२॥ गुण वर्णन ॥३॥ कार्य कारण भाव वर्णन ॥३॥ स्वर विचार ॥३॥ सज्ञानाम वर्णन ॥४॥ आछेप गुणताम ॥४॥ चेष्टा विचार ॥४॥ तातपजं ॥५॥३६॥

मध्या घीरा उदाहरण ।

आजु हौं नाय मनाय करी इत आइ त्रियो चिन तँ हिन भारो ।
देव मुनी चिन हँ बिर हँ गहै नागवनी जेहि नँकु निहारो ।
घन्य अबान निवास कियो जिन जग मुवाम मुवाननि भारो ।
मोक्षनि नै गुरु बसुनि की मन लेन है मोल मुग्ध निहारो ॥३७॥

१ तेहारो-अ० ।

मोक्षह मह्य ब्रजनारो सब यो कहत जाते हौ निषट जहा जिनके सनेत हैं ।
केहि विधि दपनि परमपर लेत रम दानी पटरानी पर बँडे मुग लेन हैं ।
तुम तो मग्धा हो अब माची कहौ ऊयो मोमो काम के उमाहे राम बँडे रम लेन हैं ।
कीने विधि बुविजा पं पोटिबेको बन आवैं खाट काटि^१ देन हैं कि खाटा^२ खोदि लेन हैं ॥३८॥

१ काटि-अ० । २ कि खाटो-भून में, उनी हस्ताक्षर से 'कि खाटो' का 'कि खाटो' बनाया गया है-अ० ।

सादृश्यरूप लक्षण स्वर विकार व्यय । मध्या अधीरा उदाहरण ।

मोक्षतहू नहि भूलें तुम्है मपनेहू मैं बाके बियोग बराही ।
जागन मैं दिनरानि कहा कही बाही के व्यान न मूमन राही ।
देवजू बीर को ओर कहा तुम नो हरि बाके हिये के हग ही ।
मो बडभागिनि मा अनुरागिनि मोर सुत्रागिनि जाहि मराही ॥३९॥

विपरीत लक्षण रूप में ध्वनि व्यय । अथ मध्या घीराघीरा उदाहरण ।

देव बहू घरतं गरज बहू पार न कान बहू उमडेई ।
सौमल माभ प्रभात के भानु मैं जानि महातप तेज मडेई ।
भागु बडो जग जानिये ताही को बाके रही प्रभु प्रीनि मडेई ।
बूढ बडो लघु लंगनि ही बँ बडे मव दाननि गान बडेई ॥४०॥

अभिधा ध्वनि व्यय । प्रौढा घीरा उदाहरण ।

मौन घरे रगभौन मे भामती भोर ही आवत भौंहनि अँटी ।
दूरि तँ आदर दे उठि पीठि दे दासी मा रोम बँ डीठि अमँटी ।
स्वावन कां पग दावन को कह्यो मूदरि मान के मदिर पँटी ।
चित्त चर्न न हर्न महर्न न बहू टहर्न टहर्न बरँ बँटी ॥४१॥

प्रौढा सौं नायक की उचित नायिका की प्रत्युक्ति ।

बँने रुठि बँटी कब रुटी थौं ग्याई सिहि भूटी मति कह्यो मानापागी जिक्कन ही ।
माना मा मँजें मत्र दीरें दडवन बगी मत्र तँ रही न मुग्धेव मिरकन ही ।
प्राप प्राप तपे नेह पने तो हिये बराहि ता बचन मौत जन बूद छिगकत ही ।
हाय डारि मोधि देउ हाय विर गयो नाय सौंगरी है मो नाय यो धरदं विरकत ही ॥४२॥

बोध रूप्य गुरुमान प्रौढा अधीरा उदाहरण ।

गुन मेर गिनारनि मान भने पर छाग दं छुदि लग तन दे ।
पट^१ पीग उगारि उगद दियो पर मान जगी अनापन दे ।

अब दास पराए उदास हूँ आए जू दाहिनो पीपर को बन दँ ।
तबही विनु मोल बिकाने है देव सु बोलत मोल लिये मन दँ ॥४३॥

१ पठ-अ० ।

अभिधा आवर अनावर ध्यंग मध्यम मान प्रौढा धीराधीरा उदाहरण ।

माथे महावर पाइ को देखि महावर पाइ सुदार दुरीये ।
ओठनि पै बनिक्ँ अखिया अखिया उन ओठन पीक धुरीये ।
सग ही सग बसी उनके अग अग वे देव तिहारे^१ लुरीये ।
साय मैं राखिये माय उन्हें हम हाय मैं चाहती चारि चुरीये ॥४४॥

१ निहारे-अ० ।

मानवती के वाक्य नायक सों ।

अजन अधर पीव पलक कपोल लीक सँदुर भलक वीक भाल भरमीले से ।
एहो बलवीर बलि गई बलवीर की सौं बोलत बिचल बोल साचे सकुचीले से ।
देव हिल बधनि पढाइ परबधनि सुगधनि बमाई प्रेम बधन तँ ढीले से ।
ढीले ढले पँचनि छबीले छवि छाके लाल लोइन सजीले ए रसीले रस गीले से ॥४५॥

निर्मल आरसी हौं ही तिहारी सिपारसी जाके हौ ताहू बुलाऊ ।
देव दोऊ मिलि रूप अरूप निहारिये मो मैं महा मुख पाऊ ।
भाल भए, रंगि लोइन लाल सु भाजियेहूँ को बपूर मगाऊ ।
प्रेम पियूख पियो जिनको यिन ही यिन आखिन को अन्हवाऊ ॥४६॥
हो तुम तो जुतही जु तही तुम वे इतही हित ही नित तेरे ।
है बहियेई को वे इनहो उनही के बसे सहवास बसेरे ।
मो दूग की पुतरी तुम स्याम तहा अभिराम ति-हैं तुम हेरे ।
दखिन याम मिले रही देव सु दखिन बाम दोऊ दूग मेरे ॥४७॥

प्रीड़ा मानवतीन की उक्ति ।

सेवक जानि वे सेव कराइये देव ही आतम देव विहारी ।
दूरि ही तँ कर जोरे रहीं बरजी न बछू बर बूज निहारी ।
सायव हौं न बही हिय लाइ बुनाइ बही मु नरीं हितपारी ।
पाइ नही मुख पाइ बही पिय पाइ बही उनही की निहारी ॥४८॥
रागनि जीव सदा रटि नीव सो जानत पीर पपीहा बहा की ।
देवि समुद बटै दुरा दुद समुद मुधाजन बुद जहाँ को ।
देव जू काम दुधा बजरी ओ नरी परि ए छरी यो न हानो ।
प्रेम घटा घुमडे घनस्याम निन उमड़े फिरौ भागु तहा को ॥४९॥
टेरि नही एमरो शिखा हरि हेरि निहारेई हाय हरायो ।
गो मुम लँ अनतँ बटू हारयो निहारि नँ हारि को नाउ घगायो ।
गाढ़ की पीर मुम्हें न तऊ अब सोरनि मैं अबनोर सरायो ।
देव दुभाय गुभाव तग्यो न मुभाय गग्यो दुग दांय परायो ॥५०॥

अथ सखीन की सिच्छा मानिनी सों ।

न्यारो न बीजिये प्यारो धनी न सदा घन काहू के भौन भरयो रहै ।

देव सु धन्य धरी घर ज्यो मुख आम्बिन को रिन आइ अर्यो रहै ।

तासो न बीजै अपानपनो अपनो मन को पन बयो न पर्यो रहै ।

भादो नदी पिय को अनुराग सराहिये भाग सुहाय घरयो रहै ॥५१॥

भूलेहू सो न गमाइये हाथ तें जो गुन पाइये साथ किये के ।

देव तहा मुन मोरिये बयो मुख आइ सर्व जग माहि जिये के ।

आपु तें डोलि के वोलि बसाइये वारक छोलि किवार हिये के ।

...

...

...

॥५२॥

सखी सों मानवती की उक्ति ।

प्रेम पढाइ^१ बढाइ के बधुनि दीनी बढाइ चढाइ किये^२ कर ।

सो अभिलाष्यो न काहू सो भाएयो इलाज सो लाज सो राख्यो हिये पर ।

साक सखीन के साक हिरान्यो विरानो भयो अज जान्यो मुअे वर ।

कीनो परोमु^३ एरो मुनि देख्यो सु देव परो सु परोसिन के घर ॥५३॥

^१ बढाइ—अ० । ^२ कप—मून मे, हरताल की सहापता मे 'किये'—अ० । ^३ परोमु—अ० ।

एहि विधि मानवतीन के धीरादिक बहु भाइ ।

लघु गुर मध्यम मानहू अथ लच्छ अघिकाई ॥५३॥

इति पष्ठम विनोद ।

प्रोगितपतिव बधून में वरन्यो तिरह प्रवास ।

वरणातम बरजा मिल्यो सो सिंगारामाम ॥१॥

कद्वारमक उदाहरण ।

सूर न पावत सो पदवी मुनि पूरन हों सुमिरे अबहू ।

अगनगारो तें जाने कहा रज रग नगारो बजावनहू ।

देव बहै सनमनिन सो जू सुहाय सती सो न बीजो अहू ।

माविक दै निकसे पग दै मर पावक दै निकसे न कहू ॥२॥

पतिनायक स्ववियानि को उपपति परकीयानि ।

सामान्या बनिनानि को नायक वैसिक जानि ॥३॥

सप्तम ।

गुठ इष्ट अरु चतुर पनि मुत्त मु प्रगट अनिष्ट ।

पति चौविधि अनुकूल अरु प्रम दग्धि सठ घूट ॥४॥

एक नारि अनुरून व्रत मवन निया मम दन्ध ।

मव भूठी अनुकूलना सपट घूट ममच्छ ॥५॥

पनि अनुकूल मु दग्धिनी उपपति मव कहूँ दन्ध ।

वैसिक घूट मु नम अथम प्रवृति देख नर रच्छ ॥६॥

अथ अनुकूल पति मुग्धा स्वोया ।

राज करो हित बाज न वृष्ण लाज अकाजनि को घर घेरेई ।
तू पट धूषट ओट बिये न निहारति भारत मार दरेरेई ।
नाह के नाते न हाते करो हित लोण सब दुलही कहि टेरेई ।
ऊलहे प्रेम दोऊ अनुकूल है दूलहे तो मिन तूल है तेरेई ॥७॥

मध्या अनुकूल उदाहरण ।

लाजि मरौं गुरु लोगनि में इनके मन में सुनि आवति है धिनि ।
देव कहा कहीं सेवक हूँ रहै कैसेहूँ कोई चवाव करो जिनि ॥
चौर दुलावत दावत पाँव विसासिनि ठाढ़ी हँसेये सवासिनि ।
देखो बधू बर जोरी धनी बरजेहूँ मैं ता बरजोरी करो जिनि ॥८॥

प्रीटा अनुकूल उदाहरण ।

होत न उदास यह जाको रिन दास कहै जान्यो देवता सु भरतार भरती रहै ।
प्रेम के प्रकास छिनु छाँडत न पामु निसिवासर निवास विसवास डरती रहै ॥
एते दुल जासु कैसे नीद परं तामु आसपास सब वरी सो उसास भरती रहै ।
कैसा रग रास बँसो सग को मिलास जहाँ नन्द सो सामु उपहास करती रहै ॥९॥

अथ दक्षिण उदाहरण ।

चोरी बँ राती चुराइ घने दिन वा चितचोर दुहनि सो हूँ मैं ।
होरी के ओसर गोरी गुमानिनि आनि भिटाइ हियो हि छुबँ मैं ॥
आपुस मैं मनिमाल दे साल दई बदलाई मिलाइनि हूँ मैं ।
सोति दोऊ पिय प्रीति उमाहिनी पाहुनी हूँ मिलि साहुनी हूँ मैं ॥१०॥

शठ उदाहरण ।

लाज तिहारी हौं आवनि बँ बसिहारी हौं देव बने कही वापर ।
पैय कहा तुमसो बहु नायक लायन हाइ कृपा करो तापर ॥
पूरी करी इनहूँ उन प्रीति भले सुति खेलन बेतल^१ पापर ।
धन्य मुहाग धनी तुम सो धनि ताही को भागु दया करो जापर ॥११॥

^१ खेलन—अ० ।

धृष्ट उदाहरण ।

चोर ही नि चार जोर हो जु निमिचारन हूँ सावन विचार हार हीरनि हिरँव की ।
आवन सवारही गुनावत निवार उठि धावत नि चार तनि चार उन जँय की ॥
जँग पापरत तँगे पापरत देव इन आय पा परत बतिहारी बिरहँगे की^१ ।
ऐसे अनुमाग्न कुमरति वा मारे मार मारी ही गुमार मुहँ शीम मार राँव की ॥१२॥

^१ चरण का पाठ—बँग पार परत बति गई बिरहँगे की—अ० ।

।।यक मग्य । अर्ध सचिच ।

हिरागो वाता पातुं मेवक हाय जो शीठ ।

पीठ मई विट घेट त्रम विदूषको मु बगीठ ॥१३॥

चारिहों को उदाहरण ।

प्राण पियारे मो ऋति रही अपनी मति तूठि के आपु नजीगी ।
 आपुही आपु मनाइ के माजन मेज के माजन ही को सजीगी ॥
 भोजन पान बिसारि के भामिनि मान तें जोजन^१ एक भजीगी ।
 कानिही देखि विद्रूपक को मुल मान कहा अभिमान तजीगी ॥१४॥

^१ मानन जोजन—ज० ।

नायक की दूती ।

अहे कहै क्यों न वह कौन मो कुरगननो कामिनि कही है कुलवानि मैं ।
 लाज को जहाज मुन जोवन गरव भरयो कौन कोन बूढयो सोभा निघु मुवदानि मैं ॥
 ऐंठि अठि बँठति अमँठि भूकुटी कुटिल सूघो हँ रहोगी वा सुधानिनि सी वानि मैं ।
 देव दुनि पून्यो चदहू को न गुमान रह्यो मान रहै केने मृदु मद मुखवानि मैं ॥१५॥

नायिका की सुहित सखी उदाहरण ।

मान करि बँठी मनभावन सो मौन धरि नोम्बी नई मानिनि मिलावो मन त्यो नही ।
 केमी ही सुघर घर धरिनी निहारि देखो घरी घरी दसनो करनि कोई यो नही ॥
 जीवहू को जीवन जनम जगमग्यो जानो ऐसी जीवनेनु त्रिनु जनमन त्यो नही ।
 ताहि मुल मृष्टि मो विहारि पनि क्यों नही दया देव दृष्टि मो निहारियन क्यों नही ॥१६॥

मान मोचन उदाहरण ।

हारी मनाइ मनावनहारि पें पीठि दै प्यारी न डीठि उवागो ।
 देव कहै पिय प्यारे की ओर चिन दूग कीर मिली मुदु हासी ॥
 मँन के मग मिले उठि नैन मु बँन मिलेवे की नाह निरामी ।
 जोवन जोर अकोरलिये तन जाइ मिल्यो मन मान नवामी ॥१७॥
 धूँधट घाट चलेंवे की बाट चन्व्यो दल भामिनि भीरु अमोर मो ।
 चोट करी भूकुटी भट पें त्रिकुटी तट पें वर गोचन वीर मो ॥
 पार भयो उर भेदि बिधा बडि सौनिन को तन प्राण अपोरु मो ।
 मँन के मग दिमान को देखि गयो छुटि मान कमान को तीर मो ॥१८॥

संयोग शृंगार उदाहरण ।

मूरनि सिंगार रति रगमा सग स्वामा चैन पूनो की विनामा समि ज्यो निहारियन है ।
 तीर तीर तरुनि अनत तारिका मो देव दिव्य दारिका सी दोषो देखि हारियन है ॥
 एरी उठि गँल ऐव पारी छवि छँल वा बदन दुनि बनुषा मुषा गुहारियन है ।
 रगिग रगान नव साल अग अग पर अग वारे कोटिय अनग वारियन है ॥१९॥

मूरनि रति सिंगार की दपनि नवल मरुप ।

जगभगान जग मैं मुन्नग जायन जगत अनूप ॥२०॥

इति श्री हिमगुल्फा सान विनोद हेतवे कवि देव प्रिरचिते सुमित विनोदे सिंगार रग
 निरूपण नाम सप्तम विनोदः ।

८० तसाह यधनो वीर रस उदाहरण ।

धनवत सोई धन सोई सपूत लसँ जस भूप अथाइन मैं ।
 वर ऊँचोई जाको वरोरनि बीच रहै रनदान के दाइन मैं ॥
 कुल जाके समीप सोई कुलदीप महीपति देव सुभाइनि मैं ।
 धन जाको वसँ मुख भूसुर के मन जाको वसँ प्रभु पाइनि मैं ॥१॥

शात रस ।

अग नग नाग नर किन्नर असुर सुर प्रेत पशु पच्छी कोटि कौटनि बडघो फिरँ ।
 माया गुन तत्व उपजत बिन सत सत्व बाल की कला को स्याल खाल मैं मडघो फिरँ ।
 आपुही भसत भस आपु आपुही अलख देव वहुँ मूढ वहुँ पडित पडघो फिरँ ।
 आपुही हथ्यार आपु भारत भरत आपु आपुही कहार आपु पालकी चडघो फिरँ ॥२॥

बधु को बधु हितू को हितू सुत वामनि जे धन धाम भरे पर्यो ।
 लालन लीग लगे अभिलाखन लालनि भाखनि भेप भरे पर्यो ॥
 बूढो भयो बढितँ ते गयो अब बँठि परी बढि तेज तरै पर्यो ।
 श्री महाराज गरीबनिवाज ही आजु तिहारेई आनि गरे पर्यो ॥३॥
 भोग भुलाइ सजोग डुलाइ के जोग लै लै सुनि लोप लरेई ।
 भूपति यो धन भार भडार गए गडि दाम सु धाम घरेई ॥
 देव वहुँ दिन चारि के स्याल मैं खेति गए खल खोइ खरेई ।
 काहू के सग कछू न गयो सब सँत मरे अकसेत मरेई ॥४॥

अग मैं अजुत सब जग मैं सजुत देव एक्कँ सूत मोतिन पुह्यो है बेह बेह मैं ।
 गहिरो गुनन गहिवे को निरगुनि गह्यो परत न गह्यो गहि रह्यो गेह गेह मैं ।
 हार्यो हेरि हेरि चुनि हार्यो फेरि फेरि मुनि हार्यो टेरि टेरि सु निहार्यो नेह नेह मैं ।
 मोलन सिरावत भिरावत सदेह मैं रहे तो देह देह मैं सहे तो देह देह मैं ॥५॥
 माया गुन बधन अचानक ही आनि जुर्यो जायो नाउ ठाउ रूप रेत गुन मूनतो ।
 गगन मैं तारो ज्यो उग्यारो हूँ अघ्यारो होत ताको कौन गौन भयो हेत ऐगो तूनतो ॥
 आवत बन्धुयो न जग जातहू धट्यो न कछू देव को विलास देव एसोई अनून तो ।
 एक्कँ सौ तरफ नच्यो बीच गयो बीच ही ते आगेहू कछू न ऐसे आगेहू कछू नतो ॥६॥
 कथा मैं न कथा मैं न तीरथ के पथ मैं न पाथ मैं न गाथ मैं न साधी की बसोति मैं ।
 जरा मैं न मूढा न नितन त्रिपुष्टा न नदी रूप गुहन न न्हान दान रीनि मैं ॥
 पीठ मठ मडल न गुहन कमडल मैं मन्ना दड मैं न देव घोहरे को भीनि मैं ।
 आपुही अपार पारावार प्रभु पूरि रह्यो पेगिने प्रगट परमेसुर प्रतीति मैं ॥७॥
 माही भौन भीतर रह्यो न हौं न जानो जय कौन कौन दुँडे कौन कौन भांनि क्षोने जानि ।
 इत मैं निहारे सुने गिग मैं निहाये गुन चिन मैं बिहारे पं न परे प्यारे पहिचानि ।
 देव जू शु गहि गहि गहिवे की गोटे अब मोहै कयो न रागो बोई भौहँ कयो न सानि सानि ।
 मंगी साज कंगो पाज नंगे धौं गगी गमाज कंगो घर कंगो दर नंगो दर नंगो कानि ॥८॥

माहि तुम्है अतर गर्न न गुरुन तुम मेरे हौं तुम्हारिये तकन विपन्न हो ।
 पूरि रह्ये या तन मैं मत मैं न आवत हौं पच पूछि देमे कहूँ काहू ना हिनन हो ॥
 कंचे चदि रोड कोइ देन न दिमाई देव गानन की ओट बँटै बाननि गिनन हो ।
 एने निरमोही महाप्रोही मैं रहत कर मोही तैं निवरि नेहु भोही न मिनन हो ॥६॥
 मरिन बिचारि साज काज हर डारि मिली मोहि मिली साज डटवाए बहवन नाहि ।
 गन ऐसा पानरी विचारी चग सहरनि पाहन पवन सहाए महवन नाहि ॥
 शिरि निरि फूलनि फुलेन वामु फँनों देव तेन को निनाई महकारो महवन नाहि ।
 बौंशौ लौं न जायो अनजाने रही तो ही लौं सु अब मेरो मन बहवाए बटवन नाहि ॥१०॥
 दान की मैं प्रेम तब कीर्न धन नेम जब कजमुन भूते तय मजम बिनेगिये ।
 बाम नही परी की तब आसनहो बाँधियतु मानन के सापन को भूँदि गनि गंगिये ॥
 नव तैं मिला सौं सब स्वाम भई बाम भई बाहिर हू भीतर न दूजो देव देखिये ।
 ओ करि मिनो जो विपोग होइ बानम मो ह्या न हरि जोइतब ध्यान धरि देखिये ॥११॥

[इति सुमित विनोद]